प्रकाशक की ओर से !

मेरे लिए यह एक प्रसन्नता की बात है कि प्रकाशन-क्षेत्र में प्रवेश करते ही प्रथम सफलता के रूप में मान्य श्रीअनुग्रह बाबू का "मेरे संस्मरण" प्रकाशित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

यह पुस्तक विद्वान लेखक की भी प्रथम हिन्दी कृति है। और है बिहार के आधुनिक इतिहास पर गौरवपूर्ण प्रकाश डालने वाला यह प्रथम ग्रंथ।

किन कठिन और संघर्षमय परिस्थितियों से गुजरते हुए हमारा यह प्रान्त आज इस गौरव को प्राप्त कर सका है, उसके नवयुग का निदर्शक यह ग्रन्थ एक उज्वल दर्पण है। "सुधांशुजी" का मैं आभारी रहूँगा, जिनकी कृपा से यह पुस्तक प्राप्त हुई।

मेरा विश्वास है कि बिहार के जाग्रत जन इस पुस्तक को अपनाकर मेरा उत्साह बढ़ायेंगे, जिससे भविष्य में अन्य लेखकों की भी सुन्दरतम कृति, उनके सामने लेकर आने का साहस प्राप्त हो।

पुस्तक में कहीं-कहीं प्रेस संबंधी साधारण भूलों के अलावा कुछ नामके छपने में भी गलतियाँ रह गई हैं। जैसे श्रीमहेश्वर प्रसादनारायणसिंह के बदले महेश्वरीप्रसाद श्रीविश्वेश्वर प्रसादसिन्हा के बदले विश्वेश्वरी, तथा बदरीनाथ वर्मा के बदले बदरीनारायणवर्मा छप जाना। पाठक इससे तथा इतर जो कुछ गलतियाँ हों उसे यथा स्थान सुधार लेंगे।

समय की इस विकट स्थिति में और नये प्रकाशक होने के नाते—प्रकाशन संबंधी अज्ञानता के कारण—जो कठिनाई होती, वह तनिक भी महसूस नहीं होने देकर बोस प्रेस के संचालक श्रीअरुणकुमार बोस जी ने जो सहायता पहुँचाई है, इसका एहसान मैं कभी नहीं भूल सकता।

दो शब्द

१९४० के सत्याग्रह में दिसम्बर के महीने में मुझे जेल-यात्रा करनी पड़ी। इस बार मैं नजरबंद बनाया गया। कितने दिनों तक जेल में रहना पड़ेगा यह मालूम न हो सकने के कारण जेल-जीवन कैसे व्यतीत किया जाय यह प्रश्न बराबर उठता रहा। मेरे साथियों में इस साल कुछ साहित्यिक लोग भी जेल पहुँच चुके थे। श्री लक्ष्मीनारायण जी 'सुधांशु' साहित्य-क्षेत्र में लब्धप्रतिष्ठित होने के साथ ही एक उत्साही गंभीर प्रकृति के विद्वान हैं। आप भी एक सत्याग्रही की हैसियत से उसी समय जेल पहुँच चुके थे। आप ने मुझ से किसी विषय पर पुस्तक लिखने के निमित्त वचन लिया। मेरी समझ में नहीं आया कि मैं क्या लिखूं। जेल में पुस्तकों का अभाव था ही। लेखन की सामग्री की कमी के कारण लिखने का कार्य जरा कठिन दीख पड़ा। पर जब मैंने 'सुधांशु जी' को वचन दे दिया तो उसका पालन भी अनिवार्य हो गया। कुछ समय तक विचार करने के पश्चात् मैंने 'मेरे संस्मरण' लिखने का संकल्प कर उसमें हाथ लगाया। बिहार के नवीन इतिहास से मेरा

परिचय इस प्रांत के पुनर्संगठन के आरंभ से ही था। किस तरह पर इस सूबे को बंगाल से अलग एक नया प्रांत बनाने का आन्दोलन चल रहा था उस से मैं भलीभाँति परिचित था। अतएव अपने प्रांत के राजनीतिक जीवन संबंधी जितनी बातें मेरी जानकारी की थी उसे ही लेखनीबद्ध करने का निश्चय कर लिया। 'मेरे संस्मरण' लिखने का मुख्य कारण यही हुआ। मैं अपनी त्रुटियों को भली भांति जानता हूँ। साहित्यिक न होते हुए भी साहित्य सेवा की इच्छा रखता हूँ। इस दृष्टि से भी मैंने इस संकल्प को पूरा करने का दृढ़ निश्चय कर लिया। अतएव प्रत्येक दिन प्रातःकाल उठने के साथ ही घंटे आधे घंटे तक जो कुछ मुझे ख्याल होता जाता था उसे लिखता जाता था। पीछे चल कर जब मुझे यह खबर लग गई कि मैं भी प्रथम सत्याग्रहियों के साथ ही रिहा होने वाला हूँ तो 'मेरे संस्मरण' को इसी अवधि में समाप्त कर देना ठीक समझा। अतएव इस कार्य को नियमपूर्वक नित्य प्रति सम्पादन करता रहा और जेल से छूटने के दो चार दिन पहले ही इसे समाप्त कर दिया। "सुधांशुजी" को हस्तलिखित पुस्तक देते हुए इतना ही कहा कि उनकी इच्छा की पूर्ति कर चुका—छपवाने का काम उनका रहेगा। उस समय से इस पुस्तक को जिस रूप में पाठक देख रहे हैं उस अवस्था तक पहुँचने की सारी जवाबदेही उन की ही है।

जब किताब छप कर तैयार हो गई तो मुझे इसे पढ़ने का अवसर मिला। मुझे खेद है कि प्रूफ देखने का यथेष्ट समय न

पाकर तथा जितने फर्मे मुझे समय पर मिले उनको भी पढ़ने का अवसर न बना कर मैं भी इस पुस्तक की बहुतेरी गलतियों का उत्तरदायी हो गया हूँ। बहुत से नाम गलत छप गये हैं। बहुत जगहों पर गलत शब्द का व्यवहार हो गया है। इन त्रुटियों को सुधारने का मौका हाथ से निकल जाने से मुझे बहुत ही दुःख है। भूल संशोधन कर उसे साथ ही छाप देने का काम भी इतनी जल्दी में नहीं हो सकने का भी मुझे खेद है। मैं इन त्रुटियों के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। जनता के सामने आने में मैं सदा सशंकित रहा हूँ। इस पुस्तक के द्वारा मुझे पाठकों के समक्ष उपस्थित होने में भी वही भाव मेरे हृदय में विद्यमान है। तौभी अपने प्रकाशक को खुश करने के लिए—किताब-संसार जिसने इस पुस्तक को छापने तथा प्रकाशित करने की जवाबदेही अपने सर लेली है—इसे छाप कर पाठकों के समक्ष उपस्थित करने की अनुमति मुझे देनी ही पड़ी है। इसके लिए भी माफी चाहता हूँ।

इस पुस्तक के किसी वाक्य से अथवा किसी भाव से यदि किसी को कष्ट पहुँचे तो मैं उनसे पहले से ही क्षमा चाहता हूँ। मेरी इच्छा कभी भी किसी के हृदय को दुःखित करने का न था और न है, तथापि कुछ ऐसे शब्द रह गये हैं—बावजूद इसके कि मैंने बहुत परिश्रम कर इस तरह के शब्दों को निकाल देने की कोशिश की है—जिस से किसी व्यक्ति को दुख पहुँचे तो उस के लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ और रहूँगा। सत्य का ही आश्रय

लेता हुआ मैंने इसे लिखने का प्रयत्न किया है और वह सत्य भी जो सब को प्रिय हो उसे ही स्थान देने की चेष्टा की है। तथापि संभव है कि कुछ शब्द या वाक्य किसी को दुःख पहुँचायें तो मैं उन सज्जनों से पहले ही से क्षमायाचना कर लेता हूँ। अंत में मैं अपने उन मित्रों का कृतज्ञ हूँ जिन ने मुझे इस पुस्तक को लिखने के लिए उत्साहित किया है—विशेष रूप से श्री "सुधांशुजी" का तो मैं चिर कृतज्ञ रहूँगा ही। श्री "कैरवजी" ने भी इस कार्य को पूरा करने मे मेरी हाथ बटाई है इसके लिए उनको भी धन्यवाद देना उचित है। प्रूफ पढ़ने वालों ने बहुत कठिन कार्य अपने हाथ में लिया उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। और प्रकाशक—किताब-संसार—के विषय में क्या कहा जाय। इस कठिन समय में सभी सामग्री की कमी रहते भी इस पुस्तक को छपवाने तथा प्रकाशित करने की जो हिम्मत उनने दिखलाई है उसके लिए धन्यवाद के साथ ही बधाई भी दे रहा हूँ।

कदमकुआँ
पटना
४ जुलाई १९४२ ई०

अनुग्रहनारायण सिंह
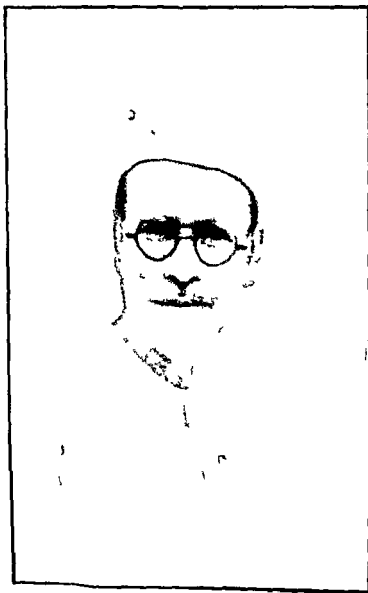
१९१५ ई० के जुलाई महीने में कलकत्ते की पढ़ाई खतम हो चुकी थी। मैं अबतक कुछ दृढ़ निश्चय नहीं कर सका था कि मुझे जीवन की किस दिशा में जाना चाहिए। एम० ए० पास कर लिया था और वकालत भी पढ़ ली थी, किंतु अपने को किसी निश्चित मार्ग का पथिक बनाने की चिंता नहीं हुई थी। इसी समय तेजनारायण जुबिली कालेज, भागलपुर में एक इतिहास के प्रोफेसर की जगह खाली हुई। मुझे इस पद की इच्छा हुई और मित्रों ने भी अनुकूल सलाह दी। मेरा उत्साह बढ़ा और मैं प्रयत्न करने लगा। बिहार के कालेजों में उस समय बिहारी प्रोफेसरों की बड़ी कमी थी। कालेजों की बात क्या, बिहार के प्रायः सभी उच्च पदों पर बिहारियों की संख्या बड़ी नगण्य थी। भागलपुर कालेज में भी संस्कृत तथा फारसी - जैसे विषयों के प्रोफेसर के सिवा अन्य आधुनिक विषयों के पढ़ानेवालों में एक भी बिहारी नहीं था। ऐसा मालूम होता था, बिहारियों में योग्यता, प्रतिभा तथा महत्त्वाकांक्षा की बड़ी कमी थी। अपने प्रांत में ही जैसे उनकी कुछ पूछ न थी। मैं उत्साह के साथ अपने प्रयत्न में लगा। कालेज की प्रबंध-समिति के मंत्री श्रीजगन्नाथ प्रसाद, एक प्रतिष्ठित वकील थे। श्रीभगवती सहाय (पीछे राय बहादुर) इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल्स, राय बहादुर श्रीसूर्या

प्रसाद वकील, श्रीअवधविहारी सिंह (पीछे राय साहब) बनैली राज के मैनेजर, आदि प्रभावशाली व्यक्ति उस समिति के सदस्य थे। ऐसी स्थिति मे उस पद को प्राप्त कर लेने की उमीद मुझे कुछ ज्यादा होने लगी। मेरे मित्र श्रीविंध्यवासिनी प्रसाद, बी० एल० पास कर, एक साल से छपरे मे वकालत कर रहे थे। श्री भगवती सहाय उनके श्वसुर थे। मेरे सबध मे श्रीविंध्यवासिनी प्रसाद की सिफारिश का प्रभाव उन पर अच्छा पड़ा। सयोग से वे कलकत्ता आए हुए थे और भागलपुर वापस जा रहे थे। मै भी उनके साथ ही भागलपुर पहुँचा और उनके घर मे ठहरा। श्री राजेन्द्र प्रसाद (देशरत्न, पीछे डा०) ने भी मेरी सिफारिश कर दी थी। उसके दूसरे ही दिन प्रबंध-समिति की बैठक हुई और मुझे प्रोफेसर की जगह मिल गई। बोर्डिङ्ग हाउस का सुपरिंटेंडेंट बनकर मैं वहीं रहने लगा।

मुझे अपने विषय से दिलचस्पी थी। कुछ ही दिनो के भीतर मैं अध्यापको तथा छात्रो के साथ काफी हिलमिल गया। भागलपुर के स्थानीय प्रतिष्ठित वर्ग मे भी मेरी कुछ-कुछ गति होने लगी। यो अपनी प्रकृति से म बहुत मिलनसार नहीं था और विना कोई काम पड किसी के यहाँ केवल मनोविनोद के लिए, शायद ही जाने की इच्छा होती थी, किंतु सामाजिक जीवन की रचना मे मेरी प्रवृत्ति जो काम कर रही थी उसके कारण गण्य-मान्य पुरुषो का सपर्क—अनिवार्य था। जरूरत पडने पर लोगो से मिलता था और जन-सपर्क के जिस काम का अवसर हाथ आता था उसे दिल लगाकर करता था।

कालेज का काम करने में मुझे बहुत मन लगता था। घंटे-दो-घंटे लड़कों को पढ़ाकर कालेज के पुस्तकालय से किताबें ले जाता था और उनके अध्ययन में सारा समय बिताया करता था। कभी-कभी लड़कों के साथ दर्शनीय—भागलपुर के निकटस्थ—स्थानों को देखने जाया करता था और उनके जैसा ही रहता था। कुछ लड़कों के साथ जो परिचय हुआ था वह कालेज छोड़ने के बाद भी बीच-बीच में ताजा होता रहा। समाज-सेवा की भावना पहले से भी थी और कालेज में इस भावना के अभ्यास में बड़ी आसानी हुई। उसी साल या दूसरे साल गंगा जी में बड़े जोर की बाढ़ आई और किनारे के बहुत-से गाँव डूब गए। लोगों की खेती बरबाद हो गई और पानी से, बहुत समय तक उनकी जमीन ढकी रहने के कारण, मवेशियों को विशेष तकलीफ पहुँचने लगी। कालेज के छात्रों ने टोलियाँ बनाकर अर्थ-संग्रह किया और लोगों—बाढ़-पीड़ित लोगों—को कितनी तरह की सहायता पहुँचाई। इसी सिलसिले में हमलोग मुंगेर गए। वहाँ अपने पुराने दोस्त श्री श्रीकृष्ण सिंह के द्वारा यथेष्ट आर्थिक सहायता प्राप्तकर बड़ी प्रसन्नता मिली थी।

२

बिहार प्रांत को बंगाल से अलग हुए तीन ही साल बीते थे। बिहारियों का नवजीवन अभी प्रस्फुटित हो रहा था। नवयुवकों में एक अभूतपूर्व उत्साह तथा सेवा का भाव जाग रहा था। बिहारी छात्र-सम्मेलन के द्वारा बिहार के छात्रों में जो

जीवन और आशा का संचार हो रहा था वह इस समय बहुत ऊँचे स्थान पर पहुँच चुका था। हाइकोर्ट पटने में होने से प्रान्त के सार्वजनिक जीवन मे भी उलट-फेर होने लगा। बंगाल के साथ रहते-रहते बिहार प्रात का राजनीतिक जीवन नहीं के बराबर ही हो गया था, ऐसा कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा। दो-चार बडे वकील और बैरिस्टर जब कभी राजनीतिक सम्मेलनो मे शरीक हो जाया करते थे। सूरत कांग्रेस के बाद से ही नरम और गरम दल की सृष्टि हो चुकी थी। नवयुवकों की रुचि गरम दल की ओर स्वभावतः झुकती जाती थी, पर उनको आगे रास्ता दिखानेवाले नेताओं का प्रभाव अभी विकसित नहीं हुआ था। श्रीराजेंद्रप्रसाद छात्र-समाज के नेता समझे जाते थे और श्री श्रीकृष्णप्रसाद (मुंगेर-भागलपुर) का नाम अच्छे वक्ताओं मे फैल चुका था। उनकी इच्छा गोपालकृष्ण गोखले द्वारा संस्थापित सर्वेंट ऑफ इंडिया सोसाइटी मे शामिल होने की थी। कुछ दिनों तक पूने मे रहने का सौभाग्य भी उन्हें मिल चुका था। पर किसी कारण वे वहाँ न रह सके और बिहार मे ही छात्रों के जीवन को परिवर्त्तित करने में लगे रहे। उन्होंने एक पत्र भी निकाला था, पर वह कुछ ही दिनों के बाद बंद हो गया।

श्रीराजेंद्रप्रसाद कलकत्ते के कालेज मे ही शिक्षा प्राप्त करते थे और उनकी प्रतिष्ठा विश्वविद्यालय मे प्रथम स्थान प्राप्त करने से सारे सूबे में फैल रही थी। बंगाल मे भी उनकी प्रतिभा की बहुत प्रतिष्ठा थी और प्रेसिडेंसी कालेज के विद्यार्थियों में, बिहारी होने के कारण, और भी अधिक मशहूर हो रहे थे।

हमलोग जब कलकत्ते पढ़ने आए थे उस समय इन्होंने हाइकोर्ट में वकालत शुरू कर दी थी और धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठते जारहे थे। श्रीशंभुशरण वर्मा और मैं, दोनों एक ही मेस में रहते थे और राजेंद्र बाबू के यहाँ अक्सर जाया करते थे। बिहार की राजनैतिक परिस्थिति के संबंध में हमलोगों की बातें हुआ करती थीं। राजेंद्र बाबू इन दिनों लॉ कालेज में प्रोफेसर भी थे और मैं वहाँ लॉ का एक विद्यार्थी था। इस कारण उन्हें मैं अपना गुरु समझने लगा और उनका लिहाज करता था। उसके पहले छात्र-सम्मेलन के मंत्री की हैसियत से जब उनके साथ पत्र-व्यवहार करता था तब बराबरी का ही भाव रहता था। कलकत्ते में जबतक रहा उनसे शिक्षा लेता रहा। कभी-कभी शंभु बाबू उन्हें वकालत पेशे का नेतृत्व करने के लिए जोर देते थे। एक बार एक पत्र के उत्तर में राजेंद्र बाबू ने यह दिखलाने की कोशिश की कि हिंदुस्तानी वकीलों को बैरिस्टरों के मुकाबले में, न फीस मिलती है और न कदर ही होती है। स्वभावत: नम्र प्रकृति के होने से उनको समाज का अग्रगामी बनने में संकोच होता था और नेतृत्व केलिए उनकी सदैव अनिच्छा ही बनी रही। सचाई उनमें कूट-कूट कर भरी थी और संगति से हमलोगों को भी उनके पदानुगामी होने की आकांक्षा बढ़ती गई। परिचय तो छात्र-सम्मेलन के समय से ही था, पर कलकत्ते में रहने से हमलोगों की घनिष्टता और भी बढ़ी। कुछ दिनों के बाद तो पारस्परिक स्नेह बहुत बढ़ गया और हमलोगों ने उसी समय से उन्हें अपना नेता मान लिया।

१९१६ ई० में हाईकोर्ट पटने में खुला। राजेंद्र बाबू कलकत्ते से पटने में ही वकालत करने चले आए। भागलपुर से मैं कभी-कभी पटने आया करता और उनका दर्शन कर लिया करता था। बिहारी छात्र-सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन में हमलोग इकट्ठे हो ही जाया करते थे। इस साल कलकत्ते में ही सम्मेलन का अधिवेशन होने को था। स्वागत-समिति बन गई थी। मैं ही, बलभद्र प्रसाद ज्योतिषी के मुकाबले में, स्वागताध्यक्ष चुना गया था। इसी समय मैं भागलपुर कालेज मे आ गया और हाईकोर्ट भी पटने में खुला। कलकत्ते में जितने गण्यमान्य सज्जन बिहार से संबंध रखते थे करीब-करीब वे सब भी पटने चले आए। ऐसी हालत में छात्र-सम्मेलन कलकत्ते में नहीं किया जा सका।

३

कालेज गर्मी की तातील के कारण बंद था। मैं पटने में ही तबतक रहा और हाईकोर्ट की वकालत में अपना नाम दर्ज करा लिया। शंभु बाबू और मैं जिस तरह आज तक विद्यार्थी की अवस्था में रहते आए थे उसी तरह दोनो ने वकालत करने में भी साथ ही रहने का निश्चय किया। मुरादपुर में एक मकान किराये पर लेकर हम दोनों उसी में रहने लगे। कालेज अगस्त या जुलाई के अंत में खुला। मैं दो-तीन महीने और भागलपुर में रहा और १६ नवंबर १९१६ ई० को अपना पद त्याग कर वहाँ से विदा हुआ। अपने प्रिय छात्रों से अलग होते समय जो मोह मुझे हुआ था उसे जल्द न भूल सका। विद्यार्थियों ने मेरे प्रति जो प्रेम और श्रद्धा का भाव प्रदर्शित किया उसका अनुभव मैं पहले कुछ

नहीं कर सकता था। कितने अभिनंदन-पत्र मिले और कितने बड़े लोगों के यहाँ भोज मिले। स्टेशन जाते समय गाड़ी विद्यार्थियों ने ही खींची और विदा होते समय सैकड़ों छात्रों की आँखों से प्रेमाश्रु टपकते रहे। मैं भी अपने को स्थिर न रख सका। गाड़ी छूटने तक प्लॉटफार्म पर लड़कों की भीड़ बनी रही। वह दृश्य आज भी मेरे हृदय-पट पर अंकित है और कभी-कभी १६ महीने भागलपुर के जीवन को याद कर आज भी व्यथित हो उठता हूँ।

४

१६१६ ई० के दिसंबर में लखनऊ में काँग्रेस का जलसा था। उसी समय अखिल भारतीय क्षत्रिय-महासभा का अधिवेशन महाराजा काश्मीर के सभापतित्व में पटने में हुआ। नए वकीलों को जितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, मुझे भी उनका मुकाबला करना पड़ा। काँग्रेस जाने की इच्छा रहते भी लखनऊ नहीं जा सका। महासभा के संचालन में अपनी शक्ति भर हिस्सा लिया। डुमराँव के महाराजा श्रीकेशवप्रसाद सिंह स्वागताध्यक्ष और कुलहड़िया के श्रीचंद्रशेखरप्रसाद सिंह स्वागत-समिति के प्रधान मंत्री थे। श्रीनिरसूनारायण सिंह उपमंत्री की हैसियत से बराबर उनलोगों से मिला करते थे। उन दिनों बड़े लोगों से मिलना अपनी वकालत के पेशे में सहायता प्राप्त करने का एक जबरदस्त जरिया समझा जाता था। सम्मेलन सफल हुआ। हमलोगों को काश्मीर महाराज से बातचीत करने

का सौभाग्य प्राप्त हुआ और श्रीनगर जाने का निमंत्रण भी मिला। पर आज तक भी काश्मीर की यात्रा न कर सका। वयोवृद्ध महाराजा प्रताप सिंह का देहांत हुए आज कितने साल हो गए। उनके जीवन काल में वहाँ जाना मुमकिन नहीं हो सका। उनके सद्भाव का उपभोग करने की इच्छा मन के अंदर ही लय हो गई।

५

प्रांत में इन दिनों चंपारन में नीलहे कोठीवालों को लेकर एक आंदोलन खड़ा हो रहा था। कुछ मुकदमे हाइकोर्ट तक पहुँच चुके थे। नकली नील के आविष्कार ने नील की खेती को भारी धक्का पहुँचाया था। नीलहे लोगों को ऐसी खेती करने में कुछ लाभ नहीं होने लगा। 'तिनकठिया' का चलना मुश्किल समझ कर 'शरह बेशी' और तावान के जरिए इस क्षति को पूरा करने की कोशिश होने लगी। रिवाज के अनुसार प्रत्येक खेतिहर को अपने अच्छे-से-अच्छे खेत के तीन कट्ठे में नील बोना अनिवार्य था। इससे नील की खेती में लाभ न देखकर कोठीवालों ने किसानों का इस तथाकथित रिवाज (So called) से मुक्त कर देने की उदारता के बदले 'तावान' लेना उचित समझा। किसी-किसी ने लगान की दर बढ़ाकर 'शरह बेशी' के नाम से किसानों को 'तिनकठिया' की कैद से रिहा कर दी और अपने को धन्य समझा। हाइकोर्ट में इस तरह के कई मुकदमों में किसी में जीत और किसी में हार होती गई। लाखों

रुपये तावान के रूप में नीलहे कोठीवालों की जेब में पहुँच गए और 'शरह बेशी' ने लगान को एकाएक बढ़ा कर नील के व्यापार में जो क्षति हुई थी उसे पूरा कर दिया।

जिले में हाहाकार मच गया था, पर किसकी हिम्मत थी जो इन जबरदस्त प्रभावशाली गोरे कोठीवालों के विरुद्ध किसी तरह की आवाज उठावे! जिला के हाकिम, पुलिस अफसर और यहाँ तक की प्रांत के बड़े-बड़े अफसरों को भी इतनी हिम्मत न थी कि इस तरह के अत्याचारों से निर्धन, निरीह किसानों की रक्षा करें। सांत्वना देनेवाले भी दो ही चार नजर आते थे। उस समय प्रांतीय कौंसिल की बैठक या तो पटना कालेज हाल में या गुलजारबाग की अफीम कोठी में होती थी। मुझे याद है, एक दिन कौंसिल की बैठक का तमाशा देखने हमलोग गुलजारबाग पहुँचे। उस दिन चंपारन में जो अत्याचार हो रहे थे उनके संबंध में तहकीकात करने केलिए एक कमिटी बनाने का प्रस्ताव श्रीब्रजकिशोरप्रसाद ने कौंसिल में पेश किया था। याद रहे कि इस तरह की हरकत के प्रस्ताव करनेवाले को तत्कालीन सभ्य कहलानेवाले सज्जन नफरत की नजर से देखा करते थे। नवयुवकों के हृदय में अलबत्त ऐसे देशभक्तों के प्रति श्रद्धा और भक्ति बढ़ती जा रही थी, पर उनको पूछता ही कौन था। श्रीब्रजकिशोरप्रसाद कमजोर व्यक्तियों में से नहीं थे। जिस बात को उचित और सही समझते थे उसे जनता के सामने रखने में न बड़े अफसरों का लिहाज करते थे और न उनसे डरते ही थे। उस दिन जब वे अपना प्रस्ताव पेश करने लगे तब

मालूम हुआ कि विपत्तियों से भरे हुए समाज में कोई हठधर्मी अपने हठ पर अड़ा हुआ है। जिस समय वे प्रस्ताव पर भाषण दे रहे थे सर एन्ड्रूज फ्रेजर सभापति की हैसियत से क्रोध भरी नजरों से उनकी ओर घूर रहे थे। प्रस्ताव पर बहस बहुत देर तक चलती ही क्यों? जलपान की छुट्टी के समय सभी मेम्बर कौंसिल हाल से बाहर चले गए। सिर्फ ब्रजकिशोर बाबू अपनी जगह पर बैठे रहे। मालूम होता था कि वहाँ पर उनको कोई पूछनेवाला नहीं है। जलपान के बाद बैठक जुटी और प्रस्ताव पर वोट लिए गए। मुझे जहाँ तक ख्याल पड़ रहा है, सिर्फ चार वोट प्रस्ताव के पक्ष में मिले। उम्मीद भी ऐसी ही की जाती थी। हमारे जैसे तमाशबीन वहाँ से चलते बने। उस दिन का चित्र मेरे हृदय-पटल पर सदा केलिए अंकित रहा।

६

मेरी माता का स्वर्गवास १९१५ ई० के अगस्त या सितंबर महीने में हो गया। मुझे उनकी बीमारी की खबर तक न दी गई। उनके देहांत के बाद एक तार उनके बीमार होने का मिला, पर जब मैं मकान पहुँचा तब मालूम हुआ कि मृत्यु के बाद ही तार भी भेजा गया था। अपने परिवार में माता से जितनी ममता मुझे थी उतनी और किसी से न थी। मातृ-सुख के अनुभव से मैं उसी समय से वंचित हो गया। माता का जितना असर मेरे जीवन पर पड़ा था उतना और किसी का नहीं। उनकी सहृदयता, कोमलता, प्रेम, सौजन्य, सहनशीलता की छाया मुझ पर बराबर

पड़ती रही और मुझे याद है कि मैं अपनी सारी दुःख-गाथाओं को उनके निकट सुनाकर संतुष्ट हो जाता था। मेरी इच्छा यही थी कि जब मैं स्वतंत्र हो जाऊँ तब माता की सेवा में अपने को अर्पित कर दूँ। उनका जीवन बराबर दुःखमय रहा और जब मैं इस योग्य हुआ कि उनकी कुछ सेवा कर सकता तब वे हमें छोड़ कर चली गईं। आज वे हृदय-विदारक बातें याद पड़ती हैं! काल ने उस विषाद पर विजय पाई है। यदि मनुष्य के दुःख-सुख पर समय का प्रभाव न पड़े तो उसके जीवन की गतिविधि ही दूसरी हो जाय। मेरे छोटे भाई की असामयिक मृत्यु ने माँ के हृदय को जर्जर कर दिया था। इस दुःख को वे अधिक सह न सकीं। जीवन के अंतिम दिनों में उन्हें शायद ही कभी मैंने हँसती देखा और उल्लास तथा उमंग तो उनके प्राण से पहले ही विदा हो चुकी थी।

७

बंगाल से अलग होकर एक नवीन जीवन की स्फूर्त्ति हम-लोगों को प्राप्त हुई। बड़े लोगों का सरकारी नौकरियों की ओर ही विशेष ध्यान था और पहली बार बिहार के रहने वालों को सरकारी पद प्राप्त करना सुलभ हुआ। बंगाल के साथ रहते ही एक्सक्यूटिव कमिटी की मेंबरी हिंदुस्तानियों को प्राप्त हो चुकी थी। अलग होने पर भी बिहार को वह हक दिया गया। कुछ बड़े प्रांतों को, जैसे यू० पी० या पंजाब को वह हक उस समय तक नहीं मिला था। लेकिन आज उस ओर दृष्टि डालने पर वह कितनी छोटी चीज दीख पड़ती है।

अक्सर बड़े लोगों के पास जाने का हमें मौका मिलता था। हाइकोर्ट पटने में आ जाने से इस तरह के संयोग बहुत हुआ करते थे। उस समय सर अली इमाम प्रांत में ही क्यों, सारे हिंदुस्तान में काफी मशहूर हो चुके थे। वाइसराय के एक्स-क्यूटिव कौंसिल के लॉ मेंबर रह चुके थे। निजाम गवर्नमेंट के प्रधान मंत्री का पद मिलने को ही था अथवा मिल गया था, पूरा ख्याल नहीं पड़ रहा है। मि० हसन इमाम मशहूर राष्ट्रवादी थे। श्रीसच्चिदानद सिन्हा एक कुशल तथा यशस्वी पत्रकार और काँग्रेसमेन समझे जाते थे। श्रीदीपनारायण सिंह भी उनके साथी तथा उग्रदल के नेताओं में गिने जाते थे। स्वदेशी आंदोलन के समय इनका नाम काफी फैल गया था, पर इनका बहुत-सा समय संसार-भ्रमण में ही बीतता था। जब कभी इन लोगों से मिलने का अवसर मिलता था, बातें करने से पता चलता था कि ये सभी लोग अंग्रेजी राज को यहाँ से हटाना चाहते हैं, पर इस बात को जाहिर करने में डरते थे और इसी कारण सबके सामने इसे कहने में हिचकते भी थे। उस समय के बड़े लोगों में श्रीनंदकिशोरलाल और उनके छोटे भाई श्रीपरमेश्वरलाल, राय-बहादुर किशुन सहाय, रायबहादुर पूर्णेन्दुनारायण सिंह अग्रगण्यों के नेताओं में गिने जाते थे और प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलनों के सभापति किसी-न-किसी साल बनाए जा चुके थे।

८

नवंबर महीने में भागलपुर कालेज से इस्तीफा देकर मैंने हाइकोर्ट में वकालत शुरू कर दी। शंभु बाबू और मैंने, साथ

ही एक मकान में रह कर वकालत करने का निश्चय किया। नवंबर और अप्रेल के बीच कुछ-न-कुछ काम हमलोगों को मिल ही जाते थे। बहुत से दोस्तों की ओर से यह सलाह मिली थी कि एक घर में दो वकीलों का रहना ठीक नहीं है, पर हमलोगों के परस्पर भाव ऐसे थे कि इस तरह के उपदेश को, कितनी तरह की दिक्कतें महसूस करके भी, कबूल करना असंभव था। राजेंद्र बाबू के साथ काम करने के अवसर शंभु बाबू को मुझ से ज्यादा मिलते थे। स्वभावतः मुझे किसी के पास जाने और किसी तरह की ख्वाहिश जाहिर करने में हिचकिचाहट मालूम होती थी, पर राजेंद्र बाबू के यहाँ आना-जाना तो बराबर ही हुआ करता था। कुछ दिनों के बाद हमलोगों को इन चार छः महीने के अंदर अपने पैरों के बल खड़ा होने की शक्ति आ रही थी कि महात्मा गांधी के चंपारन में आगमन ने इस सिलसिले को एक प्रकार से कुछ महीनों के लिए खतम ही कर दिया।

१६१६ ई० में अखिल भारत कांग्रेस का अधिवेशन लखनऊ में हुआ। चंपारन में आंदोलन बढ़ता जा रहा था और नीलहे लोगों की सख्ती भी बढ़ती जा रही थी। श्रीराजकुमार शुक्ल एक मध्यम श्रेणी के किसान जिनको नीलहे लोगों ने सताया था इस आंदोलन को व्यापकरूप देने केलिए प्रयत्नशील थे। महात्मा गांधी का यश दक्षिण अफ्रिका के सत्याग्रह की वजह से किसानों के बीच में फैल रहा था। यह खबर पाकर कि महात्मा गांधी लखनऊ कांग्रेस में शामिल हो रहे हैं, उनसे मिलने और उनको चंपारन में बुला लाने केलिए श्रीराजकुमार

शुक्ल लखनऊ गए। श्रीब्रजकिशोर प्रसाद वहाँ गए हुए थे। श्रीराजकुमार शुक्ल के कथन का महात्मा जी को विश्वास नहीं हुआ। उनकी समझ में जिस तरह का अत्याचार चंपारन में होना कहा जाता था, वैसा सरकारी राज्य में संभव नहीं था—इसी तरह की धारणा उनकी थी। पर जब बहुत अनुरोध किया गया तब उन्होंने स्वीकार किया कि एकबार चंपारन जायँगे और बताया कि मार्च या अप्रेल के महीने में कलकत्ते से लौटने वक्त चंपारन चले चलेंगे। श्रीराजकुमार शुक्ल इस खुशखबरी को लेकर वापस आए और वहाँ के रहनेवालों के बीच इसका प्रचार शुरू किया। इससे चंपारन की जनता में एक नवीन आशा और उत्साह का संचार हुआ।

६

हाइकोर्ट में हम और हमारे जैसे नये वकीलों को इस बात की ओर प्रेरणा की गई कि हमलोग जोश के साथ अपने-अपने कार्यों को करें। उस समय श्रीवैद्यनाथप्रसाद सिंह और श्रीराजेंद्र प्रसाद ने मिलकर एक "लॉ वीकली" निकालना शुरू किया। दोनों ने एम० एल० परीक्षा पास कर काफी ख्याति प्राप्त कर ली थी। हमलोगों का उनके सहायक होकर मुकदमा का रिपोर्ट करने का काम मिला। वैद्यनाथ बाबू बड़े ही परिश्रमी और उद्यमी पुरुष थे। अपने अध्यवसाय के जोर पर वे दिनोदिन कार्यकुशल होते जा रहे थे और हाइकोर्ट में अपना स्थान उच्च-वर्ग में बनाते जा रहे थे। बहुत परिश्रम करने का परिणाम यह

हुआ कि उनकी मानसिक शक्ति क्षीण होने लगी और कुछ ही दिनों में विक्षिप्त-से होने लगे। धीरे-धीरे उनको हाइकोर्ट के कामों से हट जाना पड़ा। पागलपन की मात्रा इतनी बढ़ी कि थोड़े दिनों में ही उनका शोचनीय असामयिक देहांत हो गया। राजेंद्र बाबू और वैद्यनाथ बाबू एक ही मकान में रहते थे और वकालत भी एक ही साथ करते थे। वैद्यनाथ बाबू के देहांत के बाद उनके परिवार को बहुत कष्ट का सामना करना पड़ा। उनके लड़के छोटी उम्र के थे। उनके भाई ने उन्हें पढ़ाने-लिखाने का भार अपने हाथ में लिया। अब तो एक लड़के ने विज्ञान में कुशलता प्राप्तकर सरकारी कालेज में प्रोफेसर का पद प्राप्त किया है।

श्रीगणेशदत्त सिंह (पीछे सर, डॉ) भी कलकत्ते हाइकोर्ट से आए हुए बिहारी वकीलों में से एक थे। उनके बारे में कितनी तरह की किंवदंतियाँ मशहूर थीं। एक भूमिहार ब्राह्मण जमींदार के घर जन्म लेकर कड़ी उम्र में उनको अंग्रेजी पढ़ने का शौक हुआ। बहुत परिश्रम कर उन्होंने अपने को हाइकोर्ट की वकालत के योग्य बनाया और कलकत्ते में वकालत करने लगे। बंगाली वकीलों के मुकाबले बिहारी वकील बहुत ही नीचे दर्जे के गिने जाते थे। स्वभावतः बड़े लोग उनको ही अपने कामों केलिए रखा करते थे। साथ ही जिन लोगों पर उन बड़े लोगों की कृपा रहती थी उनका प्रवेश भी राज दरबारों में हो जाता था। श्रीगणेशदत्त सिंह को यह बात बहुत खटकती थी और वे हमेशा इस बात की फिक्र में रहते थे कि किसी तरह ऐसे लोगों के बीच

उनका प्रवेश बढ़े। इसी ख्याल को लेकर उनको चिंता और दुःख होता था। उनका ऐसा सतत् प्रयत्न होता रहा कि किस तरह इनके चंगुलों से अपने को तथा अपने जैसे असहाय लोगों को निकालें। इसी विचार से उन्होंने मवक्किलों के खाने-पीने का प्रबंध भी अपने ही यहाँ कराया। उस समय बिहार के लोग छुआछूत ज्यादा मानते थे और खाना-पीना बहुत ही समझ-बूझ कर अच्छे ब्राह्मणों के हाथों का बना हुआ ही किया करते थे। इस कमजोरी को समझकर अपने पास ही भोजन व्यवस्था के जरिये लोगों को अन्य जातियों के कब्जे से निकालने का उपाय किया और कुछ अंशों में वे सफल भी हुए।

जब हमलोगों ने हाइकोर्ट जाना शुरू किया तब हमारे दिल में यह ख्याल ही नहीं हुआ कि खास तरह की सवारी पर वहाँ नहीं जाना चाहिए। पैसे की कमी के कारण हमलोग सस्ती सवारी पर ही वहाँ जाने लगे थे। इस बात को हमारे वकील-समाज के लोगों ने नापसंद किया और इसकी चर्चा कानों कान होने लगी। जनमत के खिलाफ चलना हमारे लिए कठिन हो गया और हमारे एक साथी राय श्रीगुरुशरण प्रसाद ने, जो आगे चल कर सरकारी वकील हुए, हमलोगों को अपने साथ लिवा चलने का प्रस्ताव किया। बहुत दिनों तक हमलोग उनकी गाड़ी पर ही हाइकोर्ट जाते रहे। इस छोटी-सी बात का जिक्र मैं इसलिए करता हूँ कि समाज का बंधन कितना जबरदस्त होता है और इसका असर किस हद तक लोगों पर पड़ता है। मवक्किलों के लिए एक दूसरा कोड है, पर वकालत करनेवाले चाहे

बिल्कुल ही निर्धन क्यों न हों, उनके लिए खास पोशाक और खास सवारी पर चलना अनिवार्य है। मुझे ऐसे उदाहरण याद हैं जब कि वकील-बैरिस्टरों को ५००) और १०००) रु० फीस देनेवाले मवक्किल स्वयं पैदल या इक्के पर बैठ कर हाइकोर्ट जाते हैं। काफी संपन्न होते हुए भी उनकी इस कार्रवाई को कोई निंदनीय नहीं समझता। आगे चलकर जब हमलोग असहयोग आंदोलन में शामिल हुए, तब इस तरह के विचार, खास तरह की पोशाक और सवारी हमारे मन से बहुत अंशों में दूर हो गए। कितना परिवर्त्तन इस आंदोलन ने तथा महात्मा गाँधी के संसर्ग ने हमारे-जैसे लोगों के विचार में पैदा किया, यह बताने की बात नहीं रही।

१०

श्रीराजकुमार शुक्ल की विनय को महात्माजी ने कबूल कर लिया था और ईस्टर की छुट्टियों के आस-पास में मोतीहारी जाने का वचन भी दे दिया था। महात्मा गाँधी को कलकत्ते किसी कार्यवश जाने का अवसर मिला और वहाँ से लौटतीबार अपने वचन-पालन का अच्छा मौका समझ, वे ईस्टर की छुट्टियों से कितने दिन पहले श्रीराजकुमार शुक्ल के साथ पटने आए। शुक्लजी को राजेंद्र बाबू से ही जान-पहचान थी। अतएव महात्माजी को लेकर उनके ही डेरे पर चले आए। राजेंद्र बाबू उस दिन पटने से कहीं बाहर गए हुए थे। उनकी गैरहाजिरी में नौकरों ने महात्माजी को एक मामूली दिहाती मवक्किल समझ कर वैसा ही व्यवहार किया। कुछ देर के बाद जब मौ०

दिया। इसी बीच महात्माजी ने हमलोगों को पटना जाकर अपने अपने काम समेट कर मोतीहारी लौट आने की आज्ञा निकाली। इच्छा न रहते भी इन्कार करने की हिम्मत नहीं हुई। एक बार उनके संपर्क मे आजाने पर मेरी अवस्था तो बिल्कुल बदल गई। आदेश के प्रति मेरी तर्क-बुद्धि खो गई। जैसा आदेश हो, मैंने उसका पालन करने केलिए अपने को सदा तैयार पाया।

कुछ दिनों तक गोरख बाबू के यहाँ हमलोग रहे और काम करते रहे। एक दिन महात्मा जी ने प्रस्ताव किया कि अब हमलोगों को किसी अलग मकान मे रहकर इस काम को चलाना चाहिए। काम बढ़ता जाता था। बयान देनेवालों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाती थी। लिखनेवाले भी बढ़ते जाते थे। किसी खास आदमी के ऊपर इतने आदमियों के रहने का बोझ देना महात्मा जी को पसंद नहीं था। अतएव हमलोगों ने एक नजदीक के ही खाली मकान को देखकर उसे किराए पर ले लिया और वहाँ चले गए। काम करनेवालो मे कई जातियों के लोग थे और खान-पान में छुआछूत का विचार भी हमलोगों मे बड़ा जबरदस्त था। नए मकान मे हमलोग अलग अलग चौके मे रसोइयाँ बनाने लगे। जबतक गोरख बाबू के साथ थे, ब्राह्मण रसोइयों के कारण जाति-पाँति का कोई सवाल उठा ही नहीं था। अलग होते ही यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ। पहला दिन तो किसी तरह बीता। हमलोगो का बहुत-सा समय तो रसोई बनाने ही मे खतम हो गया। रात को

करीब १० बजे जब हमलोग महात्मा जी के निकट बैठे तब उन्होंने बहुत गंभीरता के साथ हमारे विचारों तथा कार्यों की आलोचना की। उनके विचार से वर्ण-व्यवस्था सही होते हुए भी उसमें बराबर परिवर्त्तन होते रहे हैं; इस समय जो लोग सेवा-कार्य करना चाहें उनको एक ही जाति बनना चाहिए। छुआछूत के कारण सर्वसाधारण की सेवा करनेवालों का बहुत-सा समय व्यर्थ भोजन-व्यवस्था में ही नष्ट हो जाया करता है। उनके इस मार्मिक भाषण का इतना असर हमलोगों पर पड़ा कि दूसरे ही दिन से अलग-अलग रसोइयाँ पकाना बंद हो गया और एक चौके में, जो मेरे जिम्मे हुआ, सब केलिए भोजन बनाने का प्रबंध हो गया।

इस समय दीनबंधु एंड्रूज जिनको बुलाने केलिए तार दिया गया था, वहाँ आ पहुँचे। एंड्रूज साहब कलक्टर से मिले। उनकी बातों से हमलोगों के दिल में काफी जोश और ढाढ़स पैदा हुआ। अब प्रश्न यह उठा कि एंड्रूज साहब जो दक्षिण अफ्रिका जानेवाले थे, चंपारन में कुछ दिनों केलिए और रुक जायँ अथवा तुरंत ही चले जायँ। महात्माजी ने इस विषय पर हमलोगों से सलाह ली। हमलोगों की राय में ऐसे नाजुक समय में एंड्रूज साहब का रुक जाना ही अच्छा मालूम पड़ा। महात्मा जी फौरन ही हमारी कमजोरी को समझ गए और कहा कि चूँकि एंड्रूज साहब अंग्रेज हैं, इसलिए यहाँ रह जाने की सलाह हमलोग दे रहे हैं जिससे उनके रहने से अंग्रेज अफसर के प्रति जो डर हमारे दिलों में है उस पर तह पड़ जाय। ऐसा

कह कर उन्होंने एंड्रूज साहब को उसी दिन चंपारन में चले जाने को कहा। उस समय महात्मा जी का इतना ऊँचा ख्याल हमलोगों को पसंद नहीं आता था, पर आज्ञा मान लेने के सिवा हमलोग कर ही क्या सकते थे।

एंड्रूज साहब का भोजन तैयार करना था। यह काम मेरे ऊपर था। सूखी रोटियाँ और उबाले आलू जबतक महात्मा गाँधी स्नान करने गए, मैंने उनको खिलाना शुरू कर दिया। स्नान कर चुकने के बाद जब महात्मा गाँधी जी चौके में आए तब उन्होंने एंड्रूज को खाते देखा। भोजन देखते ही वे बिगड़े कि मैं उन्हें क्यों कच्ची रोटियाँ खिला रहा हूँ। मैंने कहा रोटियाँ तो कच्ची नहीं हैं। वैसी रहतीं तो एंड्रूज साहब बोलते क्यों नहीं ? महात्मा जी ने कहा, इसे तो कैसी ही रोटियाँ खाने को दे दो, यह थोड़े ही बोलनेवाला है। यह कह उन्होंने अपने हाथ से रोटी सेंकना और एंड्रूज साहब को खिलाना शुरू कर दिया। मैं बड़े संकोच में पड़ गया। रोटियाँ सेंकने की तालीम कभी पाई न थी, पर अपनी अयोग्यता पर ग्लानि तो हो ही रही थी। इस छोटी-सी घटना के पीछे कितना मर्म, कितना प्रेम, कितनी आत्मीयता का भाव छिपा हुआ था, इसे समझ कर हमलोग आनंद से प्रफुल्लित हो उठे। उस समय से कहीं ज्यादा आनंद आज उसे याद कर हो रहा है। संसार के एक महान्‌पुरुष ने दूसरे महान् आत्मा के प्रति जो व्यवहार किया उसके सौंदर्य को समझने की मेरी शक्ति उस समय अधिक विकसित नहीं हो पाई थी।

कुछ दिनों तक काम का यह सिलसिला मोतीहारी में कायम रहा। पीछे बेतिया जाने का प्रस्ताव आया। चंपारन जिले का अधिकांश बेतिया सब डिविजन के अंतर्गत कोठीवालों के दमनचक्र का शिकार हो रहा था। वहाँ के रहनेवालों को मोतीहारी आनेमें बहुत दूर की सफर करनी पड़ती थी। अतएव हम लोग दलबल के साथ बेतिया की धर्मशाला में आ पहुँचे। वहाँ रह कर फिर पूर्ववत् काम शुरू कर दिया।

मोतीहारी रहते-रहते महात्मा जी ने हमलोगों को सेवा-धर्म में अग्रसर; करने केलिए एक कदम और आगे बढ़ाया। चौका एक हो ही गयाथा, पर हमलोग जितने काम करनेवाले थे सब के साथ एक एक अपना नौकर भी था। ज्यादा खास नोकरों के कारण काम में सहायता पहुँचने के बदले कुछ दिक्कतें ही हो जाती थीं। जिनके साथ नौकर नहीं था उनको कुछ मानसिक क्लेश हो जाता था, जब खास नौकरों से उनके मन के मुताबिक सेवा नहीं मिल सकती थी। महात्मा जी ने निश्चय किया कि सब खास नौकर वापस कर दिए जायँ। केवल एक ही नौकर चौका के लिए रहे। वही नौकर ब्रजकिशोर बाबू का भी काम कर दिया करेगा, क्योंकि वे गठिया की बीमारी से पीड़ित रहा करते थे। फैसले के मुताबिक हम में से सब को अपने-अपने बरतन माँज लेना, स्नान कर लेना और कपड़े साफ करने के काम स्वयं करने पड़ते थे। पहले तो इन कामों में तकलीफ मालूम पड़ती थी, पर थोड़े ही दिनों में आदत लग जाने से कोई खास दिक्कत नहीं मालूम पड़ने लगी।

११

महात्मा जी सबसे पहले उठते थे और शौचादि से निवट कर लिखने-पढ़ने के काम मे लग जाते थे। हमलोग कुछ देर से उठते थे और स्नान आदि से फुरसत पा बयान लिखने लग जाते थे। सबेरे ही भोजन तैयार हो जाता था और सब कोई एक साथ बैठकर खाते थे। बापू (महात्मा जी) स्वय अपने हाथ से सबको खाना परोसते और खुद भी साथ ही बैठकर भोजन करते थे। पहले तो बा (श्रीमती कस्तूरबा गाँधी) रसोई बनाती थीं, पर राजेंद्र बाबू के रसोइया के आ जाने पर वही सबका भोजन बनाने लगा था। हमलोग मामूली रोटी, दाल, तरकारी, भात खा लिया करते थे, पर बापू का भोजन बिना नमक मशाले के बनता था। दाल खाते ही नहीं थे और भात के सिवा और दूसरा कोई अन्न भी नहीं खाते थे। उनकी तरकारी में से कभी हमलोगों को प्रसाद मिल जाया करता था तो नमक मशाला रहित होने पर भी बहुत ही स्वादिष्ट लगता था।

दिन में कुछ देर आराम करने के बाद हमलोग फिर काम में लग जाते और पाँच बजे शाम तक डटे रहते थे। रात का भोजन भी सूर्यास्त के पहले ही खतम हो जाता था और हमलोग बापू के साथ शाम को अक्सर टहलने जाया करते थे। जो डाक आती थी उसमे से जरूरी चिट्ठियाँ हमलोगों को भी बापू पढ़कर सुनाते थे और जब कभी उन पर टीका-टिप्पणियाँ हमलोगो को जानकारी केलिए कर दिया करते थे। भारतवर्ष के सभी प्रांतों के चुने हुए

लोगों से पत्र-व्यवहार होता था और उनको सुनकर हम नौजवानों के दिल मे अपूर्व उत्साह और उमंग पैदा हो जाती थी।

एक दिन महात्मा जी के पास खबर आई कि एक कोठीवाल साहब ने अपने पटवारी को मुर्गीखाने में बंद कर रखा है और उसे छुड़ाने के लिए कुछ तदबीर होनी चाहिए। मई का महीना था। महात्मा जी ने मुझे यह काम सुपुर्द किया। मैं दोपहर की धूप में ही साइकिल पर चढ़कर वहाँ से चला। जहाँ से पटवारी के मुर्गीखाने में पकड़ रखने की खबर आई थी, वह स्थान बेतिया से लगभग आठ मील दूर था। जब मैं कुछ आगे बढ़ा तब पुलिस का एक आदमी मेरे साथ हो गया। मुझे यह नहीं सूझ रहा था कि क्या करना होगा। महात्मा जी की आज्ञा थी,—पालन करना मेरा धर्म था। इसी विचार से मैं वहाँ जाने केलिए रवाना हो गया। वहाँ पहुँचने पर लोगों ने यह खुशखबरी दी कि वह आदमी छोड़ दिया गया। वहाँ से वापस आकर मैंने बापू को इसकी खबर दे दी। इस छोटी-सी बात का असर यह हुआ कि लोगों के दिल से डर धीरे-धीरे कम होने लगा। एक दूसरी घटना इसी तरह की हुई। एक बागड़ (पागल) बयान लिखाने आया और बोला कि उसके लड़के को गाँव के जमींदार ने मारा और घर में बंद कर रखा है। बापू ने जब यह खबर सुनी तब फिर मुझे ही वहाँ जाने की आज्ञा दी। बयान लेने पर मालूम हुआ कि वह आदमी निरा मूर्ख है। अपनी उम्र उसने बारह वर्ष की बनाई और अपने लड़के की चौबीस वर्ष (?)। फिर भी मैं उस गाँव में, जो बेतिया से आठ-दस मील के अंतर पर था,

गया और वहाँ के लोगों से दरयाफ्त करके मालूम किया कि यह आदमी महज धागड़ ही था और उसके बयान में कुछ सचाई नहीं थी।

जैसे-जैसे हमलोगों का बयान लिखने का काम आगे बढ़ता जा रहा था, वैसे-वैसे कोठीवालों के बीच घबड़ाहट भी बढ़ती जाती थी। अखबारों में लेख निकल रहे थे। दोनों पक्ष के सवाल-जवाब, टीका टिप्पणियाँ छपती थीं। महात्मा गाँधी बीच-बीच में कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट से मिल लिया करते थे और बयान की सारी बातें उनको सुना देते थे। कोठी वालों का कहना था कि महात्मा गाँधी व्यक्तिगत रूप से बहुत ही अच्छे आदमी हैं और उनको चंपारन में रहने दिया जाय तो कोई उज्र नहीं हो सकता, पर उनके साथी जो दूसरे-दूसरे जिले के हैं और खासकर वकालत पेशा करने वाले हैं, निहायत ही धूर्त हैं। उनके साथ यहाँ रहकर वे अपनी वकालत चलाने के लिए लोगों को झूठ-मूठ उभाड़ रहे हैं। महात्मा गाँधी उन लोगों को हटा दें तो सब काम शांति से चलता रहे। बापू ने कहा कि उनके जिस साथी के विरुद्ध मुनासिब शिकायत, सुबूत के साथ, कही जाय, उस को वे अपनी जमात से अलग कर देने को तैयार हैं, पर जबतक ऐसी बात नहीं की जाती वे किसी को भी हटाने केलिए तैयार नहीं। लेकिन ऐसा कुछ करने को कोठीवाले तैयार नहीं थे।

इस तरह जब हमलोग हटाये नहीं जा सके तब एक दिन एक कोठीवाले ने अपनी कचहरी के एक कूम के घर को जला-

कर यह मशहूर कर दिया कि लोग गाँधी जी की वजह से इस कदर शोख हो गए कि कोठी तक जलाना शुरू कर दिया। अब उनका इस जिले में रहने का नतीजा यह होगा कि लोग कोठी के साहबों पर हमला करेंगे और जगह जगह बलवा मचावेंगे। कोठी जलने की खबर बहुत अतिरंजित भाषा में 'स्टेट्समैन' आदि अंग्रेजी अखबारों में छपी और सरकार पर हमलोगों को चंपारन से हटा देने केलिए जोर दिया गया। बापू को आग लगने की खबर मिली तो तुरंत ही हमारे एक साथी श्री विंध्यवासिनी प्रसाद को, जो गोरखपुर में वकालत करते थे और ब्रजकिशोर बाबू के सगे रिश्तेमंदों में से थे, इसकी तहकीकात के लिए भेजा। वहाँ जाकर उन्होंने बहुत विस्तार-पूर्वक सारी बातों की जाँच की। पता चला कि यह आग कोठीवालों की ओर से ही लगाई गई थी और आग लगाने के पहले घर के अंदर की सारी चीजें हटा दी गई थीं। यहाँ तक कि लकड़ी के चौकठ, किवाड़, धरन इत्यादि भी घर के अंदर जली हुई चीजों में नहीं पाए गए। इन सामानों को भी बाहर निकाल कर ही आग लगाई गई थी। महात्मा जी ने इस रिपोर्ट को पढ़ा तो तुरंत ही इसकी कापी मेजिस्ट्रेट के पास भेज दी और एक छोटा सा नोट इसी आशय का अखबारों में छपने के लिए भेज दिया।

१२

बयान लिखना करीब-करीब खतम ही हो चला था। जब इस तरह की कार्रवाइयां शुरू हुईं तब हमलोगों को बापू ने

बताया कि अब हमारी जाँच का मौका आ गया है। अपनी गिरफ्तारी के पहले ही हमलोगों को अपनी जाँच संबंधी सुबूतों को किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देना चाहिए जिस से हमारी गैरहाज़िरी में ये बरबाद न हो जायँ। इसी समय तत्कालीन चीफ सेक्रेटरी मि० मेकफरसन की चिट्ठी महात्मा जी के नाम से आई। उसमें लिखा था कि बिहार सरकार उनके खिलाफ कुछ कार्रवाई करने के पहले उनसे बातें करना चाहती है और उनको छोटे लाट सर एडवर्ड गेट से मिलने के लिए फौरन राँची आ जाना चाहिए। महात्मा जी का अनुमान ठीक ही निकला। सब प्रबंध कर मेरे जिम्मे बेतिया का दफ्तर रखकर ब्रजकिशोर बाबू के साथ महात्मा जी राँची के लिए रवाना हुए। चलते समय कहते गए कि यदि २४ घंटे के अंदर कोई तार नहीं मिले तो समझना कि मैं गिरफ्तार हो गया और तब जो लिस्ट पहले बन चुकी थी उसके मुताबिक जेल जाने का प्रोग्राम आरंभ हो जाय। मेरे हृदय में जेल जाने का डर तो था, पर मैं उसे किसी पर प्रकट करने की हिम्मत नहीं करता था। सोचता था जो कुछ भी होने को होगा होकर ही रहेगा। इसके लिए फिक्र क्यों करूँ ? लिस्ट के मुताबिक महात्मा जी के पकड़े जाने पर पहले हक साहब और ब्रजकिशोर बाबू उसके बाद धरणीधर बाबू और रामनवमी बाबू तथा पीछे राजेंद्र बाबू, विन्ध्यवासिनी बाबू और मेरी बारी आने को थी। हमारी जमात इस समय पहले से बहुत ज्यादा बढ़ गई थी और कितने साथी बाहर से आकर हमारे कामों में शरीक हो गये थे। बिहार प्रांत में ही क्यों,

हिन्दुस्तान के लिए भी यह एक नया प्रयोग था। जेलके डर से लोग बहुत ही डरते थे और सारा चंपारन इसी भय से कोठीवालों से काँपता रहता था। महात्माजी ने हमारी इस कमजोरी को परख कर सब से पहले हमारे दिल से डर को निकालना जरूरी समझा। धीरे-धीरे हमलोगों को जेल-जीवन की ओर अग्रसर किया। इतना होने पर भी मैं शांति-पूर्वक यह नहीं सोच सकता था कि जेल कैसे जाऊँगा। परिवार के लोगों पर इसका क्या असर होगा और जेल-जीवन कैसे बिताया जा सकेगा। इस तरह की भावनाएँ बराबर ही उठती थीं, पर मुझे इतनी हिम्मत कहाँ थी कि इसका जिक्र भी किसी से करूँ। शंभु बाबू कुछ दिनों तक हमारे साथ रह कर पीछे महात्मा जी से छुट्टी लेकर वापस चले गए। कारण यह हुआ कि उनके पिता जी पुलिस विभाग में नौकर थे और उन्हों ने उनको वहाँ से हट जाने पर जोर दिया। मालूम नहीं अपने डर से या सरकार के बड़े अफसरों का इशारा पाकर शंभु बाबू के पिता ने कहा कि उनका चंपारन में रहना उनकी नौकरी के खिलाफ पड़ सकता है। गाँधी जी से जब यह बात बताई गई तब उन्होंने खुशी से उनको छुट्टी दे दी।

१३

मैं बेतिया से रांची का समाचार-जानने के लिए पटने चला आया। एक दिन बीत गया, पर तार न आया। लोगों के दिल में तरह-तरह की शंकाएँ होने लगीं। समय बीतने के

कुछ ही घंटे बाद तार आया कि बात चीत संतोषजनक चल रही है। तार पाते ही हमलोगों को एक नवीन जीवन मिल गया। वहां से बातें खतम कर महात्मा जी पटना लौट आए। मि० परमेश्वर लाल के बँगले पर उन्हों ने एक छोटी-सी बैठक की। पटने के चंद बड़े लोग सर अली इमाम, हक साहब, सिन्हा साहब आदि भी उसमें शामिल हुए। विचार करना था कि सरकार की ओर से जो जाँच कमिटी दी जा रही थी उसे कबूल किया जाय तो किन-किन शर्तों पर। हमलोग भी उसमें शामिल हुए और फैसला यह हुआ कि गांधी जी इसके सदस्य अवश्य रहें और जैसी कमिटी सरकार बनाना चाहती है वैसी बनावें। कमिटी के प्रस्ताव के साथ ही साथ हमलोगों ने अब तहकीकात करना बंद कर दिया।

इसके बाद हमलोग बेतिया में फिर इकट्ठे हुए। कमिटी के सामने कौन-कौन गवाह पेश किए जायँ और कौन-कौन बयान रखे जायँ, इस पर विचार होने लगा। महात्मा जी कमिटी के एक सदस्य घोषित किए गए। इसलिए इनके पास भी पुरानी सारी गोपनीय किताबें और रिपोर्टें भेज दी गई। हमलोगों ने उन रिपोर्टों को पढ़ा और चंद बातों को दूसरों पर जाहिर भी कर दिया। महात्मा जी को जब यह बात मालूम हुई तब बहुत बिगड़े और बोले कि जब सरकार की ओर से ये कागजात हमारे विश्वास पर दिये गए हैं तब इनके बारे में किसी से कुछ कहना विश्वासघात हुआ। हमलोगों की समझ में तो यह नहीं आया, पर अपना दोष स्वीकार कर लेने में ही कुशल थी और वैसा ही किया।

जब तहकीकात करने का दिन निश्चित हो गया तब सरकार की ओर से डिस्ट्रिक्ट मेजिस्ट्रेट की गवाही होने की बात तय हुई। हीकौक साहब जिला मेजिस्ट्रेट थे और एक सीधे ईमानदार आदमी होने की वजह से उनकी रिपोर्ट चपारन के किसानों के हुसवख़ाह थी। उनके स्टेनोग्राफर ने रिपोर्ट की एक कॉपी चुपचाप हमलोगो के पास भेजी। हमलोगो ने उसे पढ़ लिया और महात्मा जी को भी पढ़ने के लिए दिया। महात्मा जी ने पूछा यह क्या चीज है। जब हमलोगों ने सारी बातें बताईं तब उन्होंने उस कागज को देखने से इन्कार किया। उनका कहना था कि यह रिपोर्ट चोरी से हमें मिल रही है, इसलिए इसको ग्रहण नहीं करना चाहिए। यदि स्टेनोग्राफर अपनी नौकरी से इस्तीफा देने को तैयार हो जाय और प्रकट रूप से इसे हमारे पास ले आवे तो यह सोचने की बात हो सकती है कि इस रिपोर्ट को मैं पढ़ूँ या न पढ़ूँ। इस तरह की बातें सुनकर हमलोग तो उनके विचार की महत्ता पर आश्चर्य—चकित हो गए। मेरे मन में तो यह ख्याल आ ही नहीं सकता था कि इतना जरूरी कागज मेरे पास आवे और मैं इसे लेने या पढ़ने से इन्कार कर दूँ। पर जब बापू ने बताया तब इसे सही समझा और रिपोर्ट जो मिली थी उसे वापस कर दिया।

उन दिनों हिंदुस्तान के नेताओं में व्यक्तिगत और सार्वजनिक विचार-शुद्धता में भेद समझा जाता था। किसी का व्यक्तिगत चरित्र कैसा भी क्यों न हो, यदि वह राजनीति में हिस्सा लेता है तो बड़ा नेता हो सकता

है। इस विचार के रखने वालों केलिए जो भी जरूरी कागजात चाहे जिस तरीके से ही क्यो न मिले, काम में लाया जाय तो कोई हानि, सदाचार की दृष्टि से भी, नहीं मालूम देती। महात्मा जी ने ही अपने चरित्रबल से इस तरह के उदाहरण पेशकर जीवन के इस अंश पर नया प्रकाश डाला। भविष्य में व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन के भेद को बहुत अंशों में मिटाने की कोशिश की और कुछ हद तक सफल भी हुए।

१४

जाँच कमिटी के सदस्यों में जमींदारों की ओर से राजा बहादुर कीर्त्यानंद सिंह नामजद हुए और सर फ्रैंक सलाइ (सी० पी० के चीफ कमिश्नर) उसके सभापति बनाए गए। कमिटी की कार्यवाही बेतिया राज पैलेस में आरंभ हुई। हमलोगों ने अपनी ओर से गवाहियाँ पेश कीं। नीलहों ने भी अपने गवाह दिए। सरकार की तरफ से सेट्लमेंट ऑफिसर, डिस्ट्रिक्ट मेजिस्ट्रेट आदि पेश किये गए। जितनी रिपोर्टें आज तक छपी थीं वे मेम्बरों के पास पहले भेज दी गई थीं। जाँच का काम खतम होने पर फिर रिपोर्ट लिखी जाने लगी। यहां पर महात्मा गाँधी की दूरदर्शिता और चरित्रबल का पूरा प्रकाशन हुआ। शरहबेशी और तवान के जरिए कोठी-वालों ने काफी धन-संग्रह कर लिया था और उसे लौटाने को वे तैयार भी नहीं थे। महात्मा जी ने सिर्फ एक ही चौथाई वापस देने पर राजी होकर कमिटी के सभी मेम्बरों को अपने

साथ कर लिया। सुलह की उत्कट इच्छा प्रकट कर सभी बातों पर रिपोर्ट को सर्व सम्मत बनाने में महात्मा जी सफल हुए। स्थानीय सरकार ने रिपोर्ट को स्वीकृत कर लिया और उसके आधार पर एक नया बिल धारा-सभा में पेश कर उसे मंजूर करा लिया। जब इस कानून का मसविदा धारा सभा में पेश किया गया था तब कुछ मेंबरों ने इसका विरोध करना चाहा, पर सुलह का वातावरण पैदा हो जाने के कारण प्लांटर लोगों के प्रतिनिधि ने भी इसका समर्थन ही किया। हाँ, कोठीवालों के बीच इसकी वजह से काफी असंतोष फैल रहा था और जब बिल पास होकर कानून बन गया तब उनकी संस्था ने अपने प्रतिनिधि को इस कानून का समर्थन करने के अपराध में धारा-सभा से निकल जाने पर बाध्य किया। हमलोगों के बीच में भी कुछ गरम मिजाज के लोग थे जिनको यह कानून सोलह आना संतोषप्रद नहीं मालूम हुआ। महात्मा जी के बड़प्पन का प्रभाव तो तब मिला जब इस कानून के मुताबिक काम होने लगा और जो तावान किसानों से वसूल किया गया था उसका चौथाई हिस्सा उनको वापस मिल गया। किसानों के दिल में एक नये उत्साह का समावेश हो जाना अनिवार्य था। कोठीवाले सब के सब हतप्रभ होगये और उनके अनुचित लाभ का द्वार सदा के लिए बंद हो गया।

१५

चंपारन एक्ट पास हो जाने के बाद भी प्रायः छः महीने तक हमारे साथियों में से कुछ लोग वहाँ रह गए और लोगों के बीच स्कूल खोल कर उनको नए मार्ग पर चलने के लिए उत्साहित

किया। महात्मा जी ने चंद लोगों को बाहर से भी बुला लिया था। उनमें डॉक्टर देव, श्रीमती अवंतिका बाई गोखले और सोमन जी के नाम मुझे याद पड़ रहे हैं। उनलोगों ने गावों में स्कूल और आश्रम बना कर दिहात के रहनेवाले किसानों को शिक्षा देने का भार अपने ऊपर लिया। महात्मा जी कुछ दिनों तक यहाँ आते जाते रहे। उनके चले जाने के बाद भी कुछ दिनों तक स्कूल का काम चलता रहा।

डॉक्टर देव सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी के सदस्य और महात्मा जी के भक्तों में से थे। चंपारन में जब वे आए तब उनके साथ हमलोगों का संपर्क बहुत बढ़ गया। उनका यह ख्याल हुआ कि बिहार प्रांत में भी सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी की एक शाखा खुले। हमलोगों के मन में भी यह विचार उठा करता था कि यहाँ एक आदर्श कालेज खोला जाय और उसमें हमलोग अपने को अर्पित कर दें। स्वर्गीय गोखले के आदर्श से हमलोग प्रेरित हो रहे थे। विचार हुआ कि गंगा या सरयू के किनारे, भरसक रिविलगंज (सारन) के पास, इस तरह के कालेज की स्थापना हो। राजेंद्र बाबू इसके प्रिंसिपल होवें और हमलोग प्रोफेसर की हैसियत से इसमें शामिल हों। निर्वाह-व्यय से अधिक किसी को न मिले। डॉ॰देव बराबर इस विचार की पुष्टि में ज़ोर लगाते रहे और हमलोगों को उत्साहित करते रहे। पर डॉ॰ देव की असामयिक मृत्यु ने और प्रांत के वातावरण में बढ़ते हुए परिवर्त्तन ने हमलोगों का ध्यान इस से अलग खींच लिया। फिर इसके संबंध में कुछ किया न जा सका।

दूसरा अध्याय

डुमरांव राज और मेरी वकालत

चंपारन की जाँच कमिटी का काम खतम होने पर मैं पटने लौट आया। इसी समय—शायद अगस्त १९१७ ई० को महाराजा बहादुर डुमरांव के यहां से मेरी बुलाहट हुई। श्रीफतेह नारायण सिंह, महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी, ने मशहूर बरमा केस में मुझसे काम करने का आग्रह किया। चंपारन का काम प्रायः समाप्त ही हो चुका था। कमसे-कम मैं समझने लगा था कि मेरा अब वहाँ रहना कोई जरूरी नहीं। पैसे की कमी भी महसूस हो रही थी। साथ ही हाईकोर्ट की लंबी छुट्टी पूजा के लिए आ पहुँची थी। मैंने महाराजा के आग्रह को स्वीकार कर लिया।

बिहार के इतिहास में बरमा केस अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। डुमरांव के महाराजा सर राधा प्रसाद सिंह के दीवान रायबहादुर जयप्रकाश लाल बहुत चतुर तथा विख्यात व्यक्ति हो गए हैं। जिस समय अंगरेजों ने बरमा प्रांत को जीत कर उस पर कब्जा किया था उस समय वहाँ की आबादी बहुत कम थी। जमीन जंगलों से भरी हुई थी। सरकार की इच्छा थी कि बिहार के घनी आबादी वाले जिलों से लोग जा कर वहाँ बसें और आबाद करें। नाम-मात्र की लगानबंदी पर जमीन देने के लिए सरकार तैयार थी। इसी सिलसिले में महाराजा

तथा उनके दीवान के पास अलग-अलग सरकारी चिट्ठियाँ आईं सरकार को खुश करने के लिए महाराजा ने वरमा में जमीन आवाद करने के निमित्त दीवान के नाम से पचीस हजार रु० की मंजूरी का परवाना निकाला। वरमा में पंद्रह हजार एकड़ जमीन वंदोवस्त ली गई और उस जमीन को आवाद करने में वह रु० खर्च किया जाने लगा। महाराजा और दीवान, दोनों के मर जाने के वाद, दीवान के लड़के रायवहादुर हरिहर प्रसाद सिंह ने अपने पास से रु० खर्च कर वहाँ की जमीन आवाद कराई। इससे उनको खासी आमदनी होने लगी। दत्तक पुत्र से मुकदमा जीत कर महाराजा केशव प्रसाद सिंह जब डुमराँव की गद्दी पर वैठे तब उन्होंने वरमा की जमीन को राज के रु० से आवाद हुई वता कर उसे राज की मिल्कियत करार दिया। इसी झगड़े के कारण दोनो ओर से मुकद्दमेवाजी शुरू हुई।

पूजा की छुट्टियों में इस मुकदमें के संवंध में मैंने लखनऊ, इलाहावाद, आगरा आदि स्थानों का भ्रमण किया। तातील खतम होने पर जव मैंने हाईकोर्ट लौटना चाहा तव महाराजा ने कहा कि उनको एक विश्वासपात्र वकील की जरूरत है। यह केस कई सालतक चल सकता है। वहुतेरे कागज इसमें ऐसे हैं जिनके वारे में विरोधी को यदि खवर लग जाय तो वहुत रुपये खर्च कर भी उन्हें हासिल कर लेने की चेष्टा होगी। अतएव ऐसे आदमी की जरूरत है जो इस प्रलोभन का संवरण कर सके। उन्होंने मुझे इस केस की पैरवी में रह जाने के लिए जोर दिया। मैंने भी सोचा कि अभी कितने महीनों से हाइकोर्ट से संवध छूट

ही गया है, क्यों न इस केस में रह जाऊँ और अनुभव के साथ-ही-साथ पैसे भी प्राप्त करूँ। मैंने वचन दे दिया। राजेंद्र बाबू को जब यह खबर मालूम हुई तब उन्होंने कहा कि अभी तो मुव्वकिल के संपर्क में आना शुरू ही हुआ है, इसी समय हाइकोर्ट से हट जाना अच्छा नहीं होगा। पर मैंने फैसला कर लिया था, और तदनुसार पटना से कुछ दिनों के लिए हट ही जाना पड़ा।

२

मैं बरमा केस में अगस्त १९१७ से अक्टूबर या नवम्बर १९२० ई० तक रहा। इस बीच में इस केस के सिलसिले में मुझे हिंदुस्तान के बहुत से स्थानों में भ्रमण करने के अवसर मिले। युक्त प्रांत के कितने मशहूर शहरों को पहले-पहल देखा। मद्रास प्रांत और बरमा जाने का भी मुझे मौका मिला। वकीलों के साथ सलाह-मशविरा करना और केस के बारे में उनकी जानकारी बढ़ाना तथा जरूरत के मुताबिक और-और इसी तरह के काम करना मेरे जिम्मे थे। श्रीश्रीनिवास आयंगर और श्रीसी० आर० दास के अलावे श्रीपी०के०सेन, श्रीके०बी०दत्त और श्रीपी० आर० दास से संसर्ग होते रहे। कुछ दिनों तक सर बी० सी० मित्र से भी परामर्श करने केलिए जाना पड़ा। उन तीन सालों के अंदर भारतवर्ष तथा बिहार प्रांत में कितना उथल-पुथल हो रहा था और किस तरह नये युग की रचना हो रही थी उसका पूरा विवरण देना मेरी शक्ति के बाहर की बात है, पर केस

में उलके रहकर भी मैं इस नवीन जागृति तथा नये जीवन से बहुत देर तक अपने को अलग नहीं रख सकता था। मौके-मौके पर इसमें शरीक भी होता रहा और आगे चलकर अपने को इसमें अर्पित कर देने की तैयारी अनायास भाव से ही हो गई।

३

१९१७ ई० में एक बहुत ही भीषण हिंदू - मुस्लिम दंगा शाहाबाद जिले में हुआ। एक - दो दिन में ही सारा जिला विषाक्त हो उठा। जगह-जगह पर मुसलमानों की बस्तियाँ लुट जाने की खबरें आने लगीं। कहीं-कहीं गाँव-के-गाँव जला देने और भयानक हत्याकांड की किंवदंतियाँ पहुँचने लगीं। मैं उन दिनों डुमराँव राज के स्टेशन बँगले में ठहरा हुआ था। जिले की परिस्थिति के विषय में कुछ-न-कुछ खबरें वहाँ पहुँचती रहती थीं। एक दिन चार अंग्रेज या एंग्लो-इंडियन सिपाही-जिले में गश्त लगाते डुमराँव पहुँचे और उसी बँगले में ठहरे। कुछ दिनों के बाद सुनने में आया कि गिरफ्तारियाँ जारी हो गई हैं। जेल में सबके रखने की जगह तो थी नहीं, इसलिए आरा शहर के एक मैदान में कँटीले तार लगाकर उसी में गिरफ्तार-शुदे लोग झुंड-के-झुंड रखे जाने लगे। भारत-रक्षा कानून के अनुसार ट्रिब्यूनल बनाए गए। तीन जज उसमें थे और उनका फैसला अंतिम समझा जाता था। मि० सुलतान अहमद (पीछे सर डा०) सरकारी वकील की हैसियत से उन मुकदमों को चलाने में काफी जबरदस्त हाथ रखते थे।

मुकदमों की सुनवाई शुरू हुई। कितने ट्रिब्यूनल एक साथ बैठने लगे और लोगों को जेल भेजने लगे। सारे जिले में पहले तो पुलिस और पीछे ट्रिब्यूनल की ज्यादती से भयानक अशांति फैल गई। डर के मारे लोग जहाँ - तहाँ छिपने लगे। उनकी गैरहाजिरी में पुलिस ने उनकी जायदाद कुर्क कराना तथा तरह-तरह से उनके परिवार को तंग कर रुपए वसूलना शुरू किया। उन्हीं दिनों श्रीसी० आर० दास (पीछे देशबंधु) डुमराँव केस के संबंध में डुमराँव आए हुए थे। इस तरह के उपद्रव की बातें उनके कानों में पड़ीं तो वे सहज ही द्रवित हो गए। एक या दो केस में उन्होंने बहस भी की और शायद उसमें मुदालेह लोगों की रिहाई भी हो गई। पर सभी लोग उनको फीस देने की लियाकत तो रखते नहीं थे, इसलिए बहुतेरे मुकदमें में तो पैरवी तक न होने पाई। तरह-तरह की धाँधली की खबर रोज हमलोगों के पास पहुँचती थीं, पर सिवा लाचारी जाहिर करने के और कोई तदवीर नजर न आती थी। बड़े कहलाने वाले के पास भी कुछ उपाय नहीं था। सभी तरफ हिंदुओं के बीच हाहाकार तथा मायूसी दीख पड़ने लगी।

४

श्रीसी० आर० दास ने एक दिन मुझसे गाँधी जी के पास जाने के लिए कहा। उन दिनों महात्मा जी चंपारन आए हुए थे। जो संवाद मेरे जिम्मे हुआ उसका आशय यह था कि इस भयानक परिस्थिति से शाहाबाद जिला के हिंदुओं को बचाने की

कोई तरकीब गांधी जी निकालें। इसमें जो खर्च पड़ेगा उसे दास जी ने अपने ऊपर लेने का वचन दिया। मैं महात्मा जी के निकट गया और दास जी का संवाद उनको कह सुनाया। महात्मा जी ने कहा कि मौजूदा परिस्थिति से उनकी जानकारी है और इसमें किस तरह मदद पहुँचाई जा सकती है, इस विषय पर वे बराबर सोचते रहे हैं। पर जबतक वे किसी मुसलमान नेता को साथ नहीं ले लेते तबतक इस काम में हाथ देना उचित नहीं समझते।

यहाँ पर यह लिख देना जरूरी मालूम होता है कि उस समय होमरूल आंदोलन की वजह से एनी बिसेंट साहिबा नजरबंद कर दी गई थी और महात्मा जी का पत्र-व्यवहार सरकार तथा उनसे इसी विषय को लेकर चल रहा था। अलीबंधुओं के नजरबंद के संबंध में भी कुछ पत्र-व्यवहार चल रहे थे। महात्मा जी का खयाल था कि इन बंधुओं को साथ लेकर ही चलना मुनासिब है और खासकर हिंदू-मुस्लिम समस्याओं को हल करने के लिए उनके जैसे नेताओं के बगैर आगे कदम उठाना उचित नहीं होगा। उस समय फिरंगी महल, लखनऊ के मौलाना

मुझे याद है, कुछ खास नेताओं को छोड़कर शेष कैदी मियाद खतम होने के बहुत पहले रिहाकर दिए गए।

५

होमरूल का आंदोलन जोर पकड़ रहा था। अखबारों के जरिए इस संबंध की खबरें मिलती रहती थीं। केस में सारा समय देने के कारण और इसी सिलसिले में जगह-जगह भ्रमण करते रहने की वजह से मै एक तरह से राजनीति से अलग हो रहा था। बीच-बीच में पटने जाया करता था और वहाँ साथियों से मिलकर कुछ-न-कुछ नई बातें जान लेता था। महात्मा जी के विषय में कुछ जानकारी मिल जाती थी, पर मैं स्वय कुछ कर नहीं पाता था। लोगों के दिल से डर निकलता नहीं था। आपस में लोग कुछ बहादुरी की बातें कर लेते थे, पर बाहर कोई भी ऐसा बहादुर नजर नहीं आता था जो इस काम में जोर लगावे। हमलोग सभी नये वकील समझे जाते थे और हमारी स्थिति भी ऐसी न थी कि हमलोगों से इस काम में जोर लग सके। एनी बिसेंट साहबा की वजह से उनके अनुयायियों में कुछ जोश जरूर आ गया था, पर बहुतेरे सरकारी नौकर होने के कारण राजनीति में प्रत्यक्ष भाग लेने से लाचार थे। जहाँ तक मुझे याद है, हमलोग होमरूल लीग के सदस्य बनाने केलिए लोगों के पास गए थे, पर पटने शहर में आधा दर्जन से ज्यादा आदमी न मिल सके जो अपने नाम होमरूल रजिस्टर में खुलमखुला लिखाते। १९१८ और १९४० का अंतर उनको ही मालूम हो

सकता है जो इस काम में हिस्सा लेते रहे हैं। मेरे सामने तो वह अंतर इतना जबरदस्त रूप से मौजूद है कि मैं उसे एक क्षण केलिए भी नहीं भूल सकता।

६

महात्मा जी चुप बैठनेवाले नहीं थे। चंपारन के काम से फुरसत पाकर खेरा सत्याग्रह का संचालन कर रहे थे। इसी बीच में रौलट कानून बनने की बात चली। उसके विरुद्ध जबरदस्त कागजी आंदोलन खड़ा हो गया। जगह-जगह विरोध सूचक सभाएँ भी होती रहीं, पर गाँधी जी को सिर्फ कागजी आंदोलनों या विरोध सभाओं से संतोष थोड़े ही होने वाला था। उन्होंने सोच विचार कर रौलट ऐक्ट के खिलाफ सत्याग्रह-संचालन करने की चर्चा चलाई और अपने चुने हुए लोगों को उसमें शामिल होने के लिए कहा। बिहार में चंपारन आंदोलन में जो लोग शरीक हुए थे उनकी ओर भी महात्मा जी की नजर गई.. पर उन्होने चुने हुए लोगों को लेकर ही चलना बेहतर समझा। खासकर प्रारंभिक अवस्था में तो उन्होंने बहुत ही कम और सबसे उत्साही तथा साहसी लोगों को चुना। हमारे प्रांत से ब्रजकिशोर बाबू और राजेंद्र बाबू के नाम आना जरूरी था, पर कुछ लोगों ने जोश से उसमें शामिल होने की इच्छा दिखाई। मि० हसन इमाम ने भी सत्याग्रह-प्रतिज्ञापत्र पर दस्तखत कर दी। श्रीदेवकी प्रसाद सिंह जो अभी हाल मे ही हाइकोर्ट मे दाखिल हुए थे, एक होनहार नवयुवक थे। प्रतिज्ञापत्र पर दस्तखत बनाने

केलिए वे भी इच्छुक थे और उन्होंने दस्तखत कर ही दी। उनके पिता को जब यह खबर लगी तब वे बहुत परेशान हुए और डालटेनगंज से पटने आ पहुँचे। श्रीसच्चिदानंद सिंह तथा अन्य बड़े-बड़े लोगों ने श्रीदेवकी प्रसाद सिंह को सत्याग्रह से हटने केलिए समझा-बुझाकर राजी कर लिया। उस समय सत्याग्रह का प्रोग्राम था। चुने हुए कानून के विरुद्ध काम कर जेल जाना उसके महत्व को आज हम काल्पनिक दृष्टि से ही देखते हैं, पर उन दिनों जबकि जेल जाना गर्हित समझा जाता था और जेल के कष्ट को सहना भी आसान नहीं था, लोगों को सत्याग्रह केलिए तैयार होना एक कठोर व्रत ही था।

रौलट कानून के विरोध में देश भर में हड़ताल और सभाएँ करने का प्रबंध किया जाने लगा। पटने शहर में भी उसकी तैयारी होने लगी। मि० हसन इमाम के शामिल हो जाने से मुसलमान जमात में भी जोश आ गया और शहर के बड़े-बड़े रईस और जमींदार इसमें शामिल हुए। प्रोग्राम था सुबह मे स्नान कर प्रार्थना और दिन भर उपवास करना। शाम को बांकीपुर से जुलूस के साथ पैदल चलकर पटना शहर—करीब ६-७ मील—पहुँचना और किले के मैदान में सभा करना। दिन-भर हड़ताल रहे, इसकी भी मुनादी करा दी गई थी। मैं उस रोज पटने आया हुआ था और उस दिन के कार्य-क्रम में शामिल हुआ। मैंने सत्याग्रह प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किया क्योंकि उस समय केस की जवाबदेही ले चुका था और शीघ्र ही उसी के सिलसिले में बरमा जानेवाला था। उन

दिनों जगह-जगह पर बडे जोर की इंफ्लुएंजा के कारण भयकर सहार छाया हुआ था और लोग इस बीमारी से बहुत डरे हुए थे।

६ अप्रैल को बड़ा जबरदस्त हड़ताल पटने में हुआ। सरकार की ओर से घटे-घट आज की सारी कार्रवाइयों की खबर ली जा रही थी। सरकारी पक्ष के लाग पहले उसे मामूली एक आदालन समझते थे और कुछ लोग तो उसे खल ही समझ बैठे थ। लोगों को इसका गुमान भी नहीं था कि यही रौलट ऐक्ट-विरोधी आदोलन १९२१ ई० के असहयोग आदोलन के रूप में परिवर्त्तित हो जायगा और हिंदुस्तान के गाँव-गाँव में इसका प्रवेश होगा। उस दिन संध्या तक जब सारा प्रोग्राम खुशी के साथ अजाम हो गया तब लोगों को उसकी महानता का ज्ञान हुआ। उस तरह का हडताल पटने शहर में कभी नहीं हुआ और जुलूस भी इतना बडा था कि एक मील तक लोगों की भीड लगी हुई रही और धीरे-धीरे यह भीड आगे बढती गई। किला पहुँचने पर तो इतनी बड़ी भीड़ हो गई कि एक वक्ता केलिए भाषण देना जिसे सब कोई सुन सके, मुश्किल हो गया। इसलिए दो-तीन सभाएँ उसी जगह पर की गईं और जुदे-जुदे लोगों के भाषण हुए। शभु बाबू भी एक सभा मे बोले। मैं बोल नहीं सकता था और न मैंने अभी तक जनता में व्याख्यान देने की कोशिश ही की थी। मैं एक श्रोता और द्रष्टा ही बना रहा। लौटते वक्त मुझे इतनी प्यास लग गई कि मेरे लिए चलना मुश्किल हो गया। किसी तरह सध्या को एक बोतल

लेमनेड पीने को मिला। पी तो लिया, पर मेरे लिए उसका असर बुरा हुआ। लौटने के साथ ही बड़े ज़ोर का बुखार चढ़ आया और जब डाक्टर मुझे देखने आए तो बताया कि इंफ्लुएंजा हो गया है।

रौलट ऐक्ट आंदोलन लेकर जो हत्याकांड अमृतसर और लाहौर में हुए और जालियानवालाबाग में जिस निर्दयता के साथ लोग मारे गए, उसकी खबरें उड़ती-पड़ती पहुँचने लगी थीं, पर उसके विवरण की विशेष जानकारी नहीं हो पाई थी। कई महीने के बाद जब विस्तृत समाचार लोगों को मिलने लगा और अखबार तथा धारा सभा में इस विषय पर वाद-प्रतिवाद होने लगे तब उसकी भयानकता का पता हमलोगों को मालूम होने लगा। धारा सभा में श्रीमदनमोहन मालवीय ने एक प्रस्ताव पर बोलते हुए वहाँ की हृदय दहलाने वाली बातें विस्तार-पूर्वक कहीं जो दुनिया के चारों कोने अखबारों के जरिए पहुँच गईं। सरकार की निंदा होने लगी। लाचार सरकार की ओर से एक जाँच कमीशन बैठाई गई। उसमें दो हिंदुस्तानी लिए गए थे। काँग्रेस को उस कमीशन के ऊपर विश्वास नहीं हुआ और अपनी ओर से एक दूसरी कमीशन जाँच कर रिपोर्ट प्रकाशित करने केलिए कायम की गई। महात्मा जी, श्रीमोतीलाल नेहरू और श्रीसी० आर० दास के सिवा श्रीश्रीप्रकाशम, श्रीजयकर और श्रीसंतानम् भी उसमें शामिल हुए थे।

७

मैं कुछ दिनों तक बीमार रहा। जब अच्छा हुआ तब

डुमराँव वापस चला आया। बरमा जाने की तैयारी होने लगी और श्रीपी० के० सेन (पीछे डाक्टर) के साथ मुझे भी वहाँ जाने के लिए तैयार हो जाने की सूचना मिली। एक नई जगह देखने तथा जहाज से सफर करने की अभिलाषा ने शरीर में ताकत पैदा कर दी। मई महीने में मैं बरमा केलिए रवाना हुआ।

समुद्र यात्रा पहले-पहल की थी, इससे रास्ते में मुझे समुद्री बुखार हो गया। उस समय जहाज का खाना नहीं खाता था। पहले दर्जे में सफर करने और जहाज से कंपनी की ओर से अच्छा खाना मिलने पर भी, चूँकि छूआछूत का कुछ भेद अभी भी रह गया था, सबके साथ मिलकर भोजन करने की हिम्मत नहीं थी। किसी तरह तीन दिनों की सफर तयकर रंगून पहुँचा। वहाँ सब चीजें अपने देश जैसे मिलती थीं, इस लिए वहाँ का जीवन तो साधारणतः अपने देश के जीवन-जैसा ही हो गया। पर टोंगू में आँटा-घी का खास इंतजाम करना पड़ा, क्योंकि वहाँ सबसे अच्छा चावल जो उस समय दस आने सेर तक मिलता था मुझे खाने में अच्छा नहीं लगता था। टोंगू में जबतक रहा, आरा निवासी सिपाहियों से दिन-रात मुलाकात होती रहती थी। बरमा के रहनेवालों को सीधे रास्ते पर कायम रखने के लिए हमारी सरकार इन भाइयों का इस्तेमाल करती थी।

श्री पी० के० सेन के साथ में इसी काम के लिए वहाँ गया हुआ था। सेन साहब तो कुछ दिन के बाद ही लौट आए और हमें वहाँ आखीर तक रह जाना पड़ा।

इसी सिलसिले में मैंने रंगून और मंडाले की सफर भी करली और बरमा देश के लोगों की रीति-रिवाज को भी जानने की कोशिश की। एक बरमी को अपना शिक्षक रखकर उससे वहां की भाषा सीखने का प्रयत्न किया। जबतक टौंगू में रहा, सूर्य के दर्शन शायद ही किसी दिन मिले। दिन-रात पानी बरसता रहता था। दो-चार दिनों तक मैं बीमार हो गया। मेरी चिकित्सा के लिए वहाँ के सिविल सर्जन और असिस्टेंट सर्जन आते थे। एकबार बुला देने के बाद जबतक उन्होंने आना जरूरी समझा मेरी बुलाने की अपेक्षा न कर व बराबर आते रहे। उन्हीं लोगों की जबानी मालूम हुआ कि फरासीसी इंडोचीन की चन्द जगहों में डाक्टरों को फीस नहीं मिलती, बल्कि उन्हें प्रत्येक नागरिक से मुशहरा मिला करता है। उनका यह फर्ज होता है कि जहां कहीं या जो कोई भी उनके इलाके में जब कभी भी बीमार पड़े उसकी दवा बिना फीस किया करे। । उसके लिए वे बुलाने का इंतजारी नहीं करते थे। प्रत्येक नागरिक को कुछ रुपये टैक्स बतौर इस काम के लिए देने पड़ते थे। वह शहर कई हलकों में बँटा रहता था और प्रत्येक हलके के चार्ज में अलग-अलग डाक्टर रहते थे।

बरमा निवासियों को देखने से एक तरह की श्रद्धा का उदय हो जाता था। रहन-सहन तथा पोशाक से मर्द और

औरत को पहचानना कुछ कठिन होता था। पढ़ने लिखने में भी शायद ही उनमें कोई भेद रहता था। अक्सर दुकानदारी का काम लड़कियों के हाथों में रहता था और वे काफी चतुर एवं बुद्धिमती होती थीं। उनकी भाषा न समझने पर भी वे अपनी बातें संकेतो से समझा देती थीं। हमारे शिक्षक अपने यहाँ की रिवाजों पर अक्सर बातें करते थे। उनके यहां ब्रह्मचर्य-आश्रम जैसा जीवन• उस समय तक भी कायम था। गांव में एक पुरोहित रहता था। उसके यहाँ गाँव के सभी बालक-बालिकाओं को कुछ दिनों के लिए विद्या प्राप्त करने की इच्छा से रहना पड़ता था। उनके खाने-पीने का सारा प्रबंध गाँव के लोगों के जिम्मे रहता था। वहाँ के लोग बड़े शाहखर्च होते हैं। जो कुछ वे कमाते हैं उसे खर्च कर डालते हैं। गाना-बजाना, नाच-तमाशा, यदि आसपास—होता हो तो, गाँव भर के लोग अपने-अपने घर में ताले लगा बालबच्चों के साथ वहाँ पहुँच जाते हैं और जबतक तमाशा चलता रहे वहाँ बने रहते हैं। रेशमी कपड़े का व्यवहार वे बहुत करते हैं और टोंगू ऐसी छोटी जगह में जहाँ की आबादी शायद ही दस हजार की होगी, व्हायट-वेलेडलॉ की दूकान मौजूद थी। उनका मुख्य रोजगार खेती है। इसमें उनको कष्ट नहीं उठाना पड़ता। बीज बो दिया और फिर उसको उखाड़ कर रोपा। पानी पटाने की कभी जरूरत ही नहीं पड़ती। पानी इतना बरसता है कि बगैर किसी तरह के तरददुद के धान की फसल तैयार हो जाती है। खाना उनका सादा होता है। मछली और भात ज्यादातर वे खाया

करते हैं और उनकी उपज भी वहाँ यथेष्ठ होती है। हाँ, वे कर्ज में बराबर फँसे रहते हैं। कारण, जो कुछ पैदावार होती दो चार महीने में ही उसे खा-पका जाते हैं और फिर वर्ष का शेष समय कर्ज पर ही बिताना पड़ता है। मुझे बरमा छोड़े आज २१ वर्ष हो गए। मालूम नहीं, उनके ढंग में कुछ परिवर्त्तन हुआ है या नहीं, पर जिन दिनों में वहाँ था मेरा अनुभव लगभग इसी प्रकार का था।

८

१६१६ ई० में कांग्रेस का अधिवेशन अमृतसर में होना ठीक हुआ और श्री मोतीलाल नेहरू उसके सभापति चुने गए। हमलोगों को भी उसमें शामिल होने की इच्छा हुई, पर महाराजा ने डरकर हमें शरीक होने से रोक दिया। उनकी इच्छा के विरुद्ध काँग्रेस में शामिल होना मैंने उचित नहीं समझा। मेरे और कोई साथी भी वहाँ नहीं जा सके। दूर होने के कारण बिहार से ज्यादा लोग उसमें शरीक भी नहीं हो सके। अमृतसर काँग्रेस कई पहलुओं से बहुत मार्के की हुई। श्रीमोतीलाल नेहरू काँग्रेस में पूरी तरह खिंच आए और राष्ट्रीयता की दृष्टि से उग्र विचार के समर्थकों में आ गए। मौलाना महम्मद अली और उनके बड़े भाई मौलाना शौकत अली, दोनों, ने उसमें अपना योग दिया। महात्मा गाँधी की प्रेरणा तथा उनकी नेतृत्व करने की छिपी शक्ति का उद्घाटन मानो अमृतसर की काँग्रेस में हो गया। उस समय सारा देश जालियान वाला बाग के हत्याकांड से क्षुब्ध तथा प्रभावित हो रहा था। सरकारी तथा

काँग्रेस द्वारा संगठित कमिटियों की रिपोर्ट एक नवीन वायुमंडल पैदा कर रही थी।

मैं तो उस समय वरमा केस और साथ ही चौधरी केस में डुमरांव की ओर से काम कर ही रहा था, राजेंद्र बाबू को भी राय बहादुर हरिहर प्रसाद सिंह की ओर से उसी मुकदमे में काम करने पर राजी होना पड़ा। यद्यपि हम दोनों के कार्य-क्षेत्र आरा शहर में ही थे, लेकिन दोनों दलों के संचालकों में इस तरह अविश्वास फैला हुआ था कि हम लोगों का परस्पर मिलना भी उन दोनों के हक के खिलाफ समझा जाता था। यदि एक दल के लोग दूसरे दल के लोगों से मिलते या बातें करते पाए गए तो उन पर शक होना शुरू हो जाता था। इसी कारण हम लोग निकट रहते हुए भी अक्सर मिल नहीं सकते थे।

नवम्बर १९१९ ई० के अंत में मुझे मद्रास जाना पड़ा। मुकदमे में श्रीसी०आर० दास को न रख कर श्रीश्रीनिवास अयंगर को रखने का फैसला राज के मंत्रियों ने किया। दास जी ने पचास हजार रुपया पेशगी माँगा था और पचीस हजार रु० मासिक फीस पर काम करने के लिए राजी थे। महाराजा को यह पसंद नहीं आया। उन्होंने हिंदुस्तान के सभी हाइकोर्टों की छानबीन कर श्रीआयंगर को ही पसद किया। मेरा काम उनको मुकदमा समझाने का था। इसी सिलसिले में मुझे एक महीने से अधिक मद्रास शहर में रहना पड़ा। श्रीश्रीनिवास आयंगर ने अपनी सहायता के लिए वहीं के एक जुनियर वकील को चुना था। उनका नाम था श्रीवरदाचारी। ये बड़े शांत प्रकृति और

आस्तिक विचार वाले सज्जन थे। कानून के वे पंडित समझे जाते थे। पीछे फेडरल कोर्ट ऑफ इंडिया के जज हुए। दिसंबर महीने में रात को बिजली पंखा खोल कर सोने का अनुभव मुझे पहले-पहल मद्रास में ही हुआ। श्रीश्रीनिवास आयंगर से रोज मुलाकात होती थी। केस के संबंध में बातें होने के बाद प्रति दिन हिंदुस्तान की राजनीति तथा नेताओं के बारे में आलोचना प्रत्यालोचना होती रहती थी। उस समय श्रीआयंगर मद्रास सरकार के एडवोकट जेनरल और एक माहिर कानूनदाँ के अलावे बहुत ही तेज और प्रभावशाली व्यक्ति समझे जाते थे। इतनी तेजी के साथ अंग्रेजी और तामील बोला करते थे कि उनकी बातों को सुनने और समझने केलिए अपनी सारी मानसिक शक्ति लगानी पड़ती थी। ऐसा बहुत ही कम मौका होता था जबकि दूसरे किसी को बोलने का अवसर मिलता हो। राजनीति में वे अपने को मालवीय जी का अनुयायी मानते थे। श्रीराजगोपालाचारी को बहुत ही निर्मल चरित्र के व्यक्ति समझते थे। सभी नेताओं के बारे में उनकी अपनी धारणा थी और उसे स्वच्छंदता के साथ प्रकाशित करते थे। मैं राजा जी के नाम से चंपारन से ही परिचित था। महात्मा जी प्रत्येक प्रांत के एक या विशेष प्रमुख सज्जन से चिट्ठी-पत्री किया करते थे। राजा जी उनमें एक थे। भाग्यवश मैं राजा जी के ही मकान में ठहरा। राजा जी वकालत करने के लिए सलेम चले गए थे और उनका खाली मकान श्रीआयंगर के घर के ही निकट पड़ता था। मैं उसी मकान में किराए पर रहने लगा।

उन दिनों श्रीसत्यमूर्त्ति और श्री ए० रंगास्वामी आयंगर विलायत से लौट आए थे। मद्रास में उनके एक या अधिक व्याख्यान भी हुए थे। मुझे उन दोनों के व्याख्यान सुनने का पहला बार वहाँ मौका मिला। श्रीसत्यमूर्त्ति को एक प्रभावशाली वक्ता के रूपमें उसी समय मैंने जाना। उतनी अच्छी और भावपूर्ण अंग्रेजी भाषा में व्याख्यान देना मैंने बहुत कम सुना था। राजनीति-क्षेत्र में रहते-रहते उन दोनों सज्जनों से घनिष्ठता पीछे हुई, पर उस समय तो एक अजनबी पुरुष की हैसियत से ही उनको जान सका था। श्रीश्रीनिवास आयंगर दोनों की प्रशंसा करते, पर अंग्रेजी बोलने में श्रीसत्यमूर्त्ति का नाम विशेष रूप से उल्लेख करते थे।

मद्रास में रहते हुए एक घटना घटी। उनदिनों मुझे वकालत की ओर विशेष रुचि रहती थी और चाहता था कि मैं एम० एल० की परीक्षा दे दूँ। इसलिए पुरानी किताबों की खोज में रहता था। एक दिन विज्ञापन पढ़कर मैं मिलापुर महल्ले में घुमने चला। एक रिक्शा पर बैठा हुआ था। वह महल्ला ब्राह्मणों का ही था। मुझे क्या मालूम था कि उस महल्ले में अब्राह्मणों को और वह भी रिक्शा पर चढ़कर जाना अनुचित समझा जाता है। मेरा वहाँ जाना और रिक्शा पर चढ़ना अनुचित समझा गया। मैं इस भेद को उस समय जानता नहीं था। पीछे जब ब्राह्मण-अब्राह्मण के विषय में जानने का मौका आया तब मैंने समझा कि मेरा रिक्शा पर चढ़ना क्यों कुलीन ब्राह्मण-समाज को बुरा लगा था।

१०

१९२० साल के शुरु में ही बरमा केस जज रौस के इज-लास में प्रारंभ हो गया। श्रीश्रीनिवास आयंगर मुकदमे की प्रारंभिक वहस करने आए। साथ में श्रीवरदाचारी भी थे। कई दिनों तक उन्होंने वहस की और राज का केस समझाया। कानूनी बातें भी समझाई और उसके बाद मद्रास वापस चले गए। उनके दूसरी बार आने की बात थी, पर जिस तरह केस आरंभ हुआ उससे वहाँ के लोगों को संतोष नहीं हुआ। डुमराँव राज के केस में हिंदुस्तान के सर्वोत्कृष्ट वकीलों से राय ली जा चुकी थी। उनका आदर्श इस कारण बहुत ऊँचा था। जिस तरह से श्रीआयंगर ने वहस की उससे उनको संतोष न होना स्वाभाविक था। जब इजहार होना शुरू हुआ तब कोई ऐसा गवाह नहीं गुजरा जो श्री एन० एन० सरकार (पीछेसर) के जिरह में ठहर सके। कारण, गवाहों ने झूठी गवाहियाँ देने की शिक्षा पाई थीं। उनको उस समय के वाकयातों की कोई जानकारी थी नहीं और हो भी नहीं सकती थी। जब रोज-रोज की गवाहियों से जज के ऊपर बुरा असर पड़ने लगा तब महाराजा को बड़ी फिक्र हुई और श्री सी० आर० दास को पुनः केस में लाने का उपाय करने लगे। स्वयं उनके घर पर पहुँचे। पर दासजी को इस तरह केस से अलग कर दिए जाने का क्रोध तो था ही, उन्होंने महाराजा को चंद मिनट तक बैठने भी नहीं कहा। महाराजा ने बहुत ही अनुनय-विनय की तो उनसे बातें

की और नयी शर्तें उनके पास रखीं। महाराजा को सारी बातें कबूल करनी पड़ीं। डेढ़ हजार रु० रोजाना और रहने का सारा खर्च, अपने मन के मुताबिक, जो उनके जुनियर रहें उनकी फीस, अपनी अस्वस्थता के कारण साथ के एक डाक्टर की फीस, इन सब शर्तों को कबूल कर महाराजा दास जी को फिर से इस केस के लिए बुला लाए। दासजी और दो तीन दिनों तक चुपचाप सब बातों को देखते सुनते रहे। कचहरी में भी घंटे दो घंटे के लिए जाते और वहाँ गवाहों के जिरह में टूटने का दृश्य देखा करते। कलकत्ते के एक महाशय श्री आर० डी० मेहता नाम के थे। रौस साहब जज से उनकी पहले की जान-पहिचान थी। जब उनकी गवाही हुई तब कुछ ऐसी बातें उन्होंने कह डालीं जो कागज में लिखी बातों के खिलाफ पड़ती थीं। जज के ऊपर उनकी गवाही का भी बुरा असर पड़ा। दास जी ने इन बातों को देखा तो जज से कहा कि इस तरह केस को चलाना उनको पसंद नहीं है। अब उनके हाथ में केस आया है। अगर दो चार दिनों की उनको मोहलत मिले तो वे केस को ठीक से चलाने का प्रयत्न करें। जज ने इसे मंजूर कर लिया। केस कुछ दिनों के लिए मुलतवी हो गया।

इस बीच में दास जी ने मुकदमे का रूप बदल देने को ठाना। निरर्थक गवाहों को पेश न कर चुने हुए दो चार ही गवाह देना उचित समझा। कुछ गवाहों की गवाहियाँ कमीशन से ली जाय, इसका प्रबंध करने लगे। राज की ओर से केस प्रारंभ होने के पहले यह कबूल कर लिया गया था कि राज

अदालत के सामने ही गवाहों को पेश करेगा। यहाँ तक कि महाराजा बहादुर की गवाही भी अदालत में ही होगी और उनको कमीशन पर गवाही देने का जो कानूनी हक हासिल था उसका वे इस्तमाल न करेंगे। दासजी ने देखा कि यदि महाराजा की गवाही अदालत के सामने हुई तो जिरह में उनका ठहरना असंभव है और मुकदमे पर इसका बहुत बुरा असर होगा। अतएव उन्होंने महाराजा को गवाह में पहले पेश करने से इन्कार कर दिया। कलकत्ता मेडिकल कालेज के प्रिंसिपल को बुलाकर उनका सर्टिफिकेट इस आशय का हासिल किया कि महाराजा का स्वास्थ्य इस योग्य नहीं है कि वे देर तक इजलास पर बैठ सकें। इसी बुनियाद पर उनकी गवाही प्रारंभिक अवस्था में न कराने की आज्ञा अदालत से मिल गई। दासजी ने अपने कलकत्ते के रहनेवाले एक दोस्त एटर्नी के यह काम सुपुर्द किया कि वे दो-चार बड़े लोगों को राज की ओर से गवाहियाँ देने के लिए राजी कर दें। उन्होंने उसके लिए महाराजा से एक लाख रुपये की मंजूरी लेली और कहा कि उसका हिसाब नहीं दिया जायगा। आगे चलकर कुछ ऐसे बड़े लोगों के इजहार कराए गए जिनके इजहार के बारे में हम लोग सोच भी नहीं सकते थे। अगर सारे मुकदमें का, दोनों दलों के कारनामों का विस्तार से बयान किया जाय तो एक बड़ा ग्रंथ बहुत रोमांचकारी उपन्यास-जैसा बन जा सकता है। पर, मैं न ऐसा करना चाहता हूँ और न इसकी आज जरुरत ही मालूम होती है। इतना ही लिखना काफी होगा कि इस

मुकदमे में हिंदुस्तान के अच्छे-से-अच्छे वकील बैरिस्टरों का मजमा लगता रहा और नौ दस महीने तक आरा शहर दोनों दलों के बीच एक युद्ध क्षेत्र का काम देता रहा। अपने-अपने कैम्पों के फाटकों पर बाजाप्ते मिलिटरी जैसा पहरा बिठाया गया था। एक ओर श्रीश्रीनिवास आयंगर, श्री सी० आर० दास, श्रीवरदाचारी आदि से काम लिया जाता था तो दूसरी ओर श्री मोतीलाल नेहरू, श्री एन० एन० सरकार और कभी-कभी सर तेज बहादुर सप्रू थे। श्रीराजेंद्र प्रसाद के जिम्मे कानून का अध्ययन कियागया था और इसी कारण उनका इजलास पर बहुत ही कम जाना होता था। परस्पर विपक्षी होने पर भी हमलोगों का संबंध पूर्ववत् बना रहा, पर मुलाकात शायद ही कभी होती थी।

श्रीसी० आर० दास की बहस इतनी अच्छी और प्रभावोत्पादक हुई की हमलोग तो एकबारगी उससे मुग्ध हो गए। उन्होंने मुकदमे का एक चित्र बनाना शुरू किया और एक प्रवीण कलाकार जैसा उस चित्र को धीरे-धीरे पुष्ट करने लगे। उसके भिन्न भिन्न अंगों का बनावट को इस तरह जज के सामने पेश करने लगे कि बहस खतम होते-होते ऐसा मालूम पड़ने लगा कि सचमुच एक जीती-जागती तस्वीर कोर्ट के सम्मुख खड़ी हो गई है। उनकी इस कला की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी होगी। आज बीस-बाईस साल के बाद भी मेरे चित्त पर उस चित्र की छाया वैसी ही मौजूद मालूम पड़ती है।

दूसरे पक्ष की ओर से श्रीसरकार ने बहस की। उनकी बहस का तरीका भिन्न था। एक-एक विषय को वे लेते थे और उस पर अपनी टीका-टीप्पणी कर डालते थे। एक विषय को दूसरे से क्या संबंध था, इसको बतलाते जरूर थे, पर इतने कमजोड़ शब्दों में कि उसका असर बहुत देर तक नहीं ठहरता था। कभी-कभी उनकी आलोचना बहुत तीव्र हो उठती थी और लोगों पर उसका बहुत प्रभाव भी पड़ता था, पर वे सारे केस का कोई जीवंत सा चित्र नहीं बना सके। मेरा ऐसा अनुमान है कि जज के ऊपर उनकी बहस का शायद बहुत बड़ा असर न हुआ हो तो कुछ ताज्जुब नहीं। केस के दूसरे हिस्से पर बहस करने की जवाबदेही श्रीमोतीलाल नेहरू के ऊपर थी। नेहरू जी काफी अनुभवी और चतुर एडवोकेट थे। उनकी बहस की काफी प्रशंसा रही। राज की तरफ से इस हिस्से पर भी कई नामी मुसलमान बैरिस्टर मि० खुदाबख्श मि० शहाबर्दी की मदद से दास जी ने ही बहस की। एक दिन वे कहते थे कि विपक्षी राय बहादुर हरिहर प्रसाद सिंह ने श्री-सरकार जी से असल मुकदमे पर बहस कराकर अपने हक में अच्छा नहीं किया, क्योंकि सरकार जी को छोटे-छोटे मुकदमों का ही अनुभव है। इस तरह के बड़े केस करने का मौका उनको बहुत ही कम मिला है। यह काम यदि नेहरू जी जैसे अनुभवी और चतुर वकील से लिया जाता तो उसका असर दूसरा ही होता। पीछे यह भी मालूम हुआ कि सरकार जी बैरिस्टर होने के नाते अपने को सिनियर समझते थे और मोतीलाल जी को, उम्र में बड़े होने पर भी वकील से ऐडवोकेट बनाए जाने के

कारण प्रचलित कानून के अनुसार जुनियर मानते थे। उनके हाथों में केस देने में अपनी मर्यादा वे नहीं समझते थे।

११

बहस समाप्त हो जाने के बाद ही मैं आरा से चला आया। विहारी छात्र-सम्मेलन का अधिवेशन डालटेनगंज में उसी समय होने जा रहा था। मैं उस अधिवेशन मे शामिल होने केलिए डालटेनगंज जा पहुँचा। देवकी बाबू इस अधिवेशन को सफल बनाने का प्रयत्न कर रहे थे। वे बहुत होनहार, निर्मल चरित्र के नवयुवक थे। उनके साथ मेरी मित्रता थी। शंभु बाबू मेरे कलकत्ते से भागलपुर आजाने के बाद कुछ दिनों तक हाइकोर्ट वकील के साथ रहकर काम सीखने के संबंध में देवकी बाबू के साथ ही रहते थे। दोनों में काफी घनिष्टता थी। देवकी बाबू अपने जीवन को संयत बनाने का बहुत प्रयास किया करते थे और सर्वाङ्गपूर्ण बनते जा रहे थे। उस अधिवेशन के सभापतित्व के लिए रेवरेंड एंड्रूज साहब बुलाए गए थे। प्रांत के सभी जिलों से छात्र पहुँचे थे। मैंने उस सम्मेलन में शामिल होकर एक प्रकार से नवीन जीवन पाया, ऐसा सोचने लगा। तीन वर्षों तक लगातार एक ही मुकदमे मे सारा समय देते-देते मैं एक प्रकार का कूप-मंडूक होता जा रहा था। उस जवाबदेही से आजाद होकर स्वतंत्र वायुमंडल में अपने को बहुत प्रसन्न पाया।

१२

इसी बीच में देश मे नवयुग का संचार होने लगा था। महात्मा जी हिंदू-मुसलमान के बीच ऐक्य स्थापित करने केलिए

सतत् प्रयत्न कर रहे थे। अली बंधुओं के साथ उनका संबंध घनिष्ठ होता जा रहा था। खिलाफत के प्रश्न ने मुस्लिम दुनियाँ में एक विचित्र वायुमंडल उपस्थित कर दिया था। धर्म के नाम पर जान देने वाले मुसलमान भाइयों को एक सूत्र में पिरोने और उनको हिंदुस्तान के राष्ट्रीय प्रयत्न के साथ मिलाने का भगीरथ प्रयत्न हो रहा था। महात्मा जी उस समय मुसलमानों के एकमात्र नेता बनते जा रहे थे। बड़े-बड़े मुस्लिम नेताओं के साथ उनका घनिष्ठ संपर्क होता जाता था और जो रास्ता महात्मा जी निकालते थे उसे सभी मुस्लिम नेता कबूल करते जा रहे थे। खिलाफत कमिटी की स्थापना हुई और महात्मा जी उसके सदस्य बनाए गए। जालियाँवाला बाग के हत्याकांड ने, हिंदू-मुसलमान दोनों का खून एक साथ मिलाकर इस जागृति में विशेषरूप से सहायता पहुँचाई। स्वामी श्रद्धानंद जैसे कट्टर आर्यसमाजी के हृदय में जो परिवर्तन हुआ और उसका जो प्रभाव मुस्लिम जनता पर पड़ा वह तो एक असंभाव्य घटित होता जान पड़ा। दिल्ली के जुम्मा मसजिद में स्वामी जी का भाषण होना एक विचित्र घटना थी।

देश का वायुमंडल इसी तरह का था जबकि नेशनल काँग्रेस का एक विशेष अधिवेशन सितंबर १९२० में कलकत्ते में होना निश्चित हुआ। श्रीमोतीलाल नेहरू और श्रीसी० आर० दास दोनों ही इस समय आरा में बरमा केस के सिलसिले में रहते थे। दास जी से जब कभी मेरी बातें होती थीं तब उनसे मौजूदा राजनीति-क्षेत्र में होनेवाली बातों का पता लगता रहता

था। वे आरा से ही कलकत्ता कांग्रेस में शामिल होने केलिए गए और फिर आरा लौट आए। उनसे जो मेरी बातें हुई थीं वे आज भी मेरे हृदय-पट पर अंकित हैं।

जालियां वाला बाग के संबंध में दास जी ने कमिटी के सदस्य की हैसियत से काफी दिलचस्पी ली। उनका ख्याल था कि रिपोर्ट काफी जोरदार और रंजित शब्दों में लिखी जाय। ऊपर के कारनामों को इस तरह दिखलाया जाय कि पाठकों के ऊपर उसका तीखा असर पड़े। इसी दृष्टि से उन्होंने प्रमाण जमा कराए, पर गाँधी जी ने एक दूसरा ही दृष्टिकोण पेश किया। उनका कहना था कि रिपोर्ट जितनी मुलायम बनायी जा सके, बनायी जावे, पर सरकार के सामने यह चुनौती रखी जाय कि कम-से-कम जो सिफारिश कमिटी की हो उसे सरकार कबूल कर ले और तदनुसार उसे कार्यान्वित करे। यदि सरकार उन सिफारिशों को भी मंजूर न करे तो देश की ओर से एक आंदोलन खड़ा किया जाय और वह इतना व्यापक हो कि सरकार को मजबूर होकर हमारी माँगें पूरी करनी पड़े। उसी समय महात्मा जी ने कमिटी के प्रमुख सदस्यों नेहरू जी, दास जी, जयकर जी, प्रकाशम् जी तथा सनतानम् जी से यह वचन ले लिया कि कमिटी की सिफारिशों पर यदि सरकार का रुख संतोषजनक न हो तो वे जो आंदोलन खड़ा करें उसमें ये लोग शामिल हों। दास जी कहते थे कि हमलोगों को गांधी जी का भावी कार्य-क्रम क्या होगा, इसका कुछ भी भास न था और खयाल तो यह होता था कि इतनी थोड़ी सिफारिशों को कबूल कर लेने में सरकार को

कोई दिक्कत न होगी। वचन मिल गया और महात्मा जी आगे का कार्य-क्रम सोचने लगे। सरकार ने उनकी माँगें ठुकरा दीं। ऐसा करना स्वाभाविक ही था। महायुद्ध में विजयी ब्रिटिश सरकार, गुलाम हिंदुस्तान की ओर से माँगें पेश हों, यह कैसे सोच सकती थी, कबूल करना तो दूर की बात ठहरी।

लाला लाजपत राय की सदारत में कलकत्ते के काँग्रेस अधिवेशन ने असहयोग का प्रस्ताव पास कर दिया। दास जी ने उस प्रस्ताव का विरोध किया। कलकत्ते से वापस आकर आरा राज के बंगले में, जहाँ वे ठहरा करते थे, उन्होंने एक-दो बातें मुझसे कहीं। वकालत छोड़ने की बात को लेकर दास जी का कहना था कि आज उनका प्रभाव वकालत की वजह से ही है। साल में ७०-८० हजार रुपये से वे लोगों की मदद किया करते हैं। वकालत छोड़ देने पर ये रुपये उनको कहाँ से मिलेंगे और लोगों को कैसे मदद कर सकेंगे। इसमें सन्देह नहीं कि दास जी का हृदय महान था। रुपये पैसे के विषय में तो उनकी उदारता सब पर विदित थी। मेरे मित्र देवकी बाबू एक सार्वजनिक संस्था की सहायता के लिए आरा आए थे और दास जी के निकट प्रार्थना करने पर पाँच सौ रुपये का चेक एक क्षण में उनको मिल गया। आरा से जब कभी वे कलकत्ते जाते थे तब नौकरों को काफी रुपये इनाम दे जाते थे। किसी को लड़की की शादी करनी है तो दास जी से मदद माँगी और यथेष्ट सहायता मिली। उनकी महानता का परिचय तो उनके जीवन के छोटे-से-छोटे कामों से

मिलता है। मैं उनसे जो कुछ सुना करता थ उससे मुझे इनका पता लगता रहता था।

असहयोग का प्रस्ताव पास हो जाने पर दास जी ने इसके विरोध में आंदोलन करना चाहा, पर समय की प्रगति ऐसी थी कि उनके विचार के अनुसार काम करनेवालों की संख्या क्षीण होती गई। कुछ ही महीने में दास जी को वकालत छोड़ने के लिए मजबूर हो जाना पड़ा। उस समय सरकार की ओर से एक बड़े केस में काम करने के लिए उन्हें दावत मिली थी। श्रीएस० आर० दास उस समय एडवोकेट-जेनरल थे। खुद दास जी से मिलकर उनसे केस लेने के लिए आग्रह करने आए थे। समय का प्रवाह प्रवल था। जो दास जी वकालत छोड़ने में भी आगा-पीछा सोचते थे, राष्ट्र-चिंता के कारण वकालत छोड़ कर सारे देश की मुकुट-मणि बन गए, और देशबंधु कहलाने लगे। उनका प्रभाव पहले से कहीं अधिक व्यापक हो गया। उनके व्याख्यान सुनने के लिए असंख्य लोगों की भीड़ होने लगी। देश के कोने-कोने से उनके पास निमंत्रण आने लगे। देशबंधु का अधिकांश समय अब राष्ट्रीय कामों में ही बीतने लगा। सारे देश में एक नई लहर थी, एक नई चेतना थी। सर्वत्र अपार उत्साह और आशा का संचार हो रहा था।

तीसरा अध्याय

१

१९१४—१८ ई० के यूरोपीय महायुद्ध में हिंदुस्तान के निवासियों ने ब्रिटिश सरकार को प्रचुर मात्रा में धन-जन से मदद दी थी। इंगलैंड के प्रधान मंत्री ने इस बात को मुक्त कंठ से स्वीकार भी किया था और उसके बदले में हिंदुस्तान को, युद्ध समाप्त होने पर, यथेष्ट अधिकार देने की बात कही थी। टर्की लड़ाई में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध शामिल हुई। हिंदुस्तानी मुसलमानों के ऊपर उसका भी असर पड़ा। सरकार ने घोषित किया कि मुसलमानों का धर्मस्थान सुरक्षित रहेगा और खलीफ़ा के ऊपर आघात नहीं होगा। जब लड़ाई खतम हुई तब सुलह-नामे की शर्तों में उन घोषणाओं की रक्षा न की गई। मुसल-मानों के ऊपर उसका बड़ा बुरा असर पड़ा। इस बीच में नागरिक स्वतंत्रता तथा जो थोड़ी-बहुत देश में जागृति होने लगी थी उसको दबाने के लिये भारत सरकार रौलट-ऐक्ट-नाम से एक काला कानून पास कर दिया। हिंदुस्तान के कोने-कोने से उस कानून के विरोध में सभाएँ हुईं। सरकार से कहा गया कि लड़ाई में मदद देने के बदले हिंदुस्तान की स्वतंत्रता कबूल करना तो दूर रहा, रही-सही स्वतंत्रता भी इस कानून से छिनी जा रही है। पर इन सभाओं और विरोध-सूचक प्रस्तावों का कुछ भी असर सरकार पर नहीं हुआ। असहयोग की तैयारी की गई

और ६ अप्रेल को देश भर में हड़ताल और सभा करने का निश्चय हुआ। उसी निश्चय के अनुसार पटने में वृहत् सभा हुई जिसका जिक्र पहले किया जा चुका है। इसी सिलसिले में पंजाब में घोर अत्याचार हुआ और जालियाँवाला बाग का हत्याकांड भी इसी नीति का प्रदर्शन था। मुसलमानों की मजहबी जगहों पर विधर्मियों का कब्जा होने और खलीफा की शक्ति का अंत हो जाने के कारण उनका दिल काफी दुख रहा था। जालियांवालाबाग में निर्दोष हिन्दू-मुसलमानों की हत्या होने से हिंदू-मुसलमान दोनों के हृदय पर भारी आघात पहुँचा। सरकारी जाँच-कमिटी की रिपोर्ट ने रही-सही न्याय की आशा पर भी पानी फेर दिया। हिंदुस्तानियों के बीच असंतोष का समुद्र सा उमड़ रहा था। इसी समय असहयोग आंदोलन की नींव पड़ी। अपूर्व उत्साह और जोश के साथ लोगों ने उसको अपनाया। हिंदु और मुसलमान दोनों के बीच एकता का भाव उत्तरोत्तर बढ़ता गया और खिलाफत-कमिटी और अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी दोनों के काम एक ही नेतृत्व के अंदर संचालित होने लगे। प्राय: एक ही तरह के प्रस्ताव दोनों संस्थाओं द्वारा स्वीकृत होते थे और देश की जनता उसे एकही समझकर बिना जाति और धर्म के भेदभाव प्रदर्शित किए व्यवहार में लाने के लिए तैयार रहती थी।

कलकत्ता कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में स्वीकृत प्रस्ताव के अनुसार खिलाफत के प्रति किए गए अत्याचारों, पंजाब हत्याकांड जैसी घटनाओं से मुल्क को बचाने, और स्वराज्य प्राप्त

करने के लिये असहयोग आँदोलन का संचालन आवश्यक हो गया। उपाधि-त्याग, अदालतों का वहिष्कार, स्कूल और कालेजों को खाली कर देना, स्वदेशी और खादी का व्यवहार करना, हिंदु-मुसलमान के बीच एकता का प्रचार, अछूतों को अपनाना, पंचायत कायम करना और राष्ट्रीय विद्यालय तथा विद्यापीठ स्थापित करना, असहयोग आँदोलन के मुख्य अंग समझे गए। जनता से इन अंगों की पुष्टी तथा तदनुसार कार्य करने के लिए अपील की गई। जगह-जगह पर सभाएँ होने लगीं। इन इन प्रस्तावों को व्यवहारिक रूप देने के लिए भाषण दिए जाने लगे और काम होना भी शुरू हो गया। कितने वकीलों ने वकालत छोड़ने की घोषणा की। महात्माजी, मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अली का दौरा हिंदुस्तान के कोने-कोने में होने लगा। इस दौरे का प्रभाव जनता पर बिजली-जैसा पड़ा। जहाँ-जहाँ उन लोगों के आगमन हुए, वहाँ-वहाँ एक विशेष उत्तेजना-सी होती गई। बिहार प्रांत में भी उनका दौड़ा हुआ और यहाँ भी उनके भाषण का अभूतपूर्व प्रभाव लोगों पर पड़ा। जिन्होंने काँग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार काम नहीं किया, वे अपनी दृष्टि में ही नीचा देखने लगे, ऐसा भाव पैदा हो गया।

२

दिसंबर के अंतिम सप्ताह में काँग्रेस का साधारण अधिवेशन नागपुर में हुआ। हमलोग उसमें शामिल हुए। वहाँ का जोश देखने लायक था। असंख्य लोगों की भीड़ से काँग्रेस

में एक नया दृश्य पैदा हो गया था। नवयुवकों की अपार थी। बहुत छात्र उसमें शामिल हुए। कितने कालेज स्कूल खाली हो गए। उन संस्थाओं के बहुतेरे छात्र नाग कांग्रेस में शामिल होने के लिए पहुँचे और कांग्रेस प्रतिनिधि हैसियत से शरीक भी हुए। बिहार प्रांत से भी बहुत-से छा कांग्रेस में शामिल हुए। उस जमाने के नवयुवकों में से बहुत-से आजतक भी कांग्रेस के काम अपना सारा समय देते रहे और कांग्रेस के स्तंभ बने हुए हैं।

नागपुर कांग्रेस में विषय-निर्धारिणी समिति के मेंबरों का चुनाव उपस्थित प्रतिनिधियों द्वारा वहीं हुआ। लड़कों में इतना जोश था कि इस चुनाव में बड़ी तायदाद में अपने ही लोगों को उन्होंने चुना। मुझे याद है कि मैं बिहार के प्रतिनिधियों की इस सभा का अध्यक्ष बनाया गया था और स्वयं उस वातावरण को देखकर उम्मीदवार नहीं हुआ। कारण उस समय तक वकालत छोड़ने की घोषणा मैंने नहीं की थी। वे ही लोग चुने गए जिन्हों ने या तो स्कूल कालेज छोड़े थे या वकालत छोड़ने की इच्छा प्रकट की थी। कितने लोग तो सिर्फ चंपारन में एक-दो बार जाने और एक-दो गाँवों की हालत अखबार में छपाने के कारण मशहूर हो गये थे। वे चंपारन के नाम पर ही चुन लिए गए। लोगों में श्रीरामविनोद सिंह, श्रीमनोरंजन प्रसाद (इस समय राजेंद्र कालेज, छपरा के प्रिंसिपल), श्रीरामरक्ष ब्रह्मचारी, श्रीध्वजा प्रसाद साहु आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। उन लोगों ने चंपारन ग्रूप के नाम से अपने को संबोधित कर विषय-समिति के

प्रतिनिधि निर्वाचित कराए थे। शंभु बाबू के साथ उन लोगों की विशेष घनिष्ठता थी, पर अपनी वकालत नहीं छोड़ने के कारण वे भी उस दल के मोर्चे के खिलाफ चुने न जा सके। यह उदाहरण तत्कालीन नवयुवकों के उत्साह का द्योतक है।

काँग्रेस अधिवेशन में दो दलों में प्रतिनिधि विभक्त हो गए। श्रीसी० आर० दास महात्मा जी के साथ सहमत नहीं थे और उन्होंने अपने दल के प्रतिनिधियों को अपने विचार के साथ ले चलने की कोशिश की। कितनी स्पेशल ट्रेनें कलकत्ते से उनके प्रतिनिधियों को नागपुर पहुंचा रही थीं। देशबंधु जिस काम को अपने हाथों में लेते थे उसे पूरा करने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा देते थे। उनकी शक्ति महान् थी, यह सबको स्वीकार करना होगा। नागपुर काँग्रेस में अपना मताधिक्य कायम करने के लिये उनको बहुत से प्रतिनिधियों को नागपुर आने-जाने का खर्च देने का प्रबंध करना पड़ा, पर प्रतिनिधियों की बहुत बड़ी संख्या महात्मा जी के साथ थी। बहुत प्रयत्न करके भी उनके विरुद्ध मत की पुष्टि नहीं हो सकी। उस समय मि० मुहम्मद अली जिन्ना भी नागपुर काँग्रेस में शरीक थे और एक प्रस्ताव के विरोध में उनका भी भाषण हुआ था। मुझे याद है कि अपने भाषण में उन्होंने महात्मा जी को मि० गाँधी कह कर संबोधित किया था। उस पर दर्शकों ने उन्हें गाँधी जी को महात्मा कहने के लिए जोर दिया। उस तरमीम को उन्होंने कबूल किया, पर जब मौलाना मुहम्मद अली को उन्होने मिस्टर कहा सब दर्शकों के जोर लगाने पर भी उन्होंने मौलाना कहने से इंकार

कर दिया। एक छोटे-से दृष्टांत से पता चला चलता है कि उस समय दर्शकों की प्रवृत्ति कैसी और मि० जिन्ना जैसे लोग भी उससे कितनी दूर तक प्रभावित हुए थे।

नागपुर काँग्रेस के बाद लोगों में जागृति और भी बढी। दिन प्रति दिन वकिलों के वकालत छोड़ने की खबर अखबारों में छपने लगीं। छात्रों ने विद्यालय को छोड़ना शुरू किया। पटने में भी इसका असर काफी रहा। इंजिनियरिंग स्कूल के बहुसंख्यक विद्यार्थी स्कूल छोड़ कर मि० मजहरुल हक के यहाँ पहुँचे। उन्होंने भी अपनी बैरिस्ट्री छोड़ दी थी। महात्मा गाँधी जब अपने दौड़े में पटना आए थे तब उनके ही यहाँ ठहरे थे। हिंदू और मुसलमानों की अपार भीड़ उनकी कोठी पर इकट्ठी हो गई थी। इंजिनियरिंग स्कूल के छात्रों को मौजूदा सदाकत आश्रम में रखने का इंतजाम किया गया। हक साहब भी वहीं एक छोटे बँगले में जाकर रहने लगे। बड़ी कोठी छोड़ एक साधारण आदमी की जिंदगी उन्हीं लड़कों के साथ वे बिताने लगे। वहाँ से ही उन्होंने मदरलैंड नाम का एक अखबार निकाला। उनके जेल जाने पर कुछ दिनों तक उस अखबार को श्रीमंत्रेश्वर शर्मा तथा मौ० लतीफउर रहमान चलाते रहे। पीछे जाकर वह बंद हो गया।

चर्खे का प्रचार बढ़ रहा था। इंजिनियरिंग स्कूल के छात्रों ने वहाँ पर एक कारखाना बनाया और चर्खे बनाने तथा चलाने का काम होने लगा। इसी बीच में बहुत से कालेज के छात्रों ने भी पढ़ना छोड़ दिया था और उनकी पढ़ाई का कोई

प्रबंध नहीं हो सका था। इस कारण वे लोग इधर-उधर भटकते फिरते थे। एक रोज मौ० फजलुल रहमान ने राजेंद्र बाबू से आकर कहा कि दस हजार लड़के सड़कों पर पड़े हुए हैं। उनके लिए अलग विद्यापीठ खोलना जरूरी हो गया है। इस काम में देर क्यों हो रही है! विद्यापीठ स्थापित करने की बात चल ही रही थी पर ऐसा विश्वास नहीं होता था कि काफी छात्र उसमें शामिल हो सकेंगे। मौ० फजलुल रहमान की बातों को सुनकर भी पूरा विश्वास करना मुनासिब नहीं मालूम पड़ता था। लड़कों का भी जोर विद्यापीठ खोलने के लिए होने लगा। एक किराये के मकान में, पटना गया राड पर जहाँ राजेंद्र बाबू की कोठी थी, लड़कों को पढ़ाने का प्रबंध हुआ। श्रीजयप्रकाश नारायण (पीछे प्रसिद्ध समाजवादी नेता) और श्रीविश्वेश्वर प्रसाद (पन्ना बाबू, पीछे बार-ऐट ला तथा समाजवादी नेता) उन दिनों विद्यापीठ में पढ़ने लगे। श्रीसिंहेश्वर प्रसाद सिंह (पीछे डिपुटी मेजिस्ट्रेट, राय बहादुर) भी विद्यापीठ के छात्रों में से थे। श्रीबदरीनाथ वर्मा ने बी० एन० कालेज की नौकरी से इस्तीफा दे दिया और विद्यापीठ में शामिल हो गए। राजेंद्र बाबू इसके प्रिंसिपल हुए। नागपुर काँग्रेस से लौटने के बाद मैंने वकालत न करने का मन में संकल्प कर लिया था, क्योंकि मैंने भी उस प्रस्ताव के पक्ष में अपना हाथ उठाया था। पर हाईकोर्ट का जाना-आना छोड़ा नहीं था। मैं विद्यापीठ में घंटे-दो-घंटे इतिहास पढ़ा देने का काम कर दिया करता था, क्योंकि तबतक इतिहास का कोई अध्यापक नियुक्त नहीं किया जा सका

था। श्रीकृष्णवल्लभ सहाय ने बी० ए० पासकर 'गेट पदक' प्राप्त किया था और जब असहयोग में वे शामिल हुए तब उनको विद्यापीठ के लिए योग्य समझा गया। श्रीजगतनारायण लाल भी वकालत छोड़कर विद्यापीठ के अध्यापक हुए।

महात्मा गांधी का दौरा इसी बीच बिहार प्रांत में हुआ। जब-जब उनका आगमन होता था लोगों का उत्साह दुगुना हो जाया करता था। अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी की बैठक बेजवाड़ा में हुई जिसमें भावी कार्यक्रम निश्चित किया गया। एक करोड़ रुपया तिलक स्वराज्य फंड के लिए इकट्ठा करना, एक करोड़ काँग्रेस सदस्य बनाना तथा २० लाख चर्खे का प्रचार कराना, ये काम तीन महीने के अंदर पूरा करने का प्रस्ताव अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी ने स्वीकृत किए। सारे सूबे में इन कामों के संचालन के लिए पटने में एक प्रांतीय ऑफिस अस्थायी रूप से कायम किया गया।

फरवरी के पहले सप्ताह में श्रीव्रजनंदन प्रसाद (बिहार शरीफ, मौजूदा चेयरमैन, पटना डि० बोर्ड) को एक छात्रों की सभा में व्याख्यान देते समय वकालत छोड़ देने की घोषणा करनी पड़ी। उन्होंने मुझको तार देकर बुलाया। मैं वहाँ गया और उनकी जबानी लोगों के उत्साह की बात सुनी। मेरी इच्छा थी कि हमलोग जितने सहपाठी थे, एक साथ ही सलाह करके वकालत छोड़ते। पर व्रजनंदन बाबू के वकालत छोड़ देने के बाद उस काम को रोक रखना मुश्किल हो गया। दूसरे दिन मेरे साथ श्रीव्रजनंदन प्रसाद तथा श्रीरामनवमी प्रसाद

राजेंद्र बाबू के निकट गए और हमलोगों ने अपने को उनके सुपुर्द किया। इससे उनको खुशी हुई। उनकी इच्छा थी कि शंभु बाबू भी आजाते तो ठीक होता। उन्होंने कई बार ऐसा कहा कि कोई बोलकर भी आ जाता तो अच्छा होता। मुझे न बोलने का अभ्यास था और न वक्ता बनने की इच्छा रहती थी। मैं आफिस के कामों के ही उपयुक्त समझा जाता था। अतएव कुछ दिनों के बाद जब कमिटी का चुनाव अस्थायी रूप से हो गया तब मैं श्रीराजेंद्र प्रसाद के अधीन उनका सहायक मंत्री हुआ। हक साहब सभापति, ब्रजकिशोर बाबू और शफी साहब उप सभापति तथा राजेंद्र बाबू मंत्री हुए। बदरी बाबू को कोषाध्यक्ष का काम दिया गया।

इस समय बिहार के भिन्न-भिन्न जिलों में नागपुर प्रस्तावों के अनुसार वकालत छोड़ने वालों के नाम अखबारों में छपने लगे थे। उन्हीं लोगों के हाथ जिले-जिले में काम चलाने की जवाबदेही दी गई। पटने में मौ० खुरशेद हसनैन ने वकालत छोड़ दी थी। गया में श्रीकृष्णप्रकाशसेन सिंह, श्रीमुकुटधारी प्रसाद ने वकालत छोड़ी, पर आरा में कोई प्रमुख वकील शामिल नहीं हुआ। छपरे में जकरिया हुसेन हाशमी (बार एट-ला) श्रीमथुरा प्रसाद, श्रीविंधेश्वरी प्रसाद, श्रीरामदयालु सिंह, श्रीराम-नवमी प्रसाद, आदि दरभंगे में श्रीब्रजकिशोर प्रसाद, श्रीधरणीधर मोतीहारी मे श्रीगोरख प्रसाद, भागलपुर में श्रीदीपनारायण सिंह (बार-एट-ला, प्रमुख जमींदार और मशहूर नेता) मुंगेर में श्रीश्रीकृष्ण सिंह, श्रीतेजेश्वर प्रसाद, श्रीनेमधारी सिंह आदि,

पुरुलिया में श्रीअतुलचंद्र घोष आदि वकीलों ने वकालत छोड़ दी और काँग्रेस के काम में संलग्न होगए। हजारीबाग में श्रीरामनारायण सिंह ने वकालत छोड़ दी थी और श्रीबजरंग सहाय (मौजूदा सरकारी वकील के साथ जिले में दौरा कर रहे थे। पलामू में शेख साहब (एक प्रमुख जमींदार) के साथ कितने नवयुवकों ने काम का बोझ उठा लिया था। राँची में डॉ० पूर्णचंद्र मित्र तथा उनके साथ काम करनेवाले नवजवानों के सर पर काम की जवाबदेही आगई थी। मानभूम में श्रीनिबारचंद दास गुप्त, हेडमास्ट्री से इस्तीफा देकर उस जिले में ही क्यों, छोटानागपुर और पीछे तो सारे बिहार के लिए एक आदर्श नेता हो गए। उन्होंने अपने निर्मल चरित्र की छाप लोगों पर डाली। संतालपरगना में कोई प्रमुख सज्जन इस आंदोलन में शामिल न हुए थे, पर श्रीशशिभूषण राय और श्रीविनोदानंद झा ने इस कमी को पूरा किया। पूर्णिया में भी श्रीपुण्यानंद झा ने जिले में काफी प्रचार का काम किया और कितने नए कार्यकर्त्ताओं को अपने साथ काम करने के लिए उत्साहित किया।

५

बेजवाड़ा कार्यक्रम को पूरा करने के लिए काफी जोश के साथ प्रांत भर में काम होने लगे। प्रत्येक जिला का अपना-अपना कोटा बनाकर तीन महीने में उसे पूरा करने का भार वहाँ के प्रमुख नेताओं पर छोड़ दिया गया। एक नवीन जागृति सूबे के एक छोर से दूसरे छोर तक दिखने लगी। रोज-रोज ऐसे-

ऐसे लोगों से सहायता मिलनी शुरू हुई जिसे सुन-सुन कर हम-लोगों का उत्साह दूना होने लगा। महात्मा जी का दौरा झरिया इलाके में हुआ था और उनको एक मोटी रकम वहाँ से मिली। यह रकम विद्यापीठ मे खर्च करने के लिए थी। प्रस्ताव हुआ कि बिहार विद्यापीठ की स्थापना एक स्थायी स्थान पर हो जाय और वहाँ जो मकान बने उसकी नींव महात्मा जी के हाथों से दिलाई जाय। मकान कहाँ पर बने, यह निश्चय करने के लिए आपस में सलाह होने लगी। दो स्थान नजर के सामने थे। एक तो दीघा जहाँ पर हक साहब ने इंजिनियरिंग स्कूल के छात्रों को रखा था तथा उनके लिए एक मकान भी बनवा लिया था और दूसरी जगह थी कंकड़बाग (पटना-बांकीपुर के दक्षिण)। पटना शहर के पूर्वी किनारे पर भी एक खाली बाग और बँगला प्राप्य समझा जाता था और उस ओर भी नजर जाती थी। हक साहब सदाकत आश्रम बना चुके थे और उनकी इच्छा थी कि विद्यापीठ वहीं कायम हो। अतएव, बहुमत उसी पक्ष का हुआ और बिहार विद्यापीठ की नींव वहीं दी गई।

इस बीच में दरभंगे का एक हाई स्कूल जिसकी प्रबंध-समिति में ब्रजकिशोर बाबू थे, राष्ट्रीय विद्यालय घोषित किया गया और बिहार विद्यापीठ के तत्त्वावधान में आया। मुंगेर में खड़गपुर, खगड़िया, दानापुर में खगौल, पूर्णियाँ में फारबिसगंज पीरसुकाम, कटिहार और भागलपुर शहर आदि कई जगहों में राष्ट्रीय विद्यालय खोले गए। इस प्रांत के बहुतेरे स्थानों में राष्ट्रीय विद्यालय खुले और उत्साह के साथ चलने लगे। जिले-

जिले से रुपए इकठे होने लगे और बिहार बैंक में जमा होते रहे।'
देश के भिन्न-भिन्न स्थानों से रुपए एकत्र होने की खबर पहुँचने
लगी। अपने-अपने जिले को आगे रखने की उत्सुकता प्रांत के
कार्यकर्त्ताओं में भी पैदा होने लगी। विश्वास नहीं होता था
कि बिहार जैसा पिछड़ा हुआ सूबा १० लाख रुपए इकट्ठा कर
सकेगा। हमारा कोटा शायद १० ही लाख था, पर जैसे-जैसे
समय बीतने लगा जिले-जिले से रुपया इकट्ठा होने की खबर
मिलने लगी। गया जिला में काम अच्छी तरह नहीं बढ़ता देख
मुझे कुछ फिक्र होती थी जहाँ-जहाँ प्रमुख वकीलों ने वकालत
छोड़ी थी वहाँ रुपये आसानी से और ज्यादा तायदाद में मिलते
थे और ऐसा मुनासिब भी मालूम पड़ता था। जब तीन महीने
खतम होने पर आए तब एक दिन के लिए मैं भी औरंगाबाद की
ओर कुछ रुपये इकट्ठा करने के लिए कृष्णवल्लभ बाबू के साथ
गया। एक-दो गाँवों और औरंगाबाद में कुछ रुपये इकट्ठा किए।
उस वक्त हमलोगों को काफी जोश था और पैदल चलने में
थकावट नहीं मालूम होती थी। घूम-घूम कर रुपया एकत्र करना
गौरव की बात समझी जाती थी। चार-चार आने के टिकट बहुत
छपे थे। दिहातों में इस तरह दान देने वाले बहुत मिलते थे।
आखिरी तारीख तक हमारे सूबे का कोटा पूरा होने की खबर
पहुँच गई। उससे हमलोगों को काफी संतोष मिला। अबतक किसी
सार्वजनिक काम केलिए साधारण लोगों से रुपया नहीं मिलता रहा
था। पटने में जब १९११ई० में काँग्रेस का अधिवेशन हुआ था तब
जरूरत के मुताबिक खर्च भर पैसा भी इकट्ठा नहीं हो पाया था।
एक-दो धनीमानी सज्जनों को इस कमी को पूरा करने केलिए

काफी रकम देनी पड़ी थी। ऐसे सूबे में १० लाख रुपया एकत्र हो जाना और वह भी तीन महीने के अंदर, एक असाधारण काम समझा गया।

६

बेजवादा में जो नियम स्वीकृत हुए थे उनके अनुसार प्रांतीय और जिला कमिटियों का संगठन होने लगा। प्रांतीय दफ्तर पटने में रहा। दूसरे जिले में ले जाने की बात भी जब तब उठती रही, पर बहुमत पटने के पक्ष में ही रहा। चुनाव में मैं फिर भी राजेंद्र बाबू का सहायक मंत्री बनाया गया। राजेंद्र बाबू बहुत समय दौरा में ही बिताते थे। विद्यापीठ का काम भी उनके ही शिर पर था। समय बहुत न मिलने पर भी सब कामों को सिलसिले के साथ ले चलना उनके जैसे व्यक्ति केलिए ही संभव था। विद्यापीठ की स्थापना हो जाने पर राष्ट्रीय शिक्षा का काम समुचित रूप से चलने लगा। अब लोगों का ध्यान खादी प्रचार की ओर गया। हिंदू-मुस्लिम ऐक्य तो उस समय बहुत ऊँचे दर्जे तक पहुँच गया था, तौभी बकरीद के मौके पर नेताओं का दौरा होना जरूरी समझा जाता था। मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अली के साथ महात्मा जी के दौरे भी दो-तीन बार सूबे में हुए थे। जहाँ-जहाँ सभाएँ होती थीं लोगों की अपार भीड़ इकट्ठी होती थी। दो-तीन जिलों के दौरे में मैं भी शामिल हुआ था, पर मेरे जिम्मे दफ्तर का काम होने की वजह से पटने छोड़कर दूसरी जगह जाने का मुझे बहुत कम अवसर मिलता था।

चर्खा चलने लगा, पर सूत जो नये कातने वाले कातते थे वह बहुत ही कमजोर होता था। मौजूदा राछ पर कपड़ा बुनना मुश्किल काम था। जुलाहे लोग इस तरह के कते सूतों से कपड़े बुनने से इंकार करने लगे। जब नये ढंग की राछ बनने लगी तब जुलाहों को खादी के सूत से कपड़ा बुनने में कुछ कम कठिनाई होने लगी। उस समय जो कपड़े तैयार होते थे वे बहुत ही मोटे और रुखड़े होते थे। तानी-भरनी में अगर एक और मिल का सूत मिला दिया जाता था तो वह कपड़ा कुछ अच्छा बनता था और जुलाहों को बुनाई में सुभीता भी होता था। इस तरह जितना सूत काता जाता था सब की खपत हो जाती। पर जब महात्माजी के सामने यह प्रस्ताव रखा गया तब उन्होंने इसे नामंजूर कर दिया। उनका कहना था कि इस तरह कपड़ा बनने लगेगा तो खादी का प्रचार नहीं हो सकेगा। लाचार हमलोगों को उनकी आज्ञा माननी पड़ी और खादी प्रोग्राम को उसी आधार पर आगे बढ़ाने की कोशिश होने लगी।

तिलक स्वराज्य फंड से दो लाख रुपये खादी के काम को आगे बढ़ाने के लिए खर्च करने का निश्चय प्रांतीय कांग्रेस कमिटी ने किया। श्रीबनारसी प्रसाद झुनझुनवाला इसके कार्य में रखे गए और जिले-जिले में इस काम को चलाने के लिए एक या दो सदस्य खास तौर पर हर जगह मुकर्रर किए गए। अनुभव नहीं रहने और काम नया होने की वजह से साल-दो-साल तक इस ओर ज्यादा काम नहीं हो सका। इस

काम के लिए अखिल भारतीय तिलक स्वराज्य फंड से एक लाख रुपये बिहार मे खर्च करने और इसमें से २० हजार रु० श्रीराम-विनोद सिंह को, गांधी आश्रम, मलखाचक के द्वारा खर्च किए जाने के निमित्त, अलग कर दिए गए।

श्रीरामविनोद हमारे प्रिय छात्रों में से थे, पर जब भागल-पुर छोड़कर उनका रहना ज्यादातर मुजफ्फरपुर में होने लगा तब वे आचार्य कृपलानी के मुख्य सहायक बन गये। एक छोटी जमात उनकी बिहार में कायम हो गई और उनका काम देश में आजादी का जोश फैलाने का था, पर किसी खास उपाय के वे कायल नहीं थे। धीरे-धीरे जब गांधीजी का प्रस्ताव बढ़ने लगा और कृपलानी जी उनके सिद्धांत के कायल होते गए तब यह जमात कृपलानी जी से अलग होकर काम करने लगी। हाँ श्रीरामविनोद के साथ कुछ लोग कृपलानी जी के अन्यतम शिष्यों में से थे और उनकी देखरेख में ही उनलोगों ने मलखाचक तथा मधुबनी में खादी प्रचार का काम करना प्रारंभ किया। प्रांतीय काँग्रेस कमिटी में इस समय इस बात को लेकर दो दल हो गए कि २० हजार रुपया जो श्रीरामविनोद के लिए निश्चित किया हुआ था वह किन शर्तों पर उनको दिया जाय। इस विषय को लेकर बहुत दिनों तक आपस में वाद-विवाद चलते रहे। कृपलानी जी की मदद से इस बीच में श्रीरामविनोद को ६०-७० हजार रुपये खादी के काम के लिए गुजरात प्रांत से मिल गए और कुछ दिनों के बाद यह २० हजार की रकम भी उनको दे दी गई। कुछ दिनों तक उनका काम बहुत संतोष-जनक

चला, पर जब उन्होने अपनी शाखाएँ कितने जिलो में फैला लीं और उनके हाथों मे ज्यादा पैसे आने लगे तब खर्च का बढ़ जाना भी स्वाभाविक ही था। उनके काम मे धीरे-धीरे ढिलाई होने लगी। इसी बीच मे काँग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार एक अखिल भारतीय चर्खा संघ कायम हुआ और इसकी शाखाएँ सब प्रांतों मे खुलने लगीं। बिहार में भी इसकी एक शाखा कायम हुई और बाबू श्रीराजेंद्र प्रसाद उसके एजेन्ट हुए। बिहार मे चर्खा-संघ की शाखा खुल जाने के बाद यह विचार हुआ कि इस काम को एक ऐसे कार्यकर्त्ता के जिम्मे सौंपना चाहिए जो अपना सारा समय इसी उद्योग मे दे सके। बाबू श्रीलक्ष्मीनारायण, एम० एस० सी० के विद्यार्थी, जो पढ़ना छोड़कर असहयोग आंदोलन में शरीक हुए थ, इस काम में नियुक्त किए गए। प्रांतीय काँग्रेस कमिटी का संबंध इस संस्था से धीरे-धीरे खतम हो गया। जिले में जिन लोगो ने खादी काम के लिए रुपया लिया था उनमें से कितने लोगो ने अपने हिसाब ठीक-ठीक तौर पर रखे ही नहीं थे और कितनों ने इस रुपये को काँग्रेस के साधारण कामों में खर्च कर दिया था। जो रुपये वसूल किए जा सके व सब चर्खा-संघ के सुपुर्द कर दिए गए। कृपलानी जी और श्रीरामविनोद में आगे चलकर पटी नहीं और श्रीरामविनोद के कामों से उनको असंतोष हो गया। कृपलानी जी का संबंध गाँधी आश्रम, मलखाचक से टूट गया और उन्होंने अपना कार्य-केंद्र मेरठ में गाँधी आश्रम बना कर चलाना शुरू कर दिया।

खादी का प्रचार धीरे-धीरे होना शुरू हो गया। हमलोग

भी खादी को व्यवहार में लाने लगे। पहले-पहल जो धोतियाँ बनती गईं वे इतनी वजनदार होती थीं कि उनको फींचने में काफी कष्ट मालूम होता था। मुझे याद है कि अगस्त या सितम्बर १९२१ ई० में जो अ० भा० काँग्रेस कमिटी की बैठक बंबई में हुई थी उस वक्त मैं खादी की धोती का व्यवहार करना शुरू कर चुका था। बरसात के दिन में बंबई शहर में ऐसी धोती को फींचने और सुखाने में जो कठिनाई मालूम पड़ी थी वह अभी भी याद है। जसे जैसे आदत लगती गई खादी पहनना स्वाभाविक होता गया और पीछे चलकर यदि कभी कोई हल्की धोती या कपड़ा पहनना पड़ा तो मालूम होता था जैसे कपड़ा पहना ही नहीं।

मिल के कपड़ों के बहिष्कार पर जोर दिया जाने लगा और बंबई के अखिल भारतीय काँग्रेस अधिवेशन के अवसर पर बहुत से कपड़े इकट्ठा करके जलाए गए। इस बात को लेकर बहुत बहस मुबाहिसा होने लगी। कपड़ा जलाने का काम कहाँ तक उचित है, इसके पक्ष और विपक्ष में बहुत से लेख और भाषण होते रहे। पर महात्मा जी जिस काम पर तुल जाते थे उसे पूरा किए बिना छोड़ते ही कहाँ थे। एक वर्ष में स्वराज्य प्राप्त करने के लिए जिन-जिन शर्तों का पालन करना था उनकी ओर जनता का ध्यान बराबर दिलाते रहना प्रत्येक काँग्रेस-कर्मी का मुख्य काम था। प्रांत में यह काम भी हमारे जिम्मे था। जहाँ तक हम लोगों ने शक्ति प्राप्त की थी उसके अनुसार काम करते ही जाते थे। हाँ, हमारी निष्ठा, हमारा विश्वास एक तरह का नहीं था। कितने लोगों को एक वर्ष में स्वराज्य होने की बात पर विश्वास ही

नहीं होता था, पर अपनी ओर से किसी तरह की अड़चन डालना मुनासिब नहीं समझ कर जो बातें बताई जाती थीं उनको शक्ति भर पूरा करने की कोशिश की जाती थी।

इस सिलसिले में यह लिख देना उचित जान पड़ता है कि जब असहयोग का प्रस्ताव देश के सामने रखा गया था उस समय मेरे मन में यह संदेह उठता रहा कि इससे स्वराज्य कैसे हो सकेगा। कहाँ तक यह संभव होगा कि लोग इस रास्ते पर बहुत दूर तक चलने वाले मिल सकेंगे। मैं और श्रीद्वारका नाथ रायबहादुर एक दिन राजेंद्र बाबू के मकान में, इसी प्रस्ताव पर अपने मित्र श्रीशंभुशरण से बहस कर रहे थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि यह प्रस्ताव बहुत ठीक है और इसके अनुसार काम होना चाहिए। हमलोग इसके विरुद्ध में दलीलें दिया करते थे। श्रीजालेश्वर प्रसाद उस समय वकालत पास कर चुके थे। वे राजेंद्र बाबू के यहाँ रहते थे, इसलिए उनसे भी हमलोगों की बहस होती थी।

नागपुर काँग्रेस के बाद जब हमलोगों ने वकालत छोड़ना तय कर लिया तब शंभु बाबू के घर में ही एक वक्तव्य निकालने का निश्चय हुआ। हम लोगों का खयाल था कि महात्मा गाँधी के काम में मदद पहुँचाने की गरज से पूरा विश्वास न रख कर भी हमलोग साल भर के लिए वकालत छोड़ दें ताकि यह न कहा जाय कि हम लोगों के आगे न बढ़ने से ही स्वराज्य प्राप्त करने में बाधा पड़ी। वक्तव्य लिखा गया, पर उसे प्रकाशित करने

में कई तरह के विचार के कारण बाधा पड़ गई और वह वक्तव्य लिखा ही रह गया।

इससे यह पता चलता है कि उस समय जो-जो लोग असहयोग आंदोलन में शामिल हुए थे उनमें दो खयालों के लोग थे। एक दल ऐसा था जिसका अंध विश्वास था कि ३१ दिसंबर १९२१ ई० को जेल का फाटक खुल जायगा। जो उन दिनों जेलों के अन्दर बंद थे वे रिहा हो जायेंगे। और पहली जनवरी १९२२ ई० को स्वराज्य हो जायगा। राजेंद्र बाबू के साथ, श्री विपिनविहारी वर्म्मा तथा मैं नवंबर महीने में बंबई की अ० भा० काँग्रेस कमिटी की बैठक से वापस आरहे थे। बंबई मेल के इंटर क्लास के एक डब्बे में हमलोग बैठे थे। उत्कण्ठा हुई कि एक वर्ष में स्वराज्य हो जाने के विषय में राजेंद्र बाबू का कैसा विश्वास है, इसे जानें। हिम्मत करके हमलोगों ने यह प्रश्न उनसे किया क्या सचमुच एक वर्ष में स्वराज्य हो जायगा? जिस तत्परता और प्रगाढ़ विश्वास के साथ उन्होंने 'हाँ' कहा वह आज भी जैसे के-तैसे मेरे हृदय-पटल पर अंकित है। आज सोचता हूँ, तो मालूम पड़ता है, यदि हमलोग सब कोई राजेंद्र बाबू के ही जैसा विश्वास रखते होते तो सचमुच हमलोग स्वराज्य के निकटतर हो गए होते।

८

काँग्रेस का काम बढ़ता गया। धीरे-धीरे साल खतम होने पर आया। इस बीच में प्रिंस ऑफ वेल्स के आगमन की बात चली। काँग्रेस का हुक्म हुआ कि जहाँ-जहाँ प्रिंस जायँ वहाँ-

वहाँ हड़ताल हो और उनके आगमन का विरोध किया जाय। पटने में नवंबर महीने में ही, जहाँ तक मुझे स्मरण है, प्रिंस के आने का प्रोग्राम था। हमलोगों ने उनके आगमन के उपलक्ष्य में जोरदार हड़ताल की घोषणा की। कोई भी उनके स्वागत में शरीक न हों, इस आशय के नोटिस बँटवाये। प्रिंस आने को ही थे। शंभु बाबू और मैं दोनों घर में बैठे कुछ बातें कर रहे थे। उस रोज वकीलों और मवक्किलों को भी कचहरी बॉयकाट करना था। इसी समय श्रीद्वारिकानाथ पहुँचे और बोले कि तुमलोगों के साथ सरकार की संधि होने जा रही है। बात क्या है, पूछने पर उन्होंने कहा कि श्रीसच्चिदानंद सिन्हा (एक्सक्यूटिव कौंसिलर) के यहाँ श्रीतेजबहादुर सप्रू (पीछे सर, डॉ० आदि) का तार आया है। लॉर्ड रीडिंग देशबंधु दास के साथ सुलह करने की बात चला रहे हैं और एक्सक्यूटिव कौंसिल की बैठक इसी-लिए कलकत्ते में बुलाई गई है। अपनी आदत के अनुसार उन्होंने एक सुनहले दिन की कल्पना कर ली। इससे हमारे काम में कोई रुकावट नहीं होने को थी। काँग्रेस का हुक्म था, उसका पालन करना हमारा कर्त्तव्य था। जबतक दूसरा हुक्म नहीं आता तबतक हमें अपना कार्यक्रम चलाते जाना था।

प्रिंस आए। शहर में बहुत जोर हड़ताल रहा। कचहरी बहुतेरे वकील नहीं गए। प्रिंस के स्वागत केलिए लोरियाँ भर-भरकर दिहात से लोग बुलाये गए। राजा बहादुर अमावाँ ने काफी जोर लगाया और बहुतेरे लोगों को, अपने मुलाजिमों को, लॉन के सामने खड़ा कराकर पटने शहर के नाम से उनका

स्वागत कराया। श्रीपी०आर० दास उस समय हाइकोर्ट जज हो चुके थे। मि० सुलतान अहमद (पीछे सर) सरकारी वकील थे। देशबंधु दास कलकत्ते में पकड़ लिए गए थे। मौ० खुरशैद हसैनन भी (सुलतान साहब के संबधी)पटने में पकड़े जा चुके थे। उसी दिन प्रिंस के आगमन के उपलक्ष्य में दावत दी गई थी। जज दास और गवर्नमेंट एडवोकेट सुलतान दावत में शामिल होने केलिए निमंत्रित थे। जज दास शामिल हुए, मि० सुलतान अहमद ने दावत में शामिल होने से इंकार कर दिया। उनके रिश्तेदार कैद में हों वह दावत में शरीक हों, यह उनके गले के नीचे नहीं उतरा। उनकी वाहवाही की धूम मच गई। लोगों ने उस रोज समझा कि अब स्वराज्य नजदीक आ गया है। कौन जानता था कि आगे दिन चलकर हम पीछेको लौट पड़ेंगे। हिंदू-मुसलमान ऐक्य पीछे अनैक्य में बदल जायगा और जो बात उस दिन हासिल सुदा समझी जाती थी उसे फिर से हासिल करने केलिए सतत् प्रयत्न करते रहना पड़ेगा।

इसके बाद ही धर-पकड़ का काम शुरू हुआ। स्वयंसेवक दल बनने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और उसके अनुसार लोग स्वयंसेवक बनने तथा बनाने लगे। यह दल गैरकानूनी करार दिया गया। कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता स्वयंसेवक दल में भरती हो गए थे और एक-एक करजेल भेजे जा रहे थे। पं० श्रीमोती लाल नेहरू, श्री सी० आर० दास, लाला लाजपत राय जेल पहुँच चुके थे। हमारे प्रांत में मुजफ्फरपुर के जिला मेजिस्ट्रेट ने काफी बहादुरी दिखलाई थी और वहाँ के अनेक कांग्रेस वालों

को, जिनमें सफी साहब, जनक बाबू आदि शामिल थे, जेल भेज दिया था। हक साहब पर 'मदरलैंड' के संपादक की हैसियत से एक मुकदमा चला और वे भी जेल चले गए। गया में श्रीकृष्ण-प्रकाश सेन सिंह, पटने में खुरशेद साहब और श्रीजगतनारायण लाल जेल पहुँच गए थे। अब स्वयंसेवकों का लिस्ट बनने लगा। हमलोगों ने भी अपने नाम लिखाए। पकड़ जायँगे, यह दो-चार दिन की बात हो गई थी। लोगों में इतना जोश और उमंग आगई थी कि जेल जाने में क्या तकलीफ होगी इसकी चिंता नहीं होती थी।

लॉर्ड एस० पी० सिन्हा उन दिनों बिहार के गवर्नर थे। श्री एस० सिन्हा फाइनेन्स मेंबर और जेल के चार्ज में थे। नयी कौंसिल के चुनाव में काँग्रेस की ओर से वोट न देने का काफी प्रचार हुआ था। चुनाव हुआ ही और लोग कौंसिल में दाखिल भी हुए, पर डरे हुए दिल से। श्रीदेवकी प्रसाद सिंह सत्याग्रह प्लेज से बरी करा दिये गए थे। अब वे एक कदम इस ओर बढ़े। कौंसिल में पलामू जिले से चुन लिए गए। वहाँ उनका काम अच्छा ही हुआ। उनकी योग्यता का परिचय मिला और लार्ड सिन्हा के यहाँ उनका प्रवेश भी हो गया। कौंसिलों में काँग्रेस के रुख की दबी जबान से आलोचना की जाती थी, पर सरकार के कामों की तीव्र आलोचना होती थी। स्वयंसेवक-दल गैर-कानूनी होने पर भी धर-पकड़ करने की जवाबदेही जिला मेजिस्ट्रेट के ऊपर छोड़ दी गई थी। पटने जिले में एक आयरिश मेजिस्ट्रेट थे। उनका रुख अच्छा रहा। जबतक कोई गैर-कानूनी काम न करे, केवल स्वयसेवक-दल में

भर्ती होने से ही गिरफ्तार न किया जाय—उनका यह हुक्म निकला। हमारे साथी लोग श्रीश्रीकृष्ण सिंह आदि गिरफ्तार हो गए, पर हमलोग पटने में गिरफ्तार न हुए।

अहमदाबाद में दिसंबर के आखीर में काँग्रेस की बैठक होने को थी। स्वागताध्यक्ष थे श्रीवल्लभ भाई पटेल और स्वागत-मंत्री श्रीमावलंकर। श्रीसी०आर० दास सभापति चुने गए थे, पर उनके कैद हो जाने से हकीम अजमल खाँ स्थानापन्न सभापति चुने गए। बिहार प्रांत ने गाँधी जी के अनुयायियों में बहुत ऊंचा स्थान प्राप्तकर लिया था। दल बल के साथ हम लोग उत्साह के हिलोरें लेते अहमदाबाद पहुँचे। काँग्रेस की बैठक पहले पहल जमीन में फर्श के ऊपर हुई। लोगों को अपने-अपने जूते रखने के लिए एक एक झोला ले लेना पड़ा। काँग्रेस के सभापति कोई हों, प्रबंध में नाम किसी का भी हो, पर उसके एक मात्र जीवन तो महात्मा गाँधी ही थे। उनके ही इशारे पर सारी काँग्रेस उठती-बैठती थी। जैसी उनकी मर्जी होती थी उसका पालन करना अंध भक्तों जैसा काँग्रेस वाले अपना मुख्य कर्त्तव्य समझते थे। काँग्रेस में एक ही मुख्य प्रस्ताव हुआ जिसके द्वारा सरकार को चुनौती दी गई कि यदि काँग्रेस के प्रस्तावों को सरकार स्वीकृत नहीं करेगी तो उन्हें स्वीकृत कराने के लिए देश व्यापी सत्याग्रह संग्राम छेड़ा जायगा और उसका संचालक एकमात्र महात्मा गाँधी बनाये जायँगे।

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। उत्साह और उमंग का कोई ठिकाना न था। विषय समिति में या खुले अधिवेशन में विरोध

का आभास भी नहीं दिखता था। कांग्रेस की सारी रूपरेखा विभिन्न प्रकार की थी। कहीं पर गुजराती नाट्य, कहीं पर संगीत, कहीं पर राष्ट्रीय गान से सारा कांग्रेस नगर गूंज रहा था। प्रत्येक प्रांत के प्रतिनिधियों का जुलूस गाजे-बाजे के साथ निकला करता था। प्रातःकाल संगीत के नारे लगते थे और सोए हुए लोगों की नींद मधुर स्वर से तोड़ी जाती थी। विषय समिति में मि० महम्मद अली जिन्ना अपनी नववधू के साथ आए थे। उन्होंने कांग्रेस में कोई हिस्सा लिया नहीं, पर उनके आगमन में काफी आकर्षण था। महात्मा जी प्रत्येक प्रांत के कार्यकर्त्ताओं और प्रतिनिधियों से अलग-अलग मिलते गए और प्रांत की हालत को जानकर वहाँ के लिए क्या करना होगा, उसकी नसीहत देते गए।

१६२१ ई० खतम होने पर आया। स्वराज्य अभी नहीं हुआ, पर स्वराज्य के लक्षण दीख पड़ने लगे। भयानक संग्राम होने की तैयारी का बिगुल बजने लगा। प्रत्येक कार्यकर्त्ता के हृदय में उमंगें उठती थीं। अपने इलाके में लौट कर जोर-शोर के साथ काम करने में लग जायेंगे, इस दृढ़ निश्चय के साथ लोग अपने-अपने प्रांत को लौटने लगे। महात्मा गांधी की वह मुख मुद्रा जो ब्रिटिश सरकार को चुनौती देते समय थी, लोगों को हृदयंगम हो गई। तर्जनी उठा कर जो गर्जन उस दिन महात्मा गांधी ने किया था वह क्या कोई दर्शक और श्रोता भूल सकता है? बिजली का संचालन जिस प्रकार शरीर को कंपित कर देता है उसी प्रकार सारी कांग्रेस कंपित-चकित हो गई। महात्मा के

उस दिन के भाषण ने सारे देश को एक नवीन पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रोत्साहित कर दिया।

१०

उस समय जेल की अवस्था के बारे में मेरा अपना कोई अनुभव नहीं था। जगत बाबू जब वहाँ से लौटे तब उनके चित्त पर जो वक्सर जेल का असर हुआ था वह तो सब पर विदित है ही। भागलपुर जेल में राजनैतिक बंदियों के निरीक्षण केलिए श्रीसच्चिदानन्द सिन्हा गए थे। जेल मेंबर की हैसियत से अपने साथियों को जेल में देखकर, खासकर शाह जुबैर और श्रीबाबू की ओर इसारा करके उन्होंने जेल सुपरिंटेंडेंट को हुक्म दिया था कि इनको गर्मी में बाहर सोने की आज़ादी रहे। उस समय मि० बनातवाला जेल विभाग के आई० जी० थे। इस हुक्म से उनको बहुत गुस्सा हुआ। उन्होंने जेल अफसरों को कहा कि जेल मेंबर के हुक्म के मुताबिक उनको बाहर सोने की इजाजत दी जाय, पर सब के पैर एक-दूसरे के साथ जंजीर से बंधे रहें। क्योंकि इन कैदियों के संरक्षण की जवाबदेही उनकी है। इस तरमीम के साथ उस हुक्म का पालन होना असंभव हो गया और मि० सिन्हा ने उसके बाद कुछ दूसरा आदेश निकालना या तो जरूरी नहीं समझा या अपनी ताकत के बाहर की बात समझी।

उन दिनों एक्सक्यूटिव कौंसिल की मेंबरी बड़ी चीज समझी जाती थी। विवेकी कहलाना बहुत बड़ी सिफत थी। अंग्रेज साथियों को यह बतलाना पड़ता था कि हिंदुस्तानी

सहयोगी उनसे विवेक में दो कदम बढ़े हुए हैं। जब वे ऊँचे पद पर पहुँच जाते हैं तब किसी तरह भी अँग्रेज अफसर से कम लायक नहीं। जिस तरह अँग्रेज अफसर अपने साम्राज्य और अपनी जाति के लोगों के अधिकारों की रक्षा करने केलिए तत्पर रहते हैं, उससे एक इंच भी कम उनका हिंदुस्तानी साथी नहीं है। अवसर पड़ने पर वे अपनी योग्यता का प्रदर्शन उनसे आगे बढ़कर दे सकते हैं। जब मैं १९२१ ई० की बातें याद करता हूँ तब मेरे दिल में भी उन हिंदुस्तानी अफसरों का व्यवहार किसी तरह शोचनीय नहीं समझ पड़ता,क्योंकि उनका दृष्टिकोण ही भिन्न था। उस समय का समाज उन पदाधिकारियों को इतनी इज्जत और सम्मान की नजर से देखता था कि उनके इस तरह के कामों की नुकताचीनी करना अनुचित समझा जाता था।

११

असहयोग आंदोलन का असर मुल्क पर कैसा पड़ रहा था, इसके बारे में दो-एक बात और लिख देना मुनासिब समझता हूँ। जब काँग्रेस का प्रस्ताव हुआ कि हिंदुस्तानियों को सरकारी उपाधियाँ छोड़ देनी चाहिए तब इस सूबे में भी उसका असर पड़ा। बड़े ओहदेवालों ने तो नौकरियों से इस्तीफा नहीं दिया, पर उनके दिल की यह कमजोरी उनके कामों से जाहिर होती थी। निवारण बाबू जैसे त्यागी पुरुष अलबत्ता अपने पद से अलग हो गए। नीचे दर्जे के सरकारी ओहदेदारों में उसका ज्यादा असर हुआ था। पुलिस के कुछ सिपाहियों ने नौकरी से इस्तीफा

दिया। बहुतेरों का इस्तीफा मंजूर ही नहीं हुआ और कुछ दिनों के बाद उन्हें इस्तीफा वापस लेने पर राजी कराया गया। डॉ० अरुंजय सहाय वर्मा गत युद्ध में मिलिटरी डाक्टर थे और कैप्टेन की उपाधि से भूषित हो चुके थे। उन्होंने सरकारी नौकरी छोड़कर कांग्रेस का काम करना शुरू किया और आरा जिले के चार्ज में कुछ दिनों तक रहे। श्रीगणेश प्रसाद, असिस्टेंट जेलर, पटना ने मो० खुरशेद हुसैन और जगत बाबू के जेल जाने के उपलक्ष्य में अपनी नौकरी छोड़ दी थी। दो-चार शिक्षक और दफ्तर के सहायकों ने भी नौकरियाँ छोड़कर कांग्रेस का काम करना शुरू किया था। जेल के वार्डरों में भी कितनों ने इस्तीफा दिया था। तादाद चाहे ज्यादा न हो, सरकारी नौकरियों से लोगों की नापसंदगी हो चली थी और यदि आंदोलन का जोर दूसरे साल भी कायम रहता तो मुमकिन था कि ऐसे लोगों पर इसका प्रभाव विशेषतर पड़ता जाता।

इसमें संदेह नहीं कि श्रीसी० आर० दास और श्रीमोती-लाल नेहरू जैसे दिग्गज वकील-बैरिस्टरों के हजारों रुपये रोजाना की आमदनी को छोड़ने का असर मुल्क के कोने-कोने में पड़ा। उनके नाम दिहात के लोगों तक में मशहूर हो गए थे और जब कार्यकर्त्ताओं ने दिहातों में पहुँचना शुरू किया तब उनके नाम और यश के वर्णन गाँव-गाँव में होने लगे। साथ ही प्रांत के कितने जिलों में वहाँ के प्रमुख लोगों को आंदोलन में शरीक होने के लिए प्रोत्साहन भी मिलता था। भागलपुर में श्रीदीप-नारायण सिंह जैसे अमीर और आरामपसंद आदमी बैलगाड़ी

पर चढ़कर देहातों के अंदर तिलक-स्वराज्य फंड के लिए रुपया इकट्ठा करते थे और उसका असर दूसरे जिलों पर भी पड़ता था। श्रीब्रजकिशोर प्रसाद दरभंगे के कोने कोने में विख्यात थे और महाराज दरभंगा से एक चुनाव में टक्कर लेने के कारण दूसरे जिलों में भी उनको ख्याति हो गई थी। ऐसे लोग देहातों में जाने लगे तो उनका प्रभाव सब पर पड़ना निश्चित था। श्रीराजेंद्र प्रसाद प्रधान मंत्री की हैसियत से जिले जिले का दौरा और असहयोग के मूलमंत्र का प्रचार करते थे। हाजीपुर में श्रीजयनंदन झा के मुकदमे में हजारों की तादाद में लोग कचहरी के श्राहाते में हाजिर होते थे। इसी मुकदमे के सिलसिले में श्रीरामानंद सिंह पुलिस सब-इंसपेक्टर की गवाही सरकारी पक्ष के खिलाफ हुई और उसके फलस्वरूप उनको नौकरी से अलग होना पड़ा। लोगों ने उनको अपना कर उनके उत्साह को बहुत बढ़ाया था। फिर पीछे कुछ आपसी मतभेद के कारण कांग्रेस के कामों में उनका मन नहीं लगा और धीरे-धीरे कांग्रेस से अलग हो गए।

आम जनता के जोश की लहर बहुत दिनों तक एक तरह की नहीं रहती और न रखी जा सकती है। प्रमुख कार्य-कर्ताओं के उत्साह में भी घटती-बढ़ती-उत्थान-पतन होता रहता है। इस बात की सबक हमें सत्याग्रह आंदोलन की विभिन्न अवस्थाओं से मिलती है। जब मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अली की गिरफ्तारी करांची प्रस्ताव लेकर हुई तब लोगों में काफी जोश उमड़ पड़ा था और जिस फतवा के लिए उनको

सज़ा मिली थी वह फ़तवा हज़ारों की संख्या में सभाएँ करकर दुहरायी गई थी, पर सरकार ने किसी के ऊपर मुकादमा नहीं चलाकर लोगों के उत्साह को ठंढा कर दिया था। ऐसे जलसों में हिंदू मुसलमान का भेद नहीं रहता था। इस प्रांत में हिंदुओं की संख्या ज्यादा रहने के कारण ऐसी सभाओं मे हिंदू दर्शकों की भीड़ रहती थी। इसी फतवे के कारण जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य गिरफ्तार होकर मुंगेर जेल में रखे गए थे। हिंदू और मुसलमान के बड़े-बड़े धर्मरक्षक कंधे-से-कंधे भिड़ाकर इस आंदोलन में शरीक हुए और उसे आगे बढ़ाने में मदद की।

१२

गिरिडीह के कोयले की खानों में काम करनेवाले मजदूरों मे असंतोष फैला और चूँकि सरकारी खानें इसी इलाके में पड़ती थीं, सरकार की ओर से मजदूरों के साथ बहुत कड़ा व्यवहार किया गया था। मजदूरों के जुलूस पर गोलियाँ चलाई गई और बहुत से प्रमुख व्यक्ति गिरिडीह-पंजाब के रहनेवाले पकड़े गए श्रीबजरंग सहाय गिरिडीह के रहनेवाले थे और वहाँ की परिस्थिति के साथ उनका घना संबंध था। उनके भाषण से लोग इस तरह प्रभावित हुए कि पुलिसवालों को उसे रोकने के लिए गैरकानूनी कार्रवाई करनी पड़ी। प्रां० कां० कमिटी के दफ्तर में जब इस घटना की खबर पहुँची तब गिरिडीह के लोगों को ढाढ़स देने के लिए मैं भेजा गया। उस समय का एक दृश्य आज भी मुझे याद है। पुलिस अफसर डाक-बँगले में डेरा

जमाए हुए थे और एक सबइंसपेक्टर अपनी वर्दी पहनकर बगल में पिस्तौल लगाये शानसे डाक-बँगले के बरामदे पर एक किनारे से दूसरे किनारे तक टहल लगा रहा था। मुझको देखकर पिस्तौल पर हाथ ले गया और गालियाँ देता हुआ उसी तरह चहल कदमी करता रहा। यही सब इंसपेक्टर आगे चलकर तरक्की कर डी० एस० पी० हो गया। जब १६३०—३४ ई० का सत्याग्रह चल रहा था तब इसी ने ही बीहपुर के सत्याग्रहियों के प्रति बहुत से अमानुषिक काम किये थे।

पिछड़े जिलों में इस आंदोलन के फैलने से सरकार बहुत घबड़ाती थी। गिरिडीह छोटानागपुर का हिस्सा था। इस लिए आंदोलन यहाँ जोर पकड़े, सरकारी अफसर इसको बरदास्त नहीं कर सकते थे। ठीक इसी तरह का व्यवहार संतालपरगने में भी किया गया। जहाँ कोई स्वयंसेवक रात में किसी गृहस्थ के यहाँ ठहर जाता उसपर आफत आजाती थी। उसके खेत छीन लिए जाते और उसे तरह तरह की तकलीफें दी जाती थीं। वहाँ के लोगो मे उत्साह कायम रखने के लिए मुजफ्फरपुर के वकील श्रीश्यामाचरण भेजे गए, पर कुछ ही दिनों के बाद वे गिरफ्तार हो गये। इस खबर को पाकर मैं दुमका गया और उनसे मैंने जेल मे मुलाकात की। लोगों में इस तरह आतंक फैल गया था कि मुझे लौरी में जगह पाने में भी दिक्कत हुई। कुछ देर के लिए धर्मशाले में बैठने के लिये जगह मिल गई थी। जब मैं जाने को ही था कि १४४ दफा की नोटिस दुमका छोड़ने के लिये मुझे दे दिया गया।

डालटनगंज में भी बहुत से कार्यकर्त्ता पकड़े गए थे। वहाँ भी मुझे जाना पड़ा। देवकी बाबू की वजह से वहाँ के जेल सुपरिंटेंडेंट ने मुझे सत्याग्रहियों से मिलने के लिए जेल के अंदर जाने दिया था। यह बात वहाँ के डिप्टी कमिश्नर को मालूम हुई तो वह जेल अफसरों के ऊपर बहुत नाराज हुआ। देवकी बाबू से भी इसे कुछ झगड़ा हो गया था, पर उन दिनों कौंसिलों के मेंबरों की इज्जत की जाती थी और लार्ड सिन्हा तक उनकी पहुँच होने के कारण इस तकरार को आगे बढ़ने का मौका न मिला।

चौथा अध्याय

१

महात्मा जी के नेतृत्व में बारदोली में लगान न देने की तैयारी होने लगी। विचार यह हुआ कि वहाँ के लोग लुट जायँ, उनकी जमीन चली जाय, उनके बच्चे दाने-दाने के लिए तरसें, पर एक पैसा लगान का न देने का दृढ़ संकल्प कर लें। महात्मा जी जब इस तरह लोगों को बारदोली में तैयार कर रहे थे तब उसकी प्रतिक्रिया हमारे सूबे में भी दीख पड़ने लगी। प्रां० कॉ० कमिटी की एक बैठक अहमदाबाद से लौटने के बाद हुई। उसमें सब जिले के लोगों ने उत्साह भरी बातें कीं। जगत बाबू का विक्रम इलाके के बारे में एक खास प्रस्ताव पर विचार हुआ। श्रीनारायण प्रसाद सिंह ने अपने सारन जिले के बसंतपुर थाने

को सत्याग्रह के उपयुक्त बताया। सत्याग्रह के लिए तैयारी
के मुख्य अंगों में वहाँ के निवासियों को अहिंसक बनाना
चर्खा प्रचार और खादी का व्यवहार अनिवार्य समझे जाते
इसी दृष्टिकोण को सामने रख कर हर एक जिला के ऐसे स्थ
पर रोशनी डाली गई जहाँ इनका व्यवहार संभव बताया ग
पर कोई स्थान कसौटी पर टिकने लायक नहीं पाया गय
तजवीज यही हुई कि जब बारदोली में सत्याग्रह छिड़े तब प्र
प्रांत में शांति बनाये रखने की कोशिश पूरे तौर पर जारी रा

बारदोली में सरकार ने दमनचक्र प्रारंभ किया। वहाँ
लोगों को डराने और जबरदस्ती टैक्स वसूल करने के लि
पठान सिपाही भर्ती किए गए। उनके अत्याचारों की खब
अखबारों से सब जगह पहुँच जाती और लोगों में बेचैनी पै
कर देती थी। उस समय सभी बड़े-बड़े नेताओं का जेल में प्रवे
हो चुका था। महात्मा जी बारदोली में व्यस्त थे और ऐस
उमीद की जाती थी कि अब लड़ाई शीघ्र ही छिड़ जाने वाल
है। उसी समय एकाएक यह खबर पहुँची कि चौरा चौर
(गोरखपुर जिला) में जनता के एक दल ने थाने पर चढ़ाई की
और वहाँ जितने पुलिस के लोग थे उनको किरासन तेल के
जरिए आग लगाकर जला दिया। यह भयंकर खबर जब महात्मा
जी तक पहुँची तब उन्होंने तुरत सत्याग्रह बंद करने की घोषणा
कर दी। वर्किंग कमिटी की एक बैठक बारदोली में ही बुलाई
गई और एक प्रस्ताव चौरीचौरा के हत्याकांड पर खेद प्रकट करते
हुए सत्याग्रह स्थगित करने का स्वीकृत हुआ।

ऐसा होते ही देश की परिस्थिति में परिवर्त्तन होना शुरू हो गया। महात्मा जी ने अपनी गिरफ्तारी पर लोगों को शांत रहने का आदेश दिया था, उसका अक्षरशः ही पालन हुआ, यह कहा नहीं जा सकता। शांति कुछ अंशों में महात्मा गाँधी के आदेशानुसार रही और कुछ अंशों में बढ़ते हुए दमन के भय से भी। देश के जितने बड़े-बड़े नेता थे सब जेलों के अंदर दाखिल हो चुके थे चौराचौरी कांड और सत्याग्रह का स्थगित होना जेल गए नेताओं को पसन्द नहीं आया। विरोधात्मक राये भी जेल से आईं, पर महात्मा जी ने इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया। जेल में रहने वालों को बाहर की परिस्थिति के विषय में पूरा ज्ञान नहीं रहने के कारण उस पर अपनी राय प्रकाशित करना उचित भी नहीं था। श्रीजवाहर लाल नेहरू ने अपनी आत्मकथा में इस विषय की ओर इसारा किया है। प्रिंस के आगमन के समय बॉयकाट हटा लेने केलिए जो सुलह की चर्चा चल रही थी उसके बारे में ही नेहरू जी ने 'कवल अज वक्त' कहकर उसे नामंजूर करने की नीति को मुनासिब बताया है।

कुछ दिनों तक तो हमारे सूबे में सन्नाटा जैसा हो गया। मनुष्यों में जितनी कमजोरियाँ होती हैं और जो परिस्थिति के कारण या तो छिपी रहती या धीरे धीरे निकलती जाती हैं, उनका ज्ञान परिस्थिति के परिवर्त्तन की अवस्था में होने लगा। असहयोग आंदोलन जब तक ओज पर चलता रहा, मालूम पड़ता था जैसे हमारी कमजोरियाँ नष्ट हो गईं, हिंदू-मुसलमान अनैक्य सदा के लिए दूर हो गया, पारस्परिक वैमनस्य का भाव भी शायद

हमेशा के लिए हट गया। रामराज्य की कल्पना ही नहीं, वरंच उसका आभास अनुभव होने लगा था। पर यह कितने भ्रम की बात थी, इसका पता महात्मा गांधी के कैद होने के बाद मालूम होने लगा। बिहार प्रांत में सबसे अग्रणी जाति कायस्थों की थी। पढ़ लिख कर उच्च पद प्राप्त करने से जो प्रभाव और सम्मान लोगों को मिलता है वह उनको मिला हुआ था। मुसलमानों का प्रभाव भी राजनीतिक क्षेत्र में कम नहीं था। हाई कोर्ट जज, सरकारी वकील, संभ्रांत बैरिस्टर ये लोग ही थे और अफसरों के नजदीक उनकी जैसी और किसी की पहुँच नहीं थी सरकार के यहाँ राजा-महाराजाओं का भी प्रवेश उनके ही द्वारा होता था, इससे भी उनकी धाक बढ़ती ही जाती थी। पहले पहल नई कौंसिलमें देहात के चुने हुए मेंबरोंको स्थान मिला था। उन लोगों ने अपनी शक्ति का परिचय प्राप्त किया। जनता के साथ उनका संपर्क अधिक रहने के कारण उनके भाव में परिवर्त्तन होने लगा। वोट प्राप्त कर अधिकार प्राप्त किया जा सकता है, इसकी चसक लगने लगी। कांग्रेस में भी कायस्थ मुसलमानों से ज्यादा तादाद में काम करनेवाले अन्य जातियों के लोग निकल आए, क्योंकि देहात के रहनेवालों में तो ऐसे ही लोगों की अधिकता थी। आगे चलकर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में जब चुनाव द्वारा गैर सरकारी चेयरमैन होने का कानून काम में लाया गया तब इस वोट का प्रभाव और भी ज्यादा हो गया। पहले जो होड़ देहात और शहर के बीच में थी उसका बीज देहात और देहात के मध्य पड़ गया। वोट के जरिये अधिकार

प्राप्त करने की मादकता ने दिहात के सरल जीवन को भी जटिल और विपाक्त बना दिया।

३

१९२२ का पूर्वार्द्ध जो घटनाएँ देश में घट रही थीं उनके समझने बूझने में ही व्यतीत हो गया। हमलोग अवाक् जैसे ही रहे। क्या किया जाय, क्या न किया जाय, इस पर कोई निश्चयात्मक विचार नहीं हो सकता था। बड़े-बड़े नेता जेल के अंदर थे। जहाँ-तहाँ सत्याग्रह की बातें चलती थीं, पर वायुमंडल दिन प्रतिदिन दूषित होना शुरू हो गया था। जैसे-जैसे महीने बीतते गए, बड़े-बड़े नेताओं की रिहाई होती गई। मई महीने में लखनऊ में अ० भा० काँग्रेस कमिटी की एक बैठक हुई। देशबंधु दासजी, नेहरूजी, हकीम साहब आदि उसमें शामिल हुए। अपने प्रांत से राजेंद्र बाबू और ब्रजकिशोर बाबू के साथ हमलोग भी शामिल होने लखनऊ पहुँचे। वहाँ राजेंद्र बाबू को बहुत जोर का बुखार हो आया, अतएव वे वहाँ पर बराबर बीमार ही रहे। सत्याग्रह स्थगित कर देने से जो क्षोभ कुछ नेताओं के दिल में था उसका इजहार किया गया पर आगे कौन-सी नीति अख़तियार की जाय, यह कहना मुश्किल जान पड़ता था। प्रस्तावों में सत्याग्रह को किसी न किसी शक्ल में कायम रखना जरूरी था। लोगों का ध्यान कौंसिल और लोकल बॉडीज की ओर भी था। कितने नेताओं का यह ख़याल था कि जो लोग कौंसिलों के अंदर गये हुए हैं और जो मिनिस्टर स्टेट का प्रबंध कर रहे हैं उनकी वजह से मुल्क को

नुकसान पहुँच रहा है। इसलिये उनको हटा दिया जाय या कौंसिल को सोटें अपने हाथ में लेकर उसे तोड़ देने का प्रबंध किया जाय।

इसी विषय को लेकर एक कमिटी बनी जिसके जिम्मे सत्याग्रह के संबंध में जाँचकर रिपोर्ट प्रकाशित करने का काम सुपुर्द हुआ। इसके सदस्य—हकीम साहब (सभापति) सर्व श्रीदास, नेहरू, विठ्ठलभाई पटेल, राजगोपालाचार्य और जमना लाल बजाज हुए। बजाजजी के अस्वीकार करने पर उनके स्थान पर श्री कस्तूरीरंग स्वामी ('हिंदू' अखबार के मालिक) चुने गए। इस कमिटी ने सब प्रांतों का भ्रमण किया और वहाँ के कार्यकर्त्ताओं की गवाहियाँ लीं। बिहार में भी उस कमिटी का भ्रमण हुआ था। हकीम साहब मि० यूनुस की कोठी में उतरे थे। वहाँ लोगों की भीड़ लगी रहती थी और बाजाप्ते वहाँ कमिटी की बैठक थी। मैं भी एक गवाहों में से था। मेरा यह खयाल था कि मुल्क सत्याग्रह के लिए तैयार नहीं है, वायुमंडल भी उसके उपयुक्त नहीं रहा। गवाहियाँ हो गईं। मेंबरों के आने के उपलक्ष में एक मिटिङ्ग गुलाबबाग में कराई गई जिसमें नेहरू जी और हकीम साहब के भाषण हुए थे।

कमिटी ने कितनी सिफारिशों के साथ अपनी रिपोर्ट पेश की। उस पर वादानुवाद शुरू हो गया। पहले तो बड़े-बड़े नेताओं के बीच बहसें होती रहीं। इसके बाद वर्किङ्ग कमिटी के मेंबरों में। फिर अ० भा० कांग्रेस कमिटी के सम्मुख यह रिपोर्ट रखी गई। कमिटी में दो विचार के लोग हो गए। सत्याग्रह कमिटी ने कौंसिल के बारे में जो

सिफारिश की वह सर्वसम्मत न थी। ६ सदस्यों में से तीन ने कौंसिल-प्रवेश के पक्ष में और तीन ने विपक्ष में राय दी थी। यहीं से स्वराज्य पार्टी की नींव डालने का बीज बोया गया। निश्चित हुआ कि आगामी गया कांग्रेस में इस विषय का निर्णय किया जाय; तबतक और-और प्रस्तावों के अनुसार काम चले। कौंसिल चुनाव १६२३ ई० में होनेवाला था इसलिए इस काम में कोई जल्दबाजी करने की जरूरत नहीं देखी गई।

४

गया कांग्रेस अधिवेशन की जवाबदेही हमारी प्रांतीय कांग्रेस कमिटी पर थी। स्वागत-समिति बनाने के पहले कुछ काम कर लेना जरूरी था। कितनी बातों की जानकारी हासिल करनी थी। इसलिए एक छोटी-सी अस्थाई कमिटी बना दी गई और उसके हाथ में आरंभिक प्रबंध का भार दे दिया गया। मैं सहायक मंत्री की हैसियत से इस कमिटी में रखा गया। विचार हुआ कि कांग्रेस की बैठक गया में हो और मैं वहाँ जाकर स्वागत-समिति का दफ्तर खोल दूँ। इसी प्रस्ताव के अनुसार मैं गया चला गया। कुछ दिनों के बाद प्रांतीय कांग्रेस कमिटी का ऑफिस भी कामों की सहूलियत के लिए वहाँ पहुँच गया।

गया में कांग्रेस हो, इस फैसले में मेरा हाथ भी था। विचार हुआ कि गया अमीर जिलाओं में गिना जाता है। रेलवे की मेन लाइन पर होने के कारण दूर-दूर से प्रतिनिधियों तथा दर्शकों के आने में मेल ट्रेनों की सुविधा बनी रहेगी। देश में

गया एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान भी है। प्रत्येक साल लाखों आदमी यहाँ आया-जाया करते हैं। यात्रियों के ठहराने के लिए पुरानी शहर गया में बहुत से ऐसे मकान हैं जो जाड़े के दिनों में, जबकि काँग्रेस का जलसा होगा, खाली रहेंगे। नल होने की वजह से पानी की सुविधा भी मिल जायगी। असहयोग आंदोलन में गया शहर का हिस्सा भी जबरदस्त रहा था। यहाँ श्रीकृष्ण प्रकाशसेन सिंह हिंदू-मुसलमान दोनों के प्रिय थे और दोनों उनकी बातों की इज्जत करते थे। राय हरिप्रसाद लाल गया शहर के एक खान्दानी रईस थे। काँग्रेस आंदोलन में उन्होंने बहुत बड़ा हिस्सा लिया था। उनकी खान्दान की कदर सारे शहर में ही नहीं बल्कि जिले में थी। श्रीसिद्धेश्वर प्रसाद सिंह और श्रीगौरीशंकरशरण सिंह कर्मठ कार्यकर्त्ताओं में मशहूर थे। श्रीगौरीशंकर शरण सिंह तो असहयोग के आरंभ में ही कालेज छोड़कर जी-जान से इस काम में पड़ गए थे। उनके बारे में यह मशहूर था कि नवादा इलाके के गाँवों में उनका दौरा प्रतिदिन हुआ करता था। सुबह में घोड़े पर चढ़कर निकलते थे और कितने गाँवों का चक्कर लगा शाम को लौटते थे। श्रीसिद्धेश्वर प्रसाद सिंह अपनी धुन के पक्के, उत्साही और प्रभावशाली नवयुवक थे। श्रीमुकुटधारी प्रसाद वर्मा गया म्युनिसपलेटी के वायस-चेयरमैन, वकालत छोड़े हुए वकीलों में से थे। काजी अहमद हुसेन एक प्रभावशाली जमींदार खिलाफत के कामों में तन-मन से लगे हुए काँग्रेस के भक्तों में से एक थे। ऐसी परिस्थिति में यह फैसला होना संभव हो गया कि काँग्रेस का अधिवेशन गया में ही हो।

काम शुरू हुआ। लोगों ने शुरू-शुरू में खूब जोश दिखाया, पर रुपये की कमी बनी रही। वादे होते गये, पर रुपये वसूल नहीं होते थे। कितने दिनों तक यही अवस्था चलती रही। काँग्रेस अधिवेशन के लिए दो-ढाई लाख रुपये इकट्ठा करना जरूरी था। कैसा ही बजट बनता था इतने से कम में अधिवेशन का सफल होना संभव नहीं दिखता था। हमारे सामने अहमदाबाद का उदाहरण था। वैसा अधिवेशन न हो, पर उससे निकट पहुँचता हुआ होना ही चाहिए। स्थान का चुनाव हुआ। गया रेलवे स्टेशन से तीन-चार मील की दूरी पर बोध गया के रास्ते में फल्गू नदी के किनारे एक बगीचे में काँग्रेस नगर बसाने का निश्चय हो गया। जिस गाँव में काँग्रेस होने को थी उसका नाम था केन्दुई और यहाँ के रहने वाले गयावाल पंडों के घरों में काम करते थे। इन लोगों ने जमीन मुफ्त में देने का वादा किया। नक्शा तैयार होने लगा। पंडाल और नगर का प्लैन बना। पर धन की कमी से काम तेजी से बढ़ नहीं सकता था। क्या उपाय किया जाय, यह जटिल प्रश्न हमारे सामने आ गया।

इसी प्रश्न पर विचार करने के लिए अस्थायी स्वागत-समिति की एक विशेष बैठक गया में बुलाई गई। निश्चय हुआ कि हमलोग छः-सात आदमी अपनी व्यक्तिगत जवाबदेही पर बैंक से पचास हजार रुपया कर्ज लेवें और इसीसे काम चलाया जाय। जब आगे चलकर रुपये आने लगेंगे तब यह कर्ज अदा कर दिया जायगा। सब लोगों ने मंजूर किया और बैंक ने भी इसे कबूल कर रुपया देना स्वीकार कर लिया। काम तेजी से आगे बढ़ने लगा। राजेन्द्र बाबू, ब्रजकिशोर बाबू आदि जितने बड़े लोग थे

जिले-जिले में घूम कर धन एकत्र करने के काम में संलग्न हो गए। राजेंद्र बाबू कभी हाथी पर, कभी इक्के पर, कभी खटोली पर बैठ कर गया जिले के गाँवों में जाने लगे और धनी मानी लोगों से मिलकर उनसे वादा लेने लगे। राजाबहादुर अमाँवा और महाराज कुमार टिकारी जिले के धनी लोगों में अग्रगण्य थे। टिकारी का विचार बहुत कुछ राष्ट्रीय प्रवृत्ति का था। एक-दो बार उनसे राजनीतिक सभाओं में योगदान भी मिला था, पर उनके हाथ में नकद पैसा रहना मुश्किल था। उनसे वादा मिला कि कांग्रेस में जितने बाँसों की जरूरत हो, राज्य के जंगलों से कटवा कर मँगा लिए जायँ। अमाँवा के सर्वेसर्वा उस समय श्रीवंशी सिंह थे। उनकी हमदर्दी भी कांग्रेस के प्रति रहती थी। उनसे चार हजार रुपये का दान मिलने का वादा मिला और ये रुपये आगे चलकर मिल भी गए। छोटे-बड़े सभी जमींदारों ने यथेष्टरूप से धन देने का वादा किया। अधिवेशन ज्यों-ज्यों नजदीक होता गया रुपये वसूल होते गए।

इस बीच में सामान इकट्ठा करने का काम जोरों से होने लगा। जिले जिले में स्वागत-समिति के मेंबर बनाने के काम पर भी जोर दिया गया। श्रीरामदयालु सिंह ने मुजफ्फरपुर जिले के गाँवों में दौरा करके बहुत बड़ी तादाद में मेंबर बनाए। राय हरि प्रसाद ने पाँच हजार रु० का वादा किया था, पर अभी तक दिया नहीं था। गौरी बाबू और सिद्धि बाबू प्रत्येक ने दो हजार रु० देने का वादा किया था और किश्त करके उसे अदा भी कर दिया।

५

नियमानुकूल जब मेंबरों की तादाद काफी हो गई तब स्वागत-समिति का चुनाव कर देने का निश्चय हुआ। जिस दिन बैठक होने को थी उससे एक दिन पहले राय हरि प्रसाद ने दो सौ मेंबरों के नाम से पाँच हजार रु० दिए। उन्होंने सोचा कि इतने ज्यादा सदस्य बना देने पर स्वागत-समिति के अध्यक्ष के चुनाव में सहूलियत रहेगी। यह बात जब राजेंद्र बाबू और ब्रजकिशोर बाबू को मालूम हुई तब विचार होने लगा कि इस नीयत से चंदा देनेवाले का धन लेना मुनासिब है या नहीं। पाँच हजार रु० रख लिये गए थे, पर रसीद अभी काटी नहीं गई थी। रात में बहुत सोच विचार के बाद यह फैसला किया गया कि इस धन को लेना जायज नहीं और पाँचों हजार रुपये उनको वापस कर दिये गए। ठीक समय पर मेंबरों की बैठक हुई और स्थायी स्वागत-समिति बनी। श्री ब्रजकिशोर प्रसाद सर्व-सम्मति से स्वागताध्यक्ष चुने गए। श्रीराजेंद्र प्रसाद प्रधान मंत्री और श्रीमुकुटधारी प्रसाद, मौ० बदरुल हक, श्रीकृष्ण प्रकाश सेन सिंह, श्रीगौरीशंकर शरण सिंह तथा मैं सहायक मंत्री हुए। नवाब मोबारक अली एम० एल० सी० कोषाध्यक्ष और शाह मुस्तश ऑडिटर चुने गए थे। हमारे इतने साथी थे, पर ऑफिस में रहकर काम करने की जवाबदेही मेरी ही रही। इनमें कुछ तो रुपया इकट्ठा करने के काम में दिहात में ही घूमते रहे और अधिवेशन के दिनों में थोड़ा बहुत काम करते रहे, पर राजेंद्र बाबू के बीमार हो जाने से सारा काम मेरे ही सिर आ गया।

जाड़े के दिनों में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ करता था। दिसंबर की सरदी गया की मशहूर थी। पंडाल ऐसा बनाया गया कि जिसमें जाड़े का असर कम-से-कम पड़े। साथ ही निवासस्थान भी इसी दृष्टि से बनाना पड़ा। गेट का नमूना सारनाथ से लिया गया। बोध गया बुद्ध भगवान के ज्ञानप्राप्त करने का स्थान था अतएव बौद्धिक संस्कृति के कुछ नमूने कांग्रेस नगर में लाना जरूरी समझा गया। बहुत से शहर के मकान ले लिये गये थे और गरम प्रांतों के प्रतिनिधियों के ठहराने का प्रबंध उनमें ही किया गया था। स्वयंसेवकों के चार्ज में श्रीबद्री नाथ वर्मा रखे गए, पर स्वयंसेवक विभाग के मंत्री हुए श्रीनागेश्वर प्रसाद सिंह (पटना) उर्फ लाल बाबू। स्वयंसेवकों की कवायद वगैरह कराने का प्रबंध हुआ, पर इतना समय नहीं था कि सारा स्वयंसेवक दल अपने ही सूबे के लोगों का बनाया जा सके। अतएव दूसरे प्रांतों के भी स्वयंसेवक लिये गए। श्रीमहेंद्र प्रसाद भोजन विभाग के इंचार्ज थे और स्वयंसेवकों को खिलाने की जवाबदेही भी उनके ऊपर थी। ब्रजकिशोर बाबू कभी-कभी दफ्तर के कामों की निगरानी करने आते थे, पर ज्यादा समय रुपये वसूल करने में ही लगाते थे।

इस सिलसिले में दरभंगा महाराज के दान का जिक्र कर देना मुनासिब जान पड़ता है। महाराजा और ब्रजकिशोर बाबू दोनों आपस में खिँचे-से रहते थे। पर, जब कांग्रेस का अधिवेशन बिहार में होने जा रहा था तब उनसे भी कुछ दान मिलना ही चाहिए, इस प्रस्ताव को लेकर ब्रजकिशोर बाबू उनसे मिले।

महाराजा ने पाँच हजार रु० के दान का वचन दिया और तत्काल किसी कर्मचारी से रुपया मँगवाया। एक-एक हजार के नोट ब्रजकिशोर बाबू के हाथ में दिए गए। उन्होंने नोटों की गिनती नहीं की। जैसे ही उनको नोट मिले वैसे ही उन्होंने रख लिए। जब वे गया आये तब उसी तरह से लिपटे नोट, यह कहकर कि ५०००) रु० महाराजा का गुप्त दान है, मुझे दे दिए। मैं जब दफ्तर में आया और नोटों को गिना तब पाँच के बदले छौ नोट निकले। मैं फौरन ब्रजकिशोर बाबू के पास चला गया और इसे बताया। उनको तब मालूम हुआ कि महाराजा ने या तो जानबूझकर परीक्षा के लिए अथवा गलती से पाँच के बदले छौ हजार दे दिया है। मुझे पाँच हजार हिसाब में लिख लेने के लिये कहकर एक हजार रुपया वापस कर देने की इच्छा से उन्होंने अपने पास रख लिया। कुछ दिनों के बाद जब दरभंगा वापस गए तब उन्होंने महाराजा से मिलकर इस भूल को बताया और नोट वापस करने लगे। महाराजा ने हँस कर कहा कि जब यह रुपया आपके पास चला गया तब इसे भी रख लीजिये। पीछे मालूम हुआ कि महाराजा का जब यह गलती मालूम हुई थी तब उन्होंने अपने निकटस्थ दरबारियों से इसका जिक्र किया था और इंतजार कर रहे थे कि ब्रजकिशोर बाबू इस संबंध में क्या करते हैं। जब रुपया उनको कितने दिनों के बाद वापस किया जाने लगा तब उनपर इसका बड़ा असर हुआ।

६

अधिवेशन के पहले कई दिक्कतें सामने आती गईं जिन्हें सुलझाना पड़ा था। फल्गू किनारे कांग्रेसनगर बना था। पानी की कमी समझी थी, क्योंकि फल्गू नदी में बालू बहुत है और बालू के भीतर ही पानी छिपा रहता है। उस समय मि० ग्रेट गया के कलक्टर थे। वह एक जबरदस्त अफसर समझे जाते थे। नदी के किनारे कांग्रेसनगर बनाने के वे खिलाफ थे। जहाँ पर नगर बना था उसके नीचे ही गया की पानीकल थी। उनका उज्र यह था कि पानीकल के ऊपर कांग्रेसनगर बसाने से गंदगी फैलेगी। लोग नदी में ही मलमूत्र त्याग करेंगे और वही गंदा पानी पानी-कल के कुँएँ में चला जावेगा। इससे बीमारी फैलने का डर बढ़ जायगा। इसी कारण उनका खयाल था कि उस स्थान पर कांग्रेस नगर न बने। उन्होंने इस बात की सिफारिश स्थानीय सरकार के पास की थी और हमलोगों को सरकारी हुक्म का इंतजार करने कहा था।

दिन बहुत बीत गया था। दूसरा कोई स्थान गया शहर के आस पास में नजर भी नहीं आता था जहाँ कांग्रेस नगर बसाया जाय। अगर हम लोगों को उस जगह को छोड़ने की मजबूरी होती तो कांग्रेस ठीक समय पर हो ही नहीं सकती। हमलोग बहुत असमंजस में पड़े। एक दिन मि० मैकफरसन जो एक्सक्यूटिव कौंसिल के मेंबर थे, जमीन देखने वहाँ आ गए। ब्रजकिशोर बाबू वहाँ उस दिन थे और उनसे उनकी पहले की जान-पहचान भी थी। खुद उस स्थान को निरीक्षण करके मि०

ब्रेट के साथ आ पहुँचे। हमलोगों ने सब बातें समझाईं और इसका विश्वास दिलाया कि कांग्रेस के लोगों के मलमूत्र त्याग का स्थान निश्चित कर दिया जायगा। स्वयंसेवक नदी के किनारे बैठा दिए जायँगे जिससे नदी गंदी न हो सकेगी। नियत स्थान से अलग मलमूत्र त्याग पर रुकावट रहेगी। ब्रेट साहब का कहना था कि इतना प्रबंध होने पर भी लोगों को नदी को गंदा करने से रोकना मुश्किल होगा और गंदगी बढ़ी तो गया शहर की पानी कल के कुंए दूषित हो जाने से बीमारी फैलने की संभावना रहेगी। इस बात में कुछ सचाई जरूर थी, क्योंकि आगे चलकर जब हजार कोशिश करने पर भी हमारे स्वयंसेवक, लोगों को नदी गंदा करने से न रोक सके तब यह बात मेरी समझ में आ गई कि हमारा आश्वासन ठीक नहीं निकला। पर इतना होने पर भी पानी कल की गंदगी की जो बात कही जाती थी वह सच नहीं थी। उसके भीतर कांग्रेस के कामों में अड़चन डालने का ही खयाल छिपा हुआ था। खैर, हमारी बातें रह गईं और हमारे आश्वासन को स्वीकार कर उसी स्थान पर कांग्रेस नगर बनाने का निश्चय रह गया।

पानी की दिक्कत आगे चलकर मालूम होने लगी। पानी-कल से काफी पानी शहर को नहीं मिलता था। हमारे नगर में पचास हजार से एक लाख तक आदमियों की भीड़ होने की संभावना थी। इसमें से दस हजार से ऊपर तो नगर निवासी ही हो जाते थे। उनके स्नान और पीने के पानी का प्रबंध तो करना ही था। म्यूनिसिपैलिटी से पानी लेने की मंजूरी मिल गई

थी। उस समय मौ० मुख़तार अहमद साहब चेयरमैन थे और श्रीमुकुटधारी प्रसाद वाइस चेयरमैन। ब्रेट साहब का ज़ोर इस बात पर भी था कि शहर को पानी मिलने में दिक़्क़त न हो, इसलिए कॉंग्रेस नगर को पानी पहुँचाने के ऊपर काफ़ी निगरानी रहे और कुछ ही घंटे तक पानी-कल खुला करे। मुख़तार अहमद साहब कलक्टर की बातों से काफ़ी प्रभावित हो गए थे और चाहते थे कि उनकी इच्छा के अनुसार ही काम हो; पर वाइस चेयरमैन हमारी ओर थे और चेयरमैन की इच्छा के ख़िलाफ़ पानी के टैंक की चाभी उन्होंने अपने कब्जे में कर ली थी। चेयरमैन साहब भी खुलाखुली हमारी राय के ख़िलाफ़ चलने की हिम्मत नहीं रखते थे। इस कारण जिलाधीश की इच्छा के विरुद्ध कॉंग्रेस नगर को पानी मिलने में किसी तरह की अड़चन नहीं पड़ी।

ब्रेट साहब की एक और कार्रवाई जानने के काबिल हुई थी। जहाँ कॉंग्रेस का अधिवेशन होता था ख़िलाफ़त कमिटी की बैठक भी वहीं होती थी। गया में ख़िलाफ़त कमिटी के लिए कैंप खड़ा करने का प्रबंध काजी अहमद हुसैन के हाथ में था। म्यूनिस्पेलिटी से इनको पानी-कल के कंपाउंड में ही कैंप खड़ा करने का हुक्म मिल गया। ब्रेट साहब को जब यह बात मालूम हुई तब उन्होंने ऐसा करने से रोकने का हुक्म निकाला। परिस्थिति गंभीर हो गई। सरकार और ख़िलाफ़त कमिटी के बीच तनातनी हो गई। उस समय काजी अहमद हुसैन की बहादुरी का परिचय हमें मिला। कैंप पानी कल कंपाउंड में ही बनेगा और इसके

लिए उनको जितना भी कष्ट उठाना पड़े उठाने के लिए तैयार हो गए। लिखा-पढ़ी से काम न चलते देख उन्होंने सत्याग्रह करने का निश्चय कर लिया। स्वयंसेवक इसके लिए तैयार होने लगे। जब इन सब बातों का पता सरकार को लगा तब स्थानीय सरकार ने परिस्थिति को बिगड़ने न दिया और खिलाफत कमिटी का जलसा वहाँ हो, इसको मंजूर कर लिया।

७

जिस दिन देशबंधु सी० आर० दास आनेवाले थे उस दिन एक बहुत बड़ा जुलूस निकालने की तैयारी हो रही थी। सुबह से जो मैं इस काम में लगा तो खाना पीना सब छुट गया। शाम को ही देशबंधु दास को ठहरने के स्थान पर पहुँचाकर मुझे राजेंद्र बाबू के निकट सब बातें रिपोर्ट करने की फुरसत मिली। उस दिन दम्मे का जोर हो जाने और बुखार आ जाने के कारण राजेंद्र बाबू अपने कमरे से बाहर नहीं निकल सके थे। राष्ट्रपति का जुलूस गया शहर की जनता के उत्साह का प्रदर्शन कर रहा था। घंटों उनको स्टेशन से निवास-स्थान पर लाने में बीते। जहाँ उनके ठहरने का प्रबंध हुआ था वह एक बंगाली जमींदार की कोठी थी। उसमें ठहरने में उनको आराम नहीं मिल रहा था, यह हमलोगों को तुरंत मालूम हो गया। महाराज कुमार टिकारी का बंगला खाली था और श्रीमोती लालजी ने उनका ही आतिथ्य स्वीकार कर लिया था। देशबंधु दासजी को भी उनकी ओर से दावत मिली और दोनों नेताओं तथा उनके साथियों को एक साथ ही ठहराने का प्रबंध हो गया। उन दिनों

-श्रीसुभाषचंद्र बोस एक नवयुवक सिपाही की हैसियत से देशबंधुजी के साथ थे और गया काँग्रेस के सभापति के सेक्रेट्री का काम करते थे। देशबंधु जी की आवश्यकताओं को पूरा कराने की जवाबदेही उनके ऊपर थी और मुझे इस संबंध में उनसे मिलने और उनकी जरूरियातों को रफा करने के मौके मिले थे।

मुझे प्रबंध संबंधी कामों में ही अपना सारा समय बिताना पड़ता था। सुबह में मुँह-हाथ धोकर तैयार हो जाता था और मुश्किल से रात में १-२ बजे खाने की फुरसत मिलती थी। नाम के लिये प्रबंध का भार कितने साथियों के ऊपर बँटा हुआ था, पर जब अधिवेशन होने लगा तब कितने उसमें शामिल होने के लिए और कितने तमाशबीन के हैसियत से अपने अपने काम अधूरे ही छोड़कर चले जाते थे। नतीजा यह होता था कि उनके कामों की देखभाल भी मुझे ही करनी पड़ती थी। जितना ही ज्यादा खटना पड़ता है उतना ही काम करने की शक्ति भी आ जाती है। ऐसा भी हुआ है कि रात में उठकर स्वयंसेवकों के कामों की भी निगरानी मुझे करनी पड़ी है। उन दिनों कैंप में चोरों की खासी जमात आ पहुँची थी। कितने चोर रोज पकड़े जाते थे और एक कमरा चोरों को हिरासत में रखने के लिये ही रख छोड़ा गया था। रात भर उनको वहाँ रखा जाता था और दिन होते वे छोड़ दिए जाते थे। ये चोर दूर-दूर के स्थानों के थे और दर्शक तथा प्रतिनिधियों का पीछा करते हुए यहाँ तक पहुँच गये थे। जबतक काँग्रेस का अधिवेशन होता रहा तबतक मुझे सोने या आराम करने का बहुत कम समय

मिला। ऐसा भी होता था कि दिनभर भोजन न करता और काम की भीड़ में ही लगा रह जाता। जाड़े के दिनों में रात में भी घूमते और बोलते रहना पड़ता था। नतीजा यह हुआ कि मेरी आवाज बंद-सी हो गई और आहिस्ते ही बोलकर लोगों से बातें कर सकता था।

८

देशबंधु और नेहरूजी इस कोशिश में थे कि उनके विचार का समर्थन हो। इधर राजगोपालाचार्य और उनके दल के लोग अपनी जीत के लिये प्रयत्नशील थे। महात्माजी जेल में थे। उनके विचारों की विजय हो, ऐसा खयाल बहुतों को होता था। हमारे सूबे के कुछ लोग—श्रीदीपनारायण सिंह (भागलपुर) उनमें शायद प्रमुख कहे जायँ—देशबंधु के खयाल के हो गए थे। कौंसिलों में जाया जाय अथवा नहीं, इसी विषय पर सारा विवाद हुआ करता था। दो वर्ष तक लगातार काम करने से लोगों में थकान जैसी आ रही थी। कौंसिल में गए लोगों के काम से असंतोष ही बढ़ता जाता था। कुछ लोगों को कौंसिल प्रवेश एक नई चीज मालूम देती थी और उसमें जाने की स्वच्छंदता प्राप्त करने की ओर उनका स्वभावतः झुकाव हो गया था।

श्रीजयकर जैसे लोग अपने सूबे से इसी मतभेद के कारण प्रतिनिधि नहीं चुने जा सके थे। बिहार प्रांत ने अ० भा० कांग्रेस कमिटी के लिए उनको प्रतिनिधि चुन लिया ताकि उनको

सलाहों का लाभ देशको हो सके। बंगाल, महाराष्ट्र, यू० पी० नये खयाल की ओर झुके थे। दूसरे-दूसरे सूबों के प्रमुख नेता इस विचार के विरोधी थे और इसीलिये इसके समर्थकों की तादाद भी इन सूबों में ज्यादा न थी। देशबंधुजी समझते थे कि उनकी जीत हो जायगी और किसी वजह से उनकी हार हुई तो स्वराज्य पार्टी कायम करने के लिए वे तैयार थे।

कांग्रेस के अधिवेशन में इस विषय पर बहुत जबरदस्त वाद विवाद हुआ। सभी सूबे के प्रमुख व्यक्तियों ने इसमें हिस्सा लिया। पक्ष और विपक्ष में कितने भाषण हुए। प्रतिनिधियों को अपनी ओर खींचने के लिए भी जो-जो उपाय किए जा सकते थे सब किए गए। राष्ट्रपति ने प्रस्ताव के ऊपर वोट लेने के लिए एक अलग दिन निश्चित किया ताकि वोट गिनने में गलती न हो। ऐसा भी खयाल था कि सामूहिक रूप से वोट देने में लोग जमात के साथ चले जाते हैं। हर सूबे का अलग-अलग वोट लिया जायगा तो शायद जिनको डर या लिहाज से वोट देना होता है उन्हें कुछ विशेष स्वतंत्रता मिल जायगी। मेरा खयाल कुछ तो कौंसिल-प्रवेश की ओर था और जब-जब दोनों पक्षों के भाषण सुनता था तब-तब मेरा विचार अनिश्चित हो जाता था। कौन-सा रास्ता सही है, यह समझना मुश्किल हो जाता था। समझता था कि देशबंधु का ही पक्ष व्यवहारिक है और उनका ही साथ देना मुनासिब होगा, पर अपने प्रांत के लोगों का विचार उनके खिलाफ देख कर सोचने लगता कि वह रास्ता शायद ठीक नहीं है। इस तरह के तर्क-वितर्क बराबर ही मन में हुआ करते थे।

जब वोट का समय आया तब कौंसिल के विपक्ष में ही मेरा वोट हुआ।

देशबंधु के साथ में काम कर चुका था। कितने महीने उनके साथ डुमरांव केस में रह कर सहायक का काम करता रहा था। इससे भी उनकी ओर जब-तब खिंच जाता था। श्री श्रीनिवास आयंगर अब कांग्रेस में शरीक हो गए थे। अपनी सी० आई० ई० की उपाधि छोड़ कर एडवोकेट जेनरल के पद से इस्तीफा दे कांग्रेस में दाखिल हो गए। उनके साथ भी कितने महीने बहुत नजदीक रहकर मुझे काम करने का अवसर मिला था। उनका भी असर मुझपर पड़ रहा था। पर, राजनीतिक-क्षेत्र में तो पहला कदम गांधी जी के ही नेतृत्व में रखने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ था। उनकी अनुपस्थिति में उनके पक्ष को छोड़ कर दूसरे पक्ष में योग देने की हिम्मत नहीं हुई। जहाँ तक मुझे याद है, इसी भांति का तर्क-वितर्क मेरे मन में हुआ था और मैंने कौंसिल-प्रवेश के विरोध में ही अपनी राय कायम की। वोट होने पर देशबंधु की हार हुई और कांग्रेस का अधिवेशन समाप्त हुआ। राजेंद्र बाबू अगले साल के लिए मंत्री बने और अ० भा० कांग्रेस कमिटी का दफ्तर पटने में आया। श्रीव्रज-किशोर प्रसाद वर्किंगकमिटी के सदस्य हुए।

६

कांग्रेस का अधिवेशन खतम हुआ। दूसरे ही दिन सारा कांग्रेस नगर उजाड़ हो गया। जिन स्वयंसेवकों ने पंद्रह बीस

दिन पहले से ही गया शहर मे आकर पंडाल आदि बनाने में दिल खोलकर काम किया था, अधिवेशन समाप्त होने पर वे एक दिन भी ठहरने के लिए तैयार न थे। स्थानीय स्वयंसेवक भी वहाँ रहना पसंद नहीं करते थे। नतीजा यह हुआ कि अधिवेशन खतम होने के बाद ही सारा नगर खाली हो गया। मैं और मेरे साथ काम करने वाले दो-चार लोगों को छोड़कर वहाँ कोई भी न रह गया। गया के साथी लोग भी कुछ देर के लिए आते जाते रहते थे, पर रात को कोई वहाँ रहना चाहता ही नहीं था। काँग्रेस नगर बनाने में महीनों लग गए थे, पर उसको तोड़ने का काम चंद दिनों का ही रह गया। जल्द-जल्द सभी चीजें इकट्ठी की जाने लगीं। गाँव के लोगों ने हमारे काम मे सहायता देने के बदले कई तरह के अड़चन डालना शुरू किया। खादी का पंडाल बना था। बहुत से कपड़े चोरी चले गए। बहुत से सामान किराए पर रखा था, उनमें भी कुछ गायब हो गए। पाखाना बनाने के लिए पत्थर के पटिए किराये पर लिए गए थे। बहुतेरे पटिये नदी मे बालू के नीचे छिपाये हुए पाए गए। इस तरह काँग्रेस नगर को तोड़ने मे सहूलियत के बजाय आसपास के रहने वालों से दिक्कतों का ही सामना करना पड़ा। जितनी जल्दी संभव था सब सामान समेटकर रेलगाड़ी से पटने रवाना किया और काम खतम होते ही मैं भी पटने लौट आया।

भी जितनी दौड़ धूप करनी पड़ी थी उससे उनका स्वास्थ्य और भी खराब हो गया था। सलाह हुई कि हमलोग कुछ दिनों के लिए डिहरी चले जायँ और जब स्वास्थ्य अच्छा हो जाय तब वापस आवें। पद्रह दिनों तक डिहरी में रहकर हवा-पानी बदलने की छुट्टी मिली।

१०

असहयोग आदोलन जैसे-जैसे ढीला पडने लगा, आपस में अविश्वास बढने लगा। उन दिनों पटने से 'तरुण भारत' नामक एक हिंदी साप्ताहिक पत्र प्रकाशित होता था जिसमें महात्मा जी के 'यग इडिया' के लेखों के अनुवाद छपा करते थे। इसके पहले साप्ताहिक 'देश' का प्रकाशन शुरू हो गया था और वह सर्चलाइट प्रस में छपता था। असहयोग के दिनों में 'सर्चलाइट' का रुख आदोलन के पक्ष म रहता था। यह बात उसके तत्कालीन डाइरेक्टरों में से बहुतो को पसद नहीं थी। संपादक और मैनेजिंग डाइरेक्टर से मतभेद हो जाने के कारण कुछ-न-कुछ आपस में सघर्ष हो जाया करता था। एक तरफ राजेंद्र बाबू, ब्रजकिशोर बाबू का जोर आदोलन के पक्ष में तो दूसरी ओर श्री एस० सिन्हा जैसे डाइरक्टर का खयाल नरम विचार का रहता था। सपादक सर्वथा आदोलन के समर्थक थे। अत में तय हुआ कि सपादक के कामों में हस्तक्षेप न किया जाय और 'पत्र' की नीति जहाँ तक सभव हो बीच के रास्ते से चलने की रहे। हाँ, 'देश' अखबार राजेंद्र बाबू के सुपुर्द कर दिया जाय और उसकी सारी जवाबदेही उनके ही ऊपर रहे।

कुछ दिनों तक श्रीवटुकदेव शर्मा उसके संपादक रहे, पर किसी बात पर मतभेद हो जाने के कारण संपादक-पद से वे हटा दिए गए। उन पर इसका बहुत खराब असर पड़ा। द्वेष और क्रोध से प्रेरित हो उन्होंने 'देश' के संचालकों से बदला लेने की प्रतिज्ञा कर ली हो, ऐसा ही मालूम पड़ने लगा। 'तरुण भारत' में वे ऐसे ऐसे भद्दे लेख लिखने लगे जिन्हें पढ़कर क्रोध और द्वेष दोनों की साफ झलक मिलती थी। राजेंद्र बाबू और उनके साथियों पर खास कर आक्षेप किए जाते थे। श्रीगणेशदत्त सिंह तथा उनके अनुयायियों के विरुद्ध रहनेवालों की अच्छी खबर 'तरुण-भारत' में ली जाती थी; यहाँ तक कि विरोधियों को गालियाँ तक दी जाती थीं और उसके मालिक श्रीनागेश्वर प्रसाद सिंह (उर्फ लाल बाबू) ऐसा करने का प्रोत्साहन दिया करते थे। प्रचलित जातिगत भेदभाव को बढ़ाने का श्रेय उस 'पत्र' के मालिक और संपादक दोनों को दिया जाय तो अनुचित नहीं कहा जा सकता। पीछे 'तरुण-भारत' में एक लेख छापने के अपराध में श्रीनागेश्वर प्रसाद सिंह को जेल की सजा भी मिली। दुर्भाग्य और शोक की बात हुई कि खूब स्वस्थ और कम उम्र रहने पर भी उनकी असामयिक मृत्यु जेल में ही हो गई। उनके देहांत के बाद 'तरुण-भारत' का चलना भी असंभव हो गया। किंतु श्रीवटुकदेव शर्मा के आघात किसी न किसी प्रकार चलते रहे।

पाँचवाँ अध्याय

१

स्वराज्य पार्टी की स्थापना हो जाने पर कुछ महीनों तक कौंसिल-प्रवेश के पक्ष में जबरदस्त आंदोलन चलता रहा। देश-बंधु और नेहरू जी के व्यक्तित्व का असर धीरे-धीरे बढ़ती हुई जमात पर पड़ने लगा। जब-जब अ० भा० काँग्रेस कमिटी की बैठक होती रही, इस विषय पर किसी न किसी रूप में वादविवाद चलता ही रहा। इधर राजा जी का दौरा इस ध्येय के विरोध में सारे मुल्क में हुआ। उनका भाषण इतना ओज-भरा होता था कि लोग विमुग्ध प्रभावित हो जाते थे। कौंसिल के पक्ष का समर्थन करने में आसानी थी और स्वभावतः हम लोगों का झुकाव उस पर हो जाता था। हमारे सूबे में इस पक्ष के लोगों की तायदाद बहुत थोड़ी थी। जैसे-जैसे कौंसिल चुनाव का समय नजदीक आता गया, 'स्वराज्य पार्टी' के सदस्यों की तादाद बढ़नी शुरू हो गई। हमारे सूबे में भी सफी साहब जैसे प्रभावशाली व्यक्ति का विचार स्वराज्य पार्टी के पक्ष में हो गया और उनके साथ देनेवाले कितने निकल आए।

जब तक खिलाफत का आंदोलन ओज पर रहा, हिंदू-मुसलमानों में मेल बना रहा। 'लासेन' के सुलहनामे के बाद जब 'खलीफा' का अंत हो गया तब खिलाफत की लड़ाई का भी कोई अर्थ नहीं रहा। नेताओं ने कोशिश जारी रखी जिससे दोनों

धर्मानुयायियों में पूर्ववत् ऐक्य बना रहे, पर उनको कामयाबी बहुत दिनों तक नहीं मिली। जहाँ-तहाँ हिंदू-मुसलमानों के बीच दंगा होने की रिपोर्टें आने लगीं। जैसे-जैसे आंदोलन कमज़ोर पड़ता गया, इस तरह की लड़ाइयों की संख्या बढ़ती ही गई।

गया कांग्रेस के बाद देशबंधु दास ने सभापति के पद से इस्तीफा दे दिया, पर वह मंजूर नहीं हुआ और दोनों दलों ने अप्रैल तक उसे स्थगित रखने का समझौता कर लिया। इस बीच में कौंसिल संबंधी वाद विवाद भी बंद रखा जाय, यही तय हुआ। अप्रैल के बाद सभापति के इस्तीफा का सवाल फिर उठा। मई महीने में बंबई में अ० भा० कां० कमिटी की बैठक हुई। इस समय राजेंद्र बाबू मंत्री की हैसियत से अ० भा० कां० कमिटी के ऑफिस के, जो पटने में चला आया था, चार्ज में थे। श्रीराजाराव सहायक मंत्री थे। उन्होंने कुछ महीने की छुट्टी ले ली और मुझे अपना काम सुपुर्द कर दिया था। प्रां० कां० कमिटी के काम के साथ ही इस काम को भी मैं करता रहा। राजा जी के साथ दौरे में राजेंद्र बाबू भी बाहर चले गए थे और बंबई के जलसे में वर्किंग कमिटी के सामने उन्होंने अपने दौरे की रिपोर्ट पेश की थी। इसी बैठक में स्वराज्य पार्टी की ओर से यह प्रस्ताव पेश हुआ कि कांग्रेस के काम कुछ विभागों में बाँट दिए जायँ और कौंसिल के संबंध में जितने काम हों उनका भार स्वराज्य पार्टी के ऊपर दे दिया जाय। यह प्रस्ताव वर्किंग कमिटी ने कबूल नहीं किया। अतएव, अ० भा० कां० कमिटी के सामने फिर यह पेश हुआ और वाद-विवाद के बाद प्रस्ताव मंजूर हो गया। मैंने तटस्थ

रहना ही अच्छा समझा। दोनों ओर की खींचतान बढ़ती जाती थी और इस लड़ाई में मैं कुछ तथ्य नहीं देखता था। हमारा प्रांत कौंसिल विरोधी समझा जाता था। मेरा तटस्थ रह जाना लोगों को अखरा, ऐसा मेरा अनुमान हुआ। प्रस्ताव मंजूर हो जाने का प्रत्यक्ष परिणाम यह निकला कि वर्किंग कमिटी से ६ सदस्यों ने इस्तीफा दे दिया। वे थे—श्रीराजगोपालाचार्य, श्रीराजेंद्र प्रसाद, श्रीब्रजकिशोर प्रसाद, सेठ जमनालाल बजाज, श्रीवल्लभ भाई पटेल, श्रीगंगाधर देशपांडे। श्रीजवाहरलाल नेहरू ने इस्तीफा वापस कराने की कोशिश की, पर जब वे लोग राजी न हुए तब इस्तीफा मंजूर कर लिया गया। देशबंधु दास का त्याग-पत्र भी स्वीकृत कर लिया गया।

नई वर्किङ्ग कमिटी के सदर हुए डा० अंसारी और नये मेंबरों में श्रीजवाहरलालजी मंत्री, श्रीपुरुषोत्तमदास टंडन, श्रीओमरसोभानी खजांची चुने गए। मैं तटस्थ रह गया था, इसलिये बिहार प्रांत से वर्किङ्ग कमिटी में मैं रख लिया गया। नई वर्किङ्ग कमिटी की बैठक हुई। नये मेंबरों का रुख मुझे पसंद नहीं पड़ा। श्रीजमनालाल जी खद्दर के चार्ज में थे। नये खजांची ने खादी में लगे रुपये का हिसाब लेना चाहा। इस बात का प्रस्ताव भी कमिटी के सामने पेश हुआ। कुछ ऐसी बातें हुईं जो मुझे पसंद न पड़ीं, पर किसी निश्चय पर नहीं पहुँच सका। कोई खास फैसला करना था नहीं। बैठक स्थगित हो गई। मैंने सहायक मंत्री की हैसियत से जो रिपोर्ट लिखी थी उसे इलाहाबाद जाकर श्रीजवाहरलालजी को समझा दिया।

नेहरूजी ने अ० भा० काँग्रेस कमिटी का नया दफ्तर दिखलाया जो हिवेट रोड पर एक किराए के मकान में स्थापित हुआ था। और मुझे इलाहाबाद में ठहर जाने का उन्होंने आग्रह भी किया, पर मैं अपना प्रांत छोड़ नहीं सकता था। अतएव जो कागज मेरे पास थे उनको सुपुर्द कर मैं पटना वापस चला आया।

२

आपस के मतभेद से काम की ढिलाई बढ़ती गई। लोगों का ध्यान लाकल बॉडीज की ओर फिरा। पटना म्युनिसिपलेटी का चुनाव होने को था। काँग्रेस कमिटी का फैसला हुआ कि काँग्रेस की ओर से चुनाव में हिस्सा लिया जाय। खास-कर मौ० खुरशेद हुसनैन चुनाव के पक्ष में बहुत जोर लगा रहे थे। राजेंद्र बाबू, खुरशेद हुसनैन साहब, बदरीबाबू, जगत बाबू इत्यादि और मैं काँग्रेसी उमीदवार की हैसियत से म्युनिसि-पल चुनाव के लिये खड़े हुए। अबतक चुनाव में काँग्रेस के लोग खड़े नहीं किए गए थे। पहला ही दफा बिहार प्रांत की सब से बड़ी म्युनिसिपलिटी के चुनाव में काँग्रेस उमीदवार खड़े किए गए। सामूहिक रूप से काँग्रेस के नाम पर वोट माँगे जाने लगे। खुरशेद साहब पटना चौक से खड़े थे। चुनाव संबंधी भाषण देते समय हिंदुओं ने उनसे 'गोकशी' के संबंध में प्रश्न किया। उनका जवाब था कि अपने मजहब के खयाल से गोमदाया करना उनके लिए जायज है, अतएव, मजहबी नाते से उनका जो फर्ज

है उससे वे नहीं हटते। पर म्युनिसिपल कमिश्नर के नाते उनका कर्त्तव्य होगा कि गाय की नस्ल चढ़ावें और अच्छा दूध जिसमें सबको मिले उसके लिए अच्छा इंतजाम करें। इससे हिंदू वोटरों में काफी असंतोष हुआ। राजेंद्र बाबू ने बहुत जोर देकर लोगों को इस नुक्तेनजर का असली अर्थ समझाने की कोशिश की और हिंदुओं से खुरशेद साहब को वोट देने का आग्रह किया। खुरशेद साहब चुन लिए गए और साथ ही हमलोग भी चुने गए। वोट माँगने का यह पहला काम हमारे जिम्मे हुआ और इसे पूरा करने में बहुत कोशिश पैरवी करनी पड़ी और लोगों को महल्ले-महल्ले में सभाएँ कर काँग्रेस के उद्देश्य का समझाना पड़ा था।

चुनाव में काँग्रेस की कामयाबी हुई, पर बहुमत नहीं हो सका। इस समय श्रीगणेशदत्त सिंह लोकल सेल्फ गवर्नमेंट के मिनिस्टर थे। उनके पहले इस पद पर श्रीमधुसूदन दास थे। श्रीमधुसूदन दास एक वयोवृद्ध उड़िया सज्जन होने के अलावे बहुत ही योग्य और निःस्वार्थ प्रकृति के व्यक्ति थे। नये शासन विधान के आरंभ से ही वे और मि० फखरुद्दीन प्रांतीय मंत्री बनाए गए थे। उनका यह विचार था कि मंत्रियों को वेतन नहीं लेना चाहिए। जीवन-निर्वाह के लिए उनको वकालत पेशा करने की स्वच्छंदता रहे। कम से कम यही विचार अपनी ओर से गवर्नर के सामने उन्होंने पेश किया। सरकारी नीति के विरुद्ध पड़ने के कारण उनका यह विचार कबूल नहीं किया जा सकता था। अतएव उन्होंने मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया और उनकी जगह

श्रीगणेशदत्त सिंह मंत्री बनाए गए।

हमलोगों का श्रीगणेशदत्त सिंह के साथ पारस्परिक संबंध संतोषजनक था। हाईकोर्ट में साथ रहने के अलावे सार्वजनिक कार्यों मे भी एक ही साथ काम करते आ रहे थे। हमलोगों का रास्ता भी ऐसा था, जहाँ उनके स्वार्थ पर कुछ टकर लगने की आशंका न थी। जब वे मंत्री पद पर आसीन न हुए थे तब अक्सर हमलोगों से बातें करते थे और निःस्वार्थ भाव से काम करने के बारे मे विचार विनिमय किया करते थे। कौंसिल मे जाने के बाद उन्होंने वकालत भी छोड़ दी थी और कहा करते थे कि जिस मकान मे वे रहते थे उसी में छोटे-छोटे कमरे बनवाकर हमलोग भी जीवन भर सेवाव्रत लेकर रहा करें। उस उच्च विचार का प्रभाव हमलोगों पर पड़ता ही था और जब हमलोगों ने भी वकालत छोड़ दी तब उनके आदर्श के बहुत निकट पहुँचे हुए समझे जाने लगे। उन्होंने भी हाईकोर्ट जाना बंद कर दिया तो हमलोगों के हृदय में भी उनके प्रति आदर और सम्मान का भाव अधिक होगया।

२

मई के बाद वर्किङ्ग कमिटी की एक बैठक विजगापट्टम में हुई। उसमे मैं शरीक हुआ। मेंबरो के बीच जो मतभेद बंबई में देखा था, वह बढ़ती मात्रा मे यहाँ भी देखने में आया। ऐसा अनुभव होता था कि जिन लोगों ने वर्किङ्ग कमिटी से इस्तीफा दे दिया था उनका वह विचार कितना अहितकर था, यह बात नई कमिटी के नये सदस्यों की हरकत से साफ जाहिर होती थी। मैं

उससे सहमत नहीं था और इसीलिए नए साथियों के साथ काम करने में उत्साहित नहीं हुआ। कौंसिल-प्रवेश में मेरी सहानुभूति देशबंधुदासजी के दल के साथ थी, पर जितनी दूर तक वे लोग जाना चाहते थे उतनी दूर तक मैं जाने को तैयार नहीं था। इसी लिए तटस्थता का रुख अख़तियार कर लिया था। यह मेरी कमजोरी जरूर थी और मैं इसे इंकार भी नहीं कर सकता। वर्किङ्ग कमिटी की बैठक हो रही थी कि नागपुर झंडा सत्याग्रह का रूप गंभीर होते जाने की खबर पहुँची। श्रीजवाहरलालजी ने फौरन ही वर्किङ्ग कमिटी की बैठक नागपुर में करने का निश्चय किया और उसमें शामिल होने के लिए सब सदस्यों से आग्रह किया। अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी की बैठक भी उसी अवसर पर वहाँ होना निश्चित हुआ।

नागपुर झंडा सत्याग्रह ने धीरे-धीरे भयानक रूप धारण कर लिया। एक जुलूस झंडे के साथ सिविल लाईन में जाने से रोक दिया गया था और दफ़ा १४४ भी लगा दिया गया। नागपुर की काँग्रेस कमिटी ने इस हुक्म को मानना अपने लिए घातक समझा। उसका विरोध करने के लिए सत्याग्रह आरंभ हो गया। जितने लोग झंडे लेकर जाते सब पकड़ लिए जाते थे। नागपुर अकेले उस काम को बहुत दिन नहीं चला सकता था। आगे चलकर सेठ जमनालाल बजाज ने उसका नेतृत्व अपने हाथ में लिया और साथ ही उसके रूप को व्यापक बना दिया। सभी प्रांतों से सत्याग्रहियों के झुंड के झुंड नागपुर आने लगे और सत्याग्रह कर पकड़े जाने लगे। उसी संबंध में हमारे सूबे के एक

स्वयंसेवक श्रीहरदेव सिंह की मृत्यु नागपुर जेल के अंदर ही हो गई। उनकी विधवा स्त्री और वृद्ध बाप को इससे शोक होना अनिवार्य था। उस समय उनके परिवार को कुछ मदद देकर सांत्वना दी गई और उनके वृद्ध पिता को जब-जब उनपर कुछ भीड़ पड़ती रही, कुछ न कुछ सहायता करते रहना पड़ा है। झंडा सत्याग्रह का रूप इतना व्यापक हो गया तो स्थानीय सरकार को कांग्रेस से संधि करनी पड़ी। सरकारी हुक्म उठा लिया गया और पकड़ने का काम भी रोक दिया गया। कुछ दिनों के बाद सुलह हो जाने पर जितने सत्याग्रही जेलों में रह गए थे, सब छोड़ दिए गए।

झंडा सत्याग्रह समाप्त हो गया, पर नागपुर की बैठक में अ० भा० कां० कमिटी ने वर्किंग कमिटी की सिफारिश को कबूल न कर उसके कुछ मेंबरों को इस्तीफा देने पर मजबूर कर दिया। बंबई की अ० भा० कां० कमिटी ने कौंसिल के विषय में जो प्रस्ताव स्वीकृत किया था उसके अनुसार प्रांतीय कांग्रेस कमिटियों ने काम करने से अनिच्छा प्रकट की थी। तामिलनाड की प्रां० कां० कमिटी की हरकत खास कर अनुचित होने के कारण उस पर अनुशासन की कार्रवाई की जाने का प्रस्ताव हुआ। उसे अ० भा० कां० कमिटी ने कबूल नहीं किया। वर्किंग कमिटी के सदस्यों में से श्रीजवाहरलाल नेहरू, डा० अंसारी आदि सज्जनों ने त्याग-पत्र दे दिया। दिल्ली में कांग्रेस का स्पेशल सेशन सितंबर महीने में होने को था। कौंसिल प्रश्न के ऊपर कांग्रेस का क्या विचार होना चाहिए, इसी बात को हल करने के लिए यह

विशेष अधिवेशन बुलाया गया था। मौ० अबुल कलाम आज़ाद उसके सभापति चुने गए थे। नई वर्किंग कमिटी वहाँ बनाने का विचार हुआ।

इस विशेष अधिवेशन में मैं भी शरीक हुआ। मौलाना मुहम्मद अली धीरे-धीरे स्वराज्य पार्टी के अनुकूल होते जाते थे। मि० आसफ अली तो सोलह आने उस ख़याल के हो गए थे। विशेष अधिवेशन में ज्यादा तादाद सुलह-पसंद लोगों की हो गई। धीरे-धीरे यह मनोवृत्ति उत्पन्न हो गई थी कि स्वराज्य पार्टी यदि कौंसिल में जाना चाहे तो नो-चेंजरों (No changers) की ओर से कोई अड़चन न डाली जाय। दिल्ली की बैठक में यह फैसला हुआ कि जिन-जिन लोगों को धार्मिक अथवा नैतिक विरोध कौंसिल प्रोग्राम से नहीं हो, उनको स्वतंत्रता रहे कि वे कौंसिलों के लिए खड़े हों। वोटरों को वोट देने से मना न किया जाय। इस प्रस्ताव की वजह से देशबंधुदासजी के मत की पुष्टि हो गई। सच पूछिये तो उनके प्रोग्राम को कबूल कर कांग्रेस ने कौंसिल-प्रवेश पर अपनी छाप एक तरह से दिल्ली से ही देना शुरू कर दिया।

४

कांग्रेस का सालाना जलसा कोकनाडा में १९२३ ई० के दिसंबर में होने वाला था। उसके सभापति हुए मौ० मुहम्मद अली। उस साल वर्षा का विशेष प्रकोप होने से हमारे प्रांत को विशेष क्षति उठानी पड़ी थी। रेल की लाइनें टूट जाने से कलकत्ते से मद्रास का रास्ता बंद हो गया था। बिहार के

निवासियों को मद्रास प्रांत-स्थित कोकनाडा पहुँचने के लिए मनमाड होकर जाना पड़ता था। हमारे सूबे में स्वराज्य पार्टी के प्रोग्राम के प्रति बहुत जोश नहीं रहने के कारण काँग्रेस के जलसे में शामिल होने का बहुत उत्साह भी नहीं था। रेलवे लाइन खराब हो जाने के कारण घूमकर जाने में रेल किराया भी ज्यादा पड़ जाता था, ऐसी हालत में साधारण पूंजीवाले आदमी के सामने यह एक सवाल था। उस साल बाढ़-पीड़ितों की सहायता करते करते बहुत से कार्यकर्त्ता कुछ आराम करने की अपेक्षा फिर कहीं लम्बी दौड़ लगाने की इच्छा नहीं रखते थे। राजेंद्र बाबू स्वयं भी अस्वस्थ हो गए थे। इस कारण बिहार से बहुत ही कम लोग कोकनाडा काँग्रेस में शामिल हो सके।

१९२३ ई० के दिसंबर महीने में मैं कलकत्ते गया हुआ था। डुमरांवराज केस में जितने लोगों ने काम किए थे उनमें से बहुतों ने असहयोग आंदोलन में शामिल होने पर वकालत छोड़ दी थी, पर इस केस में काम करने के लिए अपवाद बना लिया था। रौस साहब, जिन्होंने उस केस की जाँच की थी, हाइकोर्ट के जज हो गए थे। बहस के दो-चार महीने के बाद उन्होंने फैसला दिया और महाराज की जीत हुई। दूसरे पक्ष के लोगों ने हाई-कोर्ट में अपील की। उसकी सुनवाई अगले साल होने को थी। उसके लिए तैयारी करने का वक्त आ गया था। महाराज की ओर से इस मुकदमे में काम करने के लिये पैगाम आया और मुझे कलकत्ते रहकर सर आशुतोष मुखर्जी को इस केस में बहस करने के लिए तैयार कराने को कहा गया। इसी सिलसिले में

दिसंबर महीने में मुझे कितने दिनों तक कलकत्ते में रहना पड़ा। इस इंतजार में भी था कि रेल का रास्ता मद्रास का खुल जाय तो कोकनाडा कांग्रेस में भी शामिल हो जाऊँ। कलकत्ते रहते ही खबर मिली कि रेलवे लाइन मरम्मत हो गई। मैं तुरत कांग्रेस में शरीक होने के लिए चल पड़ा।

कोकनाडा कांग्रेस की विशेषता यह थी कि मौ० महम्मद अली का भाषण शायद पिछले सभी सभापतियों के भाषण से बड़ा था। स्वराज्य पार्टी को उनसे मदद मिल ही रही थी। उन्होंने कुछ ऐसी बात कही, जिसका यह अर्थ होता था कि महात्मा जी भी स्वराज्य पार्टी के कौंसिल प्रवेश के पक्ष में हैं। अतएव स्वराज्य पार्टी को मनचाही वस्तु प्राप्त हो गई। जिन-लोगों ने आजतक उसके विरोध में काम किया था उनका मुँह बंद हो गया।

बिहार प्रांत के लिए एक दुखद घटना हुई जिसकी खबर कांग्रेस अधिवेशन के मध्य में ही मिली। गया के श्रीकृष्ण-प्रकाश सेन सिंह एक धनी जमींदार परिवार के होने के अलावे एक नामी वकील के पोते थे। गया शहर में उनकी बहुत कदर थी। श्रीकृष्णप्रकाश सेन सिंह को नाबालिग छोड़कर उनके पितामह और पिता स्वर्गवासी हो चुके थे। अतएव उनकी शिक्षा कोर्ट ऑफ वार्ड्स के संरक्षण में हुई थी। जब वे बालिग हुए तब उन्होंने सार्वजनिक कामों में दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया। तेज, चतुर और बोलने में दक्ष, मिलनसार श्रीकृष्ण-प्रकाश हिंदू मुसलमान दोनों के बीच लोकप्रिय हो गए। अमीर

और गरीब सभी तबके के लोगों ने उनको अपनाया। व्याख्यान देने में बड़े ही पटु थे। खिलाफत के मसलों का चित्र इस प्रकार खींचते थे कि श्रोता मुग्ध हो जाते थे। कितनी दफे तो लोगों के आँसू निकल पड़ते थे। गया के नेताओं में उनका खास स्थान था और ऐसी आशा की जाती थी कि जब नये कानून के अनुसार डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का चुनाव होगा तब गया जिला बोर्ड के चेयरमैन वे ही बनाए जाते। उनकी अकस्मात् तथा असामयिक मृत्यु ने गया शहर और जिले में शोकजनक परिस्थिति पैदा कर दी। मौ० मुहम्मद अली ने अध्यक्षपद से शोक-प्रस्ताव पेश करते हुए उनके गुणों का बखान किया था।

कोकनाडा काँग्रेस के बाद काँग्रेस के कामों में ढीलापन और भी ज्यादा आ गया। कौंसिल के चुनाव में हमारे प्रांत से थोड़े लोगों के सिवा काँग्रेस के प्रमुख लोगों में से किसी ने भाग नहीं लिया। सफी साहब नये दल के नेता हुए। उस ओर जाने वालों के प्रति लोगों में श्रद्धा नहीं उत्पन्न होती थी, इसीलिए जिन लोगों ने कौंसिल जाने की चेष्टा की उनके साहस की प्रशंसा ही करनी चाहिये। श्रीदेवकीप्रसाद सिंह असेंबली के लिए बाइ-इलेक्शन (Bye election) में उमीदवार हुए और स्वतंत्र तरीके पर वहाँ के लिए चुन भी लिए गए।

५

डिस्ट्रिक्ट तथा म्युनिसिपल बोर्डों में जाने की मनाही पहले भी नहीं थी और जब चुनाव की ओर लोगों का ध्यान जाने लगा तब प्रां० कॉ० कमिटी की एक बैठक में जो मुंगेर में

हुई थी, लोकलबडीज में प्रवेश करने के पक्ष मे प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। पटना शहर के म्युनिसिपल चुनाव मे काँग्रेस की ओर से उमीदवार खड़े किए गए थे और उनको बहुत अंश में सफलता मी मिली थी। काँग्रेस के सफल म्युनिसिपल कमिश्नरों की तायदाद उतनी नहीं थी कि अपने जोर पर उन्हें पदाधिकारी बनाया जा सके। लोगो का इरादा था कि मौ० खुरशेद हुसनैन को चेयरमेन और मुझे उनका वाइस-चेयरमैन बनाया जाय, पर श्रीश्यामनारायणसिंह शर्मा काँग्रेस के विरोध मे चेयरमैनी के लिए उमीदवार हो गए और मि० रजा को वाइस-चेयरमैन का उमीदवार बनाकर अपने दल की कामयाबी के लिये कोशिश करने लगे। नामजद कमिश्नरों के नाम छप जाने पर यह असंभव हो गया कि खुरशेद हुसनैन को चेयरमैन बनाने मे हमारी कामयाबी हो। ज्यादा लोगों की राय यह हुई कि यदि राजेंद्र बाबू खड़े किये जायँ तो हमारी जीत हो सकती है। लाचार राजेंद्र बाबू को अनिच्छा रहते भी इस पद के लिये उमीदवार होना पड़ा। उन्होंने यह साफ कह दिया कि मैं जबतक वाइस चेयरमैन नहीं बनता वे चेयरमैन होने को स्वीकार नहीं करते। चुनाव हुआ। राजेंद्र बाबू चेयरमैन, और मैं वाइस चेयरमैन तथा मौ० हफीज (स्वतंत्र) प्रेसिडेन्ट चुने गए।

मुजफ्फरपुर के म्युनिसिपल चुनाव में भी हमारी सफलता हुई। श्रीविंध्येश्वरीप्रसाद वर्मा चेयरमैन और श्रीरामदयालु सिंह वाइस-चेयरमैन चुने गए। इसके अलावे और चंद जगहों में भी काँग्रेसवाले म्युनिसिपल बोर्ड में चुने गए और पदाधिकारी

बनाए गए, पर कांग्रेस का बहुमत किसी भी म्युनिसिपल चुनाव में नहीं हुआ। अपने कामसे अथवा अपनी प्रसिद्धि के बलपर ही कांग्रेसी उमीदवार पदाधिकारी चुने जा सके थे। श्रीविन्ध्येश्वरी प्रसाद वर्मा को ख्याति उनकी निर्भीकता तथा सेवा परायणता के कारण अधिकारियों के बीचमे भी पहुँच चुकी थी। कहा जाता है कि जब हैजे के प्रकोप से मुजफ्फरपुर के लोग पीड़ित थे तो बिंदा बाबू चेयरमैन की हैसियत से बीमारियों के पास पहुँच जाते थे, डाक्टरों की मदद पहुँचाते थे और स्वयं मरीजों को तसल्ली तथा उनके परिवार को सांत्वना दिया करते थे। मित्रों तथा साथियों के मना करने पर भी रोगियों के निकट जाने से बाज नहीं आते थे। वहाँ के तत्कालीन कलक्टर मि० एलमस के ऊपर भी उन कामों का अच्छा प्रभाव पड़ा था।

६

१९२४ ई० के आरंभ में डुमराँव राज केस हाईकोर्ट में खुलनेवाला था। महाराजा ने श्री सी० आर० दास को न रख कर सर आशुतोष मुखर्जी को अपना वकील बनाना चाहा। सर आशुतोष कितने वर्षों तक हाईकोर्ट के जज रहकर विख्यात हो चुके थे और ६० वर्ष पूरा करके जजी से अवसर ग्रहण कर वकालत पेशा शुरू करनेवाले थे। इसकी खबर महाराजा तथा रायबहादुर हरिहरप्रसाद सिंह—दोनों को थी और दोनों पक्ष से इस बात की कोशिश होती रही कि अपने पक्ष में सर आशुतोष को तैयार करलें। महाराजा की पैरवी कारगर हुई

और सर आशुतोष ने उनकी ओर से वकालत करना कबूल कर लिया। वाइस-चेयरमैन रहते हुए भी मैं महाराजा का काम करने लगा। राजेंद्र बाबू हरि जी की तरफ से मुकदमे में थे, क्यों कि जैसा पहले लिख चुका हूँ, इस मुकदमे के लिये वकालत छोड़ते समय १९२१ ई० में ही अपवाद कर लिया गया था।

पाँच महीनें तक मुकदमे में बहसें होती रहीं। मि० हसन इमाम और मि० मानुक हरि जी की ओर से तथा सर आशुतोष महाराजा की ओर से पैरवी करते रहे। केस करीब-करीब खतम हो चला था। सर आशुतोष एक दिन एक निमंत्रण से लौट कर आए और भयंकर रोग में ग्रसित हो गए। मैं उस दिन एक बारात में बाहर गया हुआ था। लौटने पर उनके देहांत का दुःखद समाचार मिला। बीमारी जैसे ही शुरू हुई सर नीलरतन सरकार को बुलाने के लिए तार दिया गया, पर उसकी भयकरता इतनी बढ़ी कि वे २४ घंटे से ज्यादा जीवित न रह सके। स्पेशल ट्रेन से उनका शव कलकत्ते भेजा गया और वहाँ उनकी दाह-क्रिया हुई। जितने दिनों तक मैं सर आशुतोष के साथ काम करता रहा उनकी विद्वत्ता तथा प्रगाढ़ पांडित्य से परिचय होता गया। स्वभाव के कितने सरल थे, इसका पता तो तब लगा जब मैं उनके साथ एक दिन कलकत्ते गया था और उनके घरपर ही ठहरा था। स्वयं खड़ा रहकर उन्होंने मुझे भोजन कराया और बराबर मेरी असुविधाओं के संबंध में पूछते रहे थे। उनके देहांत के बाद महाराजा की ओर से जवाब देने का काम रह गया था। पर उसकी जरूरत नहीं समझी गई। और बहस

खतम कर दी गई। स्पेशल बेंच के द्वारा इस मुकदमे की सुनवाई हुई और उसमें थे सर डासन मिलर और मि० जस्टिस मल्लिक। महाराजा हारे और फिर प्रिवी कौंसिल मे अपील की। वहाँ पर दोनो पक्षो मे सुलहनामा हो जाने से कितने वर्षों के बाद यह मुकदमा खतम हुआ। इसमे पचास लाख रुपये से ज्यादा दोनों ओर से खर्च हुआ होगा, ऐसा लोगों का अनुमान है।

७

म्युनिसिपलिटी मे कुछ महीने काम करने के बाद ही ऐसा मालूम होने लगा कि हमलोग कुछ फायदे का काम यहाँ नहीं कर सकते। पहले से जिन लोगों का संबंध म्युनिसिपलिटी से था उनके साथ थोड़ी भी कड़ाई का व्यवहार किए जाने पर वे पदाधिकारियों की जान पर आ जाते थे। तरह-तरह से तंग करना ही वे अपना उल्लू सीधा करने का उपाय समझते थे। कुछ तो २० वर्षों से लगातार कमिश्नर होते आए थे और उनके स्थान इसलिए सुरक्षित रहते थे कि वे अपने महल्लेवाले को अनुचित काम दिलाते रहते थे। कितने म्युनिसिपल कमिश्नर ऐसे भी थे जो अपनी स्थिति का लाभ उठा कर नाजायज फायदा लिया करते थे। इस तरह के लोगों को हमारी ओर से कुछ भी मदद नहीं मिल सकती थी, बल्कि उनके कामो मे अड़चन पड़ती थी। इस कारण उनका रुख हमारे खिलाफ रहता था। हम लोगों ने म्युनिसिपल प्रबंध में कुछ सुधार करना चाहा। पैसे की कमी के कारण मनचाहा सुधार नहीं किया जा सकता था, इसलिए

आमद बढ़ाने का एक तरीका सोचा गया। बिहार में चुंगी नहीं ली जाती थी। तजवीज हुई कि पटना म्युनिसिपलिटी में इस तरह की चुंगी लगाकर कुछ आमदनी बढ़ाई जाय और इसके जरिये से जो-जो सुधार आवश्यक हैं उन्हें किया जाय। इस विषय को लेकर एक बड़ा आंदोलन खड़ा किया गया। जिनको हमारा रहना नापसंद था उनके लिए एक अच्छा अवसर हाथ आ गया। श्रीव्रजगोविंद मालवीय हमेशा हमारे खिलाफ रहनेवाले व्यक्तियों में थे। कांग्रेस के प्रति उन्हें तनिक भी सहानुभूति नहीं थी और जो कोई भी कांग्रेस के खिलाफ कुछ कहना या करना चाहे मालवीय जी सदैव उसकी पीठ पर मौजूद रहने वाले व्यक्ति थे। चुंगी के खिलाफ आंदोलन को उन्होंने ही बहुत बढ़ाया और जगह-जगह पर सभाएँ करके तथा लोगों से मिलकर हमारे प्रतिकूल वायुमंडल खड़ा किया।

इसी बीच सारे सूबे मे नये कानून के मुताबिक डिस्ट्रिक्ट बोर्डों का चुनाव हुआ। कांग्रेसवाले उनमें प्रवेश करने के इच्छुक थे। कांग्रेस के साधारण काम करीब-करीब खतम ही हो चले थे। शायद ही जहाँ-कहीं, कभी-कभी कांग्रेस कमिटियों की बैठकें हो जाती हों। ऐसा कोई दूसरा काम जिसे रचनात्मक कहा जाय कहीं भी नहीं किया जा रहा था। सूबे में राजेंद्र बाबू तो पटना म्युनिसीपलिटी के चेयरमैन थे ही, बाहर भी इलाहाबाद म्युनिसिपलिटी के श्रीजवाहर लाल नेहरू तथा अहमदाबाद म्युनिसिपलिटी के श्रीवल्लभभाई पटेल चेयरमैन हो चुके थे और देशबंधु दास कलकत्ता कारपोरेशन के मेयर पद पर आसीन थे।

कांग्रेस कमिटी का प्रस्ताव भी उसके अनुकूल हो था

और बड़े-बड़े लोगो के उदाहरण भी। अतएव, इस चुनाव में सभी जिलों मे कॉंग्रेस की ओर से उमीद्‌वार खड़े किए गए और बहुत जगहों मे उनका बहुमत भी हुआ। मुझसे भी गया जिले मे अपने इलाके से खड़े होने के लिए कहा गया। मैंने अपनी मजूरी दे दी। उन दिनों टिकारी राज्य के मालिक महाराज कुमार श्रीगोपाल शरण सिंह के यहाँ श्रीसिद्धेश्वरप्रसाद सिंह और श्रीगुप्तेश्वरप्रसाद सिंह सर्किल अफसर थे और वे जिले में काफी प्रभावशाली व्यक्ति समझे जाते थे। इस चुनाव के पहले शहर के रहनेवाले ही बैठे बिठाए बोर्ड में चुन लिए जाते थे और उनका खयाल था कि वे ही लोग उसके योग्य थे। उनका विचार था कि उनके सिवा दूसरे लोगो को चुने जाने का न हक था और न वे चुने जा सकते थे। जमींदारों का प्रभाव अपने इलाके में इतना था कि जिसकी मदद वे करते थे उनको ही वोट मिलते थे। वकील-मुख्तार सभी जमींदारों के यहाँ छोटे या बड़े जितने भी थे काफी असर रखते थे और उनको ही मदद मिलती आई थी। खुद बड़े लोगो का डिस्ट्रिक्ट बोर्ड मे जाना बहुत बड़ी बात नहीं समझी जाती थी, पर अपने आदमियों के जरिए काफी प्रभाव जिले के बोर्डों पर उनका रहता ही था।

श्रीबिशुनप्रसाद गया बोर्ड के चेयरमैन थे। कुशल वकील होने की वजह से जिले में भी उनका नाम था। टिकारी राज्य के साथ खानदानी सरोकार रहने से मनचाहा काम करा लेना उनके लिए बाएँ हाथ का खेल था। श्रीकृष्णप्रकाशसेन सिंह के देहात हो जाने से उनके मुकाबले में किसी को खड़े होने की

हिम्मत भी न होती थी।

नये कानून के द्वारा चुनाव होने जा रहा था। वोटरों की तायदाद पहले से कई गुना बढ़ गई थी। दिहात के रहनेवालों को इससे सुविधा प्राप्त हो गई थी। कांग्रेस के काम से दिहातों में घूमनेवाले व्यक्तियों की वोटरों तक पहुँच हो गई थी, पर वोट जमींदारों के विरोधी उमीदवारों को मिल सके, ऐसी आशा नहीं थी। श्रीसिद्धेश्वरप्रसाद सिंह कट्टर कांग्रेसी न होते हुए भी एक जबरदस्त कांग्रेसमैन समझे जाते थे। उनकी वजह से कांग्रेस के उमीदवारों को काफी सहायता मिली। विशुन बाबू को उमीद थी कि टिकारी राज्य के इलाके से जो लोग भी चुने जायँगे उनके अनुकूल ही होंगे। इस बुनियाद पर उनकी उमीद बनी हुई थी कि किसी भी चुनाव में उनकी हार नहीं हो सकती।

गया जिले में जमींदारों का जोर तो था ही, पर साथ ही मुसलमानों का प्रभाव शहर में काफी जबरदस्त समझा जाता था। विशुन बाबू हिंदू और मुसलमान दोनों के प्रिय थे। खान-पान रहन-सहन में उनमें और उनके मुसलमान साथियों में कोई भेद नहीं था। बदकिसमती से डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चुनाव के कुछ पहले उनको अपने मुसलमान दोस्तों और साथियों से मन मुटाव हो गया। कारण कुछ खास बातें थीं। उनके सहकारी वाइस-चेयरमैन मि० हादी हुसैन सर सुलतान अहमद के अपने भाई थे। उन दोनों के बीच नाइत्तफाकी इतनी हो गई कि बोर्ड के कामों में दिक्कत पड़ गई थी। उन्होंने बैंक को लिख दिया था कि कोई चेक सही न समझा जाय। उनके मददगार थे खाँबहादुर ख्वाजा

मुहम्मद नूर। चाहे किसी भी पद पर नूर साहब क्यों न रहे हों, जिला के कामों में उनकी दिलचस्पी हमेशे बनी रहती थी। प्रेसिडेंट कौंसिल या जज हाइ कोर्ट या मेंबर पब्लिक सर्विस कमीशन रहते हुए भी जिला की राजनीति में उनका काफी हाथ रहता था और जिस पक्ष को मदद करते थे उसकी जरूर जीत होती थी।

८

श्रीगणेशदत्त सिंह इस साल के चुनाव में काँग्रेस के विरोधी नहीं थे। उनका खयाल था कि शहरी लोगों का और खासकर किसी जाति-विशेष पर जिनका असर शिक्षा और सरकारी पदों के कारण बहुत दिनों से अक्षुण्ण चला आता था बोर्डों से उठ जाय। जहाँ तक उनकी मदद से यह काम हो सकता था वहाँ तक वह सहायता देने को तैयार थे। काँग्रेसमैन इस चुनाव में दिहातवालों के विशेष निकटस्थ होने के कारण शहर के आधिपत्य को विनष्ट करने मे समर्थ हो सकते थे; ऐसी उनकी धारणा थी। इस विचार से भी उनकी सहानुभूति काँग्रेस के साथ थी। श्रीविशुन प्रसाद को चेयरमैन के पद से हटाना आसान काम नहीं था। जिला के सरकारी अफसर उनके पक्ष में स्वभावतः ही थे। टिकारी राज तथा दूसरे दूसरे बड़े जमींदार पर उनकी धाक बनी हुई थी। हाँ, मुसलमानों से उस समय उनकी नहीं पटती थी। कारण चाहे जो भी हो, परिस्थिति ऐसी ही थी। काँग्रेस टिकट पर जो लोग चुने जाने वाले थे उनपर

जमींदारों का असर काफी रहता ही, ऐसा अनुमान कर लेना ग़लत नहीं समझा जा सकता था।

मेंबरों का चुनाव होने लगा। श्रीगणेशदत्त सिंह ने श्रीगुप्तेश्वरप्रसाद सिंह को मेरे बारे मे इशारा किया और मुझे उमीदवार बनाने की बात उनसे कही। उस समय मुझे इसका ज्ञान नहीं हुआ। जब मैं मेंबर चुन लिया गया तो श्रीगुप्तेश्वर प्रसाद सिंह मुझे चेयरमैन के लिए उमीदवार बनने की दावत देने जरूर आए। पिछले साल गया काँग्रेस के प्रबंध में मेरा जो हिस्सा रहा था उसकी वजह से शहर के लोगों को मेरे बारे में जानकारी हो गई थी। यों तो प्रां० कॉं० कमिटी के साथ मेरा संबंध प्रारंभ से ही था। और इस वजह से प्रांत के कांग्रेस-कर्मियों से मेरी जान-पहचान और निकट संबंध स्थापित हो चुका था। बोर्ड के लिए जो दावत मुझको मिली उसको मैं इंकार नहीं कर सका। ख्वाजा मुहम्मद नूर साहब से मेरी जान-पहचान नहीं थी, पर मुझे वे जानते थे और मैं भी उन्हें जानता था। भीतरी इच्छा उनकी थी कि मैं श्रीविशुनप्रसाद को हटाऊँ, पर उसे जाहिर नहीं होने देते थे। उनकी आंतरिक इच्छा तो यह थी कि मि० हादीहुसैन वाइस-चेयरमैन चुने जायँ और उनकी मदद से मैं चेयरमैन चुना जाऊँ ताकि उनका एहसान मुझ पर रहे और मैं उनकी ख्वाहिश के मुताबिक बोर्ड का प्रबंध करूँ। शायद मुसलमान मेंबरों की भी यही ख्वाहिश रही हो, क्योंकि उस साल बोर्ड में ६—७ मुसलमान मेंबर काँग्रेस टिकट पर चुने गए थे और उनकी सहानुभूति प्रकटतः मेरे साथ थी।

चुनाव में मैं औरंगाबाद थाना में खड़ा हुआ था। जो लोग पहले से मेंबर होते आते थे उन्होंने मेरे साथ इतनी मेहरबानी अवश्य की कि मेरे विरुद्ध में खड़े नहीं हुए। हाँ, एक मोख़्तार साहब ने बहुत समझाने बुझाने पर भी बैठने से इंकार कर दिया और इसी वजह से चुनाव लड़ना पड़ा। वोट तो उन्हें ३८ ही मिले, पर वोटरों को वोट देने के लिए थाना पर आना ही पड़ा। चुनाव का महत्त्व नहीं रहते भी मुझे ऐसा ज्ञान पड़ा कि हमारे यहाँ के वोटरों के सामने काँग्रेस का ध्येय नहीं रखा गया था, बल्कि कहीं तो मेरी सेवा, कहीं मेरी जाति और कहीं जमींदारों की मदद वोटरों से वोट लेने के लिए बयान की गई थी। मैं तो स्वयं एक वोटर के पास भी नहीं जा सका था। पटने में ही रहकर वहाँ के कामों को—डुमरांव राज केस और म्युनिसिपलिटी—अंजाम दे रहा था। काँग्रेस की ओर से श्रीसिद्धेश्वर प्रसाद सिंह तथा राय हरिहरप्रसाद लाल भिन्न-भिन्न स्थानों के चुनावों की देखभाल कर रहे थे पर हकीकत में यह चुनाव जमींदारों की प्रभुता का ही प्रदर्शक था। वोटरों की स्वाधीनता की कोई कीमत न थी। न उन्हें वैसा बताया गया था और न उनमें यह भावना ही थी। जिनकी धाक जमी हुई थी उनके इशारों पर वोटरों ने अपने वोट दे दिए।

मौ० लतीफुर रहमान जिनका जिक्र 'मदर लैंड' अखबार के सिलसिले में आ चुका है, मदनपुर थाने से काँग्रेसी उमीदवार खड़े थे। उनका विरोध श्री शिवरत्न सिंह, देव राज के मैनेजर, कर रहे थे। काँग्रेस के प्रति उनकी भी अच्छी सहानुभूति थी, किंतु उमीद-

वारी के वक्त उन्होंने जैसे अपनी सहानुभूति वापस लेली हो और कांग्रेस का विरोध करना ही उचित माना। मुझे उस चुनाव में एक जगह भाषण देने के लिए कहा गया था। मौ० लतीफुर रहमान की उमीदवारी का समर्थन करने के लिए मैं वहाँ गया जरूर और कुछ बोला भी, लेकिन उससे उनको संतोष के बदले असंतोष ही हुआ। मुझे बोलने का कुछ अभ्यास था ही नहीं और न मैं ठीक-ठीक यह समझता था कि कौन से सिद्धान्त को लेकर यह चुनाव लड़ा जाता है। अतएव दो-चार मिनट तक ही जो भाषण मैंने दिया उसका असर उपस्थित जनता पर नहीं हुआ। सच बात तो यह थी कि उस इलाके में राजा साहब देव की जमींदारी होने के कारण उस समय उनकी मर्जी के खिलाफ किसी को वोट मिल भी नहीं सकता था। अतएव मौ० लतीफुर रहमान की हार हुई और मेरे लिए मेरा वहाँ जाना आगे चलकर एक शिकायत की वजह बन गई।

९

बोर्ड के चेयरमैन के चुनाव का अवसर आया और मैं उसकी उमीदवारी में गया पहुँचा। श्रीविशुनप्रसाद की ओर से सरकारी अफसरों और राज के मैंबरों पर जोर पड़ने लगा। मुसलमानों के ऊपर भी जोर दिया जाने लगा। चुनाव की सख्ती धीरे-धीरे मालूम पड़ने लगी। कांग्रेसी उमीदवारों के नेता थे मीर शफायत हुसैन। वे विशुन बाबू के बड़े दोस्तों में से एक थे, पर उन दोनों का दिल एक दूसरे से फट गया था। कांग्रेस

पार्टी में चेयरमैन और वाइस-चेयरमैन के लिए उमीदवार चुने जाने में काफी दिक्कत आ खड़ी हुई। लोगों का खयाल था कि मैं चेयरमैन के लिए और मौ० हादी हुसैन वाइस-चेयरमैन के लिए काँग्रेसी उमीदवार बनाये जायँगे। मेरे बारे में तो कोई मतभेद नहीं हुआ, पर वाइस-चेयरमैन के लिए श्रीसिद्धेश्वरप्रसाद सिंह उमीदवार खड़ा हो गए। मौ० हादी हुसैन काँग्रेस की ओर से चुने नहीं गए थे, इसलिए उनके पक्ष में जोर देना काँग्रेस-मेंबरों के लिए कठिन हो गया। श्रीसिद्धेश्वरप्रसाद सिंह काँग्रेस की ओर से चुने गए थे, पर चेयरमैन और वाइस-चेयरमैन दोनों एक ही जाति और एक संप्रदाय के हों, यह लोगों को खटकना था। इस विषय को लेकर काँग्रेस-पार्टी में गरमागरम बहस होने लगी। आशंका होती थी कि आपस का मतभेद इतना न बढ़ जाय कि पार्टी शुरू होने के पहले ही खतम हो जाय। मुसलमान मेंबरों का रुख मौ० हादी हुसैन की ओर था। पीछे तो मेरी समझ में यह बात आ गई कि मैं विशुन बाबू को मुसलमान लोगों से नाइत्तफाकी हो जाने की वजह से सजा देने के लिए ही बुलाया गया था। और काँग्रेस मेंबरों से काँग्रेस या इसके सिद्धांत से कोई खास सरोकार नहीं था। मीर साहब मुसलमानों की ओर से बहुत दबाव पड़ने पर भी अपनी जगह पर कायम रहे। राज की मदद श्रीविशुनप्रसाद को मिल जाने की वजह से श्रीगुप्तेश्वर प्रसाद सिंह और उनके एक साथी श्रीदेवकीनंदन बाजपेयी, काँग्रेस के उमीदवार होते हुए भी, अपने स्थान पर कायम नहीं रह सके। उन लोगो ने छिपे तौर पर श्रीविशुन प्रसाद को अपना

वोट देने को तैयार होकर, राज के सरोकारी मेंबरों को भी अपने साथ ले चलने के लिए कोशिश करना शुरू कर दिया। इस बात को लेकर सिद्धेश्वर बाबू और गुप्तेश्वर बाबू में झगड़ा होने की संभावना हो गई थी। आखिर वोट का दिन आ गया। चेयरमैन के लिए मेरा और श्रीविशुनप्रसाद के नाम प्रस्तावित हुए। श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह एक स्वतंत्र जमींदार मेंबर उस दिन के लिए सभापति चुने गए थे। उनकी तरफ से विशुन बाबू को इतमीनान था कि उनके ही मददगारों में से यह एक थे। हमारी ओर से श्रीगौरीशंकर शरण सिंह ने उनसे वादा ले लिया था कि हमारे पक्ष में ही उनका वोट होगा। खुद गौरी बाबू ने भी विशुन बाबू को वोट देने का वचन दे दिया था, पर जब हमारी उमीदवारी घोषित हुई तब उन्होंने विशुन बाबू से अपने पहले वचन को मुक्त करा लिया। चुनाव में बहुमत से मैं चुना गया। अब वाइस-चेयरमैन का चुनाव पेश हुआ। दोनों उमीदवार स्वतंत्ररूप से खड़े हुए। राज के लोगों ने सिद्धेश्वर बाबू का पक्ष लिया और मुसलमान मेंबरों ने मौ० हादी हुसैन को वोट देना तय कर लिया। वोट का नतीजा यह निकला कि सिद्धेश्वर बाबू एक वोट से चुन लिए गए। मैंने भी उनको ही वोट दिया। चेयरमैन के चुनाव पर काफी संतोष था, पर वाइस-चेयरमैनी में मौ० हादी हुसैन की शिकस्त होने की बात सारे सूबे में फैल गई और शरीफ मुसलमानों के दिल पर बड़ी चोट पहुँची। जब मैं चुनाव के बाद पटने गया तब मालूम हुआ कि मि० हसन इमाम सरीखे लोगों को भी मौ० हादी हुसैन का हारना बुरा मालूम हुआ। सर

सुलतान अहमद की शान तो पूछना ही क्या ! उनके सगे भाई को यह शिकस्त उठानी पड़ी। उसकी गहरी चोट उनके हृदय पर लगी थी।

१०

उन दिनों डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का चेयरमैन होना बड़ी प्रतिष्ठा-जनक बात समझी जाती थी। हाल में ही गैर सरकारी चेयरमैन के चुनाव होने का नियम बना था और सूबे में दो ही तीन जिले में गैरसरकारी चेयरमैन उस समय थे। मुझे तो कभी स्वप्न में भी यह खयाल नहीं था कि मैं गया जैसे बड़े जिले का चेयरमैन होऊँगा। किस तरह इतनी बड़ी जवाबदेही को उठा सकूँगा और कैसे निभा सकूँगा, इस पर सोचा भी नहीं था। डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के हाथ से बोर्ड ले लिया गया था। उससे उनके प्रभाव का ह्रास हो गया था। चुनाव के कुछ दिन पहले ब्रेट साहब ही डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट थे। उनसे हमलोगों का मुकाबला गया कांग्रेस के जमाने में हो चुका था। वे कांग्रेस के कट्टर विरोधी थे ही और विशुन बाबू के लिए उनको काफी हमदर्दी थी। पर चुनाव के वक्त उनकी बदली हो जाने से सरकारी अफसरों की मदद उनको न मिल सकी। इस समय खाँबहादुर शमशुद्दीन हैदर डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पद पर विराज रहे थे। इनको उमीद थी कि मौ० हादी हुसैन चुने जायंगे और इसलिए इनकी हमदर्दी भी विशुन बाबू की तरफ नहीं थी। मौ० हादी हुसैन के न चुने जाने से इनके दिल में भी असंतोष की झलक उठी थी, पर होशियार आदमी थे, इस भाव को किसी

तरह जाहिर होने नहीं दिया।

चुनाव के बाद ही गया शहर के रहनेवाले श्रीविशुन प्रसाद तथा मौ० हादी हुसैन के दोस्तों के बीच एक नई परिस्थिति का ज्ञान हुआ। लोगों को समझ में आ गया कि आपस के मतभेद ने उनकी जमात के हाथों से ताकत निकालकर ऐसे समुदाय के हाथ में उसे सुपुर्द कर दिया जिससे उनकी किसी बात में समता नहीं थी। अफसोस होना स्वाभाविक था और अपनी गलतियों पर उनको पछतावा होने लगा। पर अब कर ही क्या सकते थे। श्रीगणेशदत्त की हमदर्दी हमारे साथ थी। कलक्टर हिंदुस्तानी थे। उनको इतनी हिम्मत न थी कि हमारे चुनाव के बारे में किसी तरह को दस्तंदाजी करते, हमलोगों में जो कुछ असंतोष शुरू में था चुनाव होने के बाद ही वह खतम हो गया। दिहातों में रहनेवालों को एक नई दुनियाँ में प्रवेश करने की खुशी हुई। बोर्ड के ओफिस में जाने की हिम्मत पहले किसो को नहीं होती थी। मुझे बोर्ड के दफ्तर में देखकर हजारों लोगो को मेरे पास पहुँचने की हिम्मत होने लगी और अपनी अपनी शिकायतें पहुँचाने लगे। काँग्रेस पार्टी के मुसलमान सदस्यों में दो-तीन छोड़ शेष को बहुत ही अफसोस हुआ था और उन्होंने मेरे खिलाफ एक दरख़ास्त महात्मा गांधी तथा श्रीराजेंद्र प्रसाद के पास भेजी और उनसे अनुरोध किया कि मुझे बोर्ड से हट जाने की आज्ञा दे दें। महात्माजो ने उस दर्खास्त को राजेंद्र बाबू के पास भेजकर तहकीकात करने और अपनी रिपोर्ट भेजने का आदेश दिया। हमलोगों को इस बात का डर होने लगा

कि वहाँ पद से हटजाने का फरमान न निकले। हिंदू-मुस्लिम एकता के नाम पर, हमलोगों को भय था, कि हमारा यह चुनाव कहीं गलत न समझा जाय और हमें बोर्ड से हटजाने को कहा जाय।

राजेंद्र बाबू तहकीकात करने के लिए गया आ पहुँचे। हमलोगों के तथा दूसरे लोगों के इजहार हुए। शिकायत करने-वालों को अपनी ओर से जो कुछ कहना सुनना था वैसा करने का उन्हें मौका दिया गया। सवाल यह उठा कि यदि मुसलमान काँग्रेसमैनों की यह तजवीज हो कि मेरे हट जाने से दोनों कौमो की भलाई हो तो मुझे वहाँ से हट जाने में क्या उज्र हो सकता है। मीर शफायत हुसैन हमारी पार्टी के नेता तथा मुसलमानों के सरदार समझे जाते थे। ये बड़े ही शरीफ रईस खानदान के थे। इन पर बहुत तरह के दबाव पड़ने लगे कि ये राजेंद्र बाबू को हमारे बोर्ड से हट जाने की राय दें, पर इन्होंने अपना बड़प्पन दिखलाया और कहा कि श्रीसिद्धेश्वरप्रसाद सिंह स्वतंत्र रूप से खड़ा हुए थे। काँग्रेसी होने के नाते उनको वोट देने मे मैंने कोई गलती नहीं की और जब चुनाव हो चुका तब हमारे बोर्ड से हट जाने से कोई लाभ नहीं दीख पड़ता। राजेंद्र बाबू ने इनकी राय पसंद की और महात्मा जी के पास अपनी रिपोर्ट इस आशय की भेज दी। चुनाव के बाद ही मुझे इस तरह की परिस्थिति का सामना करना पड़ा जिससे चुनाव की मुनासिब खुशी भी मुझे न मिल सकी। कुछ तो पद का लोभ हो गया था और कुछ चुने जाने के बाद निकाल दिए जाने को संभावना पर क्षोभ और

भय। चेयरमैन चुने जाने के पहले उस पद की लालसा को छोड़ देना सरल था, लेकिन चुने जाने के बाद पद के मोह के साथ ही प्रतिष्ठा का सवाल आ खड़ा हुआ था। उस समय मेरी स्थिति विचित्र सी हो रही थी।

११

जैसा मैं बता चुका हूँ, काँग्रेस की ओर से बहुत से जिलों में डिस्ट्रिक्टबोर्ड के चुनाव में उमीदवार खड़े किए गए थे। गया में काँग्रेस का, सच्चे काँग्रेस के अनुयायियों का, बहुमत नहीं था। जो लोग काँग्रेस के नाम पर चुने भी गए थे वे आगे चलकर काँग्रेस पार्टी से अलग हो गए। पटने में काँग्रेस टिकेट पर चुने जानेवालों की तायदाद और भी कम थी। वहाँ की चेयरमैनी के उमीदवार थे श्रीरजनधारी सिंह और उनका चुनाव आसानी के साथ हो गया। वायस-चेयरमैन एक वकील थे, पर उनका रहना न रहना बराबर था। रजनधारी बाबू धरहरा जमींदार वंश के होने की वजह से बड़े प्रतिष्ठित और श्रीगणेशदत्त के प्रिय पात्र थे। वकालत पास कर नाम मात्र की वकालत करते थे। चेयरमैन होकर उन्होंने सारे जिले में अपना दल संगठित किया और जब तक उस पद पर रहे उनका किसी ने मुकाबिला नहीं किया। उन्होंने अपने इच्छानुसार बोर्ड का संचालन किया और सर्वप्रिय बनने की चेष्टा की। श्रीगणेशदत्त की कृपा से उनको सरकार की मदद भी मिलती रही। इस वजह से भी उनका प्रभाव जिले से बाहर प्रांत की राजनीति पर पड़ता रहा।

शाहाबाद जिले में भी काँग्रेस की कामयाबी नहीं हुई। वहाँ का कोई स्थानीय प्रभावशाली व्यक्ति असहयोग आंदोलन में शरीक नहीं हुआ था। अतएव प्रांत की ओर से डाक्टर अरुंजय सहाय वर्मा वहाँ काम करने के लिए भेजे गए थे। चंद महीनों के बाद ही उनको वहाँ की काँग्रेस कमिटियों से नहीं पटी। लाचार वहाँ से वे चले आए और पीछे डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में हेल्थ आफिसर का पद स्वीकार कर राजनीति से अलग ही हो गए। उनके चले आने के बाद वहाँ का काँग्रेस कार्य स्थानीय लोगों द्वारा चलता रहा, पर जिले की राजनीति में उनकी कोई जबरदस्त छाप नहीं पड़ सकी। कुछ लोग काँग्रेस के नाम पर चुने गए, पर चेयरमैन या वाइस-चेयरमैन नहीं हो सके। वहाँ के सुप्रसिद्ध जमींदार और नेता चौधरी करामत हुसैन लोक प्रिय थे। उनके लड़के आइ० सी० एस० परीक्षा पास कर ख्याति प्राप्त कर चुके थे। बुढ़ापे की वजह से बहुत दिनों तक सार्वजनिक जीवन में नहीं रह सकने के कारण वह उससे अलग हो गए और वहाँ काँग्रेस का काम विशृङ्खल हो गया।

निरहुतडिविजन (छपरा, मुजफ्फरपुर, दरभंगा और मोतिहारी) असहयोग आंदोलन में आगे बढ़ा हुआ था। जेल जाने तथा काँग्रेस के जितने कार्य-क्रम थे सब में अग्रसर रह कर यह डिविज़न सूबे में आदर्श बना हुआ था। बोर्ड के चुनाव में भी इन जिलों में काँग्रेस की पूर्ण कामयाबी रही और चारों जिलों के बोर्डों के चेयरमैन और वाइस-चेयरमैन काँग्रेस वाले ही हुए। छपरा जिले में मौलाना मजहरुल हक ने चेयरमैन होने को

ख्वाहिश जाहिर की। उनका स्थान सूबे ही में क्यों, सारे देश के राजनीतिज्ञों में बहुत ऊंचा था और जब उन्होंने अपनी ख्वाहिश जाहिर की तब उनका चुना जाना एक साधारण बात थी। एक कांग्रेस कार्यकर्त्ता ने ही उनके विरोध में खड़ा होकर अपनी बुरी अभिरुचि का परिचय दिया। उनके साथ श्रीहरनंदन सहाय वकील वाइस-चेयरमैन हुए और दोनों में साधारणत: अच्छी पटती रही। सारन जिले का डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर मि० स्मिथ उनसे बहुत प्रभावित हो गया था और उनका प्रिय पात्र बना। आगे चल कर उन्हें सरकारी नौकरी मिल गई।

चंपारण में कांग्रेस की कामयाबी अच्छी रही और वहाँ के चेयरमैन और वाइस-चेयरमैन क्रमशः श्रीविपिनबिहारी वर्मा बार-एट-ला तथा श्रीप्रजापति मिश्र चुने गए। विपिन बाबू अपने परिवार की अनुमति बिना ही विलायत भाग गए थे। वहाँ से बैरिस्टर होकर पटना हाई कोर्ट में वकालत करते थे। जब ये विलायत में थे तब महात्मा जी के साथ लड़ाई के जमाने में एम्बुलेंस-कोर्स में भर्त्ती होकर इन्होंने भी काम किया था और अपनी सेवावृत्ति का परिचय देकर महात्मा जी के प्रिय पात्र बने थे। असहयोग आंदोलन होते ही बैरिस्टरी छोड़ कर चंपारण जिले में काम करने चले गए। सारे जिले में इनका यश फैल गया और कांग्रेस के नेताओं में इनकी गिनती होने लगी।

मुजफ्फरपुर के चुनाव में एक ऐसी घटना हो गई जिससे प्रांत की ही नहीं, बल्कि सारे मुल्क की राजनीतिक परिस्थिति पर बुरा प्रभाव पड़ा। मौ० शफी दाऊदी वहाँ के असहयोगियों

में बहुत ऊँचे स्थान पर स्थित थे। फौजदारी के नामी वकीलों में इनकी गिनती थी। खिलाफत और कांग्रेस आंदोलन की वजह से वकालत छोड़ कर जिले में खूब जोर शोर से काम करने लगे थे। १९२१ ई० में जेल भी गए थे और जिस काम में पड़ते थे उसे जी जान से करते थे। स्वराज्यपार्टी के प्रांतीय नेता होते हुए भी कौंसिल प्रवेश नहीं कर इन्होंने अपने उच्चाशय का परिचय दिया था। कांग्रेस की ओर से ये डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के लिए नामजद किये गए। इनके खिलाफ में मि० डैनबी (मौजूदा मैनेजर दरभंगा राज) नामक एक प्लैंटर उमीदवार खड़ा हुए। चुनाव में मौ० शफी की हार हुई। उनके मन में यह संदेह उत्पन्न हुआ कि हिंदू कांग्रेसियों ने उनकी यथेष्ट सहायता नहीं की जिससे उनको वोट नहीं मिले। कितने लोगों ने उनके संदेह की पुष्टि की और यहाँ तक कह डाला कि उनके बोर्ड में चुन लिए जाने से वे ही चेयरमैन होते, इस खयाल से भी उनको काफी मदद नहीं दी गई। ऐसा समझा जाता है कि आगे चलकर उनका यह भ्रम दूर हो गया हो, पर उनके हृदयपर जो आघात इस हार की वजह से हो गया था वह दूर नहीं हो सका। श्रीविंध्येश्वरीप्रसाद वर्मा ने भी इस साल के चुनाव में शिकस्त खाई। इससे यह अर्थ निकल सकता है कि जिनका सरोकार देहात में सीधा नहीं रहा उनको डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चुनाव में कामयाबी नही हुई अथवा चुनाव में उन्हें कठिनाई का सामना करना पड़ा। श्रीरामदयालु सिंह मुजफ्फरपुर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन और श्रीगयाप्रसाद (मौजूदा सरकारी वकील) वायस

चेयरमैन चुने गए।

दरभंगे में किसी तरह की खींचतान नहीं हुई। ब्रज-किशोर बाबू का प्रभाव अक्षुण्ण था और उन्होंने जिले की परिस्थिति को देखते हुए ऐसे लोगों को बोर्ड के लिए नामजद किया जिनका चुना जाना अनिवार्य था। श्रीहरनंदन दास (वकील) चेयरमैन और मि॰ शफी बार-एट-ला वायस-चेयरमैन चुने गए। मुसलमानों की आबादी इस जिले में खासी थी और उनका प्रतिनिधित्व होना आवश्यक था।

मुंगेर में शाह जुबैर और श्रीश्रीकृष्ण सिंह की जोड़ी ऐसी थी जिसकी तुलना किसी दूसरे जिले से नहीं की जा सकती थी। दोनों प्रभावशाली और परस्पर मित्र थे। जितने काम हुए दोनों की रजामंदी से। श्रीबाबू अपनी वाग्मिता के जोर से बिहार केसरी का पद प्राप्त कर चुके थे। जिले के कोने-कोने मे उनके सिंहनाद की गूँज पहुँच चुकी थी और जहाँ कहीं भी किसी तरह का मतभेद होता उनके पहुँचने के साथ ही दूर हो जाता था। हिंदू और मुसलमान दोनों संप्रदायों के मेंबरों का चुनाव वहां संतोषजनक रूप से हुआ और शाह साहब को चेयरमैन बनाकर श्रीबाबू ने अपनी उच्चता का परिचय दिया और इससे मुसलमानों के दिल पर भी एक जबरदस्त असर हुआ।

प्रांतके सारे कांग्रेस बोर्डों में मुंगेर का नंबर बहुत ऊँचा रहा। आपस की तू-तू मैं-मैं से बचकर बोर्ड का प्रबंध इस तरह होता रहा कि श्रीगणेशदत्त के बहुत कोशिश करने पर भी कोई नुक्स नहीं मिल सका। वे अपना एक भी अनुयायी वहाँ

नहीं बना सके। बहुत कोशिश करके भी कांग्रेस के विपक्ष में वहाँ दाल नहीं गली। आजभी इस गिरते हुए जमाने में मुंगेर बोर्ड प्रान्त के सभी बोर्डों में अपना ऊँचा स्थान रखता है। बावजूद इसके कि किसान सभा तथा और और विचार के लोगों का प्रवेश काफी सख्या में होता जा रहा है, बिहार-केसरी के प्रभाव को उखाड़ फेंकने मे किसी को सफलता नहीं हुई।

भागलपुर में भी कांग्रेस का बोर्ड बना। श्रीकैलाश बिहारीलाल चेयरमैन और श्रीकमलेश्वरीसहाय (अब रायबहादुर) वायस-चेयरमैन हुए, पर यह बोर्ड कमजोर बोर्डों में से था और गया बोर्ड जैसा इसपर भी कभी-कभी सरकारी प्रहार होते रहे।

छोटानागपुर में मानभूम बोर्ड कांग्रेसी बन सका, क्योंकि इस जिले को अपना गैर सरकारी चेयरमैन चुनने का अधिकार प्राप्त था। श्रीनीलकंठदास चेयरमैन और श्रीजीमूतवाहन सेन वायस-चेयरमैन चुने गए।

हजारीबाग बोर्ड में श्रीरामनारायण सिंह वायस-चेयरमैन हुए। जिला ऑफिसर पदेन चेयरमैन हुआ करता था और इस समय मि० मर्फी उस स्थान पर सुशोभित थे। ये एक जबर्दस्त अफसर होने की वजह से सूबे में मशहूर थे। उनका मुकाबिला भी एक जबर्दस्त कांग्रेसमैन के साथ हुआ। कितनी वार दोनों में तना-तनी हुई और रामनारायण बाबू ने उनको समुचित उत्तर दिया। बोर्ड की मीटिंग में या बाहर फाइल के ऊपर दोनों में खींच-तान चलती रही और जबतक मर्फी साहब जिला ऑफिसर रहे, रामनारायण बाबू को काम करने में सुविधा

नहीं मिली। मामला सरकार तक पहुँचा। श्रीरामनारायण सिंह श्रीगणेशदत्त के प्रिय भाजन थे। श्रीगणेशदत्त ने दोनों में सुलह करा देनेकी कोशिश की, पर उसमें सफलता नहीं मिली, क्योंकि मर्फी जैसे जबर्दस्त हाकिम को दबाना उनके लिए भी आसान नहीं था। कुछ दिनों के बाद मर्फी साहब की तरक्की हो गई और उनके स्थान पर मि० कजिन डिपुटी कमिश्नर होकर आए। उन्होंने रामनारायण बाबू के कामों में छेड़-छाड़ करना छोड़ दिया और पूरी स्वतंत्रता के साथ काम करने का मौका पा जाने से दोनों में दोस्ती हो गई और बोर्ड का काम सहूलियत से चलने लगा।

१२

१६२४ ई० का मध्य प्रायः बोर्ड के चुनावों में ही बीत गया और कांग्रेस का कोई दूसरा काम अच्छी तरह नहीं हो सका। इसी बीच में महात्माजी बीमार हो गए। उनकी अँतरी का आॅपरेशन, पूना अस्पताल में, कर्नल मेंडोक्स के हाथों हुआ और उनकी जिंदगी बची। सरकार ने उसके बाद उन्हें रिहा कर दिया। स्वास्थ्य सुधारने के लिए वे बंबई के पास जुहू में कुछ दिनों तक आकर रहे। वहाँ पर श्रीमोतीलाल नेहरू तथा श्री सी० आर० दास के साथ स्वराज्य पार्टी के विषय में बातें चलती रहीं। दोनों ओर से बयान निकले और दोनों दलों के बीच समझौते से काम लेने की सलाह दी गई। महात्मा जी के विषय में जो बातें दिल्ली या कोकनाडा कांग्रेस में मशहूर की गई थीं उनमें कोई तथ्य नहीं था। पर अब तो कांग्रेस का कदम आगे बढ़ चुका था। देश में

स्वराज्य पार्टी के उद्देश्यों का प्रचार हो रहा था और उसमें कुछ सफलता भी मिली थी। इसलिए अब उसकी प्रगति को रोकना आसान नहीं था। आल इंडिया कांग्रेस कमिटी की बैठक में, जो जुलाई में अहमदाबाद में हुई, देशबंधुदास की हार हुई, पर वोट देनेवालों की संख्या करीब-करीब बराबर होने के कारण गांधी जी ने अपनी शिकस्त मानी और कांग्रेस को स्वराज्य पार्टी के हाथों में दे देने की बात कही।

इस साल बेलगाँव में महात्मा गाँधी के सभापतित्व में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ और कांग्रेस ने स्वराज्य पार्टी को आगे बढ़ने की इजाजत दे दी। कांग्रेस के नाम पर चुनाव होने की मंजूरी मिल गई।

इधर मैं म्युनिसिपलिटी का वाइस-चेयरमैन पटने में और डिस्ट्रिक्टबोर्ड का चेयरमैन गया में चुना गया था। सवाल यह उठा कि मैं किस जगह से इस्तीफा दूँ। दोनों जगहों पर रहना अनुचित होने के सिवा काम के लिहाज से भी असंभव था। राजेंद्र बाबू से सलाह ली। उन्होंने कुछ दिनों के लिए ठहर जाने की राय दी। पटने के म्युनिसिपल बोर्ड में दलबंदी बढ़ती जाती थी और चुंगी के सवाल पर आंदोलन गंभीर रूप धारण करता जाता था। सरकार की हमदर्दी हमारे साथ थी और जितने नामजद म्युनिसिपल कमिश्नर थे उनमें प्रो० बथेजा भी (अब प्रिंसिपल मुजफ्फरपुर कालेज) एक थे, जो हमारा साथ देते थे। कौन मेरी जगह पर वाइस चेयरमैन चुना जाय, यह पहले तय करने के बाद मेरा त्याग-पत्र लिया जाय, ऐसा ही निश्चय हुआ। मौ० सैयद

मुहम्मद इस पद के उपयुक्त समझे गए और लोगों ने उनको कबूल भी कर लिया। श्रीचंद्रवंशी सहाय कांग्रेसमैन होते हुए भी हमारे कामों का काफी विरोध करते थे। शायद उनकी इच्छा वाइस-चेयरमैन होने की भी हो, पर जैसा उनका व्यवहार था, उससे उनके साथ मिलकर काम करना असंभव दीख पड़ा। सैयद मुहम्मद एक योग्य वाइस-चेयरमैन सिद्ध हुए और हमारे दल के लोगों से उनकी अच्छी पटी। आगे चलकर जब आपस का मतभेद बहुत बढ़ गया और कामों में असुविधा के अलावा अड़चन और विरोध भाव का ही प्रदर्शन होना शुरू हुआ तब कांग्रेस-मेंबरों ने बोर्ड से एक साथ ही त्याग-पत्र दे देना मुनासिब समझा। उसके बाद दूसरे दूसरे लोग चेयरमैन और वाइस-चेयर-मैन होते गए और हमारी दिलचस्पी इस बोर्ड से खतम हो गई।

१३

गया बोर्ड के चेयरमैन चुने जाने के बाद भी मैं बहुत दिनों तक पटने में ही रहा और म्युनिसिपलिटी के कामों में पहले जैसा हिस्सा लेता रहा। बीच बीच में गया बोर्ड का काम भी कर दिया करता था। पटने में रहकर गया के कामका अंजाम देना नामुमकिन था। इसलिए मेरा गया में ही रहना उचित जान पड़ा, पर कैसे और कहाँ रहूँ, यह प्रश्न सरल नहीं था। पहले तो मैं श्रीशिवनाथ प्रसाद के यहाँ ठहरा और कुछ दिनों तक वहीं रहकर काम करता रहा। लोगों को यह बात अखरने लगी। पीछे मैं श्रीसिद्धेश्वरप्रसाद सिंह के डेरे में चला आया।

चेयरमेन तथा वायस-चेयरमैन के एक साथ रहने में किसी को छिद्र निकालने की जगह नहीं रही। मैंने बोर्ड के कामों को निरपेक्ष भाव से करना तय किया था जिससे किसीको हिम्मत। नहीं होती थी कि कोई बात जो मुनासिब और कानून के मुताबिक न हो उसका जिक्र मुझसे करें। पिछले बोर्ड के कामोंसे जिनको असंतोष था वे तो हमसे स्वभावतः खुश थे। तरह तरहकी शिकायतें मेरे सामने लाना शुरू किया गया। काम करते करते मुझे मालूम हो गया कि श्रीविशुनप्रसाद के प्रति असंतोष खासकर मुसलमानों के बीच क्यों होगया था। एक सुपरवाइज़र जिसका नाम मौ० कादिर था, बोर्ड की नौकरी से हटा दिया गया था और लोगों का ऐसा ख्याल था कि मौ० अमीरहैदर एक दूसरे सुपरवाइज़र की कुमंत्रणासे ही हटाया गया था। हमसे कहा जाताथा कि कादिर बहुत ईमानदार था और हैदर वैसा नहीं था। अतएव ईमानदार साथी रहने से अमीर हैदर को अपने मनके मुताबिक काम करने में दिक्कत होती थी। उस समय डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर मि० मेनार्ड थे। वे मौ० अमीर हैदर को बहुत मानते थे और जैसा वे चाहते थे वैसा काम करने को वह तैयार भी रहता था। इन्हीं लोगों ने चक्र चलाकर कादिर को बरखास्त कराया था। यही धारणा लोगों की उस वक्त थी और इसी बात पर विश्वास दिलाने की कोशिश मुझपर की जाती थी। किंतु मैं न तो किसी खास दलबंदी में था और न किसी के प्रभाव में, इसी कारण मुझपर एक की ईमानदारी और दूसरे की बेईमानी का ही जिक्र कर मेरी धारणा को बदलके

की कोशिश शुरू होगई थी।

बहुत सी दरखास्तें इंजिनियरिंग विभाग के खिलाफ पड़ने लगीं। यहाँ तक कहा गया कि कितने स्थान पर काम हुआ हो नहीं और ठीकेदार को उसका बिल चुकादिया गया था। इशारा था कि इंजिनियर और सुपरवाइजर मौ० अमीर हैदर की वजह से ऐसा हुआ। मैं दो एक स्थानों पर तहकीकात करने के लिए गया भी, पर मेरी समझ में यह बात ठीक नहीं जँची। एक छोटे से पुल की बावत यह कहा गया कि वह बना ही नहीं और उसका बिल चुकता हो गया। इस तरह की शिकायतें रोज रोज मेरे पास आने लगीं। मैं तो घबड़ा-सा गया। क्या करूँ, क्या नहीं, कुछ समझ में नहीं आता था। किसी खास आदमी के कहने के मुताबिक चलने को मैं तैयार नहीं हुआ। मुझे पीछे पता लगा कि इसमें कुछ ठीकेदारों का षड़यंत्र था। डिस्ट्रिक्ट बोर्डके एक मेंबर के भाई बहुत दिनों से बोर्ड में ठीकेका काम करते थे। मौ० अमीर हैदर से उनको मनमुटाव हो गया था। एक दूसरा ठीकेदार इंजिनियर और मौ० अमीर हैदर दोनों का विश्वासपात्र था और बोर्ड के बड़े बड़े काम उसे ही मिला करते थे। इससे दूसरे ठीकेदारों को द्वेष होता था। सुपरवाइजर कादिर के हटा दिए जाने से भी दूसरे दल के ठीकेदारों को मदद करनेवाला इंजिनियरिंग विभाग में कोई नहीं था। इसी कारण ठीकेदारों के दो दलों में परस्पर नोक झोंक होती रहती थी और इस तरह की जो शिकायतें हमारे यहाँ पहुँचती रहतीथीं उनका भीतरी कारण यही था। उस-

समय में इसकी जानकारी हासिल करने में सफल नहीं हुआ, क्योंकि दोनों तरह के लोग मेरे कृपापात्र बनने की कोशिश कर रहे थे। वैसा करने में किसी को सफलता नहीं मिली, इसलिए ऐसा कोई नहीं था जिसके ऊपर मेरा सोलह आना विश्वास हो और उसके कहने के मुताबिक मैं काम कर सकता।

१४

यह संभव नहीं कि चार वर्षों तक बोर्ड में रहकर मैंने जितने काम किए उनका दिग्दर्शन यहाँ किया जासके; किंतु ऐसी कुछ घटनाओं का उल्लेख करना आवश्यक है जो अधिकारियों की दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण हैं। हमलोग बाहर से सुना करते थे कि मेनार्ड साहब डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर, एक बहुतही जबर्दस्त आदमी हैं और उनकी पहुँच बड़े बड़े अफसरों तक होनेके कारण जिला मैजिस्ट्रेट भी उनसे भयखाते हैं। साथही यह भी सुनता था कि जिसपर उनकी कृपादृष्टि रहती थी उसको अनेक तरह की सुविधाएँ प्राप्त हो जाती थीं। जिलेके अंदर ऐसे बहुत कम लोग थे जिनपर उनकी मिहरबानी मौ० अमीर हैदर से ज्यादा थी। इसलिए मेनार्ड साहब के नामके साथ मौ० अमीर हैदर का नाम जुटा रहता था।

गया बोर्ड धनी बोर्डों में पहला नंबर रखता था और यहाँ ठीकेदारों को खासी आमदनी होती थी। यह आमदनी किस तरह होती थी, इसका ठीक पता मुझे तब मिला जब मैं बोर्ड से हट रहा था। एक ठीकेदार को जो इंजिनियर का प्रियपात्र है,

काम देना है। पहले उस काम का एक एस्टिमेट तैयार होगा, जिसपर टेंडर माँगा जाता है। जिसको काम देना है उसका टेंडर कबूल कर लिया जाता है। पहले एस्टिमेट में कोई नवीनता नहीं रहती है। मनचाहे ठीकेदार को काम मिल जाने पर वह एस्टिमेट परिवर्द्धित कर दिया जायगा और कई चीजों का रेट किसी न किसी वजह से बढ़ा दिया जायगा। इस तरह जिस काम का एस्टिमेट शुरू में बीस हजार रुपये होगा उसे पूरा करते करते चालीस हजार रुपये तक बढ़ा दिया जायगा। अकसर ऐसा भी हुआ कि एकही कामको तीन हिस्सों में बाँटकर तीन नामों पर एक ठीकेदार को दे दिया गया, ताकि पीछे एस्टिमेट रिवाइज्ड करने पर भी उसकी रकम इतनी न होजाय कि लोकल गवर्मेंट की मंजूरी लेनी पड़े। इसमें सन्देह नहीं कि जब तक मेनार्ड साहब इंजिनियर रहे तब तक जो कुछ उनकी सिफारिश हुई वह सरकार से मंजूर होती चली आई। कारण जो उनके अफसर बड़े इंजिनियर थे वे तो उनके दोस्तों में से ही थे और वे उनके कामों की नुकताचीनी करते ही नहीं थे। जब मैं मंत्री होकर पी० डबलू० डी० के चार्ज में आया तब आसानी से समझ लिया कि किस तरह यह काम हुआ करता था।

मेनार्ड साहब की उम्र ५५ साल की हो चुकी थी इसलिए उनका बोर्ड में रहना कानून के खिलाफ था। पेंसन के बारेमें श्रीमधुसूदन दास के जमाने में ही यह तय हो गया था कि डिस्ट्रिक्ट-इंजिनियर को पेंशन नहीं मिलेगी। उस समय मि० हैलेट (पीछे विहार के गवर्नर) स्वायत्तशासन विभाग के सेक्रेटरी थे

और उनके ही हस्ताक्षर से सरकार का वह हुक्म निकला था। जिन सिद्धान्तों का बयान इस गश्ती हुक्मनामें में किया गया था उनमें बोर्ड के कर्त्तव्यों का जिक्र था। पेंशन की प्रथा के विरुद्ध बड़े बड़े सिद्धांत बतलाये गए थे।

श्रीगणेशदत्त से हमलोगों ने बातें की थीं और उनकी इच्छा थी कि हमलोग मेनार्ड साहब को हटाकर एक नया इंजिनियर रखें। उस समय हैलेट साहब जिला मेजिस्ट्रेट होकर गया में आ गए थे। अपने सरक्यूलर के खिलाफ उन्होंने मेनार्ड को पेंसन देने की बात उठाई और जब मैं उनसे मिला तब उन्होंने अपनी राय बदल देने का औचित्य व्यवहारिक दृष्टि से समझाया। बोर्ड के मेंबरों में इस विषय पर बहुत ही मतभेद था। मौ० अमीर हैदर इस बात की कोशिश में था कि मेनार्ड को छुट्टी मिल जाय और आगे चल कर पेंसन भी उनको मिले। पीछे उनका स्थान उसको मिल जाय। इस उद्देश्य को लेकर उसने मेंबरों के बीच आंदोलन करना शुरू किया। प्रत्येक मेंबर के पास पहुँच कर उसको इस राय पर लाने की कोशिश होने लगी। श्रीविशुन-प्रसाद मेनार्ड के साथ थे। उनके दल को मौ० अमीर हैदर अपने हाथ में आसानी से कर लेता था। श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह की दोस्ती मौ० अमीर हैदर के साथ किस तरह की थी यह मैं आज तक नहीं समझ सका। पर इतना जरूर मालूम किया कि वह इतनी गहरी थी कि मौ० अमीर हैदर जो चाहे उनसे करा सकता था अथवा यों कहिये कि श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह की जो भी ख्वाहिश होती मौ० अमीर हैदर उसे पूरा करने में कोर कसर

नहीं रखता था।

इस विषय को लेकर बोर्ड में काफी खींच-तान चलती रही। जो दल पहले मौ० अमीर हैदर के खिलाफ था और इस वजह से हमारा साथ देता था वह हमारे खिलाफ हो गया और अमीर हैदर का साथ देने लगा। अमावाँ राज के मैंबर चेयरमैन के चुनाव के समय हमारे खिलाफ थे और वहाँ के मैनेजर श्रीयमुनाप्रसाद सिंह ने एक दो रोज के अंदर ही हमारे पक्ष के लोगों को अपने पक्ष में विशुन बाबू को वोट देने के लिए राजी कर लिया था। कुछ दिनों के बाद मेरे निरपेक्ष कामों से तथा तात्कालिक परिस्थिति के अनुसार उन्होंने हमको मदद देना शुरू किया। राज के मेंबरों के हमारे पक्ष में होने से एक दिक्कत तो हमेशा रहती थी। वह थी राजनीतिक दृष्टि। हम कांग्रेसमेन थे और राज के लोग सरकार परस्त होने की वजह से कांग्रेसवालों से किसी तरह का संबंध नहीं रखनेवाले समझे जाते थे। डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट पर कहीं यह जाहिर हो जाय कि अमुक कांग्रेसवाले को राज या उसके अमलों से मदद मिली है तो यह उनके लिए एक मुश्किल चीज हो जाती थी। अतएव उनकी मदद हमेशा ही शंकापूर्ण रहती थी, तोभी धीरे धीरे एक ऐसा गाढ़ा संबंध हमलोगों के बीच में होता गया कि ज्यादेतर कामों में हमें उनकी मदद मिलती रही।

मि० हुसैन इमाम (इस समय कौंसिल ऑफ स्टेट के मेंबर) एक नवयुवक जोशीले व्यक्ति डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेंबर थे। उनको सहजही जोश आ जाता था। अमीर हैदर ने उनके ऊपर ऐसा

असर पैदा कर लिया था और न मालूम क्या क्या बातें कही थीं कि बोर्ड के हर काम में उनके विरोध का सामना हमें करना पड़ता था। मेनार्ड ने तीन महीने की छुट्टी ली और अपनी जगह पर अमीर हैदर को रखे जाने की सिफारिश की। इस समय श्रीनदक्वुलियर इंजिनियरिंग डिग्री विलायत से लेकर बेकार बैठे हुए थे। प्रभावशाली खानदान के होने की वजह से शहर के लोगों के वे प्रियपात्र थे। मेनार्ड के छुट्टी पर चले जाने पर इनको ही स्थानापन्न इंजिनियर बनाने का प्रस्ताव पेश हो गया। अब दोनों दलों मे पैतरेबाजी शुरू हुई। मुझे किसी पक्ष से कोई खास दिलचस्पी नहीं थी, पर हमारी जमात के भीतर तो काफी आंदोलन खड़ा हो गया। आखिर बोर्ड मे जब प्रस्ताव पेश हुआ तब अमीर हैदर के पक्ष में अल्प मत हो गया। श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह को इसके चलते इतनी चोट पहुँची कि आँखो में आँसू भर कर उन्होंने एक दिन मुझसे कहा कि आज मेरा लड़का मर गया होता तो भी मुझको इतनी तकलीफ नहीं होती जितनी आप के अमीर हैदर को वोट न देने से हुई। उसी दिन मुझे यह पता लगा कि कितनी गहरी दोस्ती दोनों के बीच मे थी, पर यह नहीं मालूम हो सका कि उसका कारण क्या है। इधर मेनार्ड साहब ने छुट्टी पर जाने से इनकार कर दिया और इस वजह से जो स्थानापन्न बहाली हुई थी उसकी जरूरत ही न पड़ी।

मेनार्ड साहब के अवसर ग्रहण का समय आ गया। पेंशन नहीं दी जाने का फैसला बोर्ड से हो जाने पर सरकार ने उसे कबूल कर लिया, पर कलक्टर साहब ने एक माकूल रकम

पुरस्कार के रूप में उन्हें दी जाय, इस बात पर जोर लगाना शुरू किया। श्रीगणेशदत्त, जो पहले मेनार्ड को कुछ नहीं दिये जाने पर जोर दे रहे थे, आगे चलकर अपना रुख बदलने लगे। कई कारण इस बीच में हो गए। इस समय बोर्ड में एक दल ऐसा खड़ा हो गया जो मुझसे तो कम, पर वाइस-चेयरमैन से ज्यादा नाखुश था और हमलोगों को बोर्ड से निकालने के लिए कमर कसकर तैयार हुआ। मेनार्ड को लेकर हैलेट साहब भी हमारे खिलाफ हो गए। संभवतः उन्होंने यह भी इशारे में कहा कि यदि बोर्ड हमलोगों के खिलाफ अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकार करले तो वे हमें बोर्ड से हट जाने को मजबूर करेंगे। इस बात की कोशिश शुरू हो गई कि किस तरह बहुमत इस पक्ष में लाया जाय। मैं पटना गया हुआ था। वहाँ मेरे पास बोर्ड की एक विशेष बैठक बुलाने के लिए कितने ही मेम्बरों की दस्तखत से एक दरखास्त पहुँची। उसमें चेयरमैन और वाइस-चेयरमैन को हटाने का प्रस्ताव पेश किए जाने की बात लिखी थी। उस नोटिस को लेकर मैं श्रीगणेशदत्त के यहाँ चला गया। श्रीगणेशदत्त यह नहीं चाहते थे कि श्रीविशुनप्रसाद बोर्ड के चेयरमैन बनें, किंतु अविश्वास का प्रस्ताव पास हो जाने पर हमारे हटने के बाद श्रीविशुनप्रसाद को ही चेयरमैन बनाने की बात चल रही थी, इसी कारण उनकी सहानुभूति मेरे साथ रही। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं एक दरखास्त उनके पास इस आशय की दे दूँ कि इस तरह के प्रस्ताव पर चेयरमैन के विरोध में नामजद सरकारी मेंबरों को वोट देने का अधिकार न रहे, क्योंकि उनको चेयरमैन

के चुनने मे वोट देने की कानूनन मनाही थी। उन्होंने यह भी सलाह दी कि उसकी एक प्रति मैं जिला मेजिस्ट्रेट को भी दे दूँ।

दरख्वास्त के साथ मे हैलेट साहब से मिलने गया। व राँची जाने को तैयार हो रहे थे। उसे पढ़कर वे क्रोध में आगए। उनसे जो बातें हुई उनमे यह भाव साफ टपकता था कि मेनार्ड साहब को छुट्टी की दरखास्त पर जो वोर्ड का रुख हुआ था उससे उनको काफी रंज पहुँचा था। खैर, नोटिस के मुताबिक हमें वोर्ड की बैठक बुलानी पड़ी। इस बीच मेंबरों के पास दौड़-धूप शुरू हो गई। श्रीगणेशदत्त ने अमावाँ राजा के नाम पत्र लिखने का वादा किया था। वोर्ड के एक मेंबर टिकारी महाराज कुमार को अपने पक्ष में लाने के लिए उनके पास कलकत्ते पहुँच चुके थे। राज के चार पाँच मेंबर थे जिन पर महाराज कुमार का आदेश मान्य होता। अतएव हमलोग भी रात भर मोटर की सफर तै करते एक बीच के स्टेशन मे मेल ट्रेन पर सवार हो कलकत्ते पहुँचे। महाराज कुमार सीधे आदमी थे और अपने दोस्तों तथा सलाहकारों के कब्जे मे रहते थे। श्रीनन्दकिशोर सिंह मुख्तार का उन पर काफी प्रभाव पड़ता था। उनको हमलोगों ने अपने अनुकूल कर लिया। महाराज कुमार हमारी मदद पर तैयार हो गए, और श्रीभगवतीशरण सिंह को कलकत्ते में ही बैठक के दिन तक रोक रखने के लिए राजी हो गए। हमारी दौड़-धूप का फल इतना अवश्य हुआ कि गैर-सरकारी मेंबरो मे हमारा बहुमत होगया। इस बीच में इसकी खबर प्रांतभर में फैल गई और मुंगेर से शाह जुबैर और श्रीबाबू हमारी मदद के लिए, जिस दिन

बैठक होने वाली थी, आ पहुँचे। उनकी उपस्थिति से हमें काफी ढाढ़स हुआ। बैठक शुरू होने के पहले हैलेट साहब ने हमें अपने बँगले पर बुलाया और विरोधी दल के नेताओं के सामने बातें कीं। मैंने उनको चुनौती दी कि हमारे किसी काम के बारे में उनको हिम्मत हो तो नुक्स निकालें। उन्होंने कहा कि हमे वायस-चेयरमैन के खिलाफ शिकायतें हैं, चेयरमैन के खिलाफ नहीं। उनके चले आने पर कलक्टर साहब ने कहा कि सरकारी सदस्य मेरे खिलाफ वोट नहीं देंगे। जितने एस० डी० ओ० थे सबको ऐसा ही करने का इशारा कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि हमारे विपक्षियों की हिम्मत टूट गई और बोर्ड की बैठक में प्रस्ताव छः महीने के लिए मुलतवी कर देने का नया प्रस्ताव पेश हुआ और वह बहुमत से पास हो गया।

विपक्षी दल की शिकस्त हुई। उनका उपद्रव कुछ दिनों के लिए बंद हुआ पर उनका आंतरिक द्वेष और क्रोध जैसा का तैसा बना रहा। सिर्फ उसकी लहर कुछ दिनों के लिए बंद हो गई। बोर्ड का काम सुचारु रूप से चलता रहा। जनता की आँखों में हमलोग प्रियपात्र होते गए और तीन वर्षों में जितना काम हुआ उतना शायद पहले दस वर्षों में भी नहीं हुआ था। सड़क, अस्पताल, स्कूल आदि की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। जिले के कोने कोने से लोगों की माँगें चढ़ती हुई मात्रा में पहुँचने लगीं, पर सभी कामों की सीमा होती है। लोगों की सारी माँगें पूरी करना किसी भी संस्था की शक्ति के बाहर की बात होती है, सब की इच्छा पूरी नहीं की जा सकती। जब लोगों को

नाउम्मीदी होने लगी तब उनकी भौहें बदलने लगीं। पहले जैसा प्रियपात्र बना रहना कठिन हो गया। तौभी यथाशक्ति लोगों की ख्वाहिश पूरी करने की कोशिश बनी रही। बोर्ड के कामों का सारा विवरण देना असंभव है। मुख्य-मुख्य अंगों का भी बयान नहीं किया जा सकता। इतना ही कहना काफी होगा कि बोर्ड के कामों से हमलोगों का प्रभाव जिले में बहुत बढ़ गया और यदि कोई शिकायत हुई तो इस बात की कि हमने अपनी ताकत से ज्यादा बोझ उठाने की कोशिश की।

बोर्डके संचालन के संबंध में हमारा जो अनुभव हुआ उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि केवल बोर्ड के ही कामों में लगे रहने से अपनी रक्षा नहीं हो सकती, सरकारी हथकंडों से अपने को बचाने के लिए दरबार करने की जरूरत भी होती है। सरकारी अफसरों से मिलते रहना, उनकी इच्छा के अनुसार काम करना आवश्यक है। जिलाधीश को खुश रखना हमारे कुछ दरबारी दोस्तों तथा बड़े आदमी कहलानेवालों की मर्जीपर निर्भर रहता है। नियम के अनुसार इस तरह के लोग हफ्ते में अथवा निश्चित समय में बड़े-बड़े अफसरों के पास पहुँचने की इज्जत हासिल किया करते हैं। यदि जिलाधीश अंग्रेज हुआ तो जिलेके हिंदुस्तानियों का, जिसका कुछ स्थान रहता है, साहब बहादुर तक शिकायत पहुँचाना, उनके बड़े कर्त्तव्यों में से एक प्रमुख कर्त्तव्य है। हैलेट साहब से जो कुछ बिगड़ा बिगड़ी हुई उसके बाद उनका विचार हमारे अनुकूल ही रहा और जब दो बार उनको पबलिक में बोलने का मौका मिला तब उन्होंने हमारी

प्रशंसा तथा बोर्ड के प्रबंध की तारीफ ही की।

हमारे बोर्ड में जाने के कुछ महीने बाद श्रीगणेशदत्त गया में तशरीफ लाये। प्रचलित काँग्रेस रिवाज के मुताबिक हमलोग उनसे मिलने के लिए स्टेशन नहीं गए। हाँ, सरकिट हाउस में जरूर पहुँचे। हमारी गैरहाजिरी से उन्हें नाखुशी जरूर हुई और उन्होंने उसको छिपाया भी नहीं। उस समय हमलोगों में सद्भाव रहता था। उनका कहना था कि बोर्ड उनके अधीन की चीज थी। जिला मैजिस्ट्रेट से जितना कम संबंध उनका रहे उतना ही ठीक था। आगामी चुनाव में बोर्ड के मेंबरों की नामजदगी तो चेयरमैन की सिफारिश परही उनको करना है। अतएव हमलोग यदि उनका वहिष्कार करेंगे तोहमारी यह मुराद कैसे पूरी होगी। मुझ में वहिष्कार का भाव नहीं था, पर उस समय तक तो काँग्रेस के कायदे के मुताबिक हमलोग सरकार के प्रतिनिधि के साथ मित्रता का व्यवहार पब्लिक तरीके पर नहीं कर सकते थे। श्रीगौरीशंकरशरण सिंह, जिनका हिस्सा इन बातों में बहुतही ज्यादा रहा करता था, हमें सिद्धांतों पर अटल बने रहने के लिए जोर दिया करते थे और इस काम में भी हमें उनकी राय की ही कदर करनी पड़ी थी।

श्रीगणेशदत्त ने हमें जिले में दौरा करने के लिए उत्साहित किया और बोर्ड से ही मोटरकार खरीदने की मंजूरी दी। जब जब मुझे किसी तरह की कठिनाई का सामना करना पड़ता, उनकी मदद मुझे मिलती रहती थी। पीछे जब उनका विचार काँग्रेसवालों के प्रतिकूल होगया तबनो वे हमारे कट्टर विरोधो

हो गए और अपनी सारी ताकत लगाकर मेरा सर्वनाश करने पर तुल गए। न्याय अन्याय की परवाह किये बिना सारी सरकारी ताकत लगाकर मुझे नष्ट भ्रष्ट ही करनेपर उतारू नहीं हुए, बल्कि मेरे आत्मसम्मान, मेरी लोकप्रियता और मेरे प्रभाव को हमेशा के लिए मटियामेट करने को तैयार होगए। उनको हमे तग करने में जैसी दिक्कत मिलती रही उतने ही जोर से मुझे दबाने के लिए वे अपनी ताकत लगाते रहे। इस बीच में सिद्धि बाबू की कार्रवाई से एक दल के लोग असंतुष्ट होते जारहे थे और जब श्रीगणेशदत्त के क्रोध का हमें शिकार होना पडा तब इस दलने उनका हाथ मजबूत किया और अपने पुराने वैर का बदला लिया।

१५

सन १६२५ ई० मे कौंसिल ऑफ स्टेट का चुनाव होने वाला था। स्वराज्यपार्टी और कांग्रेस में चुनाव लेकर कुछ मतभेद नहीं रहा। अतएव कॉंग्रेसवालो को कौंसिल के लिए उम्मीदवार होनेमे किसी तरह की अड़चन नहीं रही। बिहार प्रांतीय रा० कांफ्रेंस का एक जलसा इसी समय पुरुलिया मे डा० महमूद के सभापतित्व मे हुआ। उस अवसर पर हमलोग वहाँ इकट्ठे हुए थे। शफी साहब ने जोर लगाया कि आगामी कौंसिल ऑफ स्टेट के चुनाव में हमलोग खड़े हों। उनके बहुत जोर देने पर हम राजी होगए। मुक़ाबिला बड़ा जबर्दस्त था। ज्यादा जमींदार ही थे और प्रातके बड़े-बड़े जमींदार ही उसके उम्मीदवार हुआ करते थे। दरभंगा महाराज शुरू से ही कौंसिल

ऑफ स्टेट के मेंवर रहते आए थे। उनको वहां से हटाना असंभव सा दीखता था। ऐसा भी ख्याल होता था कि विहार की तीन सीटों में से दो के लिए ही उम्मीदवार खड़े किए जायँ, ताकि दरभंगा महाराज से हमें मुकाविला न हो। पर उस समय कांग्रेस की ताकत अक्षुण्ण थी। और आपस में सद्भाव था और एक को दूसरे के प्रति पूरा विश्वास था। हमें पैसे की कमी जरूर थी। एक ओर प्रांतके सब धनीमानी लोगोंका जमाव,दूसरी ओर हमारे जैसे निर्धन व्यक्ति। श्रीमोतीलाल नेहरू इस समय स्वराज्य पार्टी के मंत्री थे और उनका जोर था कि हमारा मुकाविला उन लोगों से हो और उन्होंने इस काम के लिए छः हजार रु० मंजूर किया। प्रस्ताव हुआ कि श्रीश्रीकृष्ण सिंह, स्व० महेंद्रप्रसाद और मैं तीन हिंदू सिटों के लिए और शाहजुबैर मुस्लिम सीटके लिए कांग्रेस के उम्मीदवार हों। हमलोगों ने स्वीकार कर लिया और अपने अपने जिले का सारा भार अपने ऊपर ले लिया। मुंगेर में श्रीवावू, छपरे में महेंद्र वावू औ० और गया में मेरी जवावदेही रही। शेप विहार के जिलों में तथा उड़ीसा में कांग्रेस की ओर से काम किया जाना निश्चित हुआ। मैं इस समय प्रांतीय कांग्रेस कमिटी से हट गया था और मेरी जगह पर श्रीमथुरा प्रसाद पटना आ गए थे और प्रांतीय कांग्रेस कमिटी के एक सहायक मंत्री वना दिए गए थे।

हमलोगों की प्रतिष्ठा डिस्ट्रिक्ट वोर्ड में चले जाने से कुछ वढ गई थी जरूर, पर उसके विनाश का वीज भी वहीं से आरंभ

हुआ। हमलोग तीन उम्मीदवार आपस में इतने मिले जुले थे कि किसी के दिल में न द्वेष बुद्धि थी; न किसी तरह का मैल, पर चुनाव ने हमारे स्वच्छ और निर्मल हृदय पटल पर काला दाग पैदा कर दिया। अधिकार-प्राप्ति के नशा ने हमारे स्वच्छ चरित्र को दूषित बना दिया। प्रत्येक उम्मीदवार के कुछ-न-कुछ ऐसे मददगार थे जिनको काँग्रेस से प्रेम नहीं था, पर अपने मित्र को जिताने की उमंग उनमें जरूर थी! उनकी कार्रवाई कुछ इस तरह हुई जिससे पारस्परिक द्वेष की उत्पत्ति होने लगी। कुछ मित्रों का ख्याल था कि हम और श्रीबाबू, काँग्रेस कार्य में प्रमुख हिस्सा लेते रहने के कारण, ज्यादा वोट पायँगे, और महाराजा दरभंगा की विजय निश्चित-सी थी, तो तीसरा उम्मीदवार ही असफल होगा और वैसा महेंद्र बाबू के लिए होना संभव था। हम तीनों मे से एक का हटना संभव था, पर कौन हारता, यह ठीक नहीं कहा जा सकता था। अंत में यह राय ठहरी कि कोई हारे, हमे तो तीनो सीटों के लिए उम्मीदवार खड़ा करना ही ठीक है।

अपने जिले में भी मैं बहुत काम न कर सका। हमारे सहायक हुए सिद्धिबाबू। उनमें काम करने की अद्भुत क्षमता थी। जिस काम को हाथ में लेते उसे तन मन धन से पूरा करने पर उतारू हो जाते थे। यहाँ के चुनाव की जवाबदेही उन्होंने अपने ऊपर ले ली। श्रीगौरी बाबू उनके सहायक हुए। कुछ पारिवारिक कामों में लग जाने के कारण मैंने दोही चार दिनों तक वोट संग्रह में मदद दी। महाराज डुमराँव, महाराजा दरभंगा, राजा पृथ्वीचंद लाल, राजा गिरिधर नारायण सिंह (रंका) हमारे

विरुद्ध में खड़े थे। महाराजा डुमराँव यदि मुझे बैठ जाने को कहते, तो मैं क्या करता, कह नहीं सकता। पर उनके सलाह्-कारों ने हमारे जैसे उम्मीदवारों के लिए घृणा सूचक शब्दों का व्यवहार करना ही काफी समझा। उनसे बराबर यही कहा गया कि महाराजाओं के मुकाबिले हमारे जैसे तीन टके के आदमियों को कौन वोट देता है। दरभंगा महाराज की ओर से बड़े पैमाने पर पैरवी होने लगी। उनका सारा स्टाफ, मैनेजर से सर्किल ऑफिसर तक प्रांत के कोने-कोने में फैल गया और लाखों रुपये खर्च किये जाने लगे। उनके जेनरल मैनेजर एक बंगाली सज्जन थे। उन्होंने उड़ीसा में सुभाष बाबू के पिता राय बहादुर जानकी नाथ बोस से मदद ली। वहाँ दो वोट काँग्रेस को मिले, पर तीसरा महाराज के लिए सुरक्षित रहा। हमारी दिक्कत इस वजह से और भी बढ़ गई कि सभी तबके के लोगों में महाराजा दरभंगा की प्रतिष्ठा कई दृष्टियों से बनी हुई थी। ब्राह्मण, जमींदार, सनातनधर्मी, तथा व्यवसायी भी थे ही। उनकी लंबी-चौड़ी जमींदारी में कितनों की परवरिश होती थी, कितने को नौकरियाँ मिलतीथीं, यह भी एक विचारने की बात थी। कुछ लोगोंने काँग्रेसके तीनों उम्मीदवारों को अपने तीनों वोट दिए, किंतु जहाँ तक महाराजादरभंगा का निश्चित प्रभाव था वहाँ काँग्रेस को दो ही वोट मिले। जगह जगह पर अपने प्रभावक्षेत्र में दूसरे जमींदार-उम्मीदवारों ने भी अपने लिए वोट का प्रबंध किया। काँग्रेस के तीन उम्मीदवारों में कहीं दो वोट, कहीं एक वोट का बँटवारा काँग्रेस की ओर से पैरवी करनेवालों

के अतिरिक्त वोटर की अपनी इच्छा पर भी निर्भर करता था। सम्मिलित निर्वाचन क्षेत्रकी पद्धति का यह दोष हमारी कुभावनाओं को जगाने तथा अपने दूसरे सहयोगी उम्मीदवार की चेष्टाओं को आशंका तथा संदेह की दृष्टि से दिखाने में बड़ा सहायक हुआ यह अवसर भी कुछ ऐसा होता है जब चालबाजों की अपनी बन आती है। वोट का जब परिणाम निकला तब दरभंगा महाराज, महेंद्र बाबू तथा मेरा नाम निर्वाचित सदस्यों मे प्रकाशित हुए। डुमरॉव महाराज, राजा पृथ्वीचंदलाल, आदि जमींदार हार गए। इसके साथ एक दुर्भाग्य यह भी हुआ कि श्रीश्रीकृष्ण सिंह को भी हम दोनों से कम वोट मिले और वे भी निर्वाचित न हो सके। इस बात का दुःख प्रत्येक कॉंग्रेसी को हुआ और श्रीबाबू के भावुकतापूर्ण हृदय पर इस घटना का आघात लगना स्वाभाविक ही था। इस घटना का उपयोग कुछ लोगोने अपने ढंगपर किया। उनके हृदयमें यह संदेह उत्पन्न किया गया कि कॉंग्रेस की ओर से वोट माँगने वालोंने अनुचित रूपसे उन्हें हराने का काम किया है। किसी भी दग्ध हृदय को दूसरों से चित्त हटा कर अपनी ओर आकर्षित करने का यह एक अच्छा तरीका माना जाता है। श्रीबाबू को हमारी चेष्टाओं के प्रति सन्देहशील बनाकर हमारे विरोधियों ने सफलता पाने की आशा की। तरह-तरह की कहानियाँ कहकर संदेह की पुष्टि की गई और श्रीबाबू के विमल हृदय को मैला करने का प्रयत्न किया गया। एक दिन उन्होंने मुझसे इसकी चर्चा की थी। फिर उसके बाद, मुझे याद नहीं, उन्होंने कभी इस दुर्योग का उल्लेख किया।

१६

१९२५ ई० का अंत हो चला। काँग्रेस के कामों में शिथिलता होती गई। सांप्रदायिक झगड़े बढ़ते गए। काँग्रेस अधिवेशन कानपुर में हुआ। यहाँ स्वराजपार्टी के मेंबरों की एक अलग बैठक हुई। मैं उसमें शरीक नहीं होना चाहता था, पर अबतो कौंसिल ऑफ स्टेट का मेंबर हो गया था, अत: मेरी वहाँ बुलाहट हुई। कोई खास काम तो हुआ नहीं, सिर्फ श्रीमोतीलालजी ने मुझसे सूबे का हाल दरियाफ्त किया। काँग्रेस की सभानेत्री थीं श्रीमती सरोजिनी नायडू। नियमानुसार विषय-समिति और ए० आइ० सी० सी० की बैठकें होती रहीं। मैं भी शरीक हुआ। मार्के की कोई बात नहीं हुई। इसमें यह तय पाया था कि स्वराज्यपार्टी की हस्ती काँग्रेस से अलग रहने की जरूरत नहीं है। सब तरह के चुनाव काँग्रेस के नामपर ही हुआ करेंगे और काँग्रेस की बागडोर श्रीमोतीलालजी के हाथ में देदी जायगी। सी० आर० दास का देहांत इसी साल जून महीने में दारजिलिंग में होगया था। देशबंधु दासजी बरकेनहेड के भाषण से इस बात की आशा करने लगे थे कि अंग्रेज सरकार से सुलह होजाने की संभावना है और इसी उद्देश्य से अपना भाषण जो उन्होंने फरीदपुर प्रांतीय काँफ्रेंसमें दिया था, तथा उसके बाद जो बयान निकाला था, उनमें कुछ नरम शब्दों का व्यवहार किया था। उनके विचार में बरकेनहेड के रुखसे इस बातका सबूत मिलता था कि अंग्रेज सरकार का हृदय

परिवर्त्तन हो रहा था। गाँधीजी ने इस हृदय परिवर्तन को कहीं भी नहीं देखा और अपनी ओर से जो बयान निकाला था उसमें इसकी तरफ इशारा भी किया था।

१९२५ ई० में ही कोहाट का भीषण हिंदू-मुस्लिम दंगा हुआ। हजारों आदमी गृहविहीन होगए और करोड़ों रुपये की संपत्ति लूट ली गई। सांप्रदायिक झगड़े कलकत्ते, बंबई, इलाहाबाद, भागलपुर इत्यादि जगहों में हुए और उनकी प्रतिक्रिया छोटे-छोटे स्थानों पर भी होने लगी। गया शहर में भी इसका बीज बोया गया और आगे चलकर इसका भयानक रूप होगया। पर सौभाग्य से किसी तरह का कांड नहीं हुआ। महात्माजी और मौलाना शौकत अली के बीच कोहाट के दंगे को लेकर मतभेद शुरू हुआ जिसका परिणाम आगे चलकर देश के हित की दृष्टि से अच्छा नहीं हुआ।

बिहार प्रांत में जितनी खतरनाक हालत गया में हुई थी उतनी और जिलों में नहीं हुई। गया में रहने की वजह से मुझे इस समस्या को सुलझाने का अवसर मिला करता था। अपनी ओर से दोनों धर्मानुयायियों के बीच मेल-मिलाप कराने की कोशिश बराबर करता रहा। हिंदू-मुसलमानों के चुने हुए नेताओं को इकट्ठा करके कोई न कोई सुलह का रास्ता निकालने का प्रयत्न में बराबर करता रहा, पर राय हरिप्रसाद लाल जी तथा जबतब श्रीसिद्धेश्वरप्रसाद सिंह का हिंदूपन इतना उमड़ जाता था कि मुझे उनको सीमा के अंदर रखने में कठिनाई हो जाती थी। सरकार की ओर से भी जबतब कोशिश इस बात

की होती रही कि दोनों कौमों मे मेल-मिलाप बना रहे, पर जिस रास्ते पर चल कर ऐसा होना संभव था उस रास्ते पर चलने को सरकारी अफसर तैयार नहीं थे। ऐसे सम्मेलन का एक उदाहरण जो डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के बँगले पर हुआ था और जिसमें हिंदू मुसलमानों के चुने हुए नेता बुलाये गए थे, मुझे आज भी याद है। उस कान्फ्रेंस में मैं भी बुलाया गया था और विहार के आइ० जी० पुलिस मि० स्वेन ने जो भाषण उस समय दिया था वह हमारे लिए बहुत ही शर्मनाक था। जहाँ तक मुझे स्मरण है, स्वेन साहब ने हिंदू और मुसलमानों की ओर इशारा करके कड़े शब्दों में कहा था कि यदि आपलोग दंगा करेंगे तो हो सकता है कि मैं तत्काल उसे न रोक सकूँ, क्योंकि प्रत्येक जिले में मेरी पुलिस की शक्ति सीमित है, पर दंगे के बाद में सारे प्रांत के सिपाहियों को बुलाकर आपलोगों की करनी का काफी फल दिला सकता हूँ। इसलिए आपलोग चेत जाँय और कोई ऐसी हरकत न करें जिससे मुझे यह रुख अख्तियार करना पड़े। औरों पर चाहे जो असर पड़ा हो पर मुझे तो यह बहुत बुरा लगा। मैं तटस्थ की हैसियत से ही बुलाया गया था और मैं केवल एक दर्शक का काम कर रहा था। मुझे न हिंदुओं का ही रुख पसंद था और न मुसलमानों का, लेकिन जहाँ तक मैं समझता हूँ हिंदू मुसलमान दोनों इस भाषण से न कोई लाभ ही उठा सके न आई०जी० के दुर्व्यवहार का मुनासिब जवाब दे सके।

१७

१९२६ ई० में प्रांतीय कौंसिल तथा सेंट्रल एसेंबली के चुनाव हुए। कांग्रेस के नाम से ही ये चुनाव लड़े जाने को थे, अतएव अपने अपने जिले मे उम्मीदवार चुनने का भार हमलोगों को मिला। मेरा जिला, जैसा पहले लिख चुका हूँ, जमींदारों के प्रभाव का क्षेत्र था। मैं कौंसिल ऑफ स्टेट में चला ही गया था, श्रीसिद्धेश्वर प्रसाद सिंह को सेंट्रल एसेंबली के लिए नामजद किया गया। प्रांतीय कौंसिल के उम्मीदवार होने को कोई तैयार नहीं होता था। श्रीगौरीशंकर शरण सिंह एक सीट के लिए उपयुक्त नजर आते थे, पर इस सीट से श्रीरामेश्वर प्रसाद सिंह चुने जाते थे और उनको हटाने के लिए गौरी बाबू राजी नहीं थे। मेरी सहानुभूति भी श्रीरामेश्वर प्रसाद सिंह के साथ थी। मैंने उनको भागलपुर कालेज मे पढ़ाया था और बोर्ड मे अब तक उनकी मदद भी मुझे मिलती रही थी। इसलिए गौरी बाबू की अनिच्छा प्रकट करने पर मैंने उनपर किसी तरह दबाव देना मुनासिब नहीं समझा।

इस समय श्रीगणेश दत्त सिंह के विरोध में उम्मीदवार खड़ा करने का निश्चय किया गया। पहले कहा जा चुका है कि उनके साथ हमलोगों को बराबर हमदर्दी रही और उनका रुख भी कांग्रेस के अनुकूल ही था, पर उनके कामों से हमलोगों को असंतोष होना शुरू हो गया था। साथ ही कांग्रेस की नीति मिनिस्ट्री को खतम करने की थी, इसलिए मिनिस्टरों के विरोध मे में उम्मीदवार खड़ा करना जरूरी हो गया था। देशबंधुदास न

बंगाल की मिनिस्ट्री को खतम कर अपनी बढ़ती हुई ताकत का परिचय दिया था। मध्यप्रांत में भी मिनिस्ट्री तोड़ने में काँग्रेस पार्टी को कामयाबी मिली थी। इसका असर हमारे प्रांत पर भी हुआ और नये चुनाव में इस बात का ख्याल रक्खा गया कि मिनिस्टरों का विरोध किया जाय। काँग्रेस की इस नीति से श्रीगणेशदत्त को बहुत चोट पहुंची और उन्होंने अपनी उम्मीदवारी मुंगेर के बेगूसराय, मुजफ्फरपुर तथा गया के निर्वाचन क्षेत्रों से अलग अलग दाखिल की। उनकी ओर से काम करनेवाले बेगूसराय पर ही ज्यादा जोर देते थे, कारण बेगूसराय के वोटरों पर श्रीगणेश दत्त का ज्यादा असर इसलिए समझा गया कि वहाँ उनकी जाति के लोगों की तादाद काफी थी और उनपर उनका यथेष्ठ प्रभाव था। काँग्रेस की ओर से वहाँ मुकाबिला करने की जबर्दस्त तैयारी हुई। श्रीबाबू ने इस बात का बीड़ा उठाया कि अगर श्रीगणेशदत्त वहाँ से अंत तक खड़े रहे तो उनका मुकाबिला वे स्वयं करेंगे, यों तो श्रीरामचरित्र सिंह वहाँ से खड़ा कराये गए थे।

इस चुनाव में स्वामी सहजानंद सरस्वती की मदद श्रीगणेश दत्त की ओर रही। मेरा परिचय स्वामी जी के साथ सन १९२१ ई० से ही था। काँग्रेस कमिटी के मेंबर की हैसियत से प्रां० कां० क० की बैठक में शरीक होने के लिए वे अकसर आते थे। धीरे धीरे उनका झुकाव श्रीगणेश दत्त की जमात की ओर होता गया। बिहटा में एक आश्रम खोल कर कुछ बालकों को शिक्षा देने का काम वे करने लगे। आश्रम को बड़े बड़े

जमींदारों से सहायता मिलती थी। श्रीरजनधारी सिंह पर उनकी खास कृपा रहती थी और दोनों मे पारस्परिक मित्रता का भाव कितने सालों तक रहा। स्वामी जी भूमिहार जाति में इस बात का प्रचार करते थे कि उन्हें अपने को ब्राह्मण सम्बोधित करना चाहिए और अपनी जाति का पुरोहित अपनी जाति के लोगों को बनाना चाहिए। इस विषय पर उन्होंने पाडित्यपूर्ण पुस्तक भी लिखी। धीरे धीरे कांग्रेस से हट कर श्रीगणेशदत्त की मदद करने में उन्होंने काफी उत्साह दिखाया। बेगूसराय क्षेत्र में उनका कांग्रेस के कार्यकर्त्ताओं से मुकाबिला हुआ और सख्त मुकाबिला हुआ। श्रीगणेशदत्त ने वहाँ अंत तक खड़ा रहना मुनासिब नही समझा और अचानक श्रीरामेश्वर प्रसाद सिंह को बिठाकर उस क्षेत्र से स्वयं खड़े रहे। जब दूसरा कोई उम्मीदवार न रहा तब वहाँ से वे निर्विरोध चुन लिए गए। इसके लिए कांग्रेसवालो का क्रोध मुझ पर भी हुआ। यदि वहाँ से म किसी को खड़ा किए रहता तो इस तरह पर उनका चुना जाना सभव न होता।

मैं यह स्वीकार कर चुका हूँ कि श्रीगणेशदत्त के लिए मेरे हृदय में सद्भाव अवश्य था, पर मैंने जानबूझ कर उनको उस क्षेत्र से चुनजाने में मदद नहीं की। गौरी बाबू के सिवा वहाँ से दूसरा कोई खड़ा हो नहीं सकता था और वे किसी तरह खड़ा होने पर राजा नहीं हुए। इस चुनाव में श्रीगणेशदत्त को कांग्रेस से चिढ़ होगई और उस दिन से व कांग्रेस के कट्टर दुश्मन होगए। उनका रंज खासकर मुझपर इसलिए रहा कि

श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह ने अपनी जगह खाली कर उनको चुने जाने में सहायता दे उनपर काफी अहसान किया और मैं श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह के रास्ते में कंटक था।

१८

कौंसिल चुनाव होगया। काँग्रेस की ओर से जितने लोग चुने गए उनकी संख्या चालीस के ही लगभग थी। अतएव मंत्रीमंडल का नहीं बनने देना उनकी ताकत से बाहर की बात होगई। अबतक स्वराज्यपार्टी के मेंबरों की तादाद मुश्किल से दस बारह रही थी। मंत्रियों को उनकी वजह से कोई बेचैनी नहीं होती थी। अब काँग्रेस के ऐसे मेंबरों की संख्या एक तिहाई से ज्यादा होगई। किसी किसी मसले पर दूसरे दल के साथ मिल कर सरकार को हरा देना उनके लिए सुलभ होगया था। साथ ही काँग्रेस ने अपना रुख मंत्रियों के विरुद्ध चुनाव में जाहिर कर उनको इस बात की सूचना दे दी थी कि काँग्रेस की नीति मिनिस्ट्री के खिलाफ रहेगी अतएव मिनिस्टर लोग चौकन्ने हो गए और काँग्रेस की ओर संदेहात्मक दृष्टि से देखने लगे।

कौंसिल के साथ ही सेंट्रल एसेंबली का चुनाव हुआ। उसमें काँग्रेस की कामयाबी अच्छी रही। करीब करीब सभी जगहों से काँग्रेसी उम्मीदवार चुने गए। गया—मुंगेर से सिद्धि बाबू उम्मीदवार हुए और उनका मुकाबिला हुआ उनके, मित्र और साथी, हिंदू सभा के तात्कालिक नेता राय हरिप्रसाद लाल से। चुनाव में खूब परिश्रम करना पड़ा। सिद्धि बाबू ने मेरे

कौंसिल ऑफ स्टेट के चुनाव में जीतोड़ परिश्रम किया था, इसलिए भी मैं उनका कृतज्ञ था। साथ ही कांग्रेस की आज्ञा का पालन करना जरूरी था। मैं उस चुनाव में मुंगेर तक गया था और दो तीन दिनों तक शहर में रहकर वोटरों से मिला था, साथ ही राय हरिप्रसाद की तरफ से जो काम हिंदू सभा कर रही थी उसका मुकाबिला श्रीव्रजरंगदत्त शर्मा द्वारा कराया था। मैं व्याख्यान देना नहीं जानता था और न मेरी अभिरुचि इस ओर थी, पर बातें करके जहाँ तक लोगों को समझा सकता था, समझाया। कौंसिल के लिए कांग्रेस के उम्मीदवारों की ओर से काम हो ही रहा था, उससे भी हमारा काम थोड़ा बहुत सुलभ हो गया। टिकारी, अमांवा, देव इत्यादि जितने छोटे बड़े जमींदार थे सब की मदद हमें मिली। वोट जिस दिन पड़ रहे थे, हैलेट साहब जिला मजिस्ट्रेट की हैसियत से औरंगाबाद पोलिंग बूथ पर गए थे। वहाँ मुझे उनसे मुलाकात हुई। मैंने सिद्धि बाबू की जीत होगी, इसका खुलासा बयान किया। शायद कांग्रेस का प्रभाव इतना बढ़ा हुआ देखकर उनको अच्छा नहीं लगा, पर करते तो क्या!

कौंसिल ऑफ स्टेट के चुनाव में यह कहना मैं भूल गया कि चन्द हाईकोर्ट के जज और अंग्रेज अफसरों ने भी कांग्रेस को वोट दिए थे। उनकी दलील यह थी कि कांग्रेसवालों को अपनी पार्टी है और यह चुनाव पार्टी की तरफ से हो रहा था, लेकिन जो लोग व्यक्तिगत हैसियत से लड़े हुए थे उनका प्रोग्राम ही क्या हो सकता है! उन दिनों हैमंड साहब एक्जिक्यूटिव कौंसिल

के मेंबर थे। ये बड़े चलता पुर्जा हाकिम समझे जाते थे। डुमरांव महाराज से उनकी दोस्ती थी। जब महाराज चुनाव में हार गए तब एलेक्शन पिटीशन की धमकी दी गई। मैं जानता था कि महाराज मुकदमा लड़ने में अपना सानी नहीं रखते और मेरे जैसे मामूली आदमी के लिए अदालत के सामने उनका मुकाबिला करना असंभव था। इसलिए चुनाव में जीतने की मेरी खुशी गम में बदल गई, पर थोड़े ही दिनों के बाद सुनने में आया कि महाराज बहुत बिमार हो गए हैं और डाक्टरों ने उनको समुद्र यात्रा की सलाह दी है। साथ ही उनके जेनरल मैनेजर ने मेरे पास चिट्ठी भेजी कि मैं अपनी फीस का हिसाब कर लूँ। इसका अर्थ तब समझ में आया जब यह बात जाहिर हुई कि महाराज का हारना सरकारी हुक्कामों को बहुत अखरा था और उन लोगों ने सिफारिश कर इस हार के दुःख का बदला देने के लिए उनको एक्सिक्यूटिव कौंसिलर बनाया।

राय हरिप्रसाद के हारने का ऐसा कोई असर होने की बात थी नहीं, पर उनके ऊपर भी काफी धक्का पहुँचा। उनका ख्याल था कि गया जिले के हिंदू मात्र उनके अनुयायी हैं और उनके मुकाबिले में किसी को वोट मिलने की संभावना नहीं है। राय हरिप्रसाद इस वक्त पुराने मेंबर भी थे और कांग्रेस पार्टी में शामिल भी थे। इस समय लाला लाजपत राय और श्रीमदन-मोहन मालवीय को श्रीमोतीलाल नेहरू से मतभेद हो गया था। हिंदू सभा की ओर से उन्होंने स्वतंत्र कांग्रेस पार्टी कायम की थी और जिन लोगों को कांग्रेस से टिकट नहीं मिले उन्हें अपनी

पार्टी में शामिल कर लिया। राय हरिप्रसाद को भी उसी पार्टी में स्थान मिला था और वे चुनाव लड़े।

नेहरू जी और लाला जी का मतभेद यहीं से ही शुरू हुआ और आगे चल कर तो इतना बढ़ता गया कि उन महान पुरुषों के बीच बोल चाल तक बंद हो गई। शिष्टता का व्यवहार होन में भी जब कभी कमी देखी जाने लगी। लाला जी और नेहरू जी अपने अपने दल के पक्ष में वोट माँगने के लिए इस सूबे में भी आए और दोनों का मुकाबिला तिरहुत की सीटों को लेकर हुआ था। बहुत भद्दे तरीके पर चुनाव का प्रचार किया जाता था। खान पान और रहन सहन की धज्जियाँ उड़ाई जाती थीं। जनता के सामने एक दूसर की शिकायतें खुल्लम खुला की जाती थीं।

उम्मीदवारों के चुनाव में भी कुछ मतभेद हमलोगो क दरम्यान था। प्रांतीय काँग्रेस कमिटी को सिफारिश करने का अधिकार था, पर अंतिम चुनाव श्रीमोतीलाल जी के मातहद एक छोटी-सी कमिटी के हाथ में था। पहले तो छोटानागपुर की सीट को लेकर मतभेद शुरू हुआ। श्रीरामनारायण सिंह इस क्षेत्र से श्रीदेवकीप्रसाद सिंह के स्थान पर खड़ा होना चाहते थे। हमलोगों का ख्याल था कि देवकी बाबू बेहतर कौंसिलर होंगे, पर रामनारायण बाबू अपने को उनसे बेहतरीन समझते थ। श्रीमोतीलाल जी का इशारा था कि श्रीदेवकीप्रसाद सिंह ही चुने जायें। रामनारायण बाबू इसके लिए बगावत करने को तैयार थे। प्रांतीय काँग्रेस कमिटी के सामने इस आशय का एक

प्रस्ताव लाया भी गया, पर अंत में श्रीरामनारायण सिंह ही इस क्षेत्र से चुन लिए गए। छपरा—दरभंगा से श्रीनारायणप्रसाद सिंह चुने गए थे और दूसरी ओर से खड़े हुए थे राज दरभंगा के मैनेजर श्रीआदित्यप्रसाद सिंह। पर नारायण बाबू की ही जीत हुई। भागलपुर डिविजन से कुमारगंगानन्द सिंह जी चुने गए। पटना—शाहाबाद से जो हमारे उम्मीदवार थे वे अच्छे नहीं कहे जा सकते थे, अतएव उनके मुकाबिले में श्रीअम्बिकाप्रसाद सिंह चुने गए।

स्थानीय कौंसिल के चुनाव को लेकर छपरा जिले में काफी विरोध भाव जाग उठा था। श्रीश्रीनन्दनप्रसादनारायण सिंह प्रतिष्ठित भूमिहार वंश के जमींदार कांग्रेस की ओर से खड़ा होने के लिए उम्मीदवार हुए। उनके खिलाफ थे श्रीजालेश्वरप्रसाद। प्रांतीय कांग्रेस कमिटी ने जालेश्वर बाबू का ही नाम भेजा था, पर इस बात को लेकर हमलोगों के बीच में जबर्दस्त मतभेद था। प्रांतीय वर्किंग कमिटी के कुछ मेंबर श्रीनंदन बाबू को ही पसंद करते थे। मामला श्रीमोतीलाल जी के यहाँ पहुँचा। तत्कालीन ए० आई० सी० सी० के जेनरल सेक्रेटरी मि० आयंगर के हाथ में इसका फैसला सौंपा गया और उन्होंने जालेश्वर बाबू को ही चुना। उस चुनाव के खिलाफ श्रीनंदन बाबू और उनके साथ कितने ही कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओं ने बगावत का झंडा उठाया। श्रीगिरीश तिवारी जैसे प्रमुख कांग्रेसी ने उनका साथ दिया और छपरा जिले में तुमुल युद्ध शुरू हुआ। बाबा रामउदार दास (अब राहुल सांकृत्यायन) ने जालेश्वर बाबू पक्ष लिया और

काँग्रेस के दो दलों में परस्पर खूब छींटे फेंके गए। श्रीनंदन बाबू की जीत हुई और सारन जिले में दो परस्पर विरोधी दल काँग्रेस के भीतर कायम हो गए।

दरभंगा जिले में समस्तीपुर की सीट पर भी काँग्रेस के प्रतिद्वंदी श्रीमहेश्वरीप्रसाद नारायण सिंह और श्रीसत्यनारायण सिंह काँग्रेसी में खूब भिड़ंत रही, पर जीत हुई काँग्रेस की ही। इसका एक फल यह हुआ कि श्रीसुखदेवसिंह, डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा। कहा जाता है कि श्रीसत्यनारायण सिंह की मोटर रास्ते में बिगड़ गई। ठीक समय पर नॉमिनेशन दाखिल करने के लिए उनका समस्तीपुर पहुँचना असंभव था। यदि श्रीसुखदेव सिंह इंजिनियर जो उस रास्ते से जा रहे थे अपनी मोटर से उनको निश्चित स्थान पर नहीं पहुँचा देते तो वे नॉमिनेशन दाखिल नहीं कर सकते। इंजिनियर का यह अपराध क्षम्य नहीं समझा गया और सुना गया कि डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड के चेयरमैन श्रीमहेश्वरप्रसाद नारायण सिंह ने, जिनको श्रीगणेशदत्त की कृपा प्राप्त थी, इस कसूर की सजा यही दी कि उनको नौकरी से निकाल बाहर किया। प्रांत में और किसी जगह ऐसे मार्के की बात नहीं हुई जिसकी मुझे इस समय याद हो। श्रीजगतनारायण लाल काँग्रेस से हटकर लाला जी के साथ होगए और अपना एक दल अलग कायम कर उन्होंने कौंसिल में प्रवेश किया। श्रीरजनधारी सिंह नाम के लिए तो उस दल में थे, पर वोट बराबर श्रीगणेशदत्त के साथ करते थे। जगत बाबू अपने पुराने काँग्रेसी साथियों को छोड़ नहीं सके और

कौंसिल के अंदर बराबर उनके साथ ही वोट करते रहे। पहले वे कट्टर कांग्रेसी थे, पर जब हिन्दू मुसलमानों में वैमनस्य बढने लगा तब धीरे-धीरे उनकी सहानुभूति हिंदू सभा के साथ होगई। जब कांग्रेस में शिथिलता प्रचुर मात्रा में आगई, तब तो उनका हिंदू सभा के साथ संबंध और भी गाढ़ा हो गया और आगे चलकर अखिल भारतीय हिंदू महासभा के प्रधान-मंत्री तक हुए और सूबे के बाहर सारे देश में उनकी ख्याति होगई।

१६

इस प्रकार लोकल बडीज में प्रवेश तथा कांग्रेस के नाम पर एसेंबली-कौंसिल में जानेका प्रोग्राम १६२५—२६ ई० का चलता रहा। थोड़े दिनों के अनुभव ने इस बातको साबित कर दिया कि एक बार ऊँचे स्थान से नीचे उतरते ही हमारे पतन में वेग आजाता है और यह तब तक बढ़ता जाता है जब तक हम एकदम नीचे नहीं पहुँच जाते। आपस का मतभेद एकबार शुरू हुआ कि उसमें शाखा-प्रतिशाखाएँ निकलने लगती हैं और, जबतक उसके भिन्न भिन्न अंग नग्न रूप में हमारे सामने नहीं आ जाते तबतक हम सेवा और त्याग के व्रतको छोड़ने का जो प्रतिफल होता है उसका अनुभव अच्छी तरह नहीं कर पाते। १६२१—२२ ई० के तप युग को छोड़ हम भोग युगमें आने लगे। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड म्युनिसिपैलिटी से शुरू करके कौंसिल ऑफ स्टेट, एसेंबली तथा प्रांतीय कौंसिल तक पहुँचे और कुछ दिनों का कटु अनुभव प्राप्तकर हम अपनी स्थिति को समझ सके।

१९२६ ई० में महात्माजी ने प्रांतका दौरा किया। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड गया ने उनके स्वागत करने तथा अभिनंदन पत्र अर्पित करने के लिए बोर्ड के अहाते में प्रबंध किया। महात्मा जी मन्नूलाल लाएब्रेरी देखने के लिए नये गुदाम की सड़को से गुजरे और पीछे उनको गंदगी पर यंगइंडिया में एक वक्तव्य निकाला। म्युनिसिपेलिटी के चेयरमेन रायबहादुर केदारनाथ उससे बहुत क्षुब्ध हुए थे और कितने दिनों तक उसका दुःख उनके मनसे नहीं उतरा था। वे नामी वकीलों में से थे और म्युनिसिपल कामों में बहुत समय देते थे। उनका ख्याल था कि उन्होंने उस संस्था की बड़ी सेवा की थी और उसके प्रबंध में बहुत कुछ सुधार उनकी वजह से ही हुआ था। यह सब होते हुए भी कितनी सड़कों से गंदगी नहीं दूर की जा सकी थी। इसके लिए रायबहादुर दोषी नहीं थे और न महात्मा जी का लक्ष्य किसी खास व्यक्ति से था। रमना में बड़ी सभा हुई और महात्मा जी को थैली भेंट की गई।

१९२६ ई० में कांग्रेस का अधिवेशन गुवाहाटी (असम) में श्रीश्रीनिवास आयंगर के सभापतित्व में हुआ। हमलोग उसमें शामिल हुए। पानी बरस जाने के कारण मेरी तबियत खराब हो गई थी। उन दिनों राजेंद्र बाबू वर्किंग कमिटी के सदस्य थे, अतएव उनका कैंप सुरक्षित होने की वजह से मैं अस्वस्थ होकर वहीं चला गया। तबीयत जल्द ही अच्छी हो गई और हमलोग कांग्रेस खतम होने पर अपने अपने स्थान को लौट आए। कामाख्या देवी का दर्शन किया और शस्य श्यामला असम में

पुनरागमन करने का लोभ वहाँ की भूमि और उपज के बारे में तरह तरह के बयान सुनकर संवरण न कर सका। उसके कुछ दिनों के बाद फिर असम आया।

गुवाहाटी काँग्रेस में स्वामी श्रद्धानंद की हत्या अब्दुल रसीद के हाथों होने की खबर पहुँची थी। अचानक यह दर्दनाक खबर सुन कर सारी काँग्रेस अवाक रह गई! हिंदू-मुसलमानों में जो वैमनस्य बढ़ता जाता था उसकी चरमसीमा उस साधु पुरुष की हत्या में जा पहुँची। उनके लिए जो शोक प्रस्ताव काँग्रेस में पेश हुआ। उसके प्रस्तावक हुए महात्माजी और उसका समर्थन मौलाना मुहम्मद अली ने किया।

२०

डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का इंतजाम पहले जैसा चलता रहा था। तीन वर्ष की अवधि समाप्त होने पर आई। १९२७ ई० के मध्य में नया चुनाव होने को था। हिंदू-मुस्लिम समस्या का असर हमारे सारे कामों पर पड़ रहा था। बोर्ड में मुसलमान कर्मचारियों की संख्या औसत से ज्यादा थी जिसपर बोर्ड के मेंबरों ने टीका-टिप्पणी भी की थी। सवाल के जरिये यह बात बोर्ड के सामने लाई जाती थी। मेनार्ड के छुट्टी पर चले जाने से अंत में अमीर हैदर को ही स्थानापन्न डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर बनाया गया था। इसके लिए मुझे विशेष प्रयत्न करना पड़ा था, क्योंकि बहुत से मेंबर उसका विरोध करते थे। बात असल यह हुई कि अमीर हैदर इतना चालाक और होशियार आदमी था कि बोर्ड के मेंबरों

को खिदमत और खुशामद से अपनी ओर मिलाये रहता था। सिद्धि बाबू के ऊपर उसका प्रभाव इस तरह का नहीं पड़ सका था। उनके चुनाव में अपनी ओर से आदमी भेज कर कई स्थानों में उसने वोट संग्रह कराने का काम कराया था। इस पर भी सिद्धि बाबू उसके विरोधी बने रहे और यदि मैं ज़ोर लगाकर उसकी मदद नही करता रहता तो बोर्ड मे ही उसे निकालने का प्रयत्न सफल हो जाता। मेरी दलील बराबर यह रहती कि बोर्ड के नौकरों की कोई जाति नहीं। जबतक वे वहाँ हैं तब तक उनके कामों की ही आलोचना कर सकते हैं और उसी पर उनकी तरक्की तनज्जुली मुनहस्सर होनी चाहिए। राय हरिप्रसाद और सिद्धि बाबू को यह दलील पसंद नहीं पडती थी। खासकर सिद्धि बाबू अपने भाव को बराबर प्रकाशित कर दिया करते थे जिससे सांप्रदायिक वैमनस्य बढ जाने की संभावना हो जानी थी। बोर्ड मे कुछ ऐसे कर्मचारी भी थे जिनकी उम्र साठ वर्ष से कहीं ज्यादा हो गई थी। पाँच-सात ऐसे लोगों के नाम खोज कर बोर्ड की नौकरी से उन्हें हटाने का प्रस्ताव सिद्धि बाबू ने पेश किया। यह बात सही थी कि साठ वर्ष के बाद नियमानुसार वे बोर्ड की नौकरी में नहीं रखे जा सकते थे, पर इस प्रस्ताव की तह में साम्प्रदायिक भावना मौजूद थी। इस कारण इसे बोर्ड के नियम-पालन की दृष्टि से लाया हुआ प्रस्ताव नहीं कह सकते। बदकिस्मती से उन लोगों में ज्यादातर सर सुलतान के गाँव के रहनेवाले तथा उनके रिश्तेमंदों में से थे। इसकी चर्चा उन तक पहुँची और इसका क्या असर उन पर पड़ा होगा, इसकी हम सहज कल्पना

कर सकते हैं। आगे चलकर इसकी भयानक प्रतिक्रिया हमारे ऊपर पड़ी और हमें उसका आघात सहन करना पड़ा।

सर ख़्वाजा नूर के बारे मे जिक्र कर चुका हूँ। गया जिले में कोई ऐसा काम नहीं होता था जिसमें उनका कुछ न कुछ हाथ न हो। छोटे-बड़े सभी कामों में उनकी दिलचस्पी रहती थी। डाक-बँगले के खानसामा से लेकर बड़ी से बड़ी नौकरी दिलाने की सिफ़ारिश करना उनके लिए कोई बड़ी बात न थी। मुझे याद है कि एक दिन वे मेरे घर पर आए और डाकबँगले में अपने एक आदमी को नौकरी दिलाने की कोशिश की। दूसरीबार एक सब इसपेक्टर ऑफ स्कूल्स की सिफ़ारिश करने पहुँच गए जिसने एक झूठी डायरी दी थी। एकबार एक लेडी डाक्टर को छुट्टी दिलाने के लिए मुझे अपने यहाँ बुलवाया था। इस तरह कोई भी छोटा या बड़ा काम क्यों न हो, उनका हिस्सा उसमें जरूर रहता था। वे कौंसिल के प्रेसिडेंट थे और इस सिलसिले में उन्हें साल में कुछ ही दिन पटने में रहना पड़ता था। ज्यादा समय वे गया में ही रहते थे। अक्सर उनके घर पर शामको बैठक जुटती थी और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, म्युनिसिपैलिटी, हिंदू मुसलमान का सवाल तथा इस तरह के भिन्न भिन्न मसलों पर रोशनी डाली जाती थी। इसलिए अप्रत्यक्ष रूप से जिले की राजनीति पर उनकी छाप बराबर पड़ती रही। अमीर हैदर के हिमायतियों में एक वे भी थे और उसको पक्का डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर बनाने में उनकी ओर से यथेष्ट सहायता पहुँची।

१९२७ के प्रारंभ में नये चुनाव की तैयारी होने लगी। जनता में हमारा प्रभाव बहुत बढ़ गया था। हमने उसकी जितनी सेवा की उससे वहां तक पहुँचने में हमें आसानी थी। इस चुनाव में हमें कामयाबी मिलने की पूरी आशा थी। टिकारी महाराज कुमार तथा अमाँवा राज की मदद हमको बराबर मिलती रही थी। नये चुनाव में हमें यह डर नहीं था कि उनकी ओरसे हमारा विरोध होगा, पर जैसे जैसे समय नजदीक पहुँचता गया हमारे कानों तक खबर पहुँचने लगी कि टिकारी राज की ओर से हमारे दलका विरोध किया जायगा। बात ऐसी हुई कि टिकारी ने औरंगाबाद सर्कल को सईदा बीबी के नाम से मुकर्ररी कर दिया था और मि० विटल नामक एक पुराने निलहे को उसका मेनेजर बनाया। मि० जार्ज चंद्र उन दिनों औरंगाबादके एस० डी० ओ० थे। उनसे विटल की बहुत दोस्ती थी। जार्ज चंद्र अपना बहुत सा वक्त विटल के बँगले पर ही बिताया करते थे। पब्लिक के ऊपर इसका बहुत असर पड़ता था। विटल जो चाहते थे वह एस० डी० ओ० से करा लेते थे और कितनी बार तो नाजायज काम भी कराते रहे। १९१७ ई० में १४४ दफा की नोटिस तोड़ने पर चंपारण में महात्माजी पर जो मुकदमा चला था उसकी सुनवाई जार्ज चंद्र ने ही की थी। १९२६ ई० में महात्माजी जब दौरे में गया तक आये थे तब औरंगाबाद के डाकबँगले में ही ठहरे थे। जार्ज चंद्र का बँगला ठीक उसके सामने ही पड़ता था, पर उसने महात्माजी से मिलने की हिम्मत नहीं की। देव राजा के ऊपर

महात्माजी का प्रभाव इतना पड़ा कि वे स्वयं अपनी राल्सराय मोटर पर महात्माजी को स्टेशन पहुँचा आये थे और खद्दरका व्यवहार तथा चर्खा चलाने का वादा भी किया था।

टिकारी महाराज कुमार सईदा बीबीके हाथ में रहते थे और वह विटल साहब के कहने में थी। अतएव प्रोग्राम बना कि राज के मैनेजर बोर्ड के चेयरमैन के लिए खड़े हों। जहाँ जहाँ राज की जमींदारी थी वहाँ वहाँ से राज के उम्मीदवार खड़े किये गए। औरंगाबाद से बोर्ड के सात मेंबर हुआ करते थे। उनमें चार जगहों से राजने अपने उम्मीदवार नामजद किये। मेरे विरोध में श्रीबलींद्रलाल दास जो मेरे एक सहपाठी थे और उस समय वकालत करते थे, खड़े किये गए। बंगाली स्टेट के वे वकील थे और टिकारी राजकी मदद उनको दी जाने का वादा मिला। विटल खुद एक सीट के लिए खड़े हुए और राजके एक तहसीलदार एक दूसरी सीट के लिए। उन दोनों जगहों में राज की जमींदारी तथा राज से ताल्लुक रखनेवालों का असर काफी था। एक और स्थान से हमारा साथ देने वाले के विरोध में राजके एक बड़े भक्त खड़े किये गए। लोकल बोर्ड के चेयरमैन के विरुद्ध एक और जमींदार खड़े कराये गए। इसतौर पर एक सब डिविजन में पाँच जगहों पर हमारा विरोध कराए जाने का प्रबंध हुआ।

मैं महाराज कुमार से मिला और उनसे पूछा कि मेरी मुखालफत क्यों की जा रही है। वे सीधे आदमी थे। उनका संबंध हमसे बराबर अच्छा ही रहता था। उन्होंने कहा कि कोई

वजह नहीं कि उनकी ओर से हमारा विरोध हो। वादा किया कि वे विंटल को बुलाकर कह देंगे कि मेरे खिलाफ कोई उम्मीद-वार न खड़ा किया जाय। पर यह सिर्फ दिखाने के लिये था। वे तो सहेद बीवोके असर में इतनी दूर चले गए थे कि जो कुछ वह चाहती उसके खिलाफ करने को उनकी हिम्मत न थी। श्रीवलींद्र से मैं मिला और उन्होंने अपना नाम हटा लेने के लिए दर्खास्त लिखकर मेरे हाथ में दे दिया। लोकल बोर्डके चेयरमैन के खिलाफ जो सज्जन खड़े थे उनको भी उम्मीदवारी से नाम हटा लेने के लिए राजी कर लिया। यह बात बहुत गुप्त रखी गयी थी, क्योंकि यह यदि जाहिर हो जाती तो विंटल बहुत जोर लगाते और उनको हटने नहीं देते। श्रीवलींद्र पर उनको पूरा विश्वास नहीं था, इसलिए अपने वकील श्रीसूर्यभानलाल को भी हमारे विरुद्ध खड़ा कराये हुए थे। आखिरी दिन श्रीसूर्य-भानलाल ने अपना नाम वापिस ले लिया, यह समझ कर कि श्रीवलींद्र तो मुझ से लड़ेगा ही। जब उनका नाम वापस हो गया तब श्रीवलींद्र की तरफ से रायसाहब लक्ष्मीनारायण वकील ने वापसी की दर्खास्त देदी। एस० डी० ओ० के लिए कोई चारा नहीं रहा। सारे शहर में सनसनी फैलगई। जब विंटल तक यह खबर पहुँची तब मारे क्रोध के वे लाल हो गए। पर वे कर ही क्या सकते थे। मैं इस तरह अपने चुनाव के झंझट से बचकर दूसरों की मदद के लिए आजाद होगया। विपक्षी इससे काफी हतोत्साह तथा चिंतित हुए।

डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का यह चुनाव इसलिए खास महत्त्व

इसपर दोनों दलों में तनातनी शुरू होने ही को थी कि मैं वहाँ पहुँच गया। लोगों को यह कह कर समझाया कि अगर जीतना चाहते हो तो गालियाँ सहन कर लो, और यदि सहने की शक्ति न हो तो विजय की आशा छोड़ दो। लोगों ने मेरी बातें मान लीं और सारी ताकत वोट दिलाने में ही लगा दी। यहाँ पर जो मैजिस्ट्रेट तैनात हुए थे, मेरे दोस्त थे। उनकी हरकत कुछ ऐसी हुई जिससे मुझे काफी ग्लानि सहनी पड़ी। ख़ैरियत थी की वहाँ के पोलिंग ऑफिसर गया कलक्टरेट के सुपरिंटेनडेंट थे और जार्ज चंदर के प्रभाव में आनेवाले नहीं थे। यदि पोलिंग ऑफिसर स्वतन्त्र विचार के व्यक्ति न होते तो इस मैजिस्ट्रेट की हरकत जैसी थी उससे वोटरों को वोट देने में काफी दिक्कत उठानी पड़ती। ये मैजिस्ट्रेट एक दूसरे चुनाव क्षेत्र में भी भेजे गए थे। वहाँ उनकी हरकत और भी बुरी तथा पक्षपात पूर्ण हुई। वहाँ से राज के एक तहसीलदार खड़े थे। ये छपरा जिले के रहनेवाले थे, पर गया में ही असहयोग के दिनों में पढ़ते थे। स्कूल छोड़ कर बहुत दिनों तक इन्होंने कांग्रेस का काम किया था और जब सिद्धि बाबू और गुप्तेश्वर बाबू टिकारी राज में सर्वेसर्वा थे तब इनकी बहाली तहसीलदारी में हुई थी। विटल साहब के जमाने में ये उनके प्रियपात्र हो गए थे। बोर्ड में प्रवेश करने की महत्त्वाकांक्षा भी इनके हृदय में जगी इन्होंने ही सारे सब-डिविजन के चुनाव का संगठन किया। वोट के दिन मैं चुनाव क्षेत्र में ही था। हमारे उम्मीदवार के वोटरों की तादाद कहीं ज्यादा थी। पहले तो वोटरों को भीतर जाने में रुकावट डाली गई क्योंकि वहाँ

र्टी साहब यहाँ भी मौजूद थे। उनकी हमदर्दी दूसरे पक्ष की
ओर रहती थी। जब इस तरह की रुकावट डाल कर भी विपक्षी
अपनी कामयाबी में रुकावट देखने लगे तब पहले के इशारे के
मुताबिक करीब तीन बजे दिन को राज के सिपाहियों ने आपस
में लाठियाँ टकराना शुरू कर दिया। लोगों में भगदड़ पड़ गई
और बहुत से राज की तरफ के वोटर घेरे के भीतर घुस आए।
मजिस्ट्रेट ने घेरे को बंद कर देने और अलावे वोटरों को भीतर
घुसने न देने की आज्ञा निकाली। हमारे बहुत से वोटर बाहर
ही रुक गए। जो राज के वोटर घेरे के अंदर प्रवेश कर गए थे
उनको वोट देने की इजाजत मिल गई। यह सरासर अन्याय था,
पर मैं जानता था कि मैं इसकी शिकायत कहाँ पहुँचाऊँ। जार्ज
चंदर (एस० डी० ओ०) सुनने वाले तो थे, पर कौन जानता है
कि उनके ही इशारे पर यह सब हो रहा हो। मैं चुप हो रहा और
वोटिंग खतम होते ही पटना चला आया। मैंने तब तक गया न
जाने का इरादा किया जब तक चुनाव का फल हमारे अनुकूल
होने की खबर न मिले। थोड़े दिनों के बाद ही वोटों की गिनती
हुई। चारों जगहों से हमारे उम्मीदवारों की जीत हुई। अपनी
हार से बिंदल साहब के ऊपर क्रोध और ईर्ष्या की गहरी छाप
पड़ गई। राज के जिन जिन असामियों ने हमारी मदद की थी
और जिन पर उनका शक था उनसे बदला लेने का भाव उनके
दिल में जग उठा। छोटे छोटे किसान तो मार पीट के शिकार
हुए, बड़े लोगों पर मुकदमाबाज़ी शुरू हुई। कितने लोगों को
मुसीबतें उठानी पड़ीं। जार्ज चंदर के एस० डी० ओ० रहते

किसी गरीब की सुनवाई विटल साहब के मुकाबिले में हो नहीं सकती थी। सारे सब डिविजन में राज के असामियों को, जिन्होंने हमारी मदद की थी, तरह तरह की मुसीबतें सहनी पड़ीं। यह शुद्ध प्रतिहिंसा थी।

२१

सारे सूबे में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का चुनाव १६२७ ई० के मध्य में हो गया। राजेंद्र बाबू का पत्र सब लोगों के पास पहुँचा कि चेयरमैन के लिए काँग्रेस की ओर से उम्मीदवार खड़े किए जाँय। जहाँ जहाँ हमारी ताकत थी वहाँ तो हम कामयाब हो सकते थे, पर सरकार के हाथ में एक चौथाई मेंबर नामज़द करने का अख्तियार था और सरकार का अर्थ था श्रीगणेशदत्त। मुजफ्फरपुर के चुनाव में मौलवी शफी की हार इस बार भी हुई। उनको हराने का श्रेय श्रीरामशंकर सिंह नामक एक वकील के हिस्से रहा और श्रीविंध्येश्वरीप्रसाद वर्मा हारे श्रीसरयूशरण सिंह से। इन दोनों हारों ने हमारी ताकत कमजोर कर दी और शफी साहब को काँग्रेस से अलग हटने में इस हार का बहुत बड़ा हिस्सा रहा। रामदयालु बाबू ने चेयरमैन होने से इनकार कर दिया और वह स्थान श्रीचंद्रेश्वरप्रसादनारायण सिंह को मिला। छपरे में काँग्रेसदल दो हिस्सों में बँट चुका था। वहाँ के चेयरमैन हुए श्री श्रीनंदनप्रसादनारायण सिंह शर्मा और वाइस चेयरमैन

दरभंगा जिला भी काँग्रेस के हाथ से निकल गया। वहाँ के चेयरमैन हुए श्रीमहेश्वरप्रसाद नारायण सिंह (चंद्रेश्वर बाबू के भाई)। श्रीगणेशदत्त की नीति करीब करीब बहुत जिलों में कामयाब हुई और उनके निकटवर्त्ती तथा सहायकों को काँग्रेस के खिलाफ करीब करीब सभी बोर्डों में नॉमिनेशन तथा दूसरे तरीके से मदद मिली। श्रीगणेशदत्त और काँग्रेस के बीच मनमुटाव काफी बढ़ गया था और परस्पर एक दूसरे को गिराने की अनवरत कोशिश शुरू हो गई थी।

अब रही गया बोर्ड की बात। अपने दल के बल पर तो मैं चेयरमैन नहीं हो सकता था। चुनाव खतम हो जाने पर मि० वेकफील्ड (मैनेजर टिकारी राज) ने मुझे मदद देने का वादा कर दिया। टिकारी राज के और और सब डिविजन से जो मेंबर चुने गए थे उनकी मदद भी हमें मिली। जितने मेंबर सरकार द्वारा नामजद हुए थे वे हमारे विरोधी हुए, क्योंकि जिनकी सलाह से श्रीगणेशदत्त ने नामजद किया था उन्होंने खूब ठोक पीट कर वैसे लोगों के नाम सुझाये थे। अमाँवा राज के तीन या चार मेंबर चुने गए थे। चुनाव का पलड़ा इस ओर या उस ओर कर देना उनके ही हाथ में था। जो लोग चुने गए थे वे हमारे सहायकों में से थे, पर राजा बहादुर का हुक्म क्या होता है, वे उसकी इंतजारी कर रहे थे। राजा बहादुर मँसूरी से ठीक उसी रात को लौटने वाले थे जिसके सबेरे चुनाव की तारीख थी। श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह मेरे विरोध में खड़े हुए। श्रीगणेशदत्त उनके कृतज्ञ थे अतएव उनकी सारी ताकत उनके ही पक्ष में रही।

अमाँवा राज पर भी उनका काफी असर था इसलिए आशा की जाती थी कि उनके आदमियों को रामेश्वर बाबू का ही पक्ष लेना पड़े। हाँ, अमाँवा के मैनेजर श्रीयमुनाप्रसाद सिंह जिन्होंने गत चुनाव में एक रोज में ही हमारे कितने मददगारों को विरोध में खड़ा करा दिया था, इस बार पूरी तरह मेरे पक्ष मे थे। दो एक राज के मेंबरों ने राजा बहादुर के हुक्म के खिलाफ भी, मुझे मदद देने का वचन दे दिया था। श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह चुनाव के कुछ दिन पहले मेरे ग्राम के मकान पर आए और मुझसे कहा कि चेयरमैन होने में मैं उनकी मदद करूँ। मैंने जवाब दिया अभी मैं इसके बारे में क्या कह सकता हूँ। गया चल कर ही इस पर बातें हो सकती हैं। अपने दल के लोगो से मुझे राय लेनी पड़ेगी। जैसा उनका विचार होगा वैसा ही मुझे करना पड़ेगा। इसके साथ ही मैं अपनी व्यक्तिगत सत्ता तो इस बात मे रखना नहीं, कांग्रेस जैसा मुझसे चाहेगी वैसा करा सकती है।

उसके बाद मैं गया पहुँचा। लोगों से बातें कीं। अपने सहायको ने चेयरमैन होने के लिए मुझ पर जोर लगाया। मैं चेयरमैन बनने के लिए इच्छा रखता ही था और विरोधियों ने अपनी करतूतों से मेरे अहंभाव को काफी जगा दिया था। वोट इकट्ठा करने की कोशिश शुरू हो गई। सब कुछ अमाँवा राजा पर ही निर्भर रह गया था। वायस-चेयरमैन के लिए उम्मीदवार थे श्रीभगवतीशरण सिंह (पीछे रायबहादुर)। अपने को ये जमींदारों के प्रतिनिधि कहा करते थे और बात करने में बहुत ही होशियार और चालाक थे। इन्होंने जो चिट्ठियां मेरे पास लिखीं

थीं उनसे उनकी अवसर-परायणता अच्छी तरह मालूम हो जाती थी।

राजा अमाँवा रातकी ट्रेन से करीब ६ बजे स्टेशन पर उतरे। दोनों दलों के प्रतिनिधि उनके निकट अपना अपना पैगाम लेकर हाजिर हुए। रामेश्वर बाबू स्वयं उनके पास गए और उनकी मदद चाही। राजा साहब ने कहा कि उनके आदमियों की हमदर्दी हमारे पक्ष में है। मुमकिन है कि उनके हुक्म का पालन न हो, इसलिए उन्होंने रामेश्वर बाबू को खड़ा होनेसे मना किया। हमारे पक्षके लोगों को अपनी ओर से मदद देने की बात कह सुनाई। रामेश्वर बाबू को मालूम हो गया कि अब उनके चुने जाने की कोई आशा नहीं है। अतएव जब वोट के लिए मिटिंग हुई तब उन्होंने अपना नाम उम्मीदवारी से वापस ले लिया। मैं सर्वसम्मति से चेयरमैन चुन लिया गया। श्रीभगवतीशरण सिंह तो भी वायसचेयरमैन के उम्मीदवार बने रहे, पर अंत में जोर लगाने पर सिद्धि बाबू को निर्विरोध वायसचेयरमैन बनने दिया।

२२

बोर्ड का चुनाव अनुकूल हो गया, किंतु झगड़े का दिन भी साथ ही साथ आरंभ हुआ। चुनाव के बाद मैं हसब मामूल श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह के डेरे पर गया, पर उनके चेहरे से क्रोध और द्वेषका भाव साफ साफ झलकता था। उस समय उन्होंने इतना ही कहा कि उनका बहुमत नहीं था इसलिए उनका

चेयरमैन नहीं होना ही ठीक था। कुछ दिनो के बाद जब वे अपनी जमींदारी में जो जमुई इलाके में है, गये थे तब शाह जुबैर साहब से कहा था कि देखियेगा, कुछ ही दिनों में गया बोर्ड में क्या क्या गुल खिलता है।

रामेश्वर बाबू की हार से श्रीगणेशदत्त बहुत घबडाए। रामेश्वर बाबू की हार को उन्होंने अपने व्यक्तित्व का पराजय माना। उनके क्रोध का शिकार मैं ही था। प्रतिहिंसा की भावना से मुझे परेशान और नीचा दिखाने के लिए तरह तरह के उपाय सोचे जाने लगे और जो संभव थे वे काम मे भी लाये जाने लगे। इस प्रकार की कुमन्त्रणाकी उड़ती-पुड़ती खबर जब तब मेरे कानों में भी पड जाती थी, पर वैसी खबरों का विरोध ही मैं क्या करता! अपने रास्ते पर मैं अपने ढंग से बोर्ड का संचालन कर रहा था। एक बार कुछ ऐसी दरखास्तें मेरे खिलाफ तथा बोर्ड के इतजाम के शिकायतो को लेकर लिखाई गईं जो बेनामी और अजनबी नामों से थीं। इन दरखास्तों की तहकीकात करने के लिए श्री गणेशदत्त ने सरकार की हैसियत से हुक्म निकाला। उनका सेक्रेटरी उन दिनों मि० ओवेन (Owen) था। वे दरखास्तें गयाके मैजिस्ट्रेट के पास भेज दी गई। मुझे इस बातकी कोई खबर न थी। कायदा तो यह था कि यदि चेयरमैन या वायस-चेयरमैन के विरुद्ध कोई शिकायत पहुँचे तो उसके बारे मे किसी भी तहकीकात के कबल जिनके विरुद्ध शिकायत हो उनसे जवाब तलब किया जाय। मुझे इसका पता तब लगा जब डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट ने सारी फाईल एस० डी० ओ० सदर के पास रिपोर्ट

के लिए भेजी। मैं एक दिन उनसे मिलने गया था और उन्होंने सारी फाईल मुझको पढ़ने के लिये दे दी। उसमें देखा कि एक डी० ओ० चिट्ठी श्रीगणेशदत्त ने अपने हाथ से कमिश्नर मि० हिकौक के नाम लिखी थी जिसमें यह लिखा था—"I attach very great importance to this enquiry" (मैं इस जाँच को बहुत महत्त्व देता हूँ) मंत्री-पद पर पहुँचे हुए व्यक्ति के पत्र का क्या असर मातहत लोगों पर हो सकता है, यह बात आसानी से कल्पना की जा सकती है। मि० हैकोक भले आदमी थे। उन्होंने डी० ओ० पत्र को भी फाईल में शामिल कर उसमें अपनी ओर से कुछ नहीं लिख कर डिस्ट्रिक्ट मेजिस्ट्रेट के पास भेज दिया था। गया के डिस्ट्रिक्ट मेजिस्ट्रेट थे मि० मिर्जा। हिंदुस्तानी अफसर अक्सर अपनी हीनताओं से घिरे रहते हैं। किसी बात को जबर्दस्त तरीके से करने की ताकत उनमें बहुत कम रहती है और जो प्राविंसियल सरविस में तरक्की पाकर जिलाधीश होते हैं उनपर तो इसकी छाप रहती ही है। श्रीगणेशदत्त को यह भी आशंका थी कि शायद हिंदुस्तानी जिला आफिसर मेरे खिलाफ कुछ लिखने की हिम्मत न करे। इसलिये उन्होंने चीफ सेक्रेटरी मि० हैलेट को इसके लिए एक खास अंग्रेज अफसर तैनात करने के लिए आग्रह किया। चीफ सेक्रेटरी ने इस सलाह को कबूल नहीं किया। लिख दिया कि जो कोई भी जिला आफिसर होगा हिंदुस्तानी या अंगरेज उसका विश्वास करना ही चाहिए। इस बात का पता मुझे बहुत पीछे लगा।

जिला मेजिस्ट्रेट के पास गवर्नमेंट से यह हिदायत आई

कि जिले भर में इस बात की मुनादी करा दी जाय कि जिस किसी को भी डिस्ट्रिक्ट बोर्डके मुतल्लिक शिकायत करनी हो वह नियत तिथि पर जिलाधीश के यहाँ हाजिर होवे और अपना बयान दे। प्रांत के इतिहास में यह पहला ही अवसर था जब गुमनाम व्यक्ति की शिकायत पर इस तरह का सरकारी हुक्म बोर्ड के अधिकारियों के खिलाफ तहकीकात करने के लिए निकाला हो। मेरी जहाँ तक जानकारी है, आज तक इसके सानी का कोई भी सरकारी हुक्म किसी भी शिकायत की जाँच के लिए कहीं भी नहीं निकला है। और शिकायत थी ही किस बातकी, चंद कुएँ चेयरमैन या वायसचेयरमैन के असर के गाँवों में बन गए हैं। कुछ सड़कें नई निकाली गई हैं जिनके ठीकेदार इन अफसरों के सरोकारी हैं। इसी तरह की शिकायतों की दरखास्तों पर तहकीकात होने जा रही थी। पीछे तो सब किसी को शिकायत करने की दावत दी गई। डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट से मेरी बातें हुई तो उन्होंने कहा कि यदि इस तरह पर उनके जैसे अफसरों के खिलाफ शिकायत करने का प्रोत्साहन मिले तो शायद उनको रहना मुश्किल हो जाय। पर जो कुछ हो सरकारी हुक्म था, उसका पालन करना उनका फर्ज था।

सरकारी हुक्म का पालन हुआ। जिले की सभी जगहों में मुनादी कराई गई। मैजिस्ट्रेट ने एक तिथि निश्चित कर दी उस दिन शिकायत करनेवालों को पहुँचना था। इस बात की खबर जब पटने पहुँची तब ब्रजकिशोर बाबू फौरन गया चले आए और यहाँ की सारी बातों से जानकारी करली। निश्चित तिथि

पर पटने से वकीलों को लाकर जो बयान दिया जाय उसके बिना पर बयान देने वालों का जिरह करना तै हुआ। यह पता आज तक ठीक तौर पर नहीं लगा कि इस षड्यंत्र में कौन कौन शामिल थे। हाँ श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह और उनके साथ अमीर हैदर का होना तथा अमीर हैदरके साथ चंद मुसलमान और हिंदू कर्मचारियों का मिल जाना तो साफ था। एक वकील श्रीसुरेंद्रदेव नारायण उर्फ पन्ना बाबू जिनके लिए किसी को गालियाँ दे देना कोई बड़ी बात न थी, शिखंडी बन कर आगे आए और मैजिस्ट्रेट के सामने उन्होंने अपना बयान दिया। ये श्रीबलदेव सहाय (मौजूदा ऐडवोकेट जेनरल) के एक बड़े दोस्तों में से थे, पर इस मामले में उनसे सलाह-मशविरा नहीं करते थे। जिस दिन उनका बयान हुआ उस दिन उनसे जिरह करने के लिए बलदेव बाबू ही आए। उन्होंने पन्ना बाबू को जिरह में तोड़ डाला और उनकी झूठी शिकायतों का पोल खोल डाला। कहने के लिए तो जिले के लोगों को दावत दी जा चुकी थी, पर असल मुद्दई वे ही लोग निकले जिनको गत डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चुनाव में शिकस्त खानी पड़ी थी। औरंगाबाद की तरफ से वही तहसीलदार साहब थे जिनकी हार एक क्षेत्र से हो चुकी थी और जो एक जमाने में असहयोगी थे। इन्होंने छिपे तौर पर एक दो आदमियों को मेरे खिलाफ गवाही देने को भेजा। एक या दो आदमी रामेश्वर बाबू के असर के आए। मैजिस्ट्रेट के इंतजार करते रहने पर भी कोई गवाह इनके अलावे हाजिर नहीं हुआ।

मैजिस्ट्रेट ने स्वयं जिले में घूम घूम कर भी तहकीकात की। हमारे सब-डिविजन (औरंगाबाद) मे जार्ज चंदर को साथ लेकर जगह जगह गए पर कोई ऐसी बात न मिली जिससे बोर्ड के बद-इंतजामी या हमारी गलतियों का सबूत मिलता। लाचार उन्होंने जो रिपोर्ट दी उससे श्रीगणेशदत्त का मकसद पूरा नहीं हुआ। कोई ऐसी बात रिपोर्ट में नहीं थी जिसकी वजह से बोर्ड ज़ब्त कर लिया जाता पर श्रीगणेशदत्त अपने धुनके पक्के थे। रामेश्वर बाबू उनको बराबर मेरे खिलाफ उभाड़ते रहते थे। पिछली प्रांतीय कौंसिल के चुनाव के समय अपनी जगह देकर उन्होंने श्रीगणेशदत्त के ऊपर एहसान का बोझ लादा वह इतना महत्त्व-पूर्ण था कि श्रीगणेशदत्त अपना सर ऊँचा न उठा सकें। चाहे नियम और न्याय कुछ भी कहें, वे पक्षपात की चरम सीमा तक जाने के लिए अपनी सारी सरकारी ताकत लगाकर तुले हुए थे।

२३

इस बीच में श्रीगणेशदत्त नई कौंसिल के डर से भी यह चाहते थे कि काँग्रेसवालों से सुलह हो जाय। उनका ख्याल था कि एक छोटी कमिटी बन जावे और उसकी सलाह से मिनिस्टर अपने काम चलावें। ब्रजकिशोर बाबू के पास ऐसा पैगाम आया और यह भी कहा गया कि यदि उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाय तो वे गया बोर्ड के खिलाफ जो तहकीकात करा रहे हैं उसे खतम कर दें। इससे इतना पता जरूर चल जाता है कि श्रीगणेशदत्त के दिमाग़ में काँग्रेस का विरोध अखर रहा था।

आगे इसका मुकाबला न करना पड़े, इससे बचने के लिए कुछ हद तक जाने को तैयार थे और मैं इसी विरोधात्मक भाव का शिकार बनाया जा रहा था। जब तक जाँच चलती रही सर सुलतान, मि० ख्वाजा नूर (पीछे सर), आदि बड़े लोगों द्वारा बड़े बड़े अफसरों के पास मेरी तथा बोर्ड की शिकायतें कराई जाती थीं। एक दिन राजा अमाँवा ने मुझसे कहलाया कि मैं कमिश्नर से मिल लूँ। श्रीगणेशदत्त से मिलना अब मेरे लिए असंभव था। मैं उनके कथनानुसार कमिश्नर से मिला। उन्होंने कहा कि मि० मिर्जा की रिपोर्ट आ गई है। हमारे हक में यह तहकीकात अच्छी ही हुई, क्योंकि जो शिकायतें की जाती थीं उनकी असलीयत का पता इस रिपोर्ट से चल गया। मुझे रिपोर्ट की एक कॉपी मिल गई थी और मुझे मालूम हो गया था कि श्रीगणेशदत्त को इस रिपोर्ट से कुछ ऐसी बातें नहीं मिलीं, जिनके बल पर मुझे सजा दे सकते। इसके बाद ही उन्होंने ब्रजकिशोर बाबू को यह भी कहला भिजवाया कि गया बोर्ड के खिलाफ जो कार्रवाई हो रही थी उसे स्थगित कर दिया गया।

सच्ची बातों का पता तो मुझे तब लगा जब सब कार्रवाई की एक छपी हुई प्रति मुझे मिली। सेक्रेट्रियेट के कुछ लोगों की हमदर्दी मेरे साथ थी और उनके द्वारा समय-समय पर वहाँ की कार्रवाइयों का पता मुझे मिला करता था। उसे पढ़ने से मालूम हुआ कि श्रीगणेशदत्त बोर्ड जब्त करने के लिए बड़े उत्सुक थे। पर जिला मेजिस्ट्रेट या कमिश्नर उसकी पुष्टि नहीं करते थे। उनका सेक्रेटरी भी पक्ष में नहीं था। इसलिए उन्होंने कुछ समय

के लिए इंतजार करना मुनासिब समझा। उस फाईल पर स्पेशल ऑडिट करने का हुक्म दे दिया और रिपोर्ट को पीछे पेश करने की आज्ञा निकाली।

इस बीच में हिंदू मुस्लिम तनातनी बढ़ती ही गई। अमीर हैदर प्रकट रूप से तो कुछ करता नहीं था, पर उस पर संदेह बढ़ता जाता था। उस समय एक और दिक्कत की बात यह हो गई कि सिद्धि बाबू और मैं दोनों, महीनों तक कौंसिल और एसेंबली की बैठकों के संबंध में दिल्ली और शिमला में रहने लगे। इस बीच षड्यंत्र करनेवालों को विशेष सुविधा प्राप्त हो गई और वे छिपे छिपे अपना दल बढ़ाने लगे। अमीर हैदर को डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर होने का हौसला था ही, श्रीपारसनाथ नाम के थर्ड क्लर्क को तरक्की दिलाने का लोभ दिया गया और यह मशहूर कर दिया गया कि बोर्ड तो अब जब्त हो ही जायगा। स्पेशल ऑडिट के लिए ऑडिटर पहुँच गये थे। उनके यहाँ डालियाँ लगाई जाती थीं। सब तरह की सिफारिशें पहुँचने लगी थीं। मुझे इन बातों की ज्यादा खबर उन दिनों नहीं रहती थी।

डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर की बहाली के लिए विज्ञप्ति निकल चुकी थी। दरखास्तें भी आने लगी थीं। श्रीएस० के० पी० सिन्हा पटना बोर्ड के डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर थे। श्रीरजनधारी सिंह से उनकी नहीं पटने लगी, कारण दोनों के दिल नहीं मिलते थे। सिन्हा का ख्याल था कि उनको स्वतंत्ररूप से काम करने दिया जाय, पर रजनधारी बाबू अपनी नीति के अनुसार काम चलाना

चाहते थे। उनकी ख्वाहिश इंजिनियर को हटा देने की थी। श्रीगणेशदत्त के राज में ऐसा करना उनके लिए कोई मुश्किल बात न थी। पर सिन्हा की भी पहुँच बड़े-बड़े लोगों तक थी। इससे कोई काम उनके खिलाफ करने के पहले काफी मसाला इकट्ठा कर लेना जरूरी था। जब तक मुझसे और श्रीगणेशदत्त से स्पष्ट विरोध न हो गया तब तक मेरी पहुँच उन तक थी। डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर की बहाली के संबंध में श्रीरामेश्वर प्रसाद सिंह उनके यहाँ गए थे और अमीर हैदर को बहाल करने के लिए मुझ पर जोर लगाने को कह आए थे। एक दिन रात को दस बजे जब मैं पटने में था तब श्रीगणेशदत्त ने मुझे बुला भेजा। मैं गया। उन्होंने सलाह दी कि श्रीएस० के० पी० सिन्हा को अपने बोर्ड में न रक्खूँ। मेरा ख्याल उनसे मिलता था। मैंने वादा किया कि ऐसा ही करूँगा, साथ ही मैंने उनसे यह भी कहा कि रामेश्वर बाबू को अमीर हैदर का पक्ष लेने से भी रोक दें। उन्होंने मेरे साथ इत्तफाक जाहिर किया, पर अहसान का बदला कैसे चुकाते। मैं अमीर हैदर का डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर बनाये जाने का विरोध करता था, पर मुझे उससे कुछ दुश्मनी नहीं थी। बहुत कोशिश करके भी वह मुझे अपने चक्र में न ला सका था। सिद्धि बाबू को खुश करने के लिए वह क्या नहीं करता, कहाँ तक न चला जा सकता था, पर उनपर भी जो रंग चढ़ा हुआ था उससे उनको अलग करना नामुमकिन था। अंततः वह रामेश्वर बाबू, सर सुल्तान, सर ख्वाजा नूर आदि की ही शरण जाने में अपनी भलाई देखता था।

यह कहना तो मैं भूल ही गया कि कौंसिल की बैठक जब पहले पहल हुई तब हमारी पार्टी की तरफ से प्रेसिडेंट के लिए उमीदवार खड़ा करने का प्रयत्न हुआ। श्रीरामदयालु सिंह और श्रीनिरसुनारायण सिंह मे प्रतियोगिता थी और स्वतन्त्र दल तथा सरकार की ओर से सर ख्वाजा मुहम्मद नूर का नाम पेश होने वाला था। ख्वाजा साहब हमलोगों के पास आए भी और निर्विरोध चुन लिए जाने के ख्याल से हमलोगों की मदद माँगी। उन्हों ने यहाँ तक विश्वास दिलाने की कोशिश की कि उनका रुख कांग्रेस के प्रति बिलकुल ठीक और मुनासिब रहेगा। पर हमलोगों ने उनके प्रस्ताव को कबूल नहीं किया। आपस में भी वाद विवाद के पश्चात निरसू बाबू का नाम प्रेसिडेंट के लिए पेश करने को तय हुआ। अमाँवा राज की ओर से पैगाम आया कि यदि रामदयालु बाबू उमीदवार हों तो उनके चुने जाने की विशेष संभावना हो सकती है। शायद श्रीगणेशदत्त की तरफ से ही यह इशारा हुआ था। पर बात तो यह थी कि न रामदयालु बाबू और न निरसू बाबू ही चुने जा सकते थे, और जिन लोगों ने ऐसा संदेशा भिजवाया था उनका मकसद हमारे बीच आपस का मनमुटाव बढ़ाने का ही रहा होगा। निरसू बाबू श्रीगणेशदत्त के कट्टर विरोधी थे और बराबर रहे। कौंसिल में भी उनका भाषण श्रीगणेशदत्त के विरुद्ध कटुतापूर्ण हुआ करता। आगे चल कर तो निरसू बाबू से भी कांग्रेस पार्टी की नहीं पटी और कुछ दिनों के बाद वे कांग्रेस से खुल्लम खुल्ला अलग हो गए। शफी साहब अब तक तो हमारा साथ देते रहे बावजूद

[उ]नको डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चुनाव में हार जाने का भारी सदमा [प]हुँचा था। नेहरू रिपोर्ट लेकर जब मौलाना मुहम्मदअली और शौकतअली को कुछ नाइत्तफाकी होने लगी तब शफी [स]ाहब भी उनके साथ हो गए और पीछे मुस्लिम विरोध के एक जबर्दस्त हामी बन कर नेहरू रिपोर्ट की मुखालफत करना शुरू कर देया। मुसलमानों को काँग्रेस के विरोध में खड़ा करने का काम भी [उ]नके द्वारा होने लगा, पर १६२८—२६ ई० में उनकी कोई कार्रवाई ऐसी नहीं हुई जो स्पष्ट रूप से काँग्रेस के विरोध में हो।

छठा अध्याय

१

राजनैतिक क्षेत्र में हिंदू-मुस्लिम समस्या विकटतर होती जाती रही। हरिजन समस्या भी नये सिरे से उठ खड़ी हुई थी। महात्माजी का दौरा सारे देश में हो रहा था। इसी समय वाइकोम (ट्रावनकोर स्टेट) में हरिजनों के अधिकार को लेकर सत्याग्रह छिड़ गया था। वहाँ की सड़कों पर हरिजनों के चलने की प्रथा नहीं थी। इसके खिलाफ आंदोलन चला और जब [र]ाज के अधिकारियों की मदद से हरिजनों का चलना उस रास्ते से रोका जाने लगा तब सत्याग्रह छेड़ा गया। बहुत दिनों तक यह चलता रहा। बहुत कष्ट सहन करने के बाद सत्याग्रहियों को सफलता मिली।

इसी साल मद्रास में काँग्रेस का अधिवेशन डाक्टर अंसारी की सदारत में हुआ। श्रीजवाहरलाल और श्रीमती एनीबीसेंट का नाम इस लिए उल्लेखनीय है कि उन दोनों ने स्वतंत्रता वाले प्रस्ताव को कबूल करने में काफी हिस्सा लिया था। श्री श्रीनिवास आयंगर ने भी काँग्रेस का ध्येय स्वतंत्रता प्राप्त करना है इस पर बहुत जोर दिया था और जब यह प्रस्ताव स्वीकृत हो गया तब वे ऐसा कहते सुने गए थे कि उनका काम अब खतम हो गया। काँग्रेसवालों को इस ध्येय को प्राप्त करने के लिए आइंदे कोशिश करते रहना चाहिए। मैं इस अधिवेशन में शरीक हुआ था। राजेंद्र बाबू ने स्वतंत्रता के प्रस्ताव का जोरों से विरोध करते हुए कहा था—We shall make ourselves laughing stock to the four corners of the world.—(हम लोग संसार के चारो कोने में अपने को हास्यास्पद बना लेंगे)। श्रीजवाहरलाल नेहरू ने इसका जवाब देते हुए कहा कि राजेंद्र बाबू हिंदुस्तान से बाहर तो गए ही नहीं, संसार के कोने कोने की बात क्या करते हैं। हम लोगों को श्रीजवाहरलाल की तानाभरी बातें पसंद नहीं आई। प्रस्ताव पास हो गया। महात्मा जी की गैरहाजिरी में प्रस्ताव पास होने पर भी उन्होंने इस प्रस्ताव को उतना ही महत्त्व दिया जितना काँग्रेस के किसी भी प्रस्ताव को दिया जा सकता है।

इस समय सर्वदल सम्मेलन चल रहा था। श्रीमोतीलाल के नाम पर इस कमिटी की रिपोर्ट नेहरू रिपोर्ट कहलाई। इसमें

डोमिनियन-स्टेटस के आधार पर देश का संगठन करने के विधान पर जोर दिया गया था।

इसी समय नवंबर में महात्मा जी तथा दूसरे नेताओं को लार्ड इरविन के यहाँ से बुलाहट आई। दक्षिण भारत की यात्रा स्थगित कर महात्माजी लार्ड इरविन से मिलने गए। वायसराय ने महात्माजी से हिंदुस्तान की राजनैतिक समस्यायों की जाँच के लिए ब्रिटिश सरकार की ओर से बनाई गई साइमन कमीशन की बात की। इस कमीशन में केवल गोरे-ही-गोरे थे। एक भी हिंदुस्तानी शामिल नहीं किया गया था। काँग्रेस की दृष्टि में यह कोई महत्वपूर्ण बात नहीं थी। इतनी सी बात के लिए महात्माजी को दिल्ली बुलाने का कष्ट दिया गया। इससे उनको असंतोष ही हुआ। साइमन कमीशन की घोषणा बाजाप्ते कर दी गई। संपूर्ण देश में इस कमीशन का विरोध होना शुरू हो गया। नरम दलवालों को भी इस कमीशन में हिंदुस्तानियों को जगह नहीं दी जाने के कारण क्षोभ था और काँग्रेसवाले तो ऐसी कमीशन चाहते ही नहीं थे। इसलिए उनका विरोध तो बहुत दूर तक चला जाता था। विरोध दोनों दलों की ओर से होने के कारण देश में एक विचित्र वायुमंडल तैयार हो गया था। पटने में सर अली इमाम ने प्रांत के प्रमुख लोगों की एक सभा बुला कर एक विरोध जनक प्रस्ताव पर सबसे दस्तखत कराई और उसे वायसराय के पास भेज दिया। हमलोगों के अगुआ थे ब्रजकिशोर बाबू। जो बयान निकाला जाने को था उसमें, हिंदुस्तानियों को

कमीशन में जगह नहीं दी गई, इसी पर ज़ोर था, पर हमारी ओर से तो कमीशन की ही मुख़ालफ़त की जाने की बात थी इससे व्रजकिशोर बाबू ने अपनी ओर से इसी आशय का संशोधन पेश किया।

देश में इस साइमन कमीशन के विरुद्ध आंदोलन बढ़ने लगा। सभाएँ और हड़ताल द्वारा अपनी नाराजगी जाहिर करने का काम शुरू हो गया। इसको देशव्यापी आंदोलन का रूप दिया जाने लगा। कितने वर्षों की शिथिलता के बाद 'साइमन कमीशन बहिस्कार' से देश मे जागृति का सचार होने लगा। हिंदू-मुसलमान, नरम और गरम दल सबको एक ही मंच पर शामिल होने का अवसर मिला। देश के हित में इस वायुमंडल ने पारस्परिक वैमनस्य को हटाने मे बहुत बड़ी मदद पहुँचाई।

१६२८ ई० के आरंभ से ही साइमन विरोध का नारा बुलंद होने लगा। जहाँ जहाँ कमीशन जाती थी उसका बहिस्कार किया जाता था तथा उसके आगमन के विरोध में बहुत बड़ा प्रदर्शन होता था। लाहौर में जब कमीशन पहुँची तब उसके विरोध प्रदर्शन के लिए जो जमात स्टेशन पर इकट्ठी हुई उसका नेतृत्व लाला लाजपतराय ने किया था। एक अंग्रेज अफ्सर ने भीड़ के ऊपर लाठियाँ चलाने का हुक्म दिया और स्वयं लालाजी को मारा। लालाजी की छाती पर चोट लगी। उन दिनों लालाजी अस्वस्थ रहते थे, पर विरोध प्रदर्शन मे शामिल होना अपना कर्त्तव्य समझ कर अस्वस्थता की

अवस्था में भी वे स्टेशन पहुँचे थे। लाठी की चोट से तत्काल तो कुछ हानि नहीं मालूम पड़ी, पर मर्म की चोट उनके लिए केवल कष्टदायक ही नहीं, प्रत्युत् उनकी मृत्यु का मुख्य कारण भी समझी गई। इस घटना ने कितने नवयुवकों के दिल में बदला का भाव पैदा कर दिया और लालाजी के घातक को कुछ ही दिनों के बाद किसी नवजवान के हाथ से मृत्युग्रस्त होना पड़ा। पंजाब में इस समय काफी सनसनी फैल रही थी और दो एक मामले ऐसे हुए जिनसे क्रांतिकारियों की बढ़ती हुई कार्रवाइयों का लोगों को परिचय मिला।

लाहौर के अलावा जब कमीशन का आगमन लखनऊ में हुआ तब वहाँ भी उसके विरोध में विराट प्रदर्शन किया गया। श्रीजवाहरलाल नेहरू वहाँ मौजूद थे। पुलिस ने लाठियाँ चलाईं। नेहरूजी को भी चोट आई। लोगों में अपार उत्साह था और पुलिस की लाठियाँ खाकर भी उनमें जोश की कमी नहीं हुई।

साइमन कमीशन का बॉयकाट पटने में भी खूब उत्साह के साथ किया गया। प्रांतीय राजनैतिक सम्मेलन का एक विशेष अधिवेशन गुलाबबाग पटना में हुआ। मैं ही उसका सभापति चुना गया था। श्रीसच्चिदानंद सिन्हा का राजनैतिक सम्मेलन में कांग्रेस के साथ शामिल होना इस बात का सबूत है कि साइमन कमीशन के आगमन ने हम लोगों के मतभेद को बहुत अंश में दूर कर दिया था। प्रांतीय सम्मेलन की जिस दिन बैठक हुई थी

उसके दूसरे दिन प्रातःकाल ही साइमनसाहब और उनके साथियों का आगमन पटने में होने वाला था। सरकार की तरफ से उनके स्वागत के लिए कोशिश हो रही थी। कांग्रेस की ओर से उनके आगमन के बहिष्कार की तैयारी चल रही थी। शहर में उस दिन जबर्दस्त हड़ताल कराने का प्रोग्राम था। सुबह में हम लोग स्टेशन पर उनके आगमन के विरोध में प्रदर्शन करने वाले थे। किसी तरह की गड़बड़ी न होने पाये इस गरज से पुलिस के आइ० जी० मि० स्वेन ने पहले ही परस्पर बातचीत कर निश्चय कर लिया था कि कांग्रेस का जत्था हार्डिंज पार्क में रेलिंग के पीछे खड़ा होकर जो कुछ प्रदर्शन करना चाहेगा करेगा। कमीशन के मेम्बरों को उतारने के लिए पटना स्टेशन का जो खास प्लैटफार्म हार्डिंज पार्क के सामने है वहीं प्रबंध हुआ। साइमन कमीशन के पीछे पीछे दौरे में एक हिंदुस्तानी कमिटी भी रहती थी जो सरकार ने देश के भीषण वायुमंडल को देख कर बनाई थी। हम लोगों को दोनों कमिटियों का बहिष्कार करना था। अतएव जब तक दोनों तरह के मेम्बरों का प्रस्थान स्टेशन से न हो जाता, सारी जमात को अपने स्थान पर खड़ा रहना था। हम लोग सब डटे रहे। साइमन कमीशन के बहिष्कार में लोगों के उत्साह का कुछ ठिकाना न रहा। पटना शहर ही क्यों, प्रान्त के कोने कोने से प्रतिनिधियों का जमघट हो गया था। दो बजे रात से ही सारे शहर में नारे लगने शुरू हो गए थे। क्या छोटा क्या बड़ा सबके मुंह से "उठो नौजवानों सवेरा हुआ, "साइमन

भगाने का बेरा हुआ" के नारे सुन पड़ते थे और जो जहाँ था वहीं से झंडा हाथ में लिए स्टेशन पहुँचा था। वहाँ "साइमन गो-बैक" के नारे से सारा हार्डिंज पार्क गूंज उठा। छः बजते बजते पार्क के कोने कोने में लोग ठसाठस भर गए। स्वागत करने वालों की एक छोटी सी टोली जिसमें कुछ राजे महराजे के अलावे सरकारी अफसरों का जमाव था हमारे सामने के एक छोटे से स्थान में खड़ी थी। जो कोई इन दोनो जमातों को देखता था समझ लेता था कि कौन जमात क्या है। पुलिस और मिलिटरी का भी काफी प्रदर्शन हो रहा था। कांग्रेस के सभी नेतागण, राजेंद्र बाबू, ब्रजकिशोर बाबू, रामदयालु बाबू, श्रीबाबू आदि ठीक रेलिंग से सटे हुए भीड़ के आगे खड़े थे। कमीशन का स्पेशल आ गया था, पर सुबह होने के पहले जाड़े के दिनों में उनका निकलना तकलीफदेह होता, इसलिए आठ बजते बजते सभी मेंबर एक एक कर बाहर निकले और खास स्थान पर चले गए। सब कुछ शांति के साथ निभ गया। लाहौर और लखनऊ का दृश्य पटने में नहीं हो पाया। लोगों की भीड़ का अंदाजा पचास हजार तक का था।

२

कांग्रेसका अधिवेशन इस साल कलकत्ते में श्रीमोतीलाल नेहरू के सभापतित्व में हुआ। हमलोग प्रतिनिधि होकर वहाँ गए। श्रीसुभाषचंद्र बोस स्वयंसेवकों के प्रधान थे। बिहार

प्रांतके संबंध में कुछ ऐसा अवांछनीय उल्लेख किया गया जो हमारे प्रांतकी मर्यादा पर आघात पहुँचाने वाला था। हमसब को यह बुरा लगा। इसपर हमलोगों ने फैसला किया कि कांग्रेस अधिवेशन में हमलोग शामिल नहीं होंगे। ठाकुर रामनंदनसिंह इस निश्चय को तोड़ने का संकल्प कर, तीन चार साथियों को ले कांग्रेस अधिवेशन में चले गए। लोगोंको उनकी इस हरकत पर क्षोभ हुआ और कितने लोग तो क्रुद्ध भी हुए। डाक्टर विधानचंद्र रायने पीछे आकर हमारी शिकायत जब दूर करदी, तब प्रांतके सब लोग बैठक में शामिल हुए। उस अधिवेशन में मार्के की एक बात यह हुई कि मजदूरों के एक बड़े जुलूसने कांग्रेस में जबर्दस्ती प्रवेश करना चाहा। स्वयं-सेवकों से मारपीट भी हो गई। पीछे महात्माजी की सलाह से प्रेसिडेंट ने जुलूस को भीतर आने की इजाजत दे दी और जब वे वापस चले गए तभी कांग्रेस की कार्यवाही शुरू हो सकी। उस जुलूस के नेतृत्व करनेवालों में हमारे प्रांतके श्रीदेवकीप्रसाद सिंह अग्रगण्य थे। श्रीमोतीलालजी के साथ सेंट्रल एसेंबली में काम करने से उनके प्रियपात्र भी थे। उससे भी उनकी हिम्मत बढ़ी हुई थी। स्वतंत्रता के प्रस्ताव पर गरमा-गरम बहस हुई। नेहरू रिपोर्ट इस शर्त पर स्वीकार की गई कि यदि एक साल के अंदर ब्रिटिश सरकार इसे कबूल करले और उसके मुताबिक विधान बना दे तो ठीक है, नहीं तो १९३० ई० के आरंभ से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए कांग्रेस उचित उपाय का अवलंबन

करे और नेहरू रिपोर्ट रद्द समझी जाय। श्रीमोतीलाल और श्रीजवाहरलालजी दोनों पिता-पुत्र ही इस काँग्रेस में ज्यादा से ज्यादा हिस्सा लेनेवालों में से थे और दोनों के मनोभाव में कितना अंतर था इसका प्रदर्शन नहीं हुआ।

४

१६२८ ई॰ का अंत हो चला। इस बीचमें गया बोर्ड को लेकर मुझे जो मानसिक वेदना उठानी पड़ी उसका जिक्र भी इस स्थान पर कर देना चाहता हूँ। सर गणेशदत्त ने काँग्रेस के साथ एक प्रकार का मेल करना चाहा था और ब्रजकिशोर बाबू के पास इस आशय का पैगाम भी भेजवाया था। गया बोर्ड को तोड़ने की उनकी इच्छा की पूर्त्ति भी जिला मैजिस्ट्रेट की रिपोर्ट के बाद पूरी नहीं हो सकती थी, पर उनकी आंतरिक अभिलाषा श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह को चेयरमैन बनाने की थी और उसे पूरा करने का कोई उपाय बोर्ड को तोड़े बिना नहीं था। अतएव इस ओर उनका प्रयत्न जारी रहा। और बावजूद मेल के पैगाम का कोई ऐसा निश्चय नहीं किया जा सका जिससे सचमुच में सुलह हो सकती। बात यह थी कि सर गणेश दिल से सुलह चाहते भी नहीं थे और काँग्रेसपार्टी अपनी हस्ती को खतम कर उनको खुश भी नहीं कर सकती थी।

आखिर में श्रीगणेशने स्पेशल औडिट का हुक्म दिया। यह आर्डर गोपनीय (Confidential) था, इसलिये इसका

अर्थ हमें उस समय पूरा पूरा समझ में नहीं आया। मैं साबिक दस्तूर दिल्ली और शिमला की सफर करता रहा। हाँ, इसवार दिल्ली से एक दो मरतबे बीच में वापस आकर बोर्ड के कामों का इंतजाम भी करता रहा। आपस की खींचतान बढ़ती ही गई। हमारे विरोधी दल ने ऑडिटर को प्रसन्न करने और उनसे अपने अनुकूल रिपोर्ट दिलाने का भरपूर प्रयत्न किया। मिनिस्टर की इच्छा जानने के बाद ऑडिटर को उसे पूरा करना जरूरी था। उनका हिसाब जाँचने का काम उसी तरह से चलने लगा।

नियम के मुताबिक बोर्ड की आमदनी का चिट्ठा डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के यहाँ से सलाना बजट बनाने के पहले आता थो। उसी के आधार पर आय का बजट बनता था। उस साल जो तखमीना कलक्टर के यहाँ से आया उसके मुताबिक बजट तो बन गया, पर वसूली में दो लाख की कमी हो गई। खर्चे का बजट इसी आय के आधार पर बना था। अतएव जब साल के अंत में आमदनी में दो लाख की कमी हो गई और खर्चा ज्यों का त्यों रहा तो बोर्ड की स्थिति भयानक हो गई। जैसे ही इसकी खबर मुझे मिली फौरन बहुत से खर्चे को मैंने रोक दिया और एक रिट्रेंचमेंट कमिटी बनाई जिसके जरिए बोर्ड के खर्च में जिस जिस मद में कमी की जा सकती थी उस पर विचार करना चाहा। कमिटी समय समय पर बैठती रही और अपनी रिपोर्ट के लिए मसाला इकट्ठा करती रही। डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर के मुशहरे में कमी करने तथा असिस्टेंट इंजिनियर की जगह उठा देने की

ओर भी उसका ध्यान था। कुछ उपाय तो तत्काल कर लिए गए। पचास हजार के कर्ज के लिए सरकार से प्रार्थना की गई और उस रुपये के जल्द मिल जाने के लिए लिखा पढ़ी भी की गई, पर सर गणेश का कोप तो इस समय इस हद तक पहुँच गया था कि उन्होंने बजट पासशुदा कर्ज के रुपये को भी देने का हुक्म नहीं दिया।

डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर की बहाली जरूरी हो गई। कितने उमीदवार मैदान में आ गए थे। श्रीएस० के० पी० सिन्हा की उमीदवारी के बारे में सर गणेश का जो हुक्म हुआ था उसका जिक्र पहले किया जा चुका है। उस समय उनके साथ मेरा सद्भाव का व्यवहार था। जिस समय इंजिनियर की बहाली हुई उस समय मुझसे उनसे खुल्लमखुल्ला लड़ाई चल रही थी। स्थानीय प्रभावशाली लोगों की हमदर्दी सिन्हा के साथ थी। अमीर हैदर के लिए जो लोग कोशिश करते थे उनके रास्ते में एक दिक्कत पैदा हो गई थी। सरकार ने नियुक्ति के उपयुक्त जो योग्यता चाही थी। उसके मुताबिक अमीर हैदर डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर नहीं बनाए जा सकते थे, पर उसकी अयोग्यता को दूर कर देने का अधिकार भी तो सर गणेश के ही हाथ में था और सर गणेश गया बोर्ड के संबंध में श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह के कहने मुताबिक चलते ही थे। इसलिए इस बुनियाद पर भी अमीर हैदर की बहाली के लिए कोशिशें होती रहीं। सर गणेश ने कमिश्नर से यह भी कहलाया कि सिन्हा को बहाल करने के पहले बोर्ड को उनके गोपनीय

कागज पत्रों से वाकफियत करा देना मुनासिब है। कमिश्नर ने उन कागजों को हमारे पास भेज दिया और सिर्फ मेंबरों तक ही उनकी जानकारी कराने का आदेश दिया। उनके आज्ञानुसार बोर्ड की एक स्पेशल बैठक हुई और उसमें जो कुछ लिखा था वह मेंबरों को पढ़ कर सुना दिया गया। उसमें कोई ऐसी बात न थी कि जिससे सिन्हा की बहाली में कोई अड़चन पैदा हो। मेंबरों की भी यही राय रही। पर मैं सिन्हा को बराबर समझाता रहा कि उनके लिए इस बोर्ड में आना ठीक नहीं होगा। जिले के निवासी होने की हैसियत से उनका संबंध यहाँ के कई तरह के लोगो से रहेगा जिनसे उनके काम में दिक्कतें आ सकती हैं। साथ ही उन्होंने अपनी चावल की मिल बैठाई थी। उन्होने मेरी एक न सुनी और सिद्धि बाबू तथा दूसरे मेंबरों के जरिये मुझ पर जोर लगाया। उनकी बहाली हो गई। सर गणेश के क्रोध का पारा चरम सीमा तक पहुँच गया। मैं भी अपने वायदे पर कायम नहीं रह सका। मेंबरों का रुख इस तरह बदला कि मुझे लाचार होकर उनकी इच्छा की पूर्त्ति करनी ही पड़ी। श्रीएस० के० पी० सिन्हा इंजिनियर बहाल हुए, पर उनको खतम करने का बीज भी उसी दिन से पड़ गया। जिन कारणों से मैं उन्हें गया बोर्ड में आने से रोकता था वे ही आगे चल कर उनकी बरखास्तगी के कारण भी हुए।

५

१९२८ ई० मेरे लिए अच्छा नहीं गुजरा। बोर्ड में विपक्षी

दल की ओर से कुछ न कुछ परेशानी लाने वाली बातें होती रहीं। लाट साहब गया में आने वाले थे और बोर्ड की ओर से उन्हें मानपत्र देने की तैयारी हो रही थी। इसी बीच में ऑडिटर की स्पेशल ऑडिट रिपोर्ट सरकार तक पहुँच गई थी। उसकी एक कापी नियमानुसार मुझे भी मिली। मैं उन दिनों कौंसिल आफ स्टेट की बैठक में शिमले में था। कायदा यह था कि कैसा भी रिपोर्ट सरकार के पास पहुँचे उस पर बोर्ड से कैफियत माँगा जाना अनिवार्य समझा जाता था। कलक्टर और कमिश्नर की रिपोर्ट भी ले लेना मुनासिब था। पर हमारे बोर्ड के संबंध में इस नियम का पालन करना जरूरी नहीं समझा गया। रिपोर्ट पहुँचने के कुछ दिनों के अंदर ही सरकारकी विज्ञप्ति निकली कि दशहरा की छुट्टियों के बादसे बोर्ड जब्त कर लिया जायगा। ऐसा करने का मुख्य कारण ऑडिटर की स्पेशल रिपोर्ट बताया गया था। कलक्टर ने इस विज्ञप्ति के बाद, बोर्डका मानपत्र के बारे में क्या रुख होगा, दरियाफ्त किया। मैंने शीघ्र ही बोर्ड की एक विशेष बैठक बुलाई और सरकारी विज्ञप्ति को उसके सामने रखा। मानपत्र के बारेमें अपना रुख निर्धारित करने के लिए बोर्ड से आग्रह किया। इसमें विपक्षीदल के लोग शामिल नहीं हुए पर सरकारी अफसर कम से कम दो तो जरूर शामिल थे। उनकी हमदर्दी सोलह आना मेरे साथ थी, पर वे अपनी राय जाहिर करने से लाचार थे।

बोर्ड की मीटिंग काफी जोरदार हुई और सरकार के एक-

नरका हुक्म निकालने पर विरोध प्रकट किया गया। कड़े शब्दों में सरकार की नीति की निंदा की गई। श्रीयमुनाप्रसाद सिंह उस समय बोर्ड के सदस्य थे। वे सर गणेश के निकट संबंधी होते थे और उनके यहाँ रह कर ही उन्होंने तालीम पाई थी। उन्हीं ने भी सरकार की इस नीति की घोर निंदा की। मैं उनका बड़ा अनुगृहीत हुआ। मानपत्र का प्रस्ताव रद कर दिया गया और बोर्ड के मेंबरों ने चेयरमैन तथा वायसचेयरमैन के प्रति विश्वास का प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किया।

बोर्ड जब्त करने की घोषणा अखबारों में छप गई। प्रान्त में एक तरह का तहलका मच गया। सर गणेश के दोस्तों ने संतोष प्रकट किया, पर बहुमत ने उनकी इस कार्रवाई से नाराजगी दिखलाई। जिस रोज सरकारी विज्ञप्ति निकली उस दिन मैंने औडिट रिपोर्ट की गलतियाँ सर्चलाईट में छपवाई। गलतियाँ बहुत भद्दी थीं। कारण सरकार को यह साबित करना था कि बोर्ड के ऊपर कर्ज की इतनी रकम हो गई कि बोर्ड का संचालन करना सरकारी मदद के बिना असंभव है। बात सच्ची यह थी कि हैलेट साहब ने कलक्टर की हैसियत से जो आय का लेखा भेजा था उसमें दो लाख की वसूली नहीं हुई, और जो पचास हजार का कर्ज मंजूर हुआ था उसे सर गणेश ने देने से रोक दिया। औडिटर ने लाख लाख रुपये की रकम दो बार लिख कर आँकड़े को बहुत बढ़ाकर, छः लाख तक पहुँचा दिया था। रिपोर्ट पढ़ने से ही यह गलती

मालूम हो जाती थी और जैसे ही मैंने अखबारों में इसे छपाया सरकार को भी अपनी भूल मालूम पड़ी और इस गलती को कौंसिल की बैठक में सरकार ने अगले सेशन में अविश्वास के प्रस्ताव पर वाद-विवाद होते समय कबूल भी किया।

आंदोलन शुरू हुआ। लोकल-बडीज कांफ्रेंस गया में ही बुलाई गई। उसमें औडिट रिपोर्ट पर विचार हुआ और श्रीरामदयालु सिंह ने उसकी बड़ी आलोचना की और उसकी भूलें सबके सामने दिखलाई। एक कड़े प्रस्ताव द्वारा सरकार की इस हरकत की निंदा की गई और दिखलाया गया कि साइमन कमीशन के सामने हिंदुस्तानियों की अयोग्यता साबित करने की यह सरकार की हरकत सरासर बेजा और अनुचित हुई। साथ ही गया शहर में एक जबर्दस्त आमसभा हुई जिसमें राजेंद्र बाबू ने ओजपूर्ण भाषण में सरकार को निंदा की और सर गणेश के कामों की तुलना जयचंद और मीरजाफर से की। सर गणेश को यह बुरा लगा और इसकी शिकायत उन्होंने राजेंद्र बाबू के पास पीछे कराई थी।

प्रांतीय राजनैतिक सम्मेलन की एक विशेष बैठक पटने में बुलाई गई। सरकार की तलवार का शिकार मैं हो चुका था। इसलिए इस विशेष बैठक का सभापति मैं ही चुना गया। और जैसा पहले लिख चुका हूँ श्रीसच्चिदानंद सिन्हा स्वागत समिति के अध्यक्ष बनाए गए। सम्मेलन गुलाबबाग में हुआ। सभी जिलों से प्रतिनिधियों की संख्या यथेष्ट मात्रा में पहुँची

थी। साइमन कमीशन के विरोध तथा अन्य जरूरी प्रस्तावों के बाद गया बोर्ड को जब्त करने के निमित्त सरकार की निंदा का प्रस्ताव पेश हुआ। मैं ने सभापति का आसन छोड़ दिया और श्रीदीपनारायण सिंह को उतने वक्त के लिए सभापति होने को कहा। इस प्रस्ताव का महत्त्व इसलिए है कि सर गणेश ने कौंसिलवालों में से कुछ लोगों को अपनी ओर कर लिया था और उनके ही द्वारा इस प्रस्ताव का विरोध होने को था। श्रीधनराज शर्मा उनके बड़े हिमायतियों में से थे और प्रस्ताव के विरोध में उनका जबर्दस्त भाषण भी हुआ था। राजेंद्र बाबू और श्री बाबू प्रस्ताव के पक्ष में बोले। श्रीधनराज शर्मा के भाषण के विरुद्ध मेंबरों ने कितनी बार आवाज उठाई, पर स्थानापन्न सभापति ने सबको शांत कर उनको अपना भाषण पूरा करने का काफी मौका दिया। प्रस्ताव स्वीकृत हुआ, पर श्रीधनराज शर्मा का विरोध उस दिन के बाद से जारी ही रहा।

बोर्ड की जब्ती का कारण हमलोगों की तरफ से भी जगह जगह सभाएं कर लोगों को समझाने की कोशिश की गई। अरवल में एक दिन श्री बाबू के साथ मैं भी गया था। शाह उमैर ने हमलोगों की बड़ी खातिरदारी की और अभिनंदन पत्र अर्पित कर बोर्ड के प्रति सरकार की नीति की घोर निंदा की। श्रीबाबू ने अपने ओजस्वी भाषण में सर गणेश तथा सरकार के कारनामों पर काफी रोशनी डाली। उन दिनों उनकी तबीयत अच्छी नहीं रहती थी, इसलिए सफर में नहीं जाया करते थे। मेरी वजह से

और सरकार की इस ज्यादती के खिलाफ आवाज उठाने के लिए ही श्री बाबू ने उस कष्ट को सहन किया था। मोटर खराब हो जाने से दूसरी सभा में हमलोग शरीक नहीं हो सके। रास्ते में ही रात बिताई और सुबह को जब एक दूसरी गाड़ी दाउद नगर की ओर से आई तब उसपर हमलोग पटने वापस आए।

कितने जिला बोर्डों ने जिनमें कांग्रेस का बहुमत था सरकार के इस काम की निंदा की और प्रस्ताव पास किया। गया जिले में श्री विनोदानंद झा ने कितने स्थानों में भाषण दे कर बोर्ड तोड़ने का कारण लोगों को समझाया और अमांवा राज के सरकेल आफिसर शिव बाबू ने जिन पर रामेश्वर बाबू की खास नजर रही, इस काम में मदद दी और सरकार की आंतरिक नीति पर रोशनी डाली। आगे चलकर उन पर मुकदमा चलाया गया और उनको सजा भी मिली, पर जिला जज ने अपील करने पर उनको निर्दोष करार दे कर छोड़ दिया। सर अली इमाम ने इस मुकदमें में पैरवी की थी।

बोर्ड टूट जाने के बाद मैं पटने चला आया और वहीं रहने लगा। श्री लक्ष्मीनारायण अखिल भारतीय चर्खासंघ के प्रांतीय मंत्री थे। उन्हों ने मुझको अपनी जगह पर काम करने की दावत दी। मैंने उसे कबूल कर लिया और कुछ दिनों तक मुजफ्फरपुर जाकर रहा भी, पर मुझे आगे चलकर इस काम को करने की फुरसत न मिली और मैं वहाँ से वापस आ गया। पटने में रह कर मैंने श्री बदरीनारायण वर्मा को गया बोर्ड के

संबंध में ऑडिटर की रिपोर्ट तथा सरकारी विज्ञप्ति के प्रत्येक मद का जवाब तैयार करने में मदद दी। यह जवाब पहले सर्चलाइट में छपा और पीछे किताब की शकल में आम जनता के सामने पेश किया गया। यह कहना तो मैं भूल ही गया कि जब ऑडिटर की रिपोर्ट सरकार के पास पेश की गई तब मि० ओवेन ने जो उस समय लोकल सेल्फ गवर्नमेंट डिपार्टमेंट के सेक्रेटरी थे, अपना नोट देते हुए बताया कि ऑडिटर की रिपोर्ट से बोर्ड तोड़े जाने का मसाला नहीं मिलता, बल्कि बोर्ड की मौजूदा कठिनाइयों से बचने के लिए एक सरकारी अफसर की मदद देनी चाहिए। पर सर गणेश तो बोर्ड को तोड़ने पर ही तुले थे। उन्हों ने सर सुलतान आदि से भी सरकारी अफसरों का दिमाग मेरे खिलाफ फिराने की चेष्टा की थी। जब मैं बिहार सरकार का मंत्री हुआ तब मुझे यह जानने की उत्कंठा हुई कि मेरे विरोध में सर सुलतान और सर ख्वाजा नूर का क्या क्या हिस्सा रेकॉर्ड में मिलता है। जो जो फाइलें मेरे सामने आईं उनमें सर सुलतान का कमिश्नर से बातें करने का जिक्र मिला। ख्वाजा साहब का नाम नहीं मिला।

बोर्ड टूट जाने का दुःख मुझे इसलिए हुआ कि मैं अपने को निर्दोष समझता था और जिन लोगों से बातें होती थीं वे मेरे बारे में इतना ही कहते थे कि वायसचेयरमैन के कामों से मुसलमानों को घोर असंतोष हो गया है, और चूँकि हम दोनों एक साथ ही हटाये जा सकते हैं और बोर्ड मुझसे ज्यादा उनके

साथ है, इसलिए सारे बोर्ड को तोड़े बगैर सर गणेश के लिए मनमानी कार्रवाई की गुंजाइश नहीं थी। साथ ही श्री रामेश्वर प्रसाद सिंह को चेयरमैन बनाने का प्रयत्न आज तक निष्फल हुआ था। उसमें भी कामयाबी तभी हो सकती थी जब हमारा प्रभाव जिले से उठा दिया जाता, और इसीलिए सर गणेश ने सारे जिले में ढिंढोरा पिटवा कर हमारे विरुद्ध शिकायतें पेश करने के लिए प्रोत्साहन दिया था। इस तरह से भी जब हमारा असर जिले से न उठ सका तब लाचारी बोर्ड को दो वर्षों तक सरकार के कब्जे में रख कर श्री रामेश्वरप्रसाद सिंह को चुने जाने का मौका दिया गया, और चुनाव के कबल, सिद्धि बाबू, शिव बाबू और मुझको अयोग्य करार देकर बोर्ड मे प्रवेश होने से ही रोक दिया गया।

७

१६२६ ई० में लाहोर कांग्रेस हुई। अपने मित्रों के साथ मैं भी उसमें शरीक हुआ। जाड़ा बहुत पड़ रहा था इसलिए हमलोग शहर में ही एक मित्र के साथ ठहरे। सुबह में ही स्नानादि से निवृत्त हो कांग्रेस कैंप जाते थे। उस साल की कांग्रेस में अपूर्व उत्साह था। सभापति के लिए महात्माजी ने प्रांतों से बहुमत वोट प्राप्त किया था। उनके बाद सरदार पटेल को वोट मिला था। श्री जवाहरलाल को सिर्फ तीन ही प्रांतों के वोट मिले थे, पर महात्मा जी ने सभापति पद ग्रहण करने मे अस्वीकार कर दिया, और लखनऊ ए० आई० सी० सी० की

बैठक मे सर्वसम्मति से श्री जवाहरलाल नेहरू को लाहौर कांग्रेस का सभापति चुन लिया था। नौजवानों मे, खासकर यू० पी० के वाशिंदों मे श्री जवाहरलाल जी के प्रति अभूतपूर्व उत्साह का प्रदर्शन दीख पड़ता था और महात्माजी ने शायद नये लोगों के विचार को ही मद्दे नजर रख कर उनको लाहौर कांग्रेस का सभापति बनाना मुनासिब समझा हो।

सरकार को जो नोटिस दिया गया था वह ३१ दिसम्बर १६२६ ई० की आधी रात को ही समाप्त होता था। नेहरू रिपोर्ट कबूल करने की यही अवधि बतलाई गई थी। अवधि के अ दर यदि सरकार कलकत्ता कांग्रेस के प्रस्तावानुसार नेहरू रिपोर्ट को कबूल नहीं करती तो नेहरू रिपोर्ट उस वक्त से खतम समझी जाती और कांग्रेस पूर्ण स्वाधीनता का ध्येय स्वीकार कर आगे बढ़ती। संयोग से ३१ दिसम्बर को १२ बजे रात के बाद ही पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। उस समय प्रति निधियों तथा दर्शकों मे जो उत्साह का प्रदर्शन हुआ वह मै बयान नहीं कर सकता। मालूम पड़ता था कि लोग आनंद और जोश से उछल रहे हैं। लाहौर की सर्दी सब को भूल सी गई थी और प्रस्ताव स्वीकृत होने के बाद इतने जोर से तालियाँ पिटीं कि सारा पंडाल गूँज उठा।

१६३० ई० के आरंभ में स्वतंत्रता दिवस मनाने का आयोजन होने लगा। उस दिन जो प्रतिज्ञा-पत्र पढ़ना था उसकी प्रति प्रांत की भाषाओं में अनूदित करा ली गई। २६ जनवरी

को देश के कोने कोने में उसे पढ़ने और लोगों की उस पर सम्मति लेने का आदेश सब जगह भेज दिया गया। प्रत्येक शब्द को जनता से दोहराने के सिवा उस दिन कोई भाषण देने का निषेध था। मुझ को यह विश्वास नहीं होता था कि लाहौर कांग्रेस के बाद लोगों में इतना उत्साह आ जायगा, पर जब २६ जनवरी को पटने में गुलाबबाग में सभा हुई तब देखा कि असंख्य लोग उसमें शामिल होने को आ रहे हैं। ऐसे ऐसे लोग आते गए जिनको कांग्रेस से कुछ संबंध रहा हो, यह मुझे भी मालूम न था। शांति के साथ लोगों ने एक एक शब्द को दुहराया और बिना किसी तरह के शोरगुल के सभा विसर्जित हुई। इस तरह नियमित ढंग पर शायद ही कोई दूसरी सभा पटने में हुई थी। इसका प्रभाव सब लोगों पर पड़ा और भावी युद्ध की गंभीरता की सूचना इससे ही लोगों को मिली।

कौंसिल के कामों से लोगों को अरुचि होती जा रही थी। चाहे और लोगों को कम वेशी हो; पर श्रीमोतीलाल नेहरू तो कौंसिल से एक बारगी उदासीन हो रहे थे और इस फिक्र में थे कि कब वहां से वापस आ जायँ। वर्किंग कमिटी और ए० आई० सी० सी० में इस आशय का प्रस्ताव आने लगा। अहमदाबाद में ए० आई० सी० सी० की बैठक हुई जिसमें यह तय हुआ की जल्द ही इस बात का फैसला कर दिया जाय कि सभी कांग्रेसी लोग कौंसिल और एसेंबली से वापस आ जाँय। इसके लिए वर्किंग कमिटी ने एक तिथि भी आगे चल कर निश्चित कर दी।

इस बीच में साइमन कमीशन का आंदोलन जबर्दस्त ही होता जा रहा था। १९२९ ई० के शुरू में जिस समय एसेंबली का सेशन दिल्ली में हो रहा था मेरठ के मुकदमे ने, जो कम्यूनिस्ट लोगों के खिलाफ चल रहा था, काफी सनसनी पैदा कर दी थी। एसेंबली में एक बिल पेश था जिससे मेरठ केस को जल्द खतम करने में जिस सुविधा की आवश्यकता थी वह उससे प्राप्त हो जाती। ऐसे कानून बनने के खिलाफ आपत्ति की गई थी। कहा गया कि जब तक मेरठ केस चल रहा है तब तक इस तरह के कानून बनने से मुकदमें पर असर पड़ेगा, अतएव तब तक के लिए कानून के मसविदे को मुलतवी कर दिया जाय। श्री विठ्ठल भाई पटेल उस समय एसेंबली के अध्यक्ष थे। लोगों का अनुमान था कि संभवत: उनकी रूलिंग आपत्ति के अनुकूल होगी। जिस दिन उनकी रूलिंग दी जाने को थी सर जौनसाइमन एसेंबली की गैलरी में बैठे हुए थे। मैं कौंसिल आफ स्टेट की गैलरी में उनसे कुछ ही दूर पर बैठा हुआ था। जैसे ही पटेल अपनी रूलिंग पढ़ने को खड़े हुए कि एसेंबली में बड़े धमाके की आवाज हुई। एसेंबली का हाल धुएँ से भर गया। देखता हूँ तो सर साइमन जल्द जल्द वहाँ से चलते बने। एसेंबली के भीतर एक प्रकार से भगदड़ मच गई। होम मेंबर के नजदीक ही बम गिरा था और हवा में पिस्तौल की आवाज हुई थी। एक या दो मेंबरों को थोड़ी चोट भी लगी, पर कोई घायल नहीं हुआ। थोड़ी ही देर में देखा कि गोरे सार्जेंट दो नवजवानों को

दर्शकों की गैलरी से पकड़े आ रहे हैं। वे श्री भगतसिंह और श्री बटुकेश्वरदत्त थे। उनके चेहरे पर जरा भी शिकन नजर नहीं आती थी। दोनो को दो दो सार्जेंट दोनो तरफ से पकड़े जा रहे थे। एसेंबली स्थगित कर दी गई और सारे मकान के दरवाजे बंद कर दिए गए। किसी को बाहर जाने की इजाजत नहीं दी जाती थी। एक घंटे के बाद मेंबरो को बाहर जाने की इजाजत मिली। श्री भगत सिंह के ऊपर सौंडरस् साहबको मारने का इलजाम भी था। दो दो मुकदमे उन पर चले और अंत मे श्री भगत सिंह को फाँसी की तथा श्री बटुकेश्वरदत्त को कालेपानी की सजा हुई।

१९३० के आरंभ मे ही हमलोगों को कौंसिल और एसेंबली से इस्तीफा दे देना पड़ा। इस साल के शुरू में फिर कांग्रेस के कामों में लगा और काफी काम मेरे हाथो में आ गये। २६ जनवरी को जितनी सभाएं हुई थीं उनका पूरा विवरण लिख कर महात्माजी के पास भेजना था, वह भेज दिया और भविष्य की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगा।

८

यहाँ बिहार के पर्दा तोड़क आंदोलन के विषय में कुछ लिखना जरूरी मालूम होता है, क्योंकि इस आंदोलन के साथ मैं बहुत ही निकट का संबंध रखता था। दरभंगा जिले के एक प्रतिष्ठित भूमिहार ब्राह्मण कुल के नवयुवक श्री रामनंदन मिश्र ने असहयोग आदोलन के चलते स्कूल छोड़ काशी विद्यापीठ में

पढ़ना शुरू किया था। उनका विवाह गया जिले के मँझवे गाँव के एक धनी जमींदार के यहाँ हुआ था। उनके मन में ख्याल हुआ कि अपनी पत्नी को पर्दा से बाहर लावें। इस विषय पर उन्होंने महात्माजी की सलाह ली और उनके इच्छानुसार काम करने के लिए तैयार हुए। महात्माजी ने श्री मगनलाल गांधी की लड़की सुश्री राधिका को, जो उनकी पौत्री होती थी, श्री रामनंदन मिश्र के साथ कर दिया। राधिका अपने आश्रम की एक सहयोगिनी के साथ श्री रामनंदन मिश्र के ससुराल में आई। श्री रामनंदन मिश्र के श्वसुर पुराने विचार के आदमी थे। पर्दा तोड़ने के ख्याल से ही उनके दिल में चोट पहुँची। साथ ही दमाद का अपमान भी न हो, इसका भी उन्हें ख्याल था। राधिका और उसकी संगिनी का प्रवेश उनकी हवेली के भीतर हो तो गया, पर उन लोगों के साथ इस परिवार का व्यवहार अच्छा नहीं हुआ। उन दिनों श्री रामनंदन मिश्र को मैं नहीं जानता था। एक दिन ब्रजकिशोर बाबू की एक चिट्ठी मेरे पास आई। उसमें श्री रामनंदन के कार्य के उद्देश्य का जिक्र था। मेरी सहायता उनको प्राप्त हो, इसका आग्रह भी था। मैं ब्रजकिशोर बाबू की बातों को हुक्म ही समझता था और इस आंदोलन के अनुकूल अपनी राय भी रखता था। अतएव हमलोग गया से श्री रामनंदन को प्रोत्साहित करने तथा राधिका को हिम्मत बढ़ाने की गरज से उस गाँव में पहुँचे। साथ श्री मुकुटधारीप्रसाद वर्मा भी सपत्नीक थे। हमलोगों को

जनाने के अंदर ही जाना पड़ा। वहीं प्रार्थना और संगीत हुआ। जितने लोग वहाँ गए थे सब उसमें शामिल होते गये। पर श्री रामनंदन की पत्नी सुश्री राजकिशोरी देवी को उनके पिताने बाहर निकलने की इजाजत न दी। हमलोग इस काम में बहुत जोर भी नहीं दे सकते थे। अतएव जितना उत्साह हमारी उपस्थिति से उन लोगों को मिल सकता था, मिला। श्री रामनंदन मिश्र के पिता उनके श्वसुर से भी ज्यादा पुराने ख्याल के जमींदार थे। अतएव अपनी पत्नी को घर पर ले जाँय और वहाँ से पर्दा विरोधी आंदोलन चलावें, ऐसा होना भी उतना ही कठिन था।

राधिका के लिए वहां रहना जेल से भी अधिक दुखदायी हो गया। श्री मगनलाल एक दिन उससे मिलने के लिए आए। कलकत्ते से बंबई-मेल से चलकर करीब तीन बजे रात में गया पहुँचने का उन्हो ने तार दिया। फागुन का महीना था। स्टेशन से श्री मगनलाल को ड्राइवर सिद्धि बाबू के डेरे पर लिवा लाया। हमलोगों को जगाया भी नहीं गया। अपने स्वभाव के अनुसार उन्हों ने आते ही मुँह-हाथ धो आँगन में बैठकर स्नान कर लिया। सुबह में जब हमलोग उठे तब उनको राधिका के यहाँ पहुँचाने का प्रबंध कर दिया। राधिका ने वहाँ रहने में अपनी अनिच्छा प्रकट की। महात्माजी ने ब्रजकिशोर बाबू के ऊपर ही इसका फैसला छोड़ दिया था। अतएव श्री मगनलाल उनसे सलाह करने के लिए श्री रामनंदन मिश्र के साथ दूसरे ही दिन पटना के लिए रवाना हुए। श्री मगनलाल

को उस गाँव में एक दिन रहने में भी तकलीफ हो गई। खाना पानी सभी कुछ नियम के विरुद्ध हुआ। पटने की ट्रेन में ही उनको बुखार हो आया। पटना पहुँच कर श्री रामनंदन मिश्र उनको श्री शंभुशरण के डेरे पर लिवा लाए। क्योंकि बुखार की हालत में और वे जाते ही कहाँ ?

उनके बीमार होने की खबर जब मुझको गया में मिली तब मैं पटने पहुँचा। ब्रजकिशोर बाबू वहीं थे। दवा शुरू हुई। श्री मगनलाल की हालत जानने के लिए महात्माजी के तार रोज आते जाते रहे। उन्होंने उनकी देखभाल का सारा भार ब्रजकिशोर बाबू पर ही छोड़ दिया। ब्रजकिशोर बाबू स्वयं सदाकत आश्रम मे रहते थे और श्री शंभुशरण को रोज हाईकोर्ट जाना पड़ता था, इसलिए उनकी सेवा शुश्रूषा के लिए मुझे पटने में ठहर जाना पड़ा। बीमारी बढ़ती गई। एक दिन सिविल-सर्जन भी उन्हें देखने के लिए आए। डाक्टर वली अहमद के, जो इलाज कर रहे थे, निदान को उन्होंने पसंद किया। जो दवा मिलती थी उसे भी जारी रखने को कहा। श्री मगनलाल की तकलीफ और बीमारी दिन प्रतिदिन बढ़ती ही गई। राधिका भी तबतक गया से वहाँ आ पहुँची और प्रतिदिन उनके घर की सफाई तथा प्रातःकाल की प्रार्थना करने का काम करती रही। उसकी प्रार्थना इतनी प्रभावोत्पादक होती थी कि मालूम पड़ता था उसे सुनकर पहाड़ भी पसीज उठेगा। बराबर सेवा शुश्रूषा होते रहने पर भी हमलोग श्री मगनलाल को बचा न सके।

देहांत हो जाने पर उनकी दाह-क्रिया का प्रश्न उठा। उनका अपना कोई संबंधी तो था नहीं, राधिका एक लड़की ही थी। किसके हाथ से दाह-क्रिया कराई जाय। ब्रजकिशोर बाबू काँग्रेस के प्रमुख नेता की हैसियत से इस काम को करें, पर उनका स्वास्थ्य ऐसा न था कि वे सावरमती जा सकें। अतएव राधिका ने मुझ से ही यह काम करने का आग्रह किया। मैंने दाह-क्रिया की। एक दो दिन के अंदर ही राधिका, उसकी संगिनी, राजकिशोरी और रामनंदन मिश्र के साथ मैं सावरमती आश्रम के लिए रवाना हुआ। अपने पहुँचने का तार महात्माजी को दे दिया था। गाड़ी रात को १०—११ बजे वहाँ पहुँचती थी। हमारी इंतजारी आश्रम में हो रही थी और महात्माजी भी उस वक्त तक जगे हुए थे। राधिका की माँ हमलोगों के पहुँचते ही बहुत जोरों से रोने लगीं। महात्माजी ने उनको समझा बुझाकर शांत किया। उन दिनों श्री मृत्युजंयप्रसाद अपने परिवार के साथ वहाँ रहते थे। मुझे वहीं ठहराया गया। श्राद्धादि की बात दूर रही, मुझ से दाह-क्रिया के विषय में भी कुछ बातें नहीं की गईं। अखंड चर्खा और गीतपाठ ने ही इसका स्थान लिया और एक दिन ठहरने के बाद वापस आने की इजाजत मिल गई। वापसी रास्ते के भोजन के लिए महात्माजी ने बा (कस्तूर बा) को प्रबंध करने कहा और कुछ दूध की रोटियाँ, पपीता और एक सुराही में जल रास्ते के भोजन के निमित्त सुपुर्द हुए। महात्माजी कितनी छोटी से छोटी बातों

का संचालन स्वयं करते हैं, यह इसी बात से पता चल जाता है। एक दिन रहकर आश्रम के सभी स्थानों को देखने तथा वहाँ की दिनचर्या के अनुसार जैसे काम होता है उसे जानने का अवसर मिला। आश्रम जीवन की छाप पड़ी, पर बहुत दिन उसका असर कायम नहीं रह सका। रामनंदनजी राजकिशोरी के साथ वहाँ ठहर गए। कुछ दिनों के बाद वे तो बिहार वापस आ गए, पर राजकिशोरी को आश्रम जीवन व्यतीत करने के लिए वहाँ रह जाना पड़ा।

९

श्री रामनंदन मिश्र उसके बाद पर्दा-विरोधक आंदोलन को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करने लगे। इस संबंध से श्री मगनलाल जी की मृत्यु बिहार में ही होने के कारण नैतिक रूप से उसका प्रभाव पड़ा और स्वभावत: लोगों की रूचि इस आंदोलन को ओर खिंचने लगी। सभी जिलों के काँग्रेसी कार्यकर्त्ताओं के अलावे शिक्षित समुदाय ने इस आंदोलन को बढ़ाने में सहायता दी। ता० ८ जुलाई को सारे सूबे में पर्दा विरोधी दिवस मनाने का आयोजन होने लगा। उस सभा में जो सपत्नीक जायँ उन्हें ही शामिल होने की इजाजत थी। सभी जिलों में उस दिन सभाएं हुईं और सफल हुईं। मैं उस दिन गया में था, पर किसी सभा में शरीक नहीं हो सका।

बिहारी स्त्रियों में पर्दा बंधन के साथ ही शिक्षा का अभाव भी मौजूद है। किस तरह उन्हें शिक्षित बनाने में सहायता दी

जाय, यह समस्या लोगों के सामने आ गई थी। एक आदर्श महिला विद्यालय खोल कर आधुनिक गार्हस्थिक ढंग की शिक्षा प्रदान करने की सब से अच्छी विधि क्या हो सकती है, इस पर विचार किया जाने लगा। रामनंदन जी बराबर श्रीशंभुशरण के साथ रह कर इस काम को आगे बढ़ावें, यह निश्चय हमलोगों ने किया। रायबहादुर व्रजनंदन सिंह (रिटायर्ड एक्साइज कमिश्नर) ने भी इसमें काफी दिलचस्पी ली, और हमारी सहायता करने के लिए तत्पर हुए। पहले पटने में ही इस तरह की संस्था खोलने का विचार हुआ, पर शहर में न खोल कर आसपास में ही कोइलवर या वैसे ही किसी दूसरे स्थान में ऐसी संस्था स्थापित हो, यह भी सोचा जाने लगा। श्रीजमनालाल बजाज मगनलालजी की देहांत के बाद पटना आए। जहाँ पर मगनलालजी की दाह-क्रिया हुई थी उस स्थान का उन्हों ने दर्शन और स्पर्श किया। मगनलालकी की बीमारी में सारा खर्च श्रीशंभुशरण ने ही किया था। सेठजी सब रुपये वापस करने लगे। श्रीशंभुशरण ने उसे इनकार कर दिया। इसकी वजह से लोगों की दृष्टि में उनका सम्मान बढ़ गया। मगनलालजी के स्मारक स्वरूप स्त्री-शिक्षा संबंधी जो संस्था कायम हो उसमें सेठजी यथेष्ट सहायता देने को तैयार थे, पर उसके संचालक ऐसे व्यक्ति हों जिस पर उनका विश्वास रहे। रामनंदन जी एक नवयुवक होने की हैसियत से अनुभवी नहीं कहे जा सकते थे। दूसरे आदमी की खोज होने लगी, पर कोई योग्य

व्यक्ति इस काम को लेने के लिए आगे बढ़ते हुए देखे नहीं गए। मेरे मित्रों ने मुझे इस काम को हाथ में लेने के लिए कहा, पर मेरी अभिरुचि इस ओर अभी इतनी दूर तक नहीं पहुँची थी कि मैं कांग्रेस कार्य को छोड़ उसी में लग जाता। साथ ही मैं अपने को इस काम के योग्य भी नहीं समझता था। मुझ में उतना धैर्य भी नहीं था कि मैं उस काम में ही पड़ जाता और जिस तरह यह चल सके उस तरह उसे चलाता। पैसे की मदद तो कितने मित्रों ने करने का वादा कर लिया था, पर यथेष्ट पैसा पाने के लिए कुछ विशेष परिश्रम करना अनिवार्य दीख पड़ता था।

श्रीरामनंदन मिश्र हमलोगों के परिवार के ही लड़के जैसे रहने लगे। श्रीशंभुशरण और मैं दोनों सपरिवार शिमला गए तो रामनंदन जी भी हमारे साथ ही गए और वहाँ रहे। पीछे राजकिशोरी के यहाँ से पत्र आने पर वहीं से उनको अहमदाबाद जाना पड़ा। हमलोग शिमले से लौटती बार हरिद्वार में कुछ दिनों तक ठहर गए और जब पटना वापस आए तब रामनंदनजी भी लौट आए। कुछ दिनों के बाद सर गणेश से जब मतभेद शुरु हो गया तब श्रीरामनंदन मिश्र ने उनके ही खिलाफ गया जिले में आंदोलन करने के लिए मुस्तैदी दिखलाई। पर कुछ ही दिनों में श्रीधनराज शर्मा उनको सर गणेश की ओर खींचने में सफल हो गए और धीरे धीरे उनकी जमात में वे शरीक हो गए। उनकी महत्वाकांक्षा बढ़ने लगी और दरभंगा जिले में ही उच्च

स्थान प्राप्त करने के लिए प्रयत्नवान हो गए। उन्हें मालूम होने लगा कि व्रजकिशोर बाबू ही उनको आगे बढ़नेमें रुकावट डालते हैं। एक प्रकार के आंदोलन की तरह दूसरे दूसरे जिले में भी यह बात फैल गई कि रामनंदन जी जैसे बड़े खानदान के लड़के को भी द्वेषवश आगे बढ़ने नहीं दिया जाता। इसका जिक्र हमें आगे चल कर सुनने में आया। सर गणेश के दोस्तों ने इसका काफी प्रचार किया और श्रीबाबू जैसे भावुक व्यक्ति के ऊपर भी इस प्रचार का कुछ न कुछ असर हो ही गया।

१०

श्रीशंभुशरण के जीवन काल में श्रीबाबू कौंसिल की बैठक में जब जब शामिल होने का पटना आते थे तब वहीं ठहरते थे। उनकी मित्रता मुंगेर से ही चली आती थी और जहाँ तक मेरा ख्याल है, दोनों में परस्पर गाढ़ी प्रीति भी थी। मुझ से श्री बाबू को कॉलिज के विद्यार्थी के नाते जान पहचान थी और उनके बड़े भाई के साथ होस्टेल में रहने और उनके छोटे भाई को भागलपुर में पढ़ाने का अवसर भी प्राप्त था। एक ही विचार के होने की वजह से और कांग्रेस कमिटियों में साथ साथ काम करने से हमलोगों की घनिस्ठता बहुत बढ़ गई थी। दोनों के मित्र श्री शंभुशरण के बीच में रहने के कारण सद्भाव काफी बढ़ा हुआ था। पटने में श्री शंभुशरण के साथ विद्यार्थी जीवन और पीछे वकालत करते समय एक परिवार के ही जैसा रहता आया था। श्रीबाबू से इस कारण भी घनिष्ठता अधिक होगई

थी। जब मैं सर गणेश का कोपभाजन बन कर तरह तरह से परेशान किया जाने लगा तब श्रीबाबू ने अपने सहज स्वभाव से तथा मैत्री के नाते भी सर गणेश की नाजायज हरकतों के विरुद्ध आवाज उठाई और बराबर उठाते रहे। इसका असर मुझ पर इतना हुआ कि मैं उनका अभारी हो गया और मेरे हृदय में उनका एहसान बना रहा। मुझे याद है कि जब बिहार कौंसिल में सर गणेश के गयाबोर्ड तोड़ने पर अविश्वास का प्रस्ताव पेश किया गया था, श्री बाबू बीमार होते हुए भी कौंसिल गए और जोश के साथ उन्होंने लंबी तकरीर की। सरकार की ओर से बोर्ड तोड़ने के लिए जिन जिन कारणों के आधार पर कार्रवाई की गई थी उनको उन्होंने एक एक कर नगण्य दिखलाया। उस समय लोकल सेल्फ गवर्नमेंट के सेक्रेटरी मि० ओवेन ने यहाँ तक कह डाला कि ऑडिटर ने गलती की थी और भयंकर गलती की थी, पर बोर्ड टूटने के बाद बहुत से नये कारण मालूम हुए जिनकी वजह से बोर्ड का तोड़ना मुनासिब समझा गया। सरकार की इस दलील की काफी खिल्ली उड़ाई गई। जिन कारणों से बोर्ड तोड़ा जाय वे सही न ठहरें और नये कारणों को जो बोर्ड तोड़ने के बाद मालूम हों, जायज करार देने के लिए आधार बनाया जाय, यह तो न युक्तिसंगत था और न न्याय-पूर्ण। पर सरकार की नीति के विरुद्ध बहस करने के सिवाय और कोई उपाय ही क्या था। सरकार के पक्ष में वोट ज्यादा थे, पर मनोनीत मेंबरों का बहुमत अविश्वास के प्रस्ताव के साथ होने पर

भी सर गणेश ने अपना पद नहीं छोड़ा, क्योंकि उन दिनों सरकारी अफसरों की तायदाद नामजद मेंबरों की हैसियत से काफी रहती थी और उनका बल उनके साथ रहता था।

११

१९२९ में मैं असम के कई स्थानों को देखने गया। श्रीरामविनोद सिंह ने ब्रजकिशोर बाबू को विश्वास दिलाया कि यदि असम में कुछ जमीन ले ली जाय तो उसके जरिये परिवार के भरणपोषण का काम आसानी से चलने लगे और हमलोगों का शेष जीवन शांतिपूर्वक काँग्रेस-काम में लगता रहे। रामरत्त जी के भाई भाग कर असम गए थे और कुछ जमीन हासिल कर वे वहाँ खेती करते थे। जमीन की पैदावार की वे बहुत प्रशंसा किया करते थे। उन दिनों असम की आबादी बहुत नहीं बढ़ी थी और बिहार के बहुतेरे लोग खेती करने के लिए वहाँ जाया करते थे। महेंद्र बाबू, शंभुशरण बाबू, ब्रजकिशोर बाबू सभी लोगों को यह बात जँची और निश्चय हुआ कि महेंद्र बाबू और मैं, रामरत्तजी तथा पन्नाजी (शंभुशरण बाबू के चचेरे भाई) के साथ असम जायँ और अच्छी उपजाऊ जमीन को खरीदने का उपाय करें। हमलोग इस ख्याल से ब्रह्मपुत्र पार कर एक ऐसे स्थान पर उतरे जहां से अभीष्ट स्थान पर पहुँचने के लिए जंगल ही होकर रास्ता था। वहाँ सिर्फ एक बैलगाड़ी सवारी के लिए मिल सकी, पर उसपर तो सारा असबाब ही रखा जा सका और मुश्किल से महेंद्र बाबू को बैठने की जगह मिली।

हमलोग पैदल ही जंगल के रास्ते चल पड़े। बीच में छोटी छोटी बस्तियाँ मिल जाती थीं। कितने मीलों की सफर मैं करनी थी। संध्या हो चली। साथ में कोई रोशनी नहीं। उन जंगलों में जंगली हाथियों के झुंड अकसर निकला करते थे। साथ में बंदूक अवश्य थी, पर घनघोर जंगल के भीतर रात के समय हमलोग कर ही क्या सकते थे! यह सोच कर कुछ डर तो मालूम होता था, पर हिम्मत बनी हुई थी। हमलोग निश्चित स्थान पर पहुँच कर ही ठहरेंगे, ऐसा संकल्प कर लिया। नव बजते बजते सकुशल वहाँ पहुँच गए। किसी तरह खाना पीना समाप्त कर रात बिताई।

आसम की बस्तियों का मेरा अनुभव यह हुआ कि सम्पत्ति पैदा करने का सामान रखते हुए भी वहाँ के लोग खुशहाल नहीं हैं। संध्या हुई कि गांव के लोग घरों के अंदर जा छिपे। रात में किसी से किसी को मुलाकात होने को नहीं। 'इसी सफर में हमलोगों को एक रात एक मारवाड़ी व्यापारी के गुदाम में ठहरना पड़ा। खाने का सामान करीब करीब नहीं के बराबर था। रोशनी भी नहीं थी। पास एक बड़ी बस्ती नजर आई। हमारे साथी खाने पीने तथा लालटेन लाने गए। मुश्किल से थोड़ा चावल मिल सका और लालटेन की बात क्या दिया-बत्ती भी न मिली। शाम हो रही थी। किसी के घर में रोशनी नहीं थी। खाना खाकर अंधकार होते ही सब लोग सोने की तैयारी में लगे हुए थे। किसी तरह हमलोगों ने आधा

पेट भोजन कर रात बिताई और सुबह में दूसरी जगह चलने के लिए तैयार हुए। एक ही बैलगाड़ी थी। साबिकदस्तूर सामान उस पर रख और महेंद्र बाबू को उसी पर बिठा कर हमलोग सिपाहियों जैसा मार्च करते आगे बढ़े। सब कच्ची सड़क से चल रहे थे। दोनों बगल नई आबादी नजर आ रही थी। हरे भरे खेतों को देख कर मन प्रफुल्लित हो जाता था। पीछे मालूम हुआ कि यहाँ की तथा इसके आसपास की जमीन गैर-असामियों के साथ बंदोबस्त नहीं की जा सकती। सारा परिश्रम निष्फल गया। किसी तरह वापस आने के लिए जल्द-बाजी करने लगे! सवारी तो मिलने की नहीं। पैदल चलते चलते पैर थक गए थे, पर बगैर चले ब्रह्मपुत्र तट पर पहुँचते कैसे! दिन में एक हाट में कुछ भोजन की सामग्री मिली। खा-पीकर कुछ देर आराम किया और फिर आगे बढ़ते गए। थकान इस कदर हो गई थी कि यदि कहीं बैठ जाते थे तो वहाँ से उठना मुश्किल मालूम होता था। पैरों में ताकत न रहते भी हृदय में बल था, मन मे शक्ति थी और यह दृढ़ संकल्प था कि जैसे भी हो तीसरे दिन हमलोग ब्रह्मपुत्र के स्टीमर पर सवार होंगे ही। चलते-चलते एक जगह एक हिंदुस्तानी-शायद हमारे ही प्रांत के—बाबाजी के मठ-जैसा नजर आया। हमलोगों को शरबत पीने को मिली और खाने के लिए भी आग्रह किया गया। वहाँ से ब्रह्मपुत्र चार-पांच मील और था। एक और बैलगाड़ी सवारी के लिए मिल गई। तीसरा पहर हो गया था। संध्या के पहले

हमें ब्रह्मपुत्र के घाट पर पहुँच जाना था। भोजन करने से इनकार कर बैलगाड़ी के ऊपर बैठकर आगे बढ़ने का ही निश्चय किया गया। सवारी मिलतेही थकान के कारण बैठने की जगह में ही ऐसी नींद आई कि चार-पाँच मील की सफर पूरी होने पर ही जगे। स्टीमर घाट की जेटी पर जाने के लिए एक नाव किराये पर ली। नाविक हमारे ही सूबेका रहनेवाला था। उसने हमारी खातिरदारी की। नाव पर ही खाना पका और कितने दिनों के बाद सादा भोजन मिलने की खुशी में हमलोगों ने बहुत ही आनंद प्राप्त किया। खूब पेट भर भोजन कर नाव पर ही सो रहे। दस बजे रात को स्टीमर-घाट पहुँचे। वहाँ स्टीमर मिला। गुवाहाटी (गौहाटी) पहुँच कर ब्रह्मपुत्र के उस पार अमीनगांव भोर होते पहुँचे। फिर रेल से सब पटना वापस आगए।

पहली यात्रा व्यर्थ हुई। इसके बाद मुझे दो-तीन यात्राएँ और करनी पड़ीं। दिनाजपुर के डिस्ट्रिक्ट इंजिनियर का लड़का कृषि-संबंधी शिक्षा प्राप्त कर कुछ जमीन ले खेती कर रहा था। पूँजी की कमी हो जाने से उसका फार्म ठीक से आबाद नहीं हो रहा था। उसके पास ट्रैक्टर वगैरह सब सामान मौजूद था। कुछ जमीन आबाद भी हो गई थी। हमलोगों को उसके फार्म का पता चला और यह भी मालूम हुआ कि वह उसे बेचना चाहता है। खत-किताबत के बाद चंद साथियों को लेकर मैं 'लैरा-बाड़ी' (फार्म का नाम यही था) देखने गया। जगह पसंद

पड़ी। बारह हजार रुपये में इसे खरीदना निश्चित हुआ। रुपया एक साथ देना नहीं था; किश्त के जरिये वसूल करना था। कबूलियत पर रजिस्ट्री बनाने के लिए शंभुशरण बाबू और महेंद्र बाबू को भी वहाँ जाना पड़ा। १६१० ई० के मई महीने में हम लोग एक या दो रात 'खैराबाड़ी' फार्म में रहे। पटने में इतनी गरमी पड़ती थी कि लोगों को गरमी की तकलीफ बर्दाश्त करना कठिन हो जाता था, पर 'खैराबाड़ी' में रात के वक्त काफी ठंढक थी और हमलोगों ने विचार किया कि प्रत्येक साल गरमी में यहाँ आकर रहा करेंगे, पर यह केवल खयाली-पुलाव ही निकला। खैराबाड़ी के चलते बीसों हजार रुपये की नुकसानी के साथ हमारे दो साथियों की अकाल मृत्यु तथा बिहार से गए कई खेतिहरों के जीवन से हाथ धोना पड़ा।

१२

इस प्रकरण में १६१५ जुलाई से १९३० के आरंभ तक का विवरण, जितना मुझे ख्याल पड़ता गया, लिखा। पंद्रह वर्षों के अंदर काँग्रेस में तथा मुझ में जो जो परिवर्त्तन हुए—जिस हद तक काँग्रेस से मेरा संबंध रहा—उसका जिक्र मैंने संक्षेप से किया है। राष्ट्र का उत्थान और पतन किस तरह होता रहा उसका आभास इन पृष्ठों के पढ़ने से मिल जा सकता है। महात्मा गांधी के नेतृत्व में किस प्रकार देश में एक नवजीवन का संचार होना शुरू हुआ—किस तरह उसका उत्थान होता गया और किस प्रकार हमारे सामने १६२१—२२ ई० में स्वाधीन

भारत का चित्र अंकित हो गया था, सत्य और अहिंसा को कितना कम समझते हुए भी किस हद तक हम उसे व्यवहार में ला रहे थे, कितनी दूर तक चंद महीनों के परिश्रम से हिंदू-मुसलमान-सिख-पारसी-ईसाइयों के बीच आपसी मिल्लत पैदा हो गई थी, आज उस चित्र को याद कर दु:ख होता है। अपने बीते हुए निस्वार्थ जीवन की ओर फिर भी लालसापूर्ण नेत्रों से देखने की इच्छा होती है। १६१६ ई० तक तो किसी हद तक हिंदू-मुसलमान में एकता बनी रही, पर जैसे जैसे समय बीतता गया आपस की नाईत्त फाफी बढ़ती हो गई और उस के नमूने अनेक स्थानों मे दंगा, फसाद, हत्या, संहार के रूपमे हमे मिलने लगे। अटूट परिश्रम कर भी इस ओर बढ़ती मनोवृत्ति को काबू में नहीं लाया जा सका। कौंसिल, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और म्युनिसिपैलिटी के प्रलोभन मे फँस कर कांग्रेस संस्था का किस दूर तक पतन हुआ, इस प्रकरण के पढ़ने से मालूम हो जाता है। साथ ही आशा का संचार होता है कि इन संस्थाओं से अपने को अलग कर महात्मा गांधी के नेतृत्व में पुनः पूर्ण विश्वास जाने के बाद हम आगे बढ़ सकेंगे।

द्वितीय खंड

द्वितीय खंड

१

मेरी जिंदगी का दूसरा हिस्सा नमक सत्याग्रह से शुरू होता है। जब मैंने वकालत छोड़ने का संकल्प किया था उस समय इरादा यही था कि एक साल के लिए ही ऐसा करने जा रहा हूँ। वस्तुत: अहिंसा अथवा असहयोग के अंतर्दर्शन पर मैंने कभी विचार नहीं किया था और न उसके अंतिम परिणाम की ओर ही मेरा ध्यान गया था। जो भी ख्याल दिमाग में आता गया, व्यवहारिक दृष्टि से उसे देख कर उस पर चलते रहने का काम मैं करता रहा। इसी कारण एक पग, फिर दूसरा पग और इस प्रकार फिर तीसरा पग आगे बढ़ाता गया, जब कि ऐसी अवस्था पर आ पहुँचा जहाँ से पीछे पैर देने की गुंजाइश ही नहीं रही। १६३० ई० तक तो पटना म्युनिसिपैलिटी का वाइस-चेयरमैन, गया डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का चेयरमैन तथा कौंसिल ऑफ स्टेट का मेंबर होकर अपने को कांग्रेस के उद्देश्यों के साथ इतना अधिक खपा चुका था कि १६२१ ई० का संकल्प तक स्वप्न जैसा बचा रहा। उपर्युक्त पदों से किसी न किसी कारणवश हटता गया और उनकी ओर से अभिरुचि भी खतम होती गई। प्रत्येक स्थान का नया-नया प्रलोभन भी यथेष्ट आकर्षण रखता था, पर उन प्रलोभनों में रह कर भी जिस संस्था की ओर से वहाँ तक पहुँचा था उसकी पुकार पाते ही

वहाँ से हटने मे कभी सुस्ती भी न की। मैं समझता था कि मेरी शक्ति मेरी पारिवारिक अथवा सामाजिक स्थिति पर निर्भर नहीं थी। थोड़ी बहुत जनता की सेवा तथा सदाचार ही मेरी असली ताकत थी और उसके ही द्वारा सम्पत्तिशाली समाज मे सर्वोच्च पद रखनेवालों से मेरा मुकाबला करना तथा उन पर विजय प्राप्त करना संभव था। एक पग नीचे उतरना मेरे लिए सदा के वास्ते गड्ढे के अंदर चला जाना होता। जब तक मैं पटने मे रहा— और जीवन के इस भाग मे अधिकांशत. मैं पटने मे ही रहा—प्रांतीय कांग्रेस कमिटी की बागडोर मेरे हाथों मे रहने के कारण मैं किसी एक जिले का होकर नहीं रहा। मेरी कमजोरी, इस अर्थ में कि मैं किसी एक स्थान के वाशिंदों के सुख दुख के साथ होऊँ, सर्वदा बनी रही। किसी स्थानीय समस्या के ही मनन करने तथा उसे सुलझाने का अवसर न मिलने की वजह से मैं किसी विशेष स्थान का विशेषज्ञ न हो सका और न किसी एक स्थान के निवासियों के सुख दुख, उनकी सेवा तथा उनके साथ संपर्क रखने का अवसर मिला। जीवन की इस कमजोरी को दूर करने का मुझे अभी तक मौका नहीं मिला। मुझे इस बात का विश्वास अवश्य हो गया था कि मुश्किल से मुश्किल काम जो कांग्रेस के सामने उस वक्त तक आते रहे उन्हें संतोषपूर्वक पूरा करने की शक्ति मुझ मे आ गई थी और मौका पड़ने पर किसी विशेष कार्य को सफल बनाने में खाने पीने की परवाह किए बिना ही मैं चौबीस घंटे तक उसमे

संलग्न रह सकता था। १९२१ ई० से १९३० ई० तक लगातार ए० आई० सी० सी० के मेंबर की हैसियत से सुदूर मद्रास, बंबई, अहमदाबाद, दिल्ली, कलकत्ता, लखनऊ इत्यादि स्थानों में जहाँ कहीं भी इसकी बैठक होती थी, एक दो बार के सिवाए, उनमें बराबर शामिल होता रहा। १९३० ई० में जब नमक सत्याग्रह का श्रीगणेश होने जा रहा था, मैं समझता था कि मुझे उसमें हिस्सा लेना पड़ेगा ही, पर मैं तत्कालीन परिस्थिति को अच्छी तरह परख नहीं सका था। मुझे पहले उस सत्याग्रह के यथार्थ रूप का ज्ञान भी नहीं हो सका था और मेरा ख्याल था कि उसमें कुछ नवीनता नहीं आने की। इस बात का मुझे तनिक भी विश्वास नहीं होता था कि वह आंदोलन कोई विशेष रूप धारण करेगा अथवा उसकी संभावनाएँ इतनी गंभीर हैं कि वह देश में युगान्तरकारी अवस्था उत्पन्न करने की शक्ति रखेगा। जिस तरह काँग्रेस के हुक्म को मान सब काम करना रहा था उसी तरह उसमें भी जरूरत पड़ने पर शामिल होऊंगा, ऐसी धारणा को ही लेकर १९३० ई० के देशव्यापी आंदोलन में शरीक होने के लिए मैंने अपने को तैयार रखा।

२

महात्माजी ने जब नमक सत्याग्रह करने की घोषणा की और यह बताया कि जब तक वे स्वयं कानून तोड़ न लें तब तक कहीं भी कानून शिकनी न हो तब लोगों ने उसे अविश्वास की दृष्टि से देखा। उसकी छिपी शक्तिका भास भी न

हुआ। अफसरों ने तो उसकी खिल्लियाँ उड़ाई। उस समय उसके महत्व को शायद ही किसी ने जाना हो। जब डांडी-मार्च शुरू हुआ, पहला दिन तो उसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा; पर जैसे जैसे महात्माजी समुद्र की ओर अग्रसर होते गये तब वैसे वैसे न मालूम कहाँ की शक्ति लोगों के हृदय में प्रविष्ट होने लगी। रोज रोज अखबारों को पढ़ कर और बहुतेरी उड़ती पुड़ती खबरों को सुन कर ही लोग उत्साह के समुद्र में गोते लेने लगे। दिहातों में इतना जोश बढ़ने लगा कि हमलोग इसे देख सुन कर आश्चर्यान्वित हो गए। महात्माजी का नमक सत्याग्रह करना क्या था कि सारे देश में नमक बनाने और इस तरह कानून तोड़ने के लिए व्यग्रता हो उठी। आखिर वह दिन आ ही गया जब सब जिलों में नमक कानून तोड़ने की मंजूरी दे दी गई। मैं तो किसी एक जिले का समझा ही नहीं जाता था, इसलिए मैं उससे अलग रहा। राजेंद्र बाबू भी इसी कारण कानून तोड़ने से बचे रहे।

मुझे पटने का दृश्य देख कर ही ताज्जुब हो गया। चंद नौजवान लड़के नमक सत्याग्रह करने के लिए एक छोटा सा जुलूस बना कर शहर की ओर जा रहे थे। रास्ते में पुलिस ने उनको सुलतानगंज थाने के नजदीक आगे बढ़ने से रोक दिया। लड़कों ने भी वहाँ से पीछे हटने से इनकार कर दिया। वहाँ, दोनों दलों का मुकाबला हो गया—एक पीछे लौटने से इनकार करता था और दूसरा आगे बढ़ने से रोकता था। कुछ लोगों

को पुलिस वहाँ पकड़ भी लेती थी, पर उनकी जगह एक क्षण में ही दूसरे लोग ले लेते थे। रात दिन इस तरह की भिड़ंत जारी रही। वहाँ पर जनता की भीड़ इकट्ठी होने लगी। अफसरों के लिए एक समस्या पैदा हो गई। अपने बल से लोगों के उत्साह को कुचल देने के लिए वे लोग तैयार थे, पर इधर जनता का जोश क्षण क्षण में बढ़ता जाता था। ज्योंही नया दल पकड़ा गया, उसका स्थान लेने के लिए दूसरे लोग टूट पड़ते। गिरफ्तारी होते ही अपार भीड़ वहाँ इकट्ठी हो जाती। पुलिस के अफसर अक्सर लाठी, हंटर इत्यादि का बड़ी आजादी से इस्तेमाल करते थे। मुझे एक से ज्यादा दफे का अनुभव है जब कि दो अंग्रेज पुलिस अफसरों ने हंटरों से भीड़ को हटाने की कोशिश करते करते लोगों को पीटा था। जब लड़कों के सत्याग्रह का ताँता नहीं टूटा तब उन पर घोड़ा दौड़ाने का प्रस्ताव सरकारी अफसरों ने किया। जहाँ तक मुझे याद है, पटने के जिला मैजिस्ट्रेट मि० कजिन ने राजेंद्र बाबू के नाम एक पत्र भेज कर लड़कों को वहाँ से हट जाने के लिए आदेश देने को कहा। घुड़सवार सिपाही घटनास्थल पर पहुँच चुके थे और उनको आज्ञा दी जाने ही को थी कि वे सत्याग्रहियों के ऊपर से घोड़े को ले जायँ, चाहे इसका नतीजा कुछ भी हो क्यों न हो। विकट समस्या उपस्थित हो गई। राजेंद्र बाबू ने आपस में हमलोगों के साथ सलाह की कि इस परिस्थिति में क्या करना ठीक होगा। उस समय आचार्य कृपलानी भी पटना आए हुए थे। उनसे भी राय ली

गई। निश्चय हुआ कि चाहे जो कुछ भी हो लड़के अपने स्थान पर डटे रहें। घुड़सवारों के पैरों तले रौंद भले दिए जायँ, पर स्थान-च्युत होने का अपराध न करें। कजिन साहब के पत्र का उत्तर दे दिया गया कि सत्याग्रही अपनी जगह पर रहेंगे। लोगों की उत्कंठा बढ़ी जब मालूम हुआ कि घुड़सवारों को आगे बढ़ने का हुक्म होने जा रहा है। घटनास्थल पर अपार भीड़ इकट्ठी हो गई। रास्ता साफ कराने का काम प्रो० अब्दुल बारी, बलदेव बाबू तथा औरों के साथ साथ मैं किया करता था। इस नाज़ुक मौके पर रास्ता साफ करना मुश्किल था, पर यथासंभव सड़क पर भीड़ न रहे, इसका प्रयत्न किया गया। घुड़सवार सिपाही आगे बढ़ें तो सत्याग्रहियों का वारान्यारा हो जाय। लेकिन देखा कि सत्याग्रहियों के ऊपर से न जाकर वे लोग बगल से अपने घोड़े बढ़ाते आगे बढ़े और वहाँ से चले ही गए। इसका इतना बड़ा असर जनता पर पड़ा कि लोगों का उत्साह पहले से कई गुणा बढ़ गया और बाद में तो जगह जगह नमक बना बना कर कानून तोड़ने वालों की संख्या बढ़ती ही गई। लोगों में घर पकड़ की वजह से लेशमात्र भी भय नहीं होता था।

३

नमक बनाने और इस तरह से नमक कानून तोड़ने का सत्याग्रह बहुत जल्द प्रांत के कोने कोने में फैल गया। राजेंद्र बाबू डिक्टेटर की हैसियत से जगह जगह दौरा करने लगे और लोगों को सलाह देने तथा प्रोत्साहित करने का काम करने लगे।

गया जिले में नमक सत्याग्रह शुरू होने में कुछ विलम्ब हुआ। कुछ नवयुवक उस समय उत्साहित हो शहर के अंदर कितने प्रकार के सेवा कार्य में लग गए। श्रीयदुनंदन शर्मा उन्हीं में से एक थे जो काशी हिंदू विश्वविद्यालय से पढना छोड़ स्वयं-सेवकों में भरती हो गए थे। इस जिले में सिद्धि बाबू को ही सत्याग्रह आरंभ करना था और उसके लिए 'कर्म्म भगवान' नाम के गाँव को चुना गया। श्रीबदरीनारायण सिंह उस गाँव के प्रमुख जमींदारों में से थे। पहले गया कांग्रेस में एक दर्शक के रूप में शामिल हुए थे और उसी वक्त से मेरी उनकी जान पहचान हुई, यद्यपि 'कर्म्म भगवान' गाँव मेरे पड़ोस में ही था। पीछे उनकी सहानुभूति हिंदू सभाके साथ हुई और जब हिंदू सभा का काम जोर शोर से चलने लगा तब वे उसके प्रमुख कारकूनों में गिने जाने लगे। कुछ दिनों के बाद उनकी दिलचस्पी खादी की ओर गई और कितने हजार रुपये लगा कर अपने आसपासके गाँवों में खादी प्रचार का काम किया। जब कांग्रेस की ओरसे सत्याग्रह छिड़ने को हुआ तब उन्हों ने अपने गाँव में ही उसका श्रीगणेश करने का आमंत्रण दिया। सत्याग्रह शुरू होने से पहले गया जिले में काम करने के लिए श्री मथुरा प्रसाद पटने से आए हुए थे। सिद्धि बाबू के पकड़ लिए जाने पर जिले में कितने स्थानों का दौरा उन्हों ने बदरी बाबू के साथ किया। मैंने बदरी बाबू को सत्याग्रह करने से कुछ दिनों के लिए रुक जाने को कहा था, क्योंकि जिलेमें कांग्रेस का काम करनेवालों

की बहुत कम तादाद थी। जिलेमें जागृति पैदा करने का काम उनके ही कंधे पर था, पर सत्याग्रह न करने पर भी उनकी जमीन में सत्याग्रह हुआ था, इस बिना पर उनकी गिरफ्तारी हो गई। और सजा भी। उस समय गया जिलेमें मि० जौन्सटन कलक्टर थे। ये बड़े कड़े मिजाज के अफसर समझे जाते थे। और इनकी ज्यादतियों की ही वजह से गया जैसे कांग्रेस कार्य की दृष्टि से पिछड़े जिले में भी बहुत उत्साह बढ़ आया। अच्छे अच्छे जमींदार खानदान के नवयुवकों ने सत्याग्रह मे भाग लिया। श्री गौरीशंकरशरण सिंह, कुमार वीरेंद्रबहादुर सिंह इत्यादि का कैद हो जाना कुछ कम आश्चर्य की बात न थी। कुछ ऐसे संभ्रात कुल के लोग भी सत्याग्रह मे शामिल हो गये जो साधारणतः उससे अलग ही रहा करते थे। राय हरिप्रसाद लाल ने भी जोश में सत्याग्रह की वजह से गिरफ्तारी कबूल की, पर जेल की तकलीफ बर्दाश्त न कर सकने के कारण तथा अपनी स्त्री के जोर लगाने पर दूसरे ही दिन ये सत्याग्रह मे हिस्सा न लेने की शर्त पर छोड़ दिए गए।

प्रांत के सभी जिलों में सत्याग्रह शुरू हो गया और जितने प्रमुख नेता थे सब एक एककर गिरफ्तार हो गए। श्री विपिनबिहारी वर्मा चंपारण से, श्री रामदयालु सिंह मुजफ्फरपुर से श्री सत्यनरायण सिंह दरभंगा से, श्री नारायणप्रसाद सिंह छपरा से, श्री श्रीकृष्ण सिंह मुंगेर से, श्री रामनारायणप्रसाद

सिंह और श्री कृष्णवल्लभ सहाय हजारीबाग से, श्री शशिभूषण राम संथाल परगने से, श्री गोकुल कृष्ण राय पूर्णिया से—इसी तरह सभी जिले के प्रमुख व्यक्तियों के गिरफ्तार हो जाने पर जिलों का दौरा करना और वहाँ सत्याग्रह चलाते रहने के लिए उत्साहित करना राजेंद्र बाबू का काम हो गया। जगह जगह घूम कर सत्याग्रह के महत्त्व को समझाने तथा लोगों में जोश कायम करने का उपदेश करने के लिए राजेंद्र बाबू ज्यादातर पटने से बाहर ही रहने लगे और पटने में बैठे बैठे ब्रजकिशोर बाबू सत्याग्रह का संचालन करते रहे। पैर से चल नहीं सकने के कारण दौरा करने का काम वे अपने जिम्में लेने से लाचार थे। अतएव जरूरत पड़ने पर मुझे कितनी जगहों में जाना पड़ा। विपिन बाबू तथा श्री प्रजापति मिश्र के गिरफ्तार हो जाने पर ब्रजकिशोर बाबू ने श्री शारंगधर सिंह और मुझको बेतिया भेजा। मैं हाल में ही 'खेरावाड़ी' फार्म देकर असम से लौटा था। ब्रजकिशोर बाबू का हुक्म पाते ही हमलोग बेतिया गए। वहाँ का काम अच्छी तरह से चल रहा था। पुलिस की कुछ ज्यादती की रिपोर्ट पटना दफ्तर में पहुँची थी और इसी संबंध में हमलोग बेतिया भेजे गए थे। जहाँ पर पुलिस ने नाजायज हरकतें की थीं वहाँ हमलोग गए और लोगों को समझा बुझाकर उत्साहित किया।

एक या दो रोज हम वहाँ रहे। इस दरमियान की एक घटना मुझे अभी तक याद है। एक महाशय किसी महाजन के

यहाँ कर्ज अदा करने की गरज से आया और गांधी के आश्रम मे ही ठहरा। वहाँ जातिपाँति का कुछ भेद था नहीं। एक हरिजन चौका के चार्ज मे था और भोजन बनाने का काम उसके ही जिम्मे था। ब्राह्मण महाराज अपने महाजन के यहाँ इसलिए नहीं ठहरे कि वे शूद्र थे। उनके यहाँ खाना पीना करना उनके धर्म के अनुकूल नहीं होता। मैं ने जब उनसे कहा कि आश्रम मे तो किसी मजहब का लिहाज नहीं है, यहाँ के बर्तन में आप किस तरह भोजन करेंगे जब कि महाजन के यहाँ का बर्तन उनके शूद्र होने की वजह से आपने इस्तेमाल नहीं किया, तब उनका यह जवाब मिला कि आश्रम तो जगन्नाथपुरी है। यहाँ छूतछात का भेद ही कहाँ है। आश्रम में ठहरने और वहाँ के बर्तन को काम मे लाने से कोई धर्म की हानि नही होने की। इस छोटे से उदाहरण से काँग्रेसवालों के प्रति आम जनता के रुख का पता लगता है।

४

बेतिया, बगहा इत्यादि स्थानों का भ्रमण करने तथा लोगों को दृढ़-संकल्प बनाने के बाद हमलोगों को यहाँ से ही बिहपुर जाने के लिए ब्रजकिशोर बाबू का तार मिला। बिहपुर में सत्याग्रह छिड़ गया और उसका रूप एक दूसरे तरह का होने जा रहा था। अतएव हमें सरजमीन पर पहुँच कर वहाँ की परिस्थिति को जाँच कर अपनी सलाह बिहपुर के काँग्रेस-कर्मियों को देने की आज्ञा मिली थी। हमलोग सीधे बिहपुर पहुँचे।

वहाँ की हालत देखकर एक विकट समस्या का सामना करना पड़ा और उसपर अपनी राय देनी पड़ी।

विहपुर गंगा के उत्तर भागलपुर जिले का एक मुख्य स्थान है। यहाँ कांग्रेस के प्रति लोगों का विशद सद्भाव रहता आता था। बहादुर और कर्मठ लोगों की आबादी का यह प्राचीन स्थान उस समय भी नये उत्साह से प्रभावित हो कांग्रेस आंदोलन में शरीक होने के लिए तत्पर था। सरकार ने वहाँ के कांग्रेस आश्रम को जब्त कर लिया और स्वयंसेवकों को वहाँ से निकाल दिया। यह काम बिलकुल नाजायज तथा ज्यादतियों से भरा हुआ समझा जाता था। विहपुर के लोगों ने आश्रम को फिर से कब्जा करने के लिए सत्याग्रह करने का निश्चय किया। इसका क्या रूप होगा और इसको किस तरह चलाया जायगा, इस बात का निश्चय कराने के लिए प्रांतीय कांग्रेस कमिटी का आदेश माँगा गया था। हमलोग वहाँ पहुँचे तो देखा कि बाजार में एक फूस की झोपड़ी में स्वयंसेवक ठहरे हुए हैं। दिहातों से आनेवालों की असंख्य भीड़ लगी हुई है। कोई चूड़ा, कोई दही लेकर नये आश्रम में पहुँच रहा है। भागलपुर से भी तीसरे पहर की ट्रेन से दर्शकों की एक बड़ी जमात पहुँच गई। चूड़ा दही भोजन कर वहाँ के एक गंदे कुएँ का पानी पीने को मिला। भीड़ के कारण पानी इतना गदोला हो गया था कि उसमें और गढे के गदले जल में कोई भेद नहीं किया जा सकता था। विहपुर बाजार में एक डाक्टर भी रहते

थे। जो स्वयंसेवक सत्याग्रह करने जाते उनको पुलिस की लाठियाँ सहनी पड़तीं, इसलिए उनकी सेवा-शुश्रूषा के लिए बस्ती के डाक्टर तथा और लोग तैयार थे।

पाँच बजे स्वयंसेवकों का एक जत्था आश्रम की ओर बढ़ा। एक गढे होकर आश्रम की ऊँची जमीन पर चढ़ने का रास्ता था जिसे रोक कर पाँच सात लाठीबद्द सिपाही खड़े थे। स्वयंसेवकों में दो तीन तो ऐसे मजबूत थे कि यदि चाहते तो अकेले ही उन सिपाहियों को मार गिराते, पर अहिंसा के पुजारी स्वयंसेवकगण वीरतापूर्वक आश्रम की ओर बढ़ने लगे। जैसे ही सिपाहियों के नजदीक पहुँचे कि उनपर तड़ातड़ लाठियां बरसने लगीं। पाँचो स्वयंसेवक घायल होकर गिर पड़े। फौरन ही दूसरे लोग वहाँ पहुँचे और उन्हें टाँग कर अस्पताल ले गए। उनकी मरहम पट्टी होने लगी। यही वहाँ का क्रम था। वहाँ से हम दोनों पटना के लिए रवाने हुए।

पटना पहुँच कर ब्रजकिशोर बाबू से सारी बातें कहीं। लोगों के जोश को देख कर उन्होंने सत्याग्रह चलाते रहन की सलाह दी। घायल स्वयंसेवकों की मरहम पट्टी के लिए सहायता भेजने को भी कहा। लोगों में अपार उत्साह था और जैसे जैसे सत्याग्रह चलता गया जनता का उत्साह बढ़ता ही गया। प्रति दिन किसी न किसी गाँव के चौकीदार की नौकरी से इस्तीफा देने की खबर आती रही। मैं पटना पहुँचते ही अपने पिता जी के गाड़ी से गिर कर चोट खा जाने का तार पा

शाम की गाड़ी से मकान के लिए रवाना हुआ। जब से असम से लौटा था तब से इन दस बारह दिनों के अंदर बराबर ही सफर करता रहा था, एक दिन भी आराम की नींद नहीं सो सका था। थकावट और परेशानी से चूर था। घर जाने में भी रात को सफर करना पड़ा और दूसरे दिन एक मील कड़ी धूप में पैदल चल कर नव बजे मकान पहुँचा। पहुँचने के कुछ ही देर बाद बुखार हो आया। बुखार जोर से आया, पर दो तीन घंटे के बाद उसका वेग कम हो गया। फिर थोड़ी देर के बाद इतने जोर का बुखार हो आया कि मैं करीब करीब बेहोश हो गया।

बीमारी बढ़ती गई। टेम्परेचर १०६°, १०७° डिग्री तक हो गया। तकलीफ ऐसी थी कि जब तक होश में रहता था तब तक बड़ी परेशानी रहती थी। वैद्य और गया के एक कविराज तथा औरंगाबाद के डॉ० महेश्वर प्रसाद दवा करने आते थे, पर आपस में निदान नहीं बैठने के कारण किसी को दवा देने की हिम्मत नहीं होती थी। सत्याग्रह की सारी बातें मेरे दिमाग में घूमती रहती थीं। आज अमुक सत्याग्रही जेल गया, कल अमुक, इस तरह के ख्याल से परेशान बना रहता था। एक दिन ऐसा मालूम हुआ कि मेरे प्राण कहीं से लौट कर मेरे पुराने याददाश्तों को फिर वापस बुलाने आए हैं। संभवतः यह ख्याल बेहोशी दूर होने की वजह से हुआ हो। पटने में जब मेरी बीमारी की खबर पहुँची तब पांडेय नरसिंह सहाय वहाँ से मुझे

देखने के लिए मेरे मकान पर आए। डॉ॰ महेश्वरने अपनी दिक्कत वैद्य और कविराज के मुकाबले में दवा करने में बताई। खून की परीक्षा करने की बात हुई, पर ऐसी परीक्षा तो पटने में ही की जा सकती थी। वे खून लेकर पटना चले गए वहाँ जाँच करने पर पता चला कि मैं भयानक मलेरिया से पीड़ित हूँ। इस तरह की मलेरिया का कारण असम की सफर ही बनाया गया। डा॰ महेशदत्त तिवारी ने उसका उपचार क्विनाइन-इनजेक्सन द्वारा ही होना निश्चित किया। डा० सत्यनारायण को लेकर पाण्डेय नरसिंह सहाय पुनः वापस आए और मुझे इनजेक्सन दिया गया। बुखार धीरे धीरे कमने लगा, पर कमजोरी इस कदर हो गई थी कि मैं बिस्तरे से उठ बैठ नहीं सकता था।

बीमारी की अवस्था में पड़ा पड़ा मैं बाहर की खबरें लिया करता था। राजेंद्रबाबू की गिरफ्तारी की खबर पहुँची। छपरे में उनकी सजा हुई थी और ट्रेन से बनारस और वहाँ से मुगलसराय होते हुए ग्रेंड ट्रंक रोड से हजारीबाग मोटर से पहुँचाये जानेवाले थे, यह खबर भी मुझे मिली। मेरे घर से एक मील दक्खिन से ग्रेंड ट्रंक रोड जाती थी। उसी होकर उनकी 'कार' हजारीबाग जा रही थी। न तो मैं उनसे मिल सकता था और न उनका ही आना संभव था। मैंने सुना कि मेरी बीमारी का हाल सुन कर उन्हें मुझे देख आने की इच्छा हुई थी, पर वह सारे सूबे के दौरे में इतने व्यस्त थे कि उनको एक दिन की भी फुरसत नहीं

मिल सकी थी। इसी बीच में मेरे बिहपुर से लौट आने पर प्रो० बारी को लेकर वे बिहपुर गए थे। जनता की अपार भीड़ वहाँ प्रत्येक दिन होती थी। उनके जाने की खबर पाकर उस दिन ज्यादा भीड़ हुई। पुलिस की ओर से भी काफी तैयारी थी। पुलिस सुपरिंटेंडेंट खुद वहाँ मौजूद थे। भीड़ हटाने के लिए उन्होंने लाठियाँ चलाने का हुक्म निकाला। बारी साहब को माथे में सख्त चोट आई और खून बहने लगा। राजेंद्र बाबू को भी चोट आई थी पर खून न निकला था। एक स्वयंसेवक ने अपनी आड़ देकर बड़ी खूबी के साथ उनको बचा लिया था। इस घटना के प्रतिवाद स्वरूप रायबहादुर कमलेश्वरी सहाय, श्रीअनंत प्रसाद आदिने कौंसिल की मेंबरी से इस्तीफा दे दिया। बिहपुर सत्याग्रह ने इस समय सारे प्रांत में और उसके बाहर भी लोगों का ध्यान आकृष्ट कर लिया। इसकी मदद के लिए प्रांत के सभी जिलों से स्वयंसेवक भेजे जाने लगे थे। उस समय श्री डि० पी० सिन्हा भागलपुर के कलक्टर थे। उन्होंने उस सत्याग्रह को किसी न किसी तरह खतम करने की चेष्टा की। राजेंद्र बाबू से उनकी मुलाकात हुई थी और एस० डी० ओ० श्रीअवधकुमार सिंह के द्वारा कुछ बातें भी चलीं, पर प्रांतीय सरकार ने उनके प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। शायद उनकी इस कमजोरी के लिए ही उन्हें उड़ीसा बदल दिया गया था और श्रीअवधकुमार सिंह को फिर एस० डी० ओ० होने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ।

सत्याग्रहियों को दबाने के लिए बिहपुर में अतिरिक्त पुलिस की तैनाती हुई। उसके इंसपेक्टर हुए हमारे पूर्व परिचित, गिरिडीह घटना कांड के मुख्य नायक श्री जगदेव सिंह। उन्होंने सत्याग्रहियों के साथ नाना प्रकार के अमानुषिक अत्याचार कर अपना यश चिरकाल के लिए स्थापित कर दिया। एक स्वयं-सेवक के कान में साइकिल के पंप से हवा देकर उसके भीतर की झिल्ली को फाड़ दिया। दूसरे स्वयंसेवक को तालाब के पानी में बहुत देर तक डुबो रखा और जब मृत्युप्राय हो गया तब छोड़ दिया। तीसरे स्वयंसेवक के कान को भी उसी रीति से बेकाम करने की कोशिश की। कितने को बेरहमी से पीटा और कितने गाँवों में घर उजाड़ दिए इसका ठिकाना नहीं। नाना तरह की यातनाएँ वहाँ के लोगों को सहनी पड़ीं। सत्याग्रह धीमा जरूर पड़ गया, पर बंद नहीं हुआ। राजेंद्र बाबू की गिरफ्तारी के बाद भागलपुर के श्रीदीपनारायण सिंह दूसरे डिक्टेटर हुए। उन दिनों सरकार ने आर्डिनेन्स के द्वारा आल इंडिया कांग्रेस वर्किंग कमिटी को गैर कानूनी करार दिया था। दिल्ली में जब उसकी बैठक हुई तब सब के सब मेंबर गिरफ्तार हो गए। दीप बाबू भी गिरफ्तार हुए और उन्हें कैद की सजा दी गई। मेंबरों को अपने अपने प्रांत में भेज दिया गया और दीप बाबू भी हजारी-बाग जेल भेजे गए। अपनी गिरफ्तारी के पहले ही उन्होंने मुझे अपना क्रमानुयायी बना दिया था। मैं बीमार से अच्छा होकर दो महीने के बाद पटने आ चुका था। कमजोरी जरूर

थी और उसके लिए कुछ दिन तक रायबरेली जा कर हवा पानी भी बदल चुका था, पर मैं ज्यादा सफर करने लायक नहीं हो सका था। फिर भी प्रांत में सत्याग्रह को चलाते रहने की कोशिश करता रहा।

५

सारे मुल्क में एक छोर से दूसरे छोर तक उत्साह का संचार हो आया था। प्रत्येक दिन एक न एक हृदयद्रावक, पर साथ ही उत्साहवर्द्धक खबर आती रहती थी। धरसना के ऊपर जो धावा हुआ था उस समाचार को पढ़ कर हृदय उमंग से फूल उठता था। बंबई शहर में महिलाओं की बहादुरी की कहानी सब के मुख पर मौजूद थी। श्रीमती सरोजिनी नायडू ने जिस तरह मुकाबला किया था उससे कमजोरों के दिल में भी नया जोश पैदा हो जाता था। एक दूसरे के कामों से परस्पर प्रोत्साहन मिलता रहता था। सूबे के सभी जिले एक दूसरे के साथ स्वयंसेवकों को जेलों के भीतर भेजने के लिए प्रतियोगिता कर रहे थे।

कुछ दिनों के बाद सत्याग्रह कुछ धीमा पड़ने लगा। सरकारी ओर से घोर दमन हो रहा था, पर उससे जोश बढ़ता ही जाता था। काम करनेवाले धीरे धीरे छिप कर काम करने लगे थे। उसका बुरा असर आगे पड़नेवाला था, पर तत्काल उत्साह में फर्क नहीं पड़ा। मेरी बदकिस्मती कुछ ऐसी रही कि अच्छा होने के बाद भी मैं बहुत उपयोगी नहीं हो

महीने महीने बुखार का दौरा हो जाया करता था और दो चार दिनों के बाद फिर अच्छा हो जाता था। जब कभी बाहर जाने का प्रोग्राम बनाता तब निश्चित तिथि के आसपासमें बुखार हो जाने से उसे स्थगित ही कर देना पड़ता।

राष्ट्रपति जवाहरलाल जब जेल जा रहे थे तब श्री मोतीलाल नेहरू को अपना पद दे गए थे। नमक कानून तोड़ने के साथ ही दूसरे कानूनों को भंग करने का सवाल उठा। चौकीदारी टैक्स हमारे सूबे में एक ऐसा टैक्स है जिसे गाँव के अधिकांश लोग देते हैं। इस टैक्स को न देने की मुनादी कर दी गई। कितनी जगहों में गोलीकांड के शिकार तक लोगों को होना पड़ा। सारन तथा मुंगेर जिलों में स्वयंसेवकों तथा आम जनता की बहादुरी वर्णन करने योग्य थी। कई जगहों पर पुलिस ने गोलियाँ चलाईं। कितने लोग मरे और घायल हुए मुंगेर के बेगूसराय में कुछ नवयुवकों ने अपनी छाती खोल कर गोलियाँ खाईं और वहीं धराशायी हो गए। इस भयानक हत्याकांड की खबर जब पटना पहुँची तब मैं वहाँ गया और वहाँ की परिस्थिति के बारे में अपनी रिपोर्ट सर्चलाइट में छपवाई। जिन गाँवों के बहादुर युवक गोलियों शिकार बनकर शहीद हुए थे वहाँ भी मैं गया और उनके परिवार को सांत्वाना देने की चेष्टा की। कौंसिल के मेंबरों ने इस रिपोर्ट के बिना पर लाट साहब का ध्यान बेगूसराय की घटना की ओर खींचा। एक्सिक्यूटिव कौंसिलर मि० सिफ्टन स्वयं बेगूसराय गए और

वहाँ की घटना की तहकीकात की। कुछ दिनों के बाद सब-डिविजनल ऑफिसर और डी० एस० पी० जो उस हत्याकांड के लिए जवाबदेह थे वहाँ से बदल दिए गए।

श्री जवाहरलाल नेहरू मियाद पूरी कर छूटने पर दस दिन के भीतर ही पुन: गिरफ्तार हो गए। उनके दुबारे कैद होने के उपलक्ष्य में 'जवाहर-दिवस' मनाने का फरमान सभी प्रांतीय दफ्तरों में भेजा गया। हमारे सूबे में भी 'जवाहर-दिवस' मनाने की हिदायत सब मातहत कमिटियों के पास भेज दी गई थी। नियत तिथि पर सरकारी अफसरों के मना करने पर भी बहुत जगहों में जुलूस निकले और सभाएँ की गईं। मुजफ्फरपुर में तिलक मैदान में सभा करने की मनाही थी। सरकारी आज्ञा के विरुद्ध वहाँ सभा की गई और स्वयंसेवकों को पुलिस की लाठियाँ सहनी पड़ीं। उन दिनों में उत्तर बिहार के जिलों में दौरा करने निकला था। मुजफ्फरपुर जाने पर वहाँ की घटना से परिचित हुआ। घायल व्यक्ति, अस्पताल पहुँचा दिए गए थे। मेरा वहाँ ठहरना जरूरी नहीं समझा गया। अतएव मैं वहाँ से मोतीहारी के लिए रवाना हो गया। मोतीहारी शहर में एक बड़ी सभा हुई। उसमें भाषण दे मैं बेतिया की ओर बढ़ा। श्री मुकुटधारी सिंह उस जिलेमें काम करने के लिए पटने से भेजे गए थे और उनका काम प्रशंसनीय हुआ था। बेतिया में एक बड़ी सभा हुई जिसमें मुझे भाषण देना पड़ा। वहाँ से मैं और कितनी जगहें गया। लौटती बार रास्ते में जितने आश्रम मिले

वहाँ के कार्यकर्त्ताओं से मिलता और उन लोगों को यथा योग्य परामर्श देता रात में फिर मोतीहारी पहुँचा। अफवाह उड़ गई थी कि मैं बेतिया मोतीहारी में पकड़ लिया जाऊँगा। मैं अपनी गिरफ्तारी का इंतजार करने लगा, पर जब मोतीहारी में भी गिरफ्तार न हुआ तब वहाँ से दरभंगा गया। टाउन हाल में एक सभा हुई। उसमें मैंने भाषण दिया और जनता को तत्कालीन कर्त्तव्य पूरा करने के लिए समझाया, उस सभा में श्री धनराज शर्मा ने चंद प्रश्न पेश किए थे? कांग्रेस से अलग हो कर वे कौंसिल में प्रवेश कर चुके थे। उनके प्रश्नों का कुछ खास अर्थ भले ही हो, पर जनता की दृष्टि में उनका कुछ महत्त्व नहीं था।

६

श्री मोतीलाल नेहरू ने उस समय करबंदी के प्रश्न पर सभी प्रांतों की राय जाननी चाही। अस्वस्थ हो कर वे मंसूरी में रहते थे। वहीं वर्किंग कमिटी की एक बैठक बुलाई गई। उस समय ऐक्टिंग प्रेसिडेंट थे लखनऊ वाले मौ० खलीकुज्जमा साहब। मेरी पहली मुलाकात उनसे मंसूरी में ही हुई। बिहार ने सत्याग्रह में बहुत अच्छा काम किया था इसलिए वर्किंग कमिटी की ओर से एक प्रस्ताव द्वारा बिहार को बधाई मिली। आगे के कार्यक्रम पर भी बातें हुईं और कई प्रस्ताव स्वीकृत हुए। नेहरू जी को मैं ने अपने प्रांत की परिस्थिति बताई और करबंदी के विरुद्ध अपने प्रांत की राय पेश की। उन्होंने मुझसे

इत्तफाक जाहिर किया। खर्च के लिए रुपया भी माँगा था और इस दरखास्त की भी मंजूरी मिल गई।

बीमारी से तुरत ही फुरसत मिली थी। साथियों की यह सलाह हुई कि मैं उसी मौके पर कुछ दिनों तक मंसूरी में ठहर जाऊँ और हवा पानी बदल कर लौटूँ। मैं वहाँ एक हफ्ते से ज्यादा न ठहर सका। उन दिनों मुझे प्रत्येक महीने बुखार हो आया करता था। मंसूरी से लौटती ख्याल हुआ कि देहरादून के निकटवर्ती गंधकवाले झरने में स्नान करता चलूँ। सुना था कि उसमें स्नान करने से खुजली छूट जाती है। मंसूरी से उतर कर पहाड़ के नीचे ही एक डाक बँगले में ठहरा। गंधक-वाले झरने तक पहुँचने के लिए किराये पर घोड़े की सवारी मिली। पहाड़ से हो कर गुजरना होता था। रास्ते में जोर से बुखार हो आया। बीच से लौटना मुनासिब न समझ मैं झरने तक गया और वहाँ स्नान भी किया। लौट कर बँगले तक आते आते इतना अधिक बुखार हो आया कि मुझ में चलने फिरने की ताकत भी न रही। पर अकेला था, करता ही क्या। किसी सवारी से देहरादून स्टेशन तक आया और किसी तरह एक इंटर क्लास के डब्बे में लेट रहा। शरीर में ताकत नहीं रही थी और बेहोश जैसा हो कर पड़ रहा। सुबह में जब गाड़ी बरेली से आगे बढ़ी तब एक तार अपने भाई के पास राय बरेली भेज दिया। उसमें अपने बीमार हो जानेकी खबर थी। दोपहर के करीब राय बरेली पहुँचा और एक या दो दिन वहाँ ठहर गया।

बुखार तो दो तीन दिन से ज्यादा रहता नहीं था। अच्छा होते ही फिर इलाहाबाद होते पटना लौट आया।

७

१९३० ई० खतम नहीं हुआ कि सर तेज बहादुर सप्रू और श्रीजयकर ने महात्मा गांधी तथा श्रीमोतीलाल नेहरू से सुलह की बातें शुरू कर दीं। दोनों नेताओं को परस्पर मिलाने के लिए अवसर दिया गया। श्रीमोतीलालजी, श्रीजवाहरलाल जी तथा डॉक्टर सैयद महमूद इस समय नैनी जेल में थे। उनको स्पेशल ट्रेन से यरवदा जेल पहुँचाया गया ताकि वहाँ महात्माजी से मुलाकात हो और कुछ निश्चित राय कायम की जा सके। मुलाकात हुई और अस्थायी तरीके पर कुछ प्रस्ताव तै हो गए, पर जब तक बाजाप्ते वर्किंग कमिटी की बैठक न हो लेती तब तक निश्चयात्मक रूप से किसी तजवीज पर पहुँचना युक्ति-विहीन हो नहीं, बल्कि सुलह के हक में भी लाभजनक नहीं होता। इस लिए सर सप्रू ने भारत सरकार से वर्किंग कमिटी के सब मेंबरों को रिहा कर देने का वचन ले लिया और एक एक कर सभी मेंबर छूट भी गए। यह फैसला २५ या २६ जनवरी १९३१ ई० को घोषित हुआ।

पटनेमें धर पकड़ होती रही, पर उत्साह में कमी नहीं हुई। उस साल बलदेव बाबू ने कांग्रेस के काम में काफी हिस्सा लिया और कानूनी मदद के सिवा प्रांत के कितनी जगहों का दौरा किया। लोगों को बराबर सलाह मशविरा देते रहे। मिसेस

हसन इमाम ने भी अच्छा उत्साह दिखलाया और महिलाओं में जागृति पैदा करने की कोशिश की। उन दिनों मेरे जिम्मे जो काम था उसे अंजाम अवश्य देता था और यदि अधिकारी वर्ग चाहते तो मुझे कभी गिरफ्तार कर लेते। मैंने उससे बचने की चेष्टा कभी नहीं की। अस्वस्थ रहता था और बुखार अकसर हो जाया करता था, इससे काम में ज्यादा तेजी दिखलाने में मजबूर था।

अंत में यह ठहरा कि २६ जनवरी १९३१ ई० को पटने में झंडा फहराने का काम मैं ही करूँ और जिस से उस दिन संभव है, जेलयात्रा अनिवार्य हो जाय क्योंकि अधिकारी वर्ग झंडा उत्सव होने में बाधा देते, इसका हमें पता था।

का प्रस्ताव कबूल हुआ। गांधी जी और लार्ड इरविन से समझौते की बात दिल्ली मे शुरू हुई। वर्किंग कमिटी की बैठक भी उतने दिनों तक दिल्ली में होती रही। कितने दिनों की बातचीत के बाद अंत में समझौता हुआ। उसी को गांधी-इरविन पैक्ट कहते हैं। समझौते की खबर देशके कोने कोने मे फैल गई और सत्याग्रही जेलों से रिहा कर दिए गए। जनता में कांग्रेस की जीत की खबर पहुँचते ही अपूर्व उत्साह का प्रदर्शन होने लगा। बयान में कहा गया कि इस समझौते का अर्थ यह न लगाया जाय कि सरकार हार गई है और कोई इस तरह का प्रदर्शन भी न हो, पर गांधीजी और उनके समीपवर्ती भले ही इस भाव को व्यवहार के रूपमे न लावें, किंतु कांग्रेस के निम्न तबके के लोगों ने इसे अपनी जीत ही समझी। कुछ ऐसी हरकतें भी की गई जिनकी प्रतिक्रिया आनेवाली लड़ाई पर पड़ी। अंग्रेज अफसरों ने भी इसे अपनी हार समझी और अपनी शक्ति भर इस नीति को उलट देने की कोशिश करने से बाज नहीं आए। परस्पर का द्वंद्व अनिवार्य था, पर किसी तरह समझौते का असर १९३१ ई० के अंत तक कायम रहा।

गांधी-इरविन पैक्ट के अनुसार राजनैतिक बंदी छोड़ दिए गए थे। दूसरी शर्तों के पालन के विषय पर जगह जगह कांग्रेस और प्रांतीय सरकार में मतभेद आरंभ हो गया। बहुत से बंदी, जिनकी सजा दूसरे दूसरे दफाओं में हुई थी, नहीं छोड़े गए थे। अतएव उनलोगों के बारे में प्रांतीय सरकार से लिखा-

पढ़ी होने लगी। जुरमाना जो वसूल नहीं हुआ था उसे छोड़ देना तथा इस तरह की और शर्तों को लेकर असंतोष फैलने लगा था। राजेंद्र बाबू प्रांतीय सरकार के चीफ सेक्रेटरी हैलेट साहब से इन विषयों पर लिखा पढ़ी कर रहे थे। बहुत सी बातें तो सरकार की ओर से कबूल कर ली गईं और तदनुसार काम भी हुए, पर बहुत सी ऐसी बातें रह गईं जिनका सुलझना पत्र व्यवहार के जरिये संभव नहीं दीख पड़ा। लाचार राजेंद्र बाबू को इन सब मामलों को लेकर लाट साहब से मुलाकात करने के लिए रांची जाना पड़ा। श्रीबाबू और मुझको उन्होंने साथ ले लिया। मैं सारे कागजात से जानकारी रखता था। राँची में तीन चार दिनों तक रह कर राजेंद्र बाबू ने गवर्नर तथा चीफ सेक्रेटरी से बातें कर लीं। एक दिन सर गणेश ने अपने यहाँ खाने को हमलोगों को बुलाया। चार वर्ष बाद उस दिन मुझे उनके यहाँ जाने का अवसर मिला। खिलाने में उन्हो ने काफी सद्भाव दिखलाया और बावजूद इसके कि उनका मेरे साथ दुर्व्यवहार हुआ था मुझे उस अवसर पर इतने दिनों के बाद जाने में किसी तरह की हिचकिचाहट नहीं मालूम पड़ी।

८

१९३१ ई० के आरंभ से ही जब प्रांतीय कांग्रेस कमिटी की बैठक हुई तब मैं जेनरल सेक्रेटरी चुना गया और इस हैसियत से सब जिलों के साथ संबंध रखने लगा। विलायती चीजों का बायकाट पैक्ट की शर्त के अनुसार जायज था। इस

विषय को लेकर बहुत गलतफहमी शुरू हो गई। हमारे स्वयं-सेवकों ने बायकाट तथा पिकेटिंग को सीमा के बाहर ले जाने की जब कभी कोशिश की तब सरकारी अफसरों ने पिकेटिंग मात्र को ही रोकना चाहा। अतएव कहीं-कहीं आपस मे संघर्ष हो जाया करता था।

यू० पी० में किसानों को कुछ विशेष कष्ट हुआ था। पैदावार अच्छी नहीं होने के कारण छूट मिलने के लिए तथा लगान के संबंध में किसानों के बीच आंदोलन चल रहा था। स्वभावत: उसकी जवाबदेही कांग्रेसी लोगों पर ही थी। वहाँ की प्रां० कां० कमिटी ने विशेष परिश्रम कर किसानों की अवस्था को जाँच कर तत्कालीन परिस्थिति पर रोशनी डाली थी।

१९३१ ई० के मार्च महीने में करांची मे कांग्रेस हुई। सरदार वल्लभ भाई पटेल राष्ट्रपति हुए। कांग्रेस अधिवेशन के कुछ ही दिन पहले महात्माजी के बहुत जोर देने पर भी श्रीभगत सिंह को फाँसी दो गई थी। सारे मुल्क में उससे सनसनी फैल गई। पैक्ट की वजह से जो सुलह की आबोहवा कायम हो रही थी उस पर बहुत जोर का धक्का लगा। करांची कांग्रेस मे उसका खूब प्रदर्शन हुआ और उग्रनीति रखनेवाली जमात ने उस घटना से काफी लाभ उठाया। असंतोष फैलाने मे उससे प्रगति मिली। श्रीजवाहरलालजी ने अपना मौलिक अधिकार और आर्थिक कार्यक्रम के प्रस्ताव को स्वीकृत कराया। राजेंद्र बाबू ने उस विषय में हमलोगों से सलाह ली और थोड़ा बहुत

तरमीम के बाद उनका वह प्रस्ताव कबूल हो गया। उन्होंने इसका अर्थ लगाया कि 'समाजवाद' की ओर कॉंग्रेस ने एक कदम आगे रखा। हमलोगों के ख्याल में भी समाजवाद को पुनर्संगठित करने के लिए इन सिद्धांतों का प्रयोग अनिवार्य होना। सफलता की दृष्टि से करॉंची कॉंग्रेस बहुत मार्के की हुई, ऐसा कहा जॉं सकता है। यहीं हमने खा अब्दुल गफ्फार खा के लालकुर्तीवालोंको सज धज के साथ कॉंग्रेस में शामिल होते पहली बार देखा।

६

गाधी इरविन समझौते के मुताबिक कॉंग्रेस को राउंडटेबुल कांफ्रेंस मे शरीक होने के लिए इंगलैंड जाना था। वर्किंग कमिटी ने फैसला कर लिया था कि सिर्फ महात्मा गाधी ही सारी कॉंग्रेस की ओर से राउंडटेबुल कॉंफरेंस मे शरीक होंगे। ऐसा करना इसलिए भी जरूरी हो गया था कि समझौते की शर्तों को लेकर परस्पर मतभेद बढता जाता था और जवाबदेह आदमी अगर प्रत्येक सूबे में न रह जाते तो संघर्ष होने का भय था। महात्माजी को भी सरकार की ओर से शर्त्त के मानने में संतोष-जनक रुख नजर नहीं आता था, अतएव इस अवस्था में इगलैंड जाने से आगापीछा कर रहे थे। चिट्ठियों के जो उत्तर सरकारी पक्ष से मिलते गए उनसे और भी असतोष बढ गया। अत में महात्माजी ने राउंडटेबुल कांफरेंस में शरीक होने से इनकार कर दिया। इस पर लार्ड विलिंगडन ने उनको शिमला

बुलाया और यू० पी० तथा पश्चिमोत्तर सीमांत प्रदेश के पक्ष को लेकर संतोष देने की चेष्टा की। महात्माजी ने श्रीजवाहरलाल को भी शिमला बुला कर यू० पी० की हालत पर मि० इमरसन तथा दूसरे अफसरों से बातें करवा दी। संतोषजनक उत्तर पाकर आखीर वक्त में राउंडटेबुल कांफरेंस के लिए महात्माजी तैयार हो गए और खास ट्रेन से शिमले में चलकर बंबई पहुँचाए गए। जब तक वे बंबई पहुँच न गए तब तक जहाज रुका रहा। विहार से मौ० शफी और सर अलीइमाम भी राउंडटेबुल कांफरेंस में शामिल हुए।

राउंडटेबुल कांफरेंस में महात्मा जी को कुछ भी सफलता न मिली। इस बीच यू० पी० तथा सीमांत प्रदेश में हालत नाजुक होती गई। यहाँ तक कि महात्माजी वहाँ से लौट कर बंबई पहुँचने वाले ही थे कि श्रीजवाहरलाल नैनी स्टेशन पर बंबई के रास्ते में, पकड़ लिए गए। एक तरह से युद्ध की घोषणा कर दी गई। महात्माजी के लौटने पर बंबई में वर्किंग कमिटी की बैठक हुई। बड़े लाटसाहब ने महात्माजी से यू० पी० तथा सीमांत प्रदेश की परिस्थिति पर बातें करने से इनकार कर दिया, पर और विषयों पर बातें करना यदि गांधी जी चाहें तो उन्हें मंजूर था। लार्ड विलिंगडन का यह रुख साफ कहता था कि सरकार कांग्रेस से लड़ने को तैयार थी और गांधी-इरविन समझौते से जो नाखुशी अफसरों को हुई थी उसको दूर करने के लिए वह उत्सुक थी। वर्किंग कमिटी के लिए

सत्याग्रह अनिवार्य था और यदि अपनी ओर से कोई हिदायत जारी न भी करते तो भी सरकार की ओर से पूरी तैयारी हो चुकी थी। अतएव वर्किंग कमिटी ने सत्याग्रह छिड़ जाने पर कौन कौन तरीके काम मे लाने होंगे इसके विषय में मातहद कमिटियों के पास परिपत्र भेज दिया। सरकार ने आर्डिनेंस निकाल कर सब काँग्रेस कमिटियों को गैर कानूनी घोषित कर दिया और एक ही दिन में जितने प्रमुख काँग्रेसी थे सब को किसी न किसी बहाने गिरफ्तार कर लिया।

१०

१९३२ ई० के आरंभ में ही गिरफ्तारी शुरू हो गई थी। बिहार प्रां० कां० वर्किंग कमिटी की बैठक पटने में बुलाई गई। मैं उसमें शामिल होने के लिए मकान से लौटकर आरहा था। गया ट्रेन में ही मालूम हुआ कि सदाकत आश्रम जब्त कर लिया गया और जितने लोग मिटिंग के लिए आए हुए थे सब पकड़ लिए गए। ब्रजकिशोर बाबू भी उसमें शामिल थे। रास्ते में ही मैंने बैंक के रुपये के लिए चेक पर दस्तखत कर दी और अपने कारबार के विषय में भी कुछ नसीहत लिख कर तैयार रखी, क्योंकि मेरा विश्वास था कि मैं पटना पहुँचते ही गिरफ्तार हो जाऊँगा। जब वहाँ पहुँचा तब मालूम हुआ कि मुझे सदाकत आश्रम नहीं जाने का आदेश है और बाहर रह कर आंदोलन चलाना है। मेरे लिए एक कठिन समस्या आ खड़ी हुई और मैं योंही जेल जाने के लिए तैयार भी नहीं था। यदि गिरफ्तार

हो जाता तो उसमें चारा ही क्या था। दूसरे ही दिन बैंक के रुपये जब्त करने का आर्डिनेंस निकला। मालूम हुआ कि बैंक की खानातलाशी हो रही है। बैंक मैनेजर ने इस काम में जितनी देर की जा सकती थी उतनी देर की। मुझे खबर मिली और मैंने थोड़ा रुपया हिसाब मे छोड़कर शेष रुपये को बरामद कर लिया। जो रुपया बच रहा था वह जब्त हो गया। पीछे चाहता तो उसे वापस दिला देता, पर छोटी रकम होने की वजह से भी हमारा ध्यान उस ओर नहीं गया।

सत्याग्रह छिड़ गया और सरकार की ओर से उसमे बहुत सतर्कता दिखलाई गई। कांग्रेस कमिटियों को प्रचार का समय मिले इसके पहले ही प्रमुख लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया था। जो कुछ थोड़ा समय मिला था उसी में जिला के सभापतियों को बुलाकर नसीहतें दे दी गईं और उनसे जितना हो सका अपने गिरफ्तार होने के पहले उतना प्रचार काम कर दिया। गिरफ्तार हो जाने पर उन लोगों ने अपने अपने उत्तराधिकारी के हाथ शेष काम सौंप दिए। प्रत्येक जिले में एक या दो प्रमुख व्यक्ति ऐसे बच गए थे जो सत्याग्रह चला रहे थे। इस युद्ध मे खुल्लमखुल्ला काम नहीं हुआ। लुक छिप कर खबरें भेजी जाने लगीं। रुपये पैसे की मदद भी ए० आई० सी० सी० से मिलती थी, वह भी बहुत छिपे तौर पर खास खास पोशाक पहन कर और अपना नाम छिपा कर कांग्रेस के आदमी एक प्रांत से दूसरे प्रांत खबर ले जाया करते थे और ऐसे लोगो के पास

पहुँचा देते थे जिस पर सरकारी अफसरों को अमूमन शक नहीं होता था।

राजेंद्र बाबू के गिरफ्तार हो जाने पर श्रीरामदयालू सिंह और उनके बाद प्रो० बारी प्रांत के डिक्टेटर हुए। मैंने कुछ दिनों के लिए किसी तरह की जवाबदेही लेने से इनकार कर दिया था। शंभु बाबू के अचानक मृत्युग्रस्त हो जाने से मैंने उनके परिवार की देख रेख करने का भार अपने ऊपर ले रखा था। सबसे मुख्य कारण मेरे जेल नहीं जाने का तो यह था ही, साथ ही काम चलता रहे, इसका प्रबंध भी जब तक मैं बाहर था मेरे ही जिम्मे था, चाहे डिक्टेटर कोई भी रहे हों। रामदयालू बाबू ने डिक्टेटर की हैसियत से कई जिलों का दौरा किया। सब जगह के कामों का निरीक्षण वे करते रहे। रुपये पैसे उनके ही आदेश के अनुसार सब जिलों को मिलते थे। बाद जब प्रो० बारी डिक्टेटर हुए तब उनका काम ज्यादातर पटने में ही होता था। कभी कभी प्रांत के बाहर चले जाते थे और काम के लिहाज से ही जल्द गिरफ्तार होने के पक्ष में नहीं थे।

मुरली बाबू तनमन से काँग्रेस सत्याग्रह को मदद देने के लिए मुसतैद रहते थे। जब सर्चलाइट जमानत न देकर बंद हो गया तब उनको काम करने की फ़ुरसत पहले से ज्यादा हो गई। रामदयालू बाबू की गिरफ्तारी पटने में ही हुई। असिस्टेंट सुपरिंटेंडेंट ने उनको गिरफ्तार कर मुजफ्फरपुर जिले में, जहाँ से वारंट निकला था, भेज दिया। बारी साहब की गिरफ्तारी भी

चद्र महीने के बाद पटने मे हुई। उस वक्त कोई आदमी कॉंग्रेस को मकान किराये पर भी देने को तैयार न था। सदाकत आश्रम बंद हो गया था। ऑर्डिनेंस के जरिये मकान देना भी कॉंग्रेस मे मदद देना समझा जाता था। इसलिए किसी को किराये पर भी मकान देने की हिम्मत नहीं होती थी। कुछ दिनों के लिए श्रीशिवेश्वरदयाल, गवर्नमेंट प्लीडर ने अपने भाई को मकान किराये पर देने की इजाजत दे दी थी, पर पीछे उन्होंने भी इनकार कर दिया। इस समय श्रीश्यामनंदन सहाय अपने मकान को किराये पर देने के लिए तैयार हो गए। राजेंद्र बाबू छः महीने के बाद रिहा होकर आगए थे। कुछ दिन शिवेश्वर बाबू के मकान मे रहकर पीछे श्रीश्यामनंदन सहाय के मकान में चले आए। श्रीसच्चिदानंद सिंहा ने राजेंद्र बाबू को अकेले अपने मकान मे आकर ठहरने की दावत दी, पर कॉंग्रेस से स्पष्ट संबंध रखने में डरते थे।

सरकार ने जुरमाना और माल-जब्ती की नीति जारी करके एक प्रकार का आतंक पैदा कर दिया। जिनके पास कुछ रुपये पैसे थे उनको जेल जाने से अधिक जुरमाना होने के डर ने भयभीत कर दिया। स्वयंसेवकों को तलाश करना और उनको कुछ प्रलोभन देकर, उत्साहित कर जेल भेजवाना, यही काम इन दिनों हो रहा था। कैंप जेल में राजबंदियों की तायदाद काफी हो गई थी, पर सख्ती पहले से ज्यादा की जा रही थी। अक्सर बंदियों के साथ सरकारी अफसरों के संघर्ष होने की

संभावना हो जाती थी। एक बार मुझे मेजर परेरा ने कैंप जेल के अंदर जाकर राजनैतिक कैदियों को समझाने का अवसर दिया था। दूसरी बार जब बंदियों ने वार्ड के अंदर बंद होने से इनकार कर दिया और डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को मिलिटरी पुलिस भेजने के लिए इत्तला दे दी गई तब मैंने पुनः कैंप जेल जाना चाहा। उस समय मेरा नाम सरकार के ब्लैक लिस्ट में आगया था और मेजर परेरा ने मुझे अंदर ले जाने की हिम्मत न की। मेरे साथ विपिन बाबू थे। उनको जेल के अंदर जाकर लोगों को समझाने का मौका दिया गया। मैं बाहर बैठा देख रहा था कि लॉरियाँ सिपाहियों से भरी हुई पहुँचने लगीं और दस बजते-बजते अनेक लॉरियाँ आगईं। इस बीच में राजबंदियों ने हम लोगों के संदेश को कबूल कर लिया और वे बंद हो गए। संघर्ष इस तरह मिट गया और मिलिटरी वापस चली गई।

स्थानीय प्रेसों में नोटिस छपना भी बंद हो गया था। साइक्लोस्टाइल जब्त होने के डर से छिपा दिया गया था और चोरी से अक्सर नोटिस छाप लिया जाता था। यह सब काम सत्याग्रह के सिद्धांत के खिलाफ होता रहा। उन दिनों मेरा ख्याल था कि काँग्रेस की नीति को सत्याग्रह के सिद्धांत के साथ मिलाना जरूरी नहीं था और राजनैतिक दवाव के ख्याल से ज्यादा से ज्यादा स्वयंसेवकों को जेल भेजवाना ही हमलोगों का मुख्य काम था। आज जब उन दिनों की करतूतों पर दृष्टि डालता हूँ तब हमलोगों को उस समय की हरकतें बेशक नाजायज

मालूम पड़ती हैं। मुझे एक बार हजारीबाग जाने और राजेंद्र बाबू आदि से मिलने का मौका मिला, पर जब दूसरी बार उनसे मिलने गया तब उस समय मेरा नाम ब्लैक लिस्ट में आगया था। नारायण बाबू जेलर ने किसी न किसी बहाने मुझे मुलाकात न करने दी, पर यह कहा नहीं कि मेरे ऊपर सरकारी प्रतिबंध लग गया है। यह रहस्य पीछे मालूम हुआ जब मै स्वयं कैदी बन कर जेल पहुँचा।

११

श्रीजयप्रकाश नारायण के साथ मेरा परिचय बहुत पुराना है। बचपन से ही उनको जानता हूँ और 'बौलजी' नाम से पुकारा करता था। असहयोग आंदोलन के कारण जब उन्होंने सरकारी संस्था की पढ़ाई छोड़ दी तब बिहार विद्यापीठ में पढ़ने के लिए आए थे। उनदिनों मैं बिहार विद्यापीठ में इतिहास का अध्यापक था। जब उनकी शादी ब्रजकिशोर बाबू की लड़की प्रभावती के साथ हुई तब उन्होंने अमेरिका जाने में उनकी मदद की। वहाँ से लौट कर महात्माजी के आदेशानुसार वे कुछ दिन ए० आइ० सी० सी० के दफ्तर में और कुछ दिन बिड़ला जी के साथ रहे। फिर उन्होंने १९३२ ई० के सत्याग्रह में काँग्रेस का काम किया। कुछ दिन तक श्रीमती सरोजिनी नायडू ने जब वे काँग्रेस की अध्यक्षा हुई थीं तब उनको जेनरल सेक्रेटरी बनाया और इस नाते उन्होंने सारे मुल्क का दौरा किया। हम लोगों की नीति से श्रीजयप्रकाश को पहली बार मतभेद हुआ जब

बलदेव बाबू और मैंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय के चंद बिहारी छात्रों को, बिहार के सत्याग्रह संग्राम में सहायता देने के लिए तैयार रहते हुए भी कुछ दिनों तक इंतजार करने को कहा। आगे चल कर वे बंबई प्रांत में गिरफ्तार होकर नासिक जेल में भेज दिए गए। सूबे की राजनीति पर अब तक उनकी कोई छाप नहीं पड़ी थी और सेक्रेटरी के नाते सिर्फ एक या दो बार इस सूबे मे आए और फिर वापस चले गए थे।

१२

महात्मा जी तो राउंडटेबुल कांफ्रेन्स से लौटते ही ४ जनवरी १९३२ ई० को पकड़ लिए गए थे। जब हरिजनों को अलहदा चुनाव में भाग लेने का प्रस्ताव राउंडटेबुल कांफ्रेंस मे आया था तब महात्मा जी ने उसका घोर प्रतिवाद किया था। उनका कहना था कि यदि हिंदू समाज को विभक्त करने का प्रयत्न हुआ तो उसे वे प्राणपण से रोकने की कोशिश करेंगे। उन्होंने 'I will resist it with my life' शब्दों का उद्गार निकाला था। सुनने और पढ़नेवालों को तो यह सिर्फ वाग्मिता ही मालूम हुई, पर जब महात्मा जी ने उसे सत्य करने का संकल्प किया तब लोगों की आँखें खुलीं। सत्यता की पराकाष्ठा का सबूत उनके जीवन के इस अध्याय से मिलता है। पर हमलोगों मे से कितने आज भी उनके वचनों को इतना अर्थपूर्ण समझने के लिए तत्पर हैं? जब ब्रिटिश प्रधान मंत्री मैकडोनाल्ड का सांप्रदायिक निर्णय प्रकाशित हुआ तब गांधी जी ने फौरन ही

दिन मेरे कमरे और सामान की तलाशी भी ली गई। असिस्टेंट सुपरिंटेंडेंट श्री जे० डी० सहाय के निरीक्षण में खानातलासी हुई, पर कोई ऐसी चीज नहीं मिली जिससे मुझ पर मुकदमा चलाया जा सकता था।

जब पटने में नोटिस छपने का कोई प्रबंध न हो सका तब मैंने २६ जनवरी को पढ़ा जाने वाला स्वतंत्रता दिवस का प्रतिज्ञा पत्र इलाहाबाद से छपवाकर मँगा लिया और उसे सारे प्रांत में बँटवा दिया। २६ जनवरी को सारे सूबे में गिरफ्तारियाँ होने को थीं। पटने में हमलोग इस प्रतिज्ञापत्र को पढ़नेवाले थे। पुलिस ने पटने के मैदान पर पहुँचनेवाली सभी सड़कों पर पहरा बैठा दिया ताकि शहर से लोग मैदान की ओर न आवें। पुलिस इंसपेक्टर खैर ने हमलोगों का प्रोग्राम पहले से जान लिया था। अतएव हमें मैदान पहुँचने में किसी तरह की बाधा न दी। जैसे ही प्रतिज्ञापत्र को मैं पढने लगा और मेरे साथी उसे दुहरा ने लगे इंसपेक्टर ने हमलोगों को गिरफ्तार घोषित कर दिया। कोतवाली थाने पर लाकर शाम होते होते जेल के फाटक के अंदर हमें दाखिल कर दिया।

मेरे जेल चले जाने पर श्री सत्यनारायण सिंह, श्री विनोदानंद झा और श्रीकृष्ण वल्लभ सहाय ने क्रम से सत्याग्रह संचालन का भार सँभाला। ब्रजकिशोर बाबू की रिहाई हो ही चुकी थी। अस्वस्थ रहकर भी बीच बीच में सलाह मशविरा देने का काम वे करते रहे। १९३२—१९३३ ई० में दो तीन

मार्के की बातें हुईं। दिल्ली में कांग्रेस का एक अधिवेशन मालवीयजी के सभापतित्व में होने वाला था। उनके गिरफ्तार कर लिये जाने पर भी कांग्रेस दिल्ली के चाँदनी चौक में, पुलिस के उसे न होने देने की बहुत कोशिश रहते भी, पाँच सौ प्रतिनिधियों के बीच हुई। उसके सभापति हुए अहमदाबाद के सेठ रणछोड़ दास। दूसरा अधिवेशन कलकत्ते में श्रीमती नेलीसेन गुप्ता की अध्यक्षता में हुआ। श्री अणे सभापति होने वाले थे, पर रास्ते में ही उनकी गिरफ्तारी हो गई थी। उस अधिवेशन में बिहार से प्रतिनिधियों की संख्या काफी तादाद में पहुँची थी। बहुत से व्यक्तियों को बड़ी मार लगी थी। श्री हरगोविंद मिश्र की आँखें किसी तरह बच गईं, पर पुलिस की लाठियों से उनका चश्मा तो टूट ही गया। मारपीट करने में पुलिस ने कोई विवेक नहीं रखा। घायल लोगों को अस्पताल में भरती करने तक में रुकावट डाली जाती थी। जो लोग वहाँ गिरफ्तार हुए वे फिर जल्द ही छोड़ दिए गए।

जब हमलोग जेल चले गए तब सत्याग्रह आंदोलन की चाल और भी धीमी पड़ गई। महात्माजी ने १९३३ ई० में दो बार उपवास किया। कुछ दिनों के बाद उपवास के दरमियान में ही जेल से मुक्त कर दिए गए। जेल से बाहर आकर भी एकबार उपवास किया। उन दिनों सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया था। पीछे पूर्णे में सब प्रांतों के प्रतिनिधियों की बुलाहट हुई। सलाह मश्विरा के बाद सामूहिक सत्याग्रह स्थगित कर

दिया गया। व्यक्तिगत रूप से जिस किसी को सत्याग्रह में शामिल होना हो वह भले ही सत्याग्रह करे। यों तो जेल जानेवालों की संख्या इस तरह घटती ही जाती थी, सत्याग्रह स्थगित हो जाने से व्यक्तिगत रूप से जेल जानेवालों की तादाद और भी थोड़ी हो गई और यह स्वाभाविक ही था। लोगों में थकान आती जाती थी और इस समय जो लोग जेल जाते भी थे वे महज एक कर्तव्यपालन की दृष्टि से ही ऐसा करते थे। उत्साह तो एकदम खतम ही हो गया था और जेलों के अंदर लोग किसी न किसी तरह के समझौते का स्वप्न देखा करते थे।

दूसरा अध्याय

१९२९ ई० के दिसंबर महीने में सरदार वल्लभ भाई पटेल को बिहार प्रांत का दौरा करने के निमित्त आमंत्रित किया गया था। हाल में ही बारदोली में किसानों के अधिकारों की रक्षा के लिए जो आयोजन किया गया था उसमें सरदार को पूरी सफलता मिली थी। चूंकि उनके ही नेतृत्व में बारदोली का सत्याग्रह चला था इससे सरदार का नाम और यश सारे देशमें फैल गया था। सरदार के बिहार में आगमन की खबर पाते ही प्रत्येक जिले से उनको निमंत्रण मिलने लगे। प्रा० कां० क० ने चंद जगहों में उनका जाना समुचित समझ कर वहाँ का प्रोग्राम बनाया। राजेंद्र बाबू बीमार थे। प्रश्न उठा सरदार के साथ कौन-कौन जायँ। अंत में मुझे ही यह काम सुपुर्द हुआ।

सरदार के साथ उनकी पुत्री सुश्री मनीबेन तथा श्रीमहादेव देसाई थे। बहुत से जिलों में सरदार ने भ्रमण किया। उस समय किसानों में कुछ-कुछ नवीन जीवन का संचार हो रहा था। खास कर तिरहुत के जिलों में काँग्रेस आंदोलन की वजह से तथा पुराने समय में किसान आंदोलन के कारण किसानों में विशेष जागृति थी। १९२१ ई० में जब कांग्रेस ने कौंसिल का बहिष्कार किया था उन दिनों किसान के नाम पर स्वामी विद्यानंद ने कौंसिल में प्रवेश किया था। उनके ही जैसे दो तीन और मेंबरों का चुनाव किसान के नाम पर हो चुका था। अतएव उन स्थानों में किसानों का प्रश्न पहले से ही अग्रसर हो गया था। चंपारन का उदाहरण सबके सामने मौजूद था। इन सब कारणों में वहाँ किसानों के बीच पहुँच होने लगी थी, पर दक्षिण विहार के जिलों में जमींदारों का प्रभुत्व अक्षुण्ण था। किसी प्रकार के किसान आंदोलन को सफलता मिलने की आशा नहीं उत्पन्न हो सकी थी। परंतु अग्नि धीरे-धीरे प्रज्वलित होती जा रही थी। अवसर का इंतजार था।

दक्षिण विहार के पटना और गया इस दृष्टि से सब से पिछड़े हुए समझे जाते थे। इन जिलों में जमींदारों का प्रभुत्व इतना दूर तक फैला हुआ था कि उनके आतंक से किसानों के बीच किसी तरह का खुला आंदोलन होना बड़ा कठिन था। गया जिला और पटना के मसौढ़ा परगने में विशेष कर किसानों का कोई हक ही नहीं हो, ऐसा जान पड़ता था। बंगाल टेनेंसी

ऐक्ट के मुताबिक शायद ही कहीं कार्रवाई होती थी। कानून प्रचलित था अवश्य, पर किसकी हिम्मत थी कि जमींदारों के खिलाफ अदालत जाय। खास कर पुलिस और मैजिस्ट्रेसी जमींदारों के पक्ष में ही रहती थी। पुलिस को तो अपना सौदा करना था और मैजिस्ट्रेट भेंट-मुलाकात के वशवर्त्ती थे। मुश्किल से किसी किसी मुकद्मे में किसान जीतते होंगे। दीवानी अदालत में तो उनका पहुँचना नामुमकिन ही था। मुकदमे में वकील की फीस और दीगर खर्च का बोझ इतना ज्यादा पड़ता था कि शायद ही किसी गरीब किसान के पास अदालत जाने या मुकद्मे की पैरवी करने की ताक्त थी। अतएव जमींदार जो चाहते थे वह किसानों को मजबूरी करना ही पड़ता था। जमींदारों की ज्यादती का विशेष कारण होता था उनके अमलों का लोभ। मुशाहरा नाम-मात्र को ही मिलने के कारण अपने जीवन-निर्वाह के लिए किसानों से नाजायज तरीके पर रुपये वसूल करना उनके लिए पहला काम होता था और यदि जमींदारों के कान तक यह बात पहुँचती भी तो उनको समझा दिया जाता कि असामियों के ऊपर रोब नहीं रखने से जमींदारी चल नहीं सकती। साथ ही जमींदार धीरे धीरे शहरों में आबाद होते थे और पश्चिमी सभ्यता के शिकार हो रहे थे। मोटरकार तथा अनेक पश्चिमी तड़कभड़क की चीजों की ओर उनकी रुचि चली जा रही थी। नक्द पैसे की जरूरत बढ़ती गई और उस हद तक किसानों से पैसे वसूल करने की ख्वाहिश भी जगती

गई। अमलों को मनमाना करने की आजादी मिलती गई।

गया जिले में समय समय पर इसकी प्रतिक्रिया हुई भी पर वह सरकार के द्वारा दवा दी गई। जब दफा ४० B. T. Act के अनुसार नकदी की जाने लगी तब एक अफसर ने एक खेत का लगान सवा रुपया या अढ़ाई रुपया बीघा निश्चित किया जिसमें धान लगभग बीस मन होता था। नहर किनारे होने के कारण फसल नष्ट होने का जिसमे खतरा नहीं था। उसका असर यह हुआ कि सारे जिले में लोगों ने भावली खेत को नकदी कराने के लिए दरख्वास्तें देना शुरू कर दिया। एक तरह से जिले में आंदोलन जैसा हो गया। जमींदारों ने एक डेपुटेशन तत्कालीन गवर्नर के पास भेजा जिसके फलस्वरूप एक सरक्यूलर निकला और दफा ४० से अफसरों को ताकीद की गई कि इस तरह से लगान न निश्चय किया करें। तुरत ही वायुमंडल में परिवर्त्तन हो गया और लगान की दर काफी ऊँची होने लगी। इस वजह से १९२९ ई० और उसके बाद जब गल्ले का भाव गिरने लगा तब किसानों की हालत तबाही की होने लगी और हजारों बीघे जमीन लगान न देने के कारण बकाश्त बन गई।

जिस समय सरदार पटेल का दौरा बिहार में हुआ उस समय किसानों के बीच अशान्ति पैदा होने लगी थी। जहाँ जहाँ उनका आगमन हुआ किसानों ने काफी तायदाद में इकट्ठा होकर उनका स्वागत किया। उनके भाषणों में मुख्यत: किसानों की कमजोरी और उनके कायरपन पर जोर दिया जाता था। उनको

बहादुर बनने तथा अत्याचार का मुकाबला करने के लिए उत्साहित किया जाता था। जरूरत पड़ने पर हिंसा द्वारा भी मुकाबला करना डरपोकपन से बेहतर बताया जाता था। इसी तरह पर करीब आठ दस दिनों में पचीस तीस सभाएँ हुईं और उनमें सरदार के भाषण हुए। गया में जब उनका आगमन हुआ तब डा० युगलकिशोर सिंह ने एक दरख्वास्त उनके सामने पेश की। उसमें उन्होंने जमींदार के अत्याचारों का वर्णन किया था। घर जला देना तथा खेत छीन लेना मामूली काम होना बताया था। उस समय डाक्टर साहब से हमारी जान पहचान न थी। सरदार ने उनकी दरख्वास्त प्रां० कां० क० के पास जाँच करने के लिए भेज दी। इसमें शक नहीं था कि जमींदारों की धाँधली और जिलों की अपेक्षा गया जिले में कहीं ज्यादा हो रही थी और एक तरह से कहा जाय तो डाक्टर साहब की इस दरख्वास्त के बाद से ही काँग्रेस का ध्यान गया के किसानों की ओर झुका।

दिखलाया। राज के अमलों ने रामराजा (रामनगर नरेश) के कान भरे और काँग्रेस वालों को अक्ल सिखाने की आज्ञा हासिल की। चंपारन के काँग्रेसी नेताओं में श्रीप्रजापति मिश्र का स्थान बहुत ऊँचा रहा है। सन् १६२१ ई० से ही पढ़ना लिखना छोड़ वे गांधी जी के बताये रास्ते पर चलने की कोशिश करते आ रहे हैं। व्यावहारिक तरीके पर अहिंसा का अभ्यास करने की ओर उनका झुकाव बराबर रहा है। थारूओं के ऊपर राज के अमलों का कुछ अत्याचार हुआ था। उनको दिलासा देने और उनकी हालत से अभिज्ञता प्राप्त करने की इच्छा से श्री प्रजापति मिश्र दो तीन साथियों के साथ वहाँ जा रहे थे। रास्तेमें एक घना जंगल कई मील तक फैला हुआ पड़ता था। उसके बीच से जाते समय कुछ लठबंद लोगों ने उनपर आघात किया। अहिंसावादी होने के नाते उन्होंने साहस के साथ उनके प्रहार का सहन किया। इसका असर आघात करने वालों पर पड़ा। अपने अगुआ के कहते रहने पर भी उन लठधरों ने फिर लाठियाँ नहीं चलाईं और उनको घायल अवस्था में ही छोड़ वहाँ से वे चम्पत हुए। वे चाहते तो एक दो प्रहार में उनका काम खतम कर देते। पीछे सेवा शुश्रूषा होने पर कुछ दिनों के बाद मिश्रजी स्वस्थ हो गए।

उस घटना को लेकर रामनगर राज्य में होने वाले अन्य अत्याचारों के विषय में जाँच करने के लिए एक कमिटी बनी। राजेंद्र बाबू के साथ में भी इसका मेंबर हुआ। श्रीनारायण

प्रसाद सिंह (सारन) भी एक सदस्य थे। हमलोगों ने राज के चंद स्थानो में भ्रमण कर किसानो की तकलीफों की जाँच की और उनके बयान लिये। रामराजा ने हमलोगों को रामनगर में बुलाया और हमलोगो के साथ बातचीत कर रैयतो की तकलीफों को दूर करने का वचन दिया। जिन जिन बातों को राजा ने कबूल कर लिया उनकी एक तालिका तैयार हुई और राजाने वचन दिया कि परवाना निकाल कर रैयतों की उन शिकायतों को वे दूर कर देंगे। उस समय मि० एमन नामक एक अंग्रेज उनका मैनेजर था। जिस समय हम-लोग चंपारन मे महात्मा गाधी के साथ किसानों की अवस्था की जाँच कर रहे थे उस समय मि० एमन की अपकीर्त्ति बहुत कुछ सुनने मे आई थी। एक गाँव मे तो मि० एमन की शकल के लड़के हमलोगो को उनकी बदचलनी के फलस्वरूप दिखलाए गए थे। पहले मि० एमन किसी निलहे कोठीवाले के मैनेजर थे और उस वक्त उनके अत्याचार की कोई सीमा न थी। इस समय वही मि० एमन तहकीकात के समय राज की तरफ से हाजिर हो सब तरह से हमें खुश करने की कोशिश में व्यस्त थे।

१९२९ ई० के नवंबर मे, जहाँ तक मुझे याद है, यह तहकीकात हुई थी। पर १९३० ई० मे सत्याग्रह छिड़ जाने पर सभी लोगों के जेल चले जाने की वजह से, रामराजा ने अपने वचन का पालन नहीं किया। और हमलोगों की ओर से कोई दबाव भी उस समय उन पर नहीं डाला जा सका।

३

गांधी-इरविन पैक्ट के बाद किसानों की शिकायतें बढ़ती तादाद में कांग्रेस के पास पहुँचने लगीं। गया जिला के बारे में डा० युगलकिशोर की लिखित दरखास्त थी ही, और और जगहों से भी शिकायतें आने लगीं। मैं कह चुका हूँ कि १९२९ ई० के आर्थिक संकट के आरंभ होने के बाद ऐसी शिकायतों की संख्या बहुत बढ़ गई। राजेंद्र बाबू के साथ मैंने कितनी जगहों मे किसानों की शिकायतों की जाँच की और उनलोगों को अपने हक पर कायम रहने का उपदेश दिया। इसी सिलसिले में मसौढ़ा परगना (पटना जिला) के किसानों की पुकार सुन कर वहाँ जाना निश्चित हुआ। श्रीबाबू और मैं, दोनों, वहाँ गए। मसौढ़ा परगना के इतिहास में यह पहला ही अवसर था कि हमारे जैसे मामूली व्यक्तियों के सामने धरहरा परिवार के जमींदारों के विरुद्ध उनके मातहद किसान आवाज उठावें। बहुत दिन पहले मसौढ़ा थाने में श्रीशंभुशरण के चाचा सब इंसपेक्टर थे। वहाँ कुछ दिन मुझे श्रीशंभुशरण के साथ रहने का मौका मिला था। मैंने सुना था कि प्रत्येक त्यौहार में थाने के सभी अफसरों को धरहरा रियासत से विदाई दी जाती थी और जब कभी कोई थानेदार उस इलाके से गुजरता था तब उसको बंधेज के अनुसार रुपया कपड़े के थान सहित मिलता था। इस कारण जब किसी तरह की शिकायत जमींदारों के खिलाफ थाने में पहुँचती थी तब उसकी जाँच नहीं होती थी। इस डर से किसी की हिम्मत नहीं

पड़ती थी कि उनके विरुद्ध थाने में जाकर कुछ शिकायत करें।

गांधी-इरविन पैक्ट के बाद इस तरह की जगहों में काम करने के लिए कुछ रुपये का दान हमें मिला। मैजिक लालटेन के साथ किसानों के बीच प्रचार का काम इस इलाकेमें भी प्रारंभ किया गया। इस काम का इतना असर जरूर पड़ा कि वहाँ के किसानों में यह हिम्मत हुई कि हमलोग जब तहकीकात करने गए तब वे लोग हमारे सामने आकर बयान देते गए। जो कुछ शिकायतें हमलोगों ने दरियाफ्त कर मालूम कीं उनको दूर करने का उपाय निकालने का फौरन प्रयत्न किया। श्रीरजनधारी सिंह धरहरा खानदान के पढ़े लिखे होशियार जमींदार थे। उस समय पटना डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन थे। उनसे बातें करने में हमलोगों को सुविधा थी, क्योंकि वे हमारे दृष्टिकोण को समझते थे और हमलोग भी उनके दृष्टिकोण को समझने में कठिनाई नहीं महसूस करते थे।

रजनधारी बाबू से स्वामी सहजानंद सरस्वती का बहुत घनिष्ठ संबंध था। यहाँ तक कि जब हमलोग पालीगंज से उनकी जमींदारी के बारे में तहकीकात कर लौट रहे थे तब रास्तेमें बिहटा में स्वामी जी से मिल कर वहाँ की हालत उनसे कह देना हमने मुनासिब समझा। हमलोगों की बातें सुन कर स्वामी जी ने आश्चर्य प्रकट किया और श्रीरजनधारी सिंह की शिकायत सुनने के लिए अनिच्छुक नजर आए।

रामनगर राज जैसा उनके साथ भी बातचीत हो रही थी

कि १६३२ ई० का सत्याग्रह आरंभ हो गया और किसानों की शिकायतें जैसी की तैसी बनी रहीं। हाँ, उस इलाके में काम होने की वजह से वहाँ से बहुत से सत्याग्रही जेल गए। अमहरा के बहुत से सत्याग्रहियों ने अपना मकान लुटवाने तक का कष्ट सहन कर जुरमाना देने से इनकार कर दिया था। स्वामी सहजानंद के सहायकों का वह मुख्य स्थान था और श्रीश्यामनंदन सिंह तथा दूसरे कार्यकर्त्ता जो आगे चल कर किसान आंदोलन के प्रमुख हुए उसी या उसी के आसपास के गाँवों से निकले।

१६३३ ई० में जब आर्डिनेंस की वजह से कांग्रेस कमिटियाँ गैरकानूनी करार दी गईं तब देहातों में काम करना असंभव हो गया। उसके पहले सोनपुर में एक सभा हुई थी जो किसानों के बीच काम कर रही थी। श्रीरामदयालु सिंह आदि उसमें शामिल थे, अथवा यों कहिये कि उनके जैसे कांग्रेसियों ने ही उसको जन्म दिया था। जब हम जेल चले गए तब किसान सभा के साथ हमारा क्या संबंध होगा, इसके बारे में हम लोगों की राय माँगी गई। उन दिनों बलदेव बाबू (वर्त्तमान ऐडवोकेट जेनरल) किसान सभा में बहुत हिस्सा लिया करते थे। उनके ही मकान पर अकसर सभा की बैठकें हुआ करती थीं। कानूनी हक जो टेनेंसी ऐक्ट के जरिये किसानों को प्राप्त था उसे भी दिलाने की कोशिश पूरे तौर पर उस सभा से न हो सकी थी। जेल के भीतर से हमलोगों ने कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं को उसमें शामिल होने की राय दे दी, क्योंकि कांग्रेस की हैसियत से कुछ

भी काम करना नामुमकिन हो गया था। स्वामी सहजानंद जी ने १६३२ ई० की लड़ाई में शामिल होने से अनिच्छा प्रकट की और किसान सभा के काम में धीरे धीरे योग देना शुरू कर दिया। आगे चल कर तो प्रांत के ही नहीं, बल्कि सारे देश के किसान आंदोलन के प्रमुख नेताओं में उनकी गिनती होने लगी।

४

२६ जनवरी १६३३ ई० को मैं गिरफ्तार हुआ। पटना जेल में दो चार दिनों तक रखा गया। एक दो दिन तो सब साथियों के साथ ही रहा, पीछे मुझे अलग कर दूसरे वार्ड में रखने का प्रबंध कर दिया गया। मुझे अपने साथियों से मिलने का मौका बहुत कम मिलने लगा। श्री श्यामनारायण राय डिप्टी मैजिस्ट्रेट के सामने मेरे मुकदमे की सुनवाई हुई और मुझे पंद्रह मास सख्त कैद की सजा मिली। बाद ही मैं हजारीबाग जेल भेज दिया गया। डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट ने मेरे लिए 'ए' डिविजन में रखे जाने की सिफारिश की। उन दिनों गवर्नमेंट का रुख राजनैतिक कैदियों के प्रति बहुत ही बदला हुआ था। दो एक को छोड़कर सब किसी को 'बी' डिविजन में ही रखे जाने का आदेश होता गया। सर गणेश की सिफारिश से हमारे साथियों में से दो आदमी को 'ए' दर्जे में रखे जाने का हुक्म हुआ। व्रजकिशोर बाबू को भी सर गणेश की ही सिफारिश से 'ए' डिविजन मिला था। बहुत से कांग्रेसी जो १६३०—३१ में 'ए' डिविजन में रखे गए थे १६३२—३३ ई० में वे 'सी' क्लास

भेज दिए गए। लोगों ने इस तकलीफ को खुशी खुशी बर्दाश्त किया। किसी ने वर्गीकरण के विरोध में सरकार के पास न दरख्वास्त ही दी और न इसके लिए बहुत असन्तोष ही प्रकट किया।

१९३३ ई० जेल के भीतर का जीवन व्यतीत करने में लगा। जेल का अनुभव पहली बार ही मुझे हुआ था। वहाँ रहकर मैंने बहुत सी नई बातें सीखीं और नई विचारधारा के अध्ययन करने का थोड़ा बहुत अवसर प्राप्त किया। उन दिनों खाँ अब्दुल गफ्फार खाँ और डा० खान साहब हजारीबाग जेल के अंदर नजरबंद थे। कभी कभी हमलोगों को उनके दर्शन हो जाया करते थे। जेलर की मिहरबानी से कभी कभी हम सब उनके यहाँ जाया करते थे और कभी उन दोनों को ही हमारे वार्ड में आने की इजाजत मिल जाती थी—खासकर किसी त्यौहार के मौके पर ही ऐसा होता था।

मुझे तेरह महीने तक हजारीबाग जेल में रहना पड़ा। इस बीच में गाड़ीवाल और पीछे बरगीज सुपरिंटेंडेंट रहे। श्री नारायणप्रसाद बराबर जेलर रह गए। वे बहुत ही होशियार, चतुर और व्यवहार कुशल जेलर थे। किसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, इसे अच्छी तरह समझते थे और तद-नुसार काम किया करते थे। साथ ही उन लोगों से डरते भी थे जो जावान से जबरदस्त और काम से तिकड़म वाले थे। जिन दिनों मैं हजारीबाग में था राजेंद्र बाबू, कृपलानी जी, श्री बाबू,

रामदयालु बाबू आदि प्रमुख कांग्रेसी वहीं थे। कृपलानी जी की सजा चंद महीने की ही थी, अतएव उनकी बीच में ही रिहाई हो गई। श्री बाबू लंबी सजा लेकर आए थे, पर चूंकि बहुत पहले ही से आए हुए थे, इसलिए मेरे छूटने के कई महीने पहले उनकी तथा रामदयालु बाबू की भी रिहाई हो गई थी। अंत तक श्री रामनारायण सिंह, श्रीकृष्णवल्लभ सहाय तथा मैं पुराने साथियों में शेष रह गए थे। बिहार भूकंप के कारण उत्तर बिहार के सभी राजबंदी समय के पहले ही छोड़ दिए गए थे। हमलोगों ने भूकंप में काम करने की इच्छा भी प्रकट की थी, पर सरकार ने उस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया हो तो ताज्जुब नहीं। भूकंप की भयानकता का असर सरकार पर काफी पड़ा था और इसी कारण उत्तर बिहार के रहनेवाले कैदियों को पहले छोड़ देने का निश्चय हुआ। राजेंद्र बाबू दम्में की बीमारी की वजह से कुछ महीने पहले ही पटना जेनरल अस्पताल मे बदल दिए गए थे और भूकंप के दिन वहीं थे। उनकी रिहाई उसी दिन कर दी गई। मेरी रिहाई भी दस पाँच दिन सजा पूरी होने पहले हुई। सिर्फ छोटा नागपुर के लोगों को कुछ दिन अधिक जेल में रहना पड़ा।

५

जेल जीवन के विषय मे कुछ लिखने मे संकोच होता है, कारण जेल के अंदर हमारी कमजोरियाँ इस तरीके पर प्रकट हो जाती है कि उन्हें छिपाने की कोशिश करने में भी कामयाबी

मुश्किल से होती है। सत्याग्रहीबंदियों का महात्माजी के बताये रास्ते पर न चलने की शिकायत आमतौर पर सुनी जाती थी। हमारी जमात में कुछ लोग ऐसे भी थे जो खाने पीने के विषय में किसी भी नियम की पाबंदी नहीं रखते थे। जेल के कायदे के खिलाफ इतनी हरकतें होती थीं कि उनका जिक्र करना भी अब मुनासिब नहीं जान पड़ता। आपस में ईर्ष्या-द्वेष की वृद्धि भी होती रही, पर उस समय तक सिर्फ आशा ही आशा थी। किसी उच्च अधिकार का उपभोग न हो पाया था इसलिए उसकी वास्तविकता को अपनी कल्पना शक्ति से ही अनुभव करना संभव था। जेल के अफसरों पर, हममें से कुछ ऐसे व्यक्ति थे जो आनेवाली शक्ति का हवाला देकर नाजायज लाभ उठा लेते थे और उनकी धाक भी जेल स्टॉफ पर काफी रहती थी। आपस का मन-मुटाव भी इस कारण बढ़ता रहता था। उसके कितने दृष्टांत मेरे सामने आज भी मौजूद हैं।

उन दिनों गांधीवाद का बोलबाला था। प्रातःकाल स्नानादि से अवकाश पाकर गीता अध्ययन तथा चर्खा कातना नियमित रूप से चलता था। रात को भी राजेंद्र बाबू के नजदीक गीता के कतिपय भाष्यों का पढ़ा जाना और जो कुछ संदेह हो उसपर वाद-विवाद करना होता था। संध्या के समय प्रार्थना होती थी। बीच में कभी चर्खा चलता था या ताश शतरंज का खेल खेला जाता अथवा किसी पुस्तक का अध्ययन हुआ करता था। राजेंद्र बाबू के पटना चले जानेपर खेल की मात्रा कुछ अवश्य

कि जेलसे बाहर दुनियाँ में भूकंपने कौनसा फसाद मचा रखा है। दूसरे दिन स्टेट्सनैन अखबार मिला तो मालूम हुआ कि उत्तर बिहार और मुंगेर मे भूकंप से भयानक क्षति हुई है। दो तीन दिन के भीतर जितनी खबरें मिलीं उनसे ज्ञात होने लगा कि उत्तर बिहार के कई जिले बरबाद हो गए। कितने शहर खँडहर हो गए। हमलोगों को अपने अपने परिवार तथा मित्रों की फिक्र हो गई। हमारी कल्पना उत्तरी बिहार को जलमग्न समझने लगी थी। हमारी चिंता की कोई हद न थी। तीन चार दिनों मे तार और चिट्ठियों के द्वारा इतना मालूम हो सका कि हमारे मित्र तथा परिवार के लोग सकुशल हैं। हमारे गाँव मे केवल मेरा ही मकान बरबाद हुआ, पर मकान गिरने के पहले ही वहाँ से लोग हट गए थे। उससे और कुछ हानि नहीं हुई। पटने के मित्रों के कुशलपूर्वक रहने का भी समाचार पहुँच गया। मुजफ्फरपुर, छपरा, दरभंगा तथा मोतीहारी से हमलोगों के सरोकारी लोगों के कुशल-क्षेम की खबरें भी आईं। मुंगेर शहर का सच्चा हाल नहीं मिला। मुजफ्फरपुर के खादी डिपो के दो एक मित्र की तथा मुंगेर के श्रीधर्मनारायण के सपरिवार नष्ट होने की खबर उड़ती-पुड़ती पीछे पहुँची। हमलोगों की घबराहट का कोई ठिकाना तो था नहीं, लाचार दिन भर बैठे बैठे आपस में तरह तरह की कल्पनाएँ करते रहते थे। थोड़े ही दिनों के अंदर उत्तर बिहार के रहनेवाले बंदियों को छोड़ देने का हुक्म आ गया। सत्यनारायण बाबू दोनों चले गए।

श्रीरामनारायण सिंह श्रीकृष्णवल्लभ सहाय आदि हजारीबाग की ओर के लोग ही साथियों में रह गए थे। दो चार दिनों के बाद मेरी भी रिहाई हो गई।

६

सत्याग्रह आंदोलन स्थगित कर दिया गया था। भूकंप का इतना असर महात्माजी पर हुआ था कि व्यक्तिगत रूप से जेल जाने का काम भी उन्होंने बंद कर दिया था। सब प्रांतों में आंदोलन रोक देने की आज्ञा चली गई थी। करीब करीब सभी कैदी उस समय तक रिहा भी हो गए थे। थोड़े लोग जिनकी लंबी सजा थी कैंप जेल में रह गए थे। उनको भी वहां से हटा कर गुलजारबाग के एक छोटे जेल में रख छोड़ा गया था। उनसे मिलने और उनको जरूरत के मुताबिक सामान पहुँचाने का मौका, जब मैं बाहर गया, तब मुझको मिला। थोड़े दिनों के बाद उनलोगों को भी रिहाई हो गई।

भूकंप होने के बाद ही रिहा होकर राजेंद्र बाबू ने तुरत ही पीड़ितों के सहायतार्थ सब जगहों पर अपील भेजी। महात्मा जी उस समय दक्षिण भारत का दौरा कर रहे थे। राजेंद्र बाबू का तार पाकर और बिहार की अवस्था से परिचित होकर उन्होंने भी भूकंप पीड़ितों की मदद के लिए अपील निकाली। इधर राजेंद्र बाबू पटने में कुछ लोगों को इकट्ठा कर रिलीफ देने के लिए एक कमिटी कायम की। राजेंद्र बाबू स्वयं अध्यक्ष हुए और बलदेव बाबू तथा मौ० हफीज मंत्री हुए। जिन जिन लोगों की रिहा*

पहले हो चुकी थी उनको उस कमिटी में शरीक होने के लिए बुलाया गया। श्रीजयप्रकाश नारायण चिट्ठी-पत्री लिखने में उनके सहायक हुए। श्रीफूलनप्रसाद वर्मा ने भी इस काम में उनको सहायता देना शुरू कर दिया। इस तरह एक छोटे पैमाने पर रिलीफ का काम आरंभ हो गया। कुछ पैसे तुरन्त इकट्ठा कर आफिस का संचालन शुरू कर दिया। मि० अब्दुल अजीज उन दिनों बिहार सरकार के शिक्षा मन्त्री थे। उन्होंने अपना एक मकान रिलीफ कमिटी के काम के लिए दिया। देश के कोने कोने में अपील पहुँचते और महात्मा जी का आशीर्वाद प्राप्त होते ही जगह जगह से रुपया आना शुरू हो गया। बिहार बैंक में रिलीफ कमिटी की ओर से एकाउंट खोल दिया गया था। राजेंद्र बाबू बीमारी की हालत से उठते ही अपनी सारी शक्ति लगा कर रिलीफ का काम करने लगे। दफ्तर के काम से उनका छुटकारा मिलना कठिन हो गया। तार और पत्र इतने आने लगे कि उनके उत्तर देने में ही सारा दिन और रात का बहुत समय चला जाता था। बाहर जाने की ख्वाहिश रहते भी पटना छोड़ना उनके लिए असंभव हो गया। दूसरे दूसरे प्रान्तों से काँग्रेस के प्रमुख नेता बिहार आ गए और रिलीफ के काम में हाथ बँटाने लगे। कुछ लोग पटना आफिस में रह गए और शेष लोगों को भूकंप पीड़ित जिलों तथा स्थानों में काम करने के लिए भेज दिया गया। श्रीजवाहरलाल नेहरू ने भी बिहार आकर कई जिलों का भ्रमण किया और मलबा हटाने

तथा पीड़ितों को सहायता देने में अपने हाथ से काम कर मार्ग-दर्शन किया।

मैं रिहा होकर गया पहुँचा तो सामान रख आने के लिए घर गया और वहाँ पहुँचने के लिए एक मील पैदल चलना पड़ा। मालूम पड़ा कि इतनी दूर चलना तो बिलकुल मामूली सी बात थी। भूकंप के कारण मेरे मकान चूर हो गए थे। परिवार के लोग पड़ोस में रहते थे। एक दिन वहाँ रह कर मैं पटना चला आया और भूकंप के काम के लिए अपने को राजेंद्र बाबू के सुपुर्द कर दिया।

७

तीन हफ्ते के बाद जेल से रिहा होकर पटना पहुँचने पर मालूम हुआ कि मेरी इंतजारी की जा रही थी। मित्रों से मिलकर काम करने के लिए तैयार हो गया, पर कौन सा काम मेरे सुपुर्द हो, यह निश्चय करना कठिन हो गया। सभी मुख्य स्थानों पर कोई-कोई काम कर ही रहे थे। किन को वहाँ से हटाया जाता। राजेंद्र बाबू के लिए यह एक कठिन समस्या हो गई। इच्छा रहते हुए भी उसको प्रकाशित कर किसीके मन पर चोट पहुँचाना उनकी प्रकृति के अनुकूल बात न थी। काम करते-करते वे थक भी गए थे और चाहते थे कि किसी विश्वास पात्र के हाथों कुछ काम सौंपते। मैं भी दफ्तर जाता पर कोई खास काम मेरे ताल्लुक न रहने से योंही इधर उधर बैठा करता और शाम को लौट आता। सदाकत आश्रम उस समय पुलिस के कब्जे में

था। सभी मित्रों के मकान भूकंप से न्यूनाधिक क्षतिग्रस्त हो चुके थे। राजेंद्र बाबू 'सर्चलाइट' प्रेस में ठहरे हुए थे। दो तीन फूस की झोपड़ियाँ वहीं डाल दी गई थीं और पीछे जब दफ्तर अजीज साहब की कोठी में चला आया तब वे केवल रहने के काम में ही आने लगीं। मैंने भी सर्चलाइट के ही दफ्तर में रहना निश्चित किया। धीरे-धीरे काम मेरे हाथ आने लगे। श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा 'अब आप आ गए तो चिट्ठी-पत्री का काम लेलें। मैं आपकी सहायता करूँगा। राजेंद्र बाबू बाहर की हालत अपनी आँखों देखने के लिए बेचैन थे, अतएव उनकी इच्छा थी कि मैं उनके कामों को अपने हाथ में ले लूँ और उन्हें बाहर जाने का मौका दूँ। रिलीफ कमिटी की एक बैठक में तय हुआ कि मैं उपसभापति की हैसियत से काम करूँ ताकि राजेंद्र बाबू की गैरहाजिरी में उनका स्थानापन्न समझा जाऊँ जिससे काम में किसी तरह की रुकावट न आने पावे।

आगे चल कर कुछ दिनों के अंदर ही मैंने सारे कामों को अच्छी तरह समझ लिया। फिर तो मैंने ही सारे दफ्तर के संचालन की जवाबदेही उठा ली। दिन रात मैं रिलीफ कमिटी के दफ्तर ही में रहने लगा। सिर्फ भोजन तथा रात को सोने के लिए 'सर्चलाइट' आफिस में जाता रहा। अब काम से मुझे शायद ही चंद मिनटों की फुरसत मिलती थी। जितने लोग बाहर से आते थे उनसे बातें करना, उनके उपयुक्त काम सुपुर्द

करना, बाहर से आए पत्रों का जवाब देना, इत्यादि सभी तरह के काम करना तथा दफ्तर की निगरानी रखना मेरे जिम्मे आ गए। कई महीने तक लगातार सख्त काम करने के बाद जब दफ्तर का सिलसिला दुरुस्त हो गया तब मुझे और और कामों के लिए थोड़ी बहुत फुरसत मिलने लगी।

सेठ जमनालाल बजाज तथा महात्मा गांधीका भी आगमन बिहार प्रांत में भूकंप के सिलसिले में हुआ। सेठजी को हमारे कामों में मदद देने ही के लिए महात्माजी ने भेजा था। बाहर आए लोगों की तादाद बढती गई और उनके रहने के स्थान का भी प्रबंध करना पड़ा। अजीज साहब वाले मकान की बगल में ही एक 'पीली कोठी' किराया पर ले ली गई। महात्माजी जब पटने आए तब उसी में उनके निवास का प्रबंध किया गया। सेठजी ने अपने लिए अजीज साहब की कोठी का एक दूसरा हिस्सा किराये पर ले लिया। रिलीफ कमिटी की बैठकें उसी में होने लगीं।

महात्माजी की राय हुई कि रिलीफ के लिए काफी तायदाद में रुपये बिहारके बाहर प्रांतों से आए थे, अतएव उन रुपयों की देखरेख की जवाबदेही एक बिहार सेंट्रल रिलीफ कमिटी के हाथ में रहे और उसके मेंबरों का चुनाव तथा वर्किंग कमिटी का चुनाव बाजाब्ते दान देने वालों के आम जलसे से हो। इसलिए पटने में एक सभा दाताओं तथा मदद देने वालों की की गई। दाताओं के प्रतिनिधि स्वरूप चार

करते जाते थे। जहाँ तहाँ सनातनियों द्वारा उनका विरोध भी हुआ। बक्सर में उनकी मोटर पर लाठियाँ चलाई गईं। देवघर में भी हमला हुआ। पटना पोलो कोठी में जहाँ वे ठहरते थे एक सनातनी ने रास्ता छेंक कर उनको बाहर निकलने से रोकना चाहा। उसने दरवाजे पर लेट कर रास्ता बंद कर दिया। महात्माजी किसी तरह निकल कर अपने दौरे को पूरा करते रहे और उस तरह की रुकावटों की कुछ परवाह न की।

भूकंप की वजह से जमीन और नदियों की सतह में बहुत अंतर आ गया होगा, ऐसी संभावना की जाती थी। अतएव इस बात की आशंका थी कि अगली बरसात में बड़ी भयानक बाढ़ का सामना करना पड़ सकता है। महात्माजी ने प्रारंभ में ही सरकारी रिलीफ कमिटी के साथ सहयोग देने की नीति कबूल कर ली थी। सत्याग्रह आंदोलन जब स्थगित भी न हुआ था उसी समय इस काम में सरकार की सहायता देने में किसी तरह की हिचकिचाहट न की जाये, इसकी घोषणा उनकी ओर से हो गई थी। मि० ब्रेट रिलीफ कमिश्नर थे। राजेंद्र बाबू उनके साथ कितनी बार रिलीफ संबंधी बातें कर चुके थे। एक दिन वर्किंग कमिटी की बैठक में ही, जिसमें महात्माजी भी मौजूद थे, मि० ब्रेट को बुलाया गया था। सरकार की ओर से रिलीफ के जो जो काम हो रहे थे उन्हें बताने को कहा गया। एक ही जगह दोनों ओर से मदद दिए जाने की जहाँ संभावना थी उसे दूर करने के विचार से ही उनसे बातें करने की जरूरत हो गई थी। ऐसी सलाह

जहाँ जमीन की सतह में परिवर्त्तन हो जाने के कारण मलेरिया का भीषण प्रकोप हो आया था। मुजफ्फरपुर जिले का एक गाँव रामपुरहरि इस तरह के मलेरिया से बहुत पीड़ित था। हजारों आदमियों के मरने की खबर हमलोगों को मिली। पहले तो विश्वास नहीं हुआ कि मलेरिया से इतनी तादाद में लोग मर सकते हैं, पर जब राजेंद्र बाबू के साथ मैं उस गाँव में गया तब वहाँ का दृश्य देख कर अवाक रह गया। जमीन की सतह बदल जाने से वहाँ के दरख्तों पर भी उसका असर पहुँचा था। बडे-से बडे दरख्त सूख गए। वहाँ के रहनेवाले मलेरिया से परेशान हो रहे थे। एक एक आदमी कितनी बार बीमार हो चुका था। एक एक परिवार में दो दो चार-चार मौतें हो चुकी थीं। हमलोगों ने उनको गाँव छोड़कर दूसरी ऊँची जगह में बसने को कहा जिसका खर्च कमिटी की तरफ से दिया जाता, पर उनकी ओर से एक ही जवाब मिला कि अपनी जमीन और मकान छोड कर दूसरी जगह नहीं जा सकेंगे। मुझे ताज्जुब हुआ कि प्राण से भी अधिक ममता उन लोगों को अपनी जमीन से थी। आश्चर्य तो तब हुआ जब दूसरे साल दरियाफ्त करने पर मालूम हुआ कि मलेरिया उस गाँव से चला गया और वहाँ के रहने वालों का स्वास्थ्य पहले जैसा हो गया। दरख्तों में भी जान आ गई और उनके खेतों की पैदावार पहले जैसी हो गई।

मि० पीयर सेरीसोल नामक एक सज्जन अन्तर्राष्ट्रीय सेवा-दल की ओर से भूकंप पीड़ितों की सेवाशुश्रूषा तथा सहायता के

किसान सभा भी उस मौके पर की गई और स्वामीजी पर १४४ दफा होने के कारण श्री विश्वेश्वरीप्रसाद (पन्ना बाबू) उसके सभापति हुए। उन्हीं ने अपने भाषण में जमींदारी प्रथा खतम होने से अठारह करोड़ लगान की कमी होने की बात किसानों को बताई और कुछ इसी तरह की बातों से उनको प्रभावित करने की चेष्टा की। ऐसा करना कहाँ तक उचित था, मैं इस विषय में कुछ कहना नहीं चाहता, पर यह बात सही नहीं थी कि जमींदारी खतम होने से अठारह करोड़ रुपये किसानों के पास रह जाते, क्योंकि सारे सूबे का लगान मुश्किल से आठ दस करोड़ था ही और सरकार माल और रोडसेस मिलाकर तीन करोड से ज्यादा ले लेती थी। मेरे कहने का मतलब यही है कि गलत प्रचार कर लोगों को शिक्षा देना हमारी संस्थाओं के लिए बहुत हानिकर होता है।

११

श्री रामनंदन मिश्र ने महिला विद्यापीठ की स्थापना मझौलिया ग्राम (दरभंगा) में की थी। प्रारंभ में लोगों को काफी उत्साह हुआ और सब जिलों के प्रमुख कांग्रेसियों ने उसमें सहायता दी। श्री रामनंदन मिश्र ने सेठ जमनालाल बजाज से भी उस संस्थाको मदद देने के लिए कहा। उन्हीं ने राजेंद्र बाबू और ब्रजकिशोर बाबू की राय माँगी। जब तक उन लोगों की ओर से आश्वासन न मिले उनकी मदद उस संस्था को नहीं मिल सकती। श्री मगनलालजी के देहांत के बाद से ही उनके

और वहाँ की अवस्था से परिचित होकर जमींदार और रैयत के बीच सुलह करा देना चाहा। उस समय एक पेंशनयाफ्ता जज मैनेजर के पद पर बैठाये गए थे। उनके दिमाग में राज की ओर से जिरात करने की धुन सवार थी। इसलिए बकाश्त जमीन रैयतों से ले लेकर जिरात बना रहे थे। बहुत कहने सुनने पर भी दोनों पक्षों में सुलह नहीं हो सकी। अंत में मुकदमा अदालत तक पहुँचा। वहाँ भी सुलह कराने के लिए मैंने जोर लगाया। इस विषय को इतना विस्तार से इसलिए लिख रहा हूँ कि किसान सभा की शक्ति इन छोटे छोटे कारनामों को लेकर ही बढ़ती गई और जितना ही उसे दबाने की कोशिश हुई उतना ही उसका प्रभाव और आकार बढ़ता गया।

उसी साल एक और मुख्य बात हुई थी जिसका जिक्र कर देना मुनासिब समझता हूँ। शाह उमैर पुराने काँग्रेसी तथा शाह जुबैर के भाई होने के नाते गया और मुंगेर दोनों जिलों में मशहूर हैं। पुराने खानदान के होने के अलावे वे अच्छे वक्ता और प्रसन्न प्रकृति के हैं। उनका *वासस्थान अरवल*, भूकंप से बहुत पीडित हुआ था। अपनी जमीन में पीड़ितों को बसाने का प्रस्ताव उन्होंने किया और बिहार सेंट्रल रिलीफ कमिटी की सहायता उनको मिली। मि० पियरे सेरीसोल और रेवरेंड एंड्रूज ने उनके कामों की सराहना की। नई बस्ती का नाम उमैराबाद हुआ और हमलोगों को उसके उत्सव में शामिल होने की दावत मिली। एंड्रूज साहब के साथ हम सब वहाँ पहुँचे। एक बड़ी

किसान सभा भी उस मौके पर की गई और स्वामीजी पर १४४ दफा होने के कारण श्री विश्वेश्वरीप्रसाद (पन्ना बाबू) उसके सभापति हुए। उन्हों ने अपने भाषण में जमींदारी प्रथा खतम होने से अठारह करोड़ लगान की कमी होने की बात किसानों को बताई और कुछ इसी तरह की बातों से उनको प्रभावित करने की चेष्टा की। ऐसा करना कहाँ तक उचित था, मैं इस विषय में कुछ कहना नहीं चाहता, पर यह बात सही नहीं थी कि जमींदारी खतम होने से अठारह करोड़ रुपये किसानों के पास रह जाते, क्योंकि सारे सूबे का लगान मुश्किल से आठ दस करोड़ था ही और सरकार माल और रोडसेस मिलाकर तीन करोड़ से ज्यादा ले लेती थी। मेरे कहने का मतलब यही है कि गलत प्रचार कर लोगों को शिक्षा देना हमारी ; संस्थाओं के लिए बहुत हानिकर होता है।

११

श्री रामनंदन मिश्र ने महिला विद्यापीठ की स्थापना मभौलिया ग्राम (दरभंगा) में की थी। प्रारंभ में लोगों को काफी उत्साह हुआ और सब जिलों के प्रमुख काँग्रेसियों ने उसमें सहायता दी। श्री रामनंदन मिश्र ने सेठ जमनालाल बजाज से भी उस संस्थाको मदद देने के लिए कहा। उन्होंने राजेंद्र बाबू और ब्रजकिशोर बाबू की राय माँगी। जब तक उन लोगों की ओर से आश्वासन न मिले उनकी मदद उस संस्था को नहीं मिल सकती। श्री मगनलालजी के देहांत के बाद से ही उनके

और वहाँ की अवस्था से परिचित होकर जमींदार और रैयत के बीच सुलह करा देना चाहा। उस समय एक पेंशनयाफ्ता जज मैनेजर के पद पर बैठाये गए थे। उनके दिमाग में राज की ओर से जिरात करने की धुन सवार थी। इसलिए जरखेज जमीन रैयतों से ले लेकर जिरात बना रहे थे। बहुत कहने सुनने पर भी दोनों पक्षों में सुलह नहीं हो सकी। अंत में मुकदमा अदालत तक पहुँचा। वहाँ भी सुलह करने के लिए मैंने जोर लगाया। इस विषय को इतना विस्तार से इसलिए लिख रहा हूँ कि किसान सभा की शक्ति इन छोटे छोटे कारनामों को लेकर ही बढ़ती गई और जितना ही उसे दबाने की कोशिश हुई उतना ही उसका प्रभाव और आकार बढ़ता गया।

उसी साल एक और मुख्य बात हुई थी जिसका जिक्र कर देना मुनासिब समझता हूँ। शाह उमैर पुराने कांग्रेसी तथा शाह जुबैर के भाई होने के नाते गया और मुंगेर दोनों जिलों में मशहूर हैं। पुराने खानदान के होने के अलावा वे अच्छे वक्ता और प्रसन्न प्रकृति के हैं। उनका वासस्थान अरवल, भूकंप से बहुत पीड़ित हुआ था। अपनी जमीन में पीड़ितों को बसाने का प्रस्ताव उन्होंने किया और बिहार सेंट्रल रिलीफ कमिटी की सहायता उनको मिली। मि० पियरे सेरीसोल और रवरेंड एंड्रूज ने उनके कामों की सराहना की। नई बस्ती का नाम उमैराबाद हुआ और हमलोगों को उसके उत्सव में शामिल होने की दावत मिली। एंड्रूज साहब के साथ हम सब वहाँ पहुँचे। एक बड़ी

किसान सभा भी उस मौके पर की गई और स्वामीजी पर १४४ दफा होने के कारण श्री विश्वेश्वरीप्रसाद (पन्ना बाबू) उसके सभापति हुए। उन्हों ने अपने भाषण में जमींदारी प्रथा खतम होने से अठारह करोड़ लगान की कमी होने की बात किसानों को बताई और कुछ इसी तरह की बातों से उनको प्रभावित करने की चेष्टा की। ऐसा करना कहाँ तक उचित था, मैं इस विषय में कुछ कहना नहीं चाहता, पर यह बात सही नहीं थी कि जमींदारी खतम होने से अठारह करोड़ रुपये किसानों के पास रह जाते, क्योंकि सारे सूबे का लगान मुश्किल से आठ दस करोड़ था ही और सरकार माल और रोडसेस मिलाकर तीन करोड़ से ज्यादा ले लेती थी। मेरे कहने का मतलब यही है कि गलत प्रचार कर लोगों को शिक्षा देना हमारी संस्थाओं के लिए बहुत हानिकर होता है।

११

श्री रामनंदन मिश्र ने महिला विद्यापीठ की स्थापना मझौलिया ग्राम (दरभंगा) में की थी। प्रारंभ में लोगों को काफी उत्साह हुआ और सब जिलों के प्रमुख काँग्रेसियों ने उसमें सहायता दी। श्री रामनंदन मिश्र ने सेठ जमनालाल बजाज से भी उस संस्थाको मदद देने के लिए कहा। उन्हों ने राजेंद्र बाबू और ब्रजकिशोर बाबू की राय माँगी। जब तक उन लोगों की ओर से आश्वासन न मिले उनकी मदद उस संस्था को नहीं मिल सकती। श्री मगनलालजी के देहांत के बाद से ही उनके

स्मारक स्वरूप उस तरह की कोई संस्था बिहार में कायम हो, ऐसी इच्छा सेठजी ने प्रकट की थी। प्रो० कर्वे ने पूना महाविद्यालय खोलने में जो मुस्तैदी और अध्यवसाय दिखलाया था उसका जिक्र करते हुए किसी विश्वस्त और उत्तरदायी व्यक्ति को ही उस काम में लग जाने के लिए उत्साहित कर रहे थे। उनके पास एक धनी विधवा के दान का रुपया ऐसे काम के लिए पड़ा हुआ था, पर वह रुपया ऐसे काम में तभी खर्च किया जा सकता था जब कि उसके संचालन का भार किसी योग्य व्यक्ति के हाथ में हो। अतएव महिला विद्यापीठ के लिए उनकी जो शर्त थी उसकी पूर्ति नहीं हुई। श्री रामनंदन मिश्र ने विद्यापीठ को चलाने के लिए बड़ी तत्परता के साथ सब तरह की कोशिशें कर डालीं। सरकारी, गैरसरकारी, ज़मींदार, बड़े तथा छोटे सभी तबके के व्यक्तियों से उन्होंने मदद प्राप्त की। सर गणेश से चिट्ठियाँ ले लेकर वे डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट तथा बहुत से प्रभावशाली व्यक्तियों से मिले। यहाँ तक कि दारोगा से लेकर बड़े-से-बड़े अफसरों की सहायता उनको मिली। कुछ दिनों तक तो विद्यापीठ को धन की कमी नहीं हुई।

राजेंद्र बाबू मुझे साथ लेकर एक दिन विद्यापीठ का निरीक्षण करने गए थे। उसकी प्रशंसा में उन्होंने कुछ भाषण भी दिया था और कुछ नोट भी लिखा था। मैंने सब कुछ सोच समझ कर यह सलाह दी कि जिस स्थान पर विद्यापीठ स्थापित हुआ है वह इस काम के उपयुक्त नहीं है। यदि इसे

कहीं अधिकतर स्वास्थ्यपूर्ण स्थान में लाया जाय तो अधिक सफलता मिल सकती है।

श्री रामनंदन मिश्र की ओर से सूबे के कितने जिलों में यह मशहूर कर दिया गया था कि उनके व्यक्तित्व को ऊँचा न उठने देने के उद्देश्य से उनके कामों में एक जमात के लोगों से अड़चनें डाली जाती हैं। इसके प्रतिक्रिया स्वरूप उनको धनी-मानी सज्जनों की सहानुभूति तथा सहायता मिली थी। मुजफ्फरपुर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन श्री चंद्रेश्वरप्रसाद नारायण सिंह ने उनकी खासी मदद की। श्रीबाबू को भी विश्वास दिलाया गया था कि श्री रामनंदन मिश्र की उन्नति के रास्ते में रोड़े इसलिए अटकाए जाते हैं कि व अमुक वंशके हैं। डाक्टर महमूद ने मुझ इसबारे में पूछा था कि इस तरह की बातें जो छपरे में मशहूर की जा रही हैं उनमें कहाँ तक तथ्य है। श्रीबाबू के ऊपर इसका इतना असर था कि कितनी बार मुझ से उन्हों न इसका जिक्र किया। कहाँ तक यह बात ठीक थी, इसे परमात्मा ही जाने, पर इसका असर हमारे सूबे की राजनीति पर बुरा पड़ता गया और परस्पर का मनमुटाव बढाने में इसने काफी मदद पहुँचाई। १९२४ ई० में यदि साफगोई के साथ बातें हो लेती तो आगे चलकर इसका बुरा असर इतनी दूर तक नहीं पहुँचता। ब्रजकिशोर बाबू प्रांत के बहुत बड़े राजनीतिज्ञ होने के अलावे बहुत ही ईमानदार और उच्चकोटि के व्यक्ति थे। जहाँ कहीं भी उन्हों ने कमजोरी देखी उसे दूर करने के लिए

तत्पर हो जाते थे और इस वजह से लोगों की नजरों में खटकने भी लगते थे। श्री धनराज शर्मा को उन्हों ने दरभंगा जिले में काम करने की दावत १९२१ ई० में दी थी और जब शर्माजी का रास्ता उनको पसंद न पड़ने लगा तब उन्हों ने अपनी सहानुभूति हटा ली। महिला विद्यापीठ को लेकर वायुमंडल बहुत दूर तक दूषित किया गया और कांग्रेस के प्रमुख नेताओं तक इस विषाक्त प्रचार का असर पहुँच गया।

तीसरा अध्याय

कांग्रेस का अधिवेशन अक्टूबर में बंबई शहर में हुआ। श्री राजेंद्र प्रसाद राष्ट्रपति चुने गए। बिहार सेंट्रल रिलीफ कमिटी की एक बैठक बंबई शहर में ही उसी अवसर पर करने का निश्चय किया गया। अब तक का जमाखर्च ठीक कर लेना ही उस बैठक का मुख्य कार्य था। बहुत दिनों तक मैं बिहार से गैरहाजिर नहीं रह सकता था, अतएव दो चार दिनों के लिए ही मैं बंबई गया और कांग्रेस तथा बिहार सेंट्रल रिलीफ कमिटी में शामिल हुआ और फिर वापस आ गया।

उस समय एसेंबली का चुनाव होने जा रहा था। श्रीबाबू गया—मुंगेर से और मैं शाहाबाद—पटने से खड़ा किया गया। यह बिलकुल कांग्रेस का ही काम समझा गया और मेरी व्यक्तिगत जवाबदेही उस में नहीं के बराबर थी। मुझे फुरसत भी

नहीं थी। बंबई से लौटने के बाद ही चुनाव का काम खूब जोरों शुरू हो गया। श्रीबाबू के प्रतिद्वंद्वी श्री गुप्तेश्वरप्रसाद सिंह हुए। वे राजासाहब अमावाँ के सरकल आफिसर थे। राजासाहब की सहानुभूति श्रीबाबू के साथ बहुत दिनों से चली आरही थी। शायद एकही गोत्रीय होने के सिवा आपस का संबंध भी उनके साथ बहुत ऊँचे दर्जे का था। सरकार की दृष्टि में राजाबहादुर एक राजभक्त होने के कारण गुप्ता बाबू की उम्मीदवारी का समर्थन करने के लिए बाध्य थे। उनके भाई सिद्धि बाबू तथा मैंने गुप्ता बाबू को खड़ा न होने के लिए बहुत आग्रह किया, पर हमारी बातें उनपर कारगर न हुईं। लाचार मुझे उनके विरुद्ध काम करना पड़ा। श्रीबाबू के चुनाव के लिए औरंगाबाद में जवाबदेह हुए श्री बदरीनारायण सिंह। श्री रामनंदन मिश्र उनके मुख्य एजेंट बनाए गए। मिश्र जी श्रीबाबू के कृपापात्र थे और उनपर अटूट विश्वास भी था, ऐसा मालूम पड़ता था। 'नवशक्ति' कंपनी के एक डाइरेक्टर होने के नाते बद्री बाबू से भी श्रीबाबू का संबंध कुछ घनिष्ट हो रहा था। मेरे साथ उनका पूरा सहयोग था और मैं अपने को उनका विश्वास-भाजन ही समझता था। आगे चल कर श्री रामनंदन मिश्र के हाथ से चुनाव की जवाबदेही ले ली गई क्योंकि उनके साथ काँग्रेस कार्यकर्त्ताओं को नहीं बनी। उस चुनाव में परिश्रम बहुत किया गया, क्योंकि वोट गिनने पर मालूम हुआ कि गुप्ता बाबू को नाम मात्र का ही समर्थन मिला। श्री बाबू बहुत ज्यादा वोट

से विजयी हुए।

शाहाबाद-पटना क्षेत्र में चुनाव बहुत ही संगीन तथा पेचीदा हुआ। मेरे प्रतिद्वंदी थे सेठ रामकृष्ण डालमिया और श्रीजगतनारायण लाल। डालमिया जी एक प्रभावशाली पूँजीपति थे और कांग्रेस के नेताओं के साथ बराबर सद्भाव रखते आए थे। बिहार विद्यापीठ को ढाई सौ रु० माहवार मदद दिया करते थे और समय समय पर दूसरी तरह के दान भी देते आए थे। उनके विरुद्ध खड़ा होने में कितनी तरह की अड़चनें थीं। उनसे कांग्रेस टिकट ले लेने को कहा गया था, पर उनको यह कबूल नहीं हुआ। कांग्रेस कार्यकर्त्ता यह चाहते थे कि उनसे किसी तरह की सुलह न हो, अतएव जब कभी सुलहनामें की बात चलती तब हमारी ओर से सभी कार्यकर्त्ताओं ने उसका विरोध ही किया। उनके पास अटूट धन था और लाखों रुपये खर्च करने के लिए तैयार थे। इसका भय हमारे पक्ष के लोगों को अवश्य होता था, पर तोभी उनकी हिम्मत नहीं टूटी।

दूसरे प्रतिद्वंदी जगत बाबू हिंदू सभा के एक स्तंभ समझे जाते थे और नेशनलिस्ट पार्टी की ओर से उम्मीदवार बनाए गए थे। मालवीय जी का आशीर्वाद तथा मदद उनको प्राप्त थी। स्वयं मालवीय जी कितनी बार उनके चुनाव में मदद देने बिहार प्रांत आए। कई स्थानों पर सभाएँ कीं तथा भाषण दिए। लिख चुका हूँ कि स्वराज्यपार्टी के पुनर्संगठन के समय मालवीय

जी तथा अणे साहब दोनों शामिल थे, पर सांप्रदायिक निर्णय को लेकर परस्पर मतभेद हो जाने से उन लोगों ने स्वराज्य-पार्टी से इस्तीफा दे नेशनलिस्ट पार्टी बना एसेंबली के चुनाव में कांग्रेस का विरोध किया था।

जगत बाबू को पूरा विश्वास था कि उनके मुकाबले मेरी जीत नहीं हो सकती। शाहाबाद के निवासी की हैसियत से उनको अपने जिले के लोगों से काफी उम्मीद भी थी। असहयोग आंदोलन के आरंभ से ही पटना जिले में काम करने के कारण गाँव-गाँव से परिचित थे और हिंदू सभा के प्रमुख नेता के नाते सारे हिंदुस्तान में मशहूर थे। उनकी ओर से श्रीकृष्णकांत मालवीय तथा श्री गौरीशंकर मिश्र पटना जिले में भ्रमण करने के लिए आ चुके थे। उनका मुकाबला मेरे जैसे आदमी के साथ था जिसने शायद ही दो चार सभाओं में भाषण दिया हो। पटना जिले के किसी गाँव से मुझे ताल्लुक नहीं था। शाहाबाद में कुछ कुटुम्बियों तथा परिचित व्यक्तियों के यहाँ छोड़ अन्यत्र मुझे भ्रमण करने का मौका ही नहीं मिला था। जब तक पटने में रहा प्रांतीय आफिस के दफ्तर में ही फँसा रहा। वाग्मी न होने के कारण बाहर जाने तथा सभाओं में भाषण देने की न कभी इच्छा हुई, न कोशिश की। जब कभी बोलने का मौका होता तो कोई न कोई बहाना ऐसा निकल आता कि ठीक समय पर मुझे बोलने से छुटकारा मिल जाता था। ऐसे व्यक्ति के खिलाफ जगत बाबू को विजय प्राप्त करने की आशा यदि थी तो

उसमें उनका कोई दोष नहीं कहा जा सकता।

डालमिया जी को सरकार की मदद प्राप्त थी, इसी लिए कांग्रेस खयाल के होते हुए भी उन्होंने प्रतिज्ञापत्र पर दस्तखत करने की हिम्मत नहीं की। श्री जमनालाल बजाज को उस चुनाव में पड़ कर हमें बिठा देने के लिए उनकी कोशिश अवश्य रही थी, पर कार्यकर्त्ताओं के विरोध के मुकाबले उसमें उनको सफलता न मिली। उनकी तरफ से काम करने वाले लोग उनको इस बात का इतमीनान दिलाते रहे कि मेरे मुकाबले उनको सौ में नब्बे वोट मिलेंगे और मेरी जमानत तक जब्त हो जायगी, इस बात को राजेंद्र बाबू से कह कर उनको प्रभावित करने की कोशिश कितनी बार उन्होंने की। बात सही थी कि जितने बड़े आदमी थे सब उनके पक्ष में थे। सर गणेश का पत्र उनको मिला था और एक जगह जब मैं वोट के सिलसिले में गया तब मुझे वह पत्र देखने को मिला। पैसे के जोर पर जहाँ तहाँ काम करने वाले निकल ही जाते हैं। ऐसे लोगों की तादाद उनके पक्ष में बढ़ती गई। कहीं पर लोगों को यह भ्रम हो गया कि 'डालमिया' जी शायद मुसलमान हैं। इस भ्रम को मिटाने के लिए उनकी ओर से एक कविता बाँटी गई थी—"डालमिया नहिं गाल मवासा—रामकृष्ण हरिहर कर दासा"। जिस तरह भी प्रचार किया जा सकता था उनकी ओर से प्रचार हुआ। रुपये दिए गए, मिल में नौकरियाँ दी गईं, ऊख खरीदने का ठीका दिया गया। उनको पूरी उम्मीद हो गई कि मैं

(कांग्रेस का उम्मीदवार) हार जाऊँगा और मेरी जमानत तक जब्त हो जायगी।

२

मैंने चुनाव में कुछ भी हिस्सा न लेने का संकल्प कर लिया था। फुरसत भी नहीं थी और जरूरत भी नहीं समझता था। पटना जिले में श्री व्रजनंदन प्रसाद और श्री गुरुसहाय लाल ने विहार सब-डिविजन की जवाबदेही ले ली थी। दोनों काफी प्रभावशाली थे और उनके ही जरिये मैं वहाँ जा सकता था। श्री गुरुसहाय लाल के साथी श्री श्यामनारायण सिंह भी चुनाव में काम करते थे। इधर श्री गंगाशरण सिंह से मुझे अच्छी तरह पटती थी। साथ रहने और साथ काम करने का जो संबंध हो सकता था वह था। स्वामी जी को भी डालमिया जी तथा जगत बाबू के मुकाबले मेरी जीत पसंद थी, अतएव अपने क्षेत्र में उनकी मदद भी मुझको मिलती रही। शाहाबाद में श्री हरगोविंद मिश्र, सरदार हरिहर सिंह और श्री रामायण प्रसाद के अलावे बहुतेरे मध्यम वर्ग के जमींदार और प्रभावशाली व्यक्तियों की सहायता मुझे मिली। इतना होने पर भी मुझ पर जोर दिया गया कि मैं कुछ स्थानों में स्वयं जाऊँ। जगत बाबू की ओर से यह मशहूर किया जा रहा था कि मैं गूँगा हूँ—बोल नहीं सकता। एसेंबली में ऐसे आदमी के जाने से क्या लाभ होगा। इसलिए मुझे चंद जगह जाना अनिवार्य था।

उसी समय सरदार पटेल बिहार प्रांत का दौरा करने आ रहे थे। मुझे हुक्म हुआ कि मैं उनसे ससराम मे मिलूँ और उनके साथ गया जिले का भ्रमण करूँ। श्री बाबू शाहाबाद जिले मे दौरा करने जायँ, यह निश्चित हुआ। मैं रात में जब ससराम पहुँचा तब मुझे यह दुखद समाचार मिला कि मेरे जामाता श्री शंकरदयाल, जो चुनाव के ही सिलसिले में ससराम आ रहे थे, रेल की पटरी से पैर कट जाने के कारण गया भेजे जा रहे हैं। स्टेशन पर ट्रेन आनेवाली ही थी कि मैं वहाँ पहुँच गया। मेरे लिए यह संकट इतना विकट हो गया कि मुझे कुछ दिनों के लिए चुनाव को भूल ही जाना पड़ा। उनके साथ गया अस्पताल पहुँच कर पट्टी बँधवाई और सुबह की गाड़ी से पटना गया। फोन से मुरली बाबू को खबर दे दी गई थी। वे लोग एंबुलेंस कार लेकर स्टेशन आगए। अस्पताल ले जाकर उनकी चिकित्सा का उचित प्रबंध कराकर तब मुझे बैठने तथा स्नानादि करने की फुरसत हुई। इतनी जबरदस्त मानसिक क्लांति बहुत कम मौकों पर ही हुई है। मानसिक और शारीरिक दोनो कष्टों को बरदाश्त करने का यह मौका मेरी जिन्दगी मे तीसरा या चौथा था।

कुछ दिनों के बाद जब उनका जख्म अच्छा होने लगा तब मैं दो चार दिनों के लिए बाहर जा सका। सरदार पटेल के साथ भी एक दो जगहों तक जाने का अवसर मिला। उनका भाषण इतना जोरदार और तर्कपूर्ण होता था कि जिसने उसे

जेनरल सेक्रेटरी चुना गया। श्री राजेंद्र प्रसाद सभापति हुए। ऐसा करना जरूरी हो गया था, क्योंकि अगले साल १९३५ के कानून के अनुसार प्रांतीय एसेंबली का चुनाव होने वाला था। साथ ही किसान जाँचकमिटी का काम भी पूरा करना था। पीछे किसान जाँचकमिटी में स्वामी जी ने शामिल होने से इस बिना पर इनकार कर दिया कि वे तो किसानों का ही पक्ष लेंगे। कमिटी में रहने से उसके कार्यक्रम के पाबंद हो जायँगे और स्वच्छंदता से उसके सिफारिशों की नुक्ताचीनी नहीं कर सकेंगे।

श्री राजेंद्र प्रसाद सभापति तथा श्री कृष्णवल्लभ सहाय उसमें मंत्री हुए। मेंबरों में श्री श्रीकृष्ण सिंह, श्री रामचरित्र सिंह, श्री गंगाशरण सिंह, श्री विपिनबिहारी वर्मा, मैं और कई व्यक्ति थे। प्रोग्राम बना कि कम से कम तीन मेंबर किसी भी स्थान में तहकीकात करने में शरीक रहा करें। पीछे सब कोई मिलकर जैसा बहुमत होगा उसी के अनुसार सिफारिश करेंगे। कमिटी का दौरा गया, पटना, शाहाबाद, मुजफ्फरपुर, छपरा, दरभंगा, भागलपुर, पूर्णिया, संताल परगना आदि जिलों के विभिन्न स्थानों में हुआ जिनमें मैं शामिल रहा। कुछ जिलों में मैं नहीं जा सका। वहाँ श्री कृष्णवल्लभ सहाय और दो एक मेंबर गए। तहकीकात का सिलसिला इस तरह का रहता था कि जिस जिले में जाना होता था वहाँ की कांग्रेस कमिटी किसान सभा और जमींदारों को बाजाब्ता सूचना दे दी जाती थी। निश्चित तिथि पर सदस्य लोग पहुँचते थे। किसान

कांग्रेस की वर्तमान नीति राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति के अनुकूल नहीं थी। उसमें परिवर्त्तन होना आवश्यक था। आपने पत्रों में इन्हीं परिवर्त्तनों की ओर उनका इशारा रहता था। राजेंद्र बाबू उन पत्रों को तथा उत्तर में भेजे गए पत्रों की नकल को मुझे भी दिखलाते थे, और मुझ से परामर्श किया करते थे। मैं भी, जो कुछ राय उस समय उचित जँचती था, दे देता था। पर आज जो मेरी जानकारी समाजवाद की है तथा इन चंद वर्षों का जो अनुभव हुआ है उस दृष्टिकोण से देखने पर उन दिनों की राय की कीमत बहुत थोड़ी मालूम देती है।

५

चतरे (हजारीबाग) में बिहार प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलन श्री रामदयालु सिंह के सभापतित्व में हुआ। श्री रामनारायण सिंह स्वागत समिति के अध्यक्ष थे। यह वही स्थान था जहाँ १६३२ ई० में श्री रामनारायण सिंह की गिरफ्तारी हुई थी। उनके पिता का देहांत हो गया था और उनके श्राद्ध के समय उन पर किए गए जुरमाने की वसूली में पुलिस ने धाँधली मचाई थी। चतरा कांफरेंस का महत्त्व इसलिए है कि इसमें मैंने एक किसान जाँचकमिटी बनाने का प्रस्ताव [पेश किया था और उसका समर्थन स्वामी सहजानंद सरस्वती ने किया। इस प्रस्ताव के अनुसार एक जाँचकमिटी बनाई गई जिसने सारे सूबे का दौरा किया।

इस साल प्रांतीय कांग्रेस कमिटी के चुनाव में मैं फिर भी-

जेनरल सेक्रेटरी चुना गया। श्री राजेंद्र प्रसाद सभापति हुए। ऐसा करना जरूरी हो गया था, क्योंकि अगले साल १९३५ के कानून के अनुसार प्रांतीय एसेंबली का चुनाव होने वाला था। साथ ही किसान जाँचकमिटी का काम भी पूरा करना था। पीछे किसान जाँचकमिटी में स्वामी जी ने शामिल होने से इस बिना पर इनकार कर दिया कि वे तो किसानों का ही पक्ष लेंगे। कमिटी में रहने से उसके कार्यक्रम के पाबंद हो जायँगे और स्वच्छंदता से उसके सिफारिशों की नुक्ताचीनी नहीं कर सकेंगे।

श्री राजेंद्र प्रसाद सभापति तथा श्री कृष्णवल्लभ सहाय उसमें मंत्री हुए। मेंबरों में श्री श्रीकृष्ण सिंह, श्री रामचरित्र सिंह, श्री गंगाशरण सिंह, श्री विपिनबिहारी वर्मा, मैं और कई व्यक्ति थे। प्रोग्राम बना कि कम से कम तीन मेंबर किसी भी स्थान मे तहकीकात करने में शरीक रहा करें। पीछे सब कोई मिलकर जैसा बहुमत होगा उसी के अनुसार सिफारिश करेंगे। कमिटी का दौरा गया, पटना, शाहाबाद, मुजफ्फरपुर, छपरा, दरभंगा, भागलपुर, पूर्णिया, संतालपरगना आदि जिलों के विभिन्न स्थानों मे हुआ जिनमें मैं शामिल रहा। कुछ जिलों में मैं नहीं जा सका। वहाँ श्री कृष्णवल्लभ सहाय और दो एक मेंबर गए। तहकीकात का सिलसिला इस तरह का रहता था कि जिस जिले में जाना होता था वहाँ की कांग्रेस कमिटी किसान सभा और जमींदारों को बाजाब्ता सूचना दे दी जाती थी। निश्चित तिथि पर सदस्य लोग पहुँचते थे। किसान

लोग अपना लिखित बयान पेश करते थे। चंद लोगों के बयान के ऊपर जिरह करके उनके जवाब लिख लिए जाते थे। अगर जमींदारों की ओर से कोई प्रतिनिधि रहता था तो उसे भी जिरह करने तथा प्रत्युत्तर देने का मौका दिया जाता था। इस तरह के बयान जल्द जल्द लिखने की मेरी आदत रहती थी। इससे जहाँ जहाँ मैं गया बयान लिखने का काम मेरे ही तल्लुक रहा। संध्या हो गई और बयान लिखना खतम नहीं हुआ तो मैं उसे लिखता ही रह जाता और कुछ सदस्य आम सभा में भाषण देने चले जाते। इस तरह किसानों को एक नवीन शिक्षा अपनी तकलीफों को बताने की मिलती और उनमें जागृति भी पैदा होती जाती थी। जहाँ जहाँ बयान लिखने का स्थान नियत होता था सरकार की ओर से एक शार्टहैंड जानने वाले पुलिस अफसर भी जाते थे। बहुत जगहों में इंडियन नेशन के एक रिपोर्टर भी हमारे साथ रहा करते थे। कहीं-कहीं सर्चलाइट की ओर से भी खास रिपोर्टर रहते थे, पर ज्यादातर श्रीकृष्णवल्लभ सहाय इस काम को कर दिया करते थे।

किसान सभा का जोर धीरे-धीरे बढ़ रहा था। अरवल में जो सभा हुई उसमें स्वामी जी और श्री यदुनंदन शर्मा १४४ दफा के मुताबिक भाषण देने से रोक दिए गए थे। गोखले साहब उनके बाद जब कलक्टर होकर आए तब उन्होंने उनलोगों पर से १४४ दफा उठा लिया। फलस्वरूप उनका दौरा जिले भर में होने लगा। किसानों में जागृति आने लगी। श्री यदुनंदन

शर्मा के हाथ में गया की जिला कांग्रेस कमिटी चली आई थी। किसानपक्ष के लोग श्री बद्रीनारायण सिंह को अपने प्रभाव में लाकर उनके पैसे का उपयोग किसानों के बीच पहुँचने में करने लगे। उनको नाम के लिए कांग्रेस कमिटी का सभापति बनाया गया। श्री जगेश्वरप्रसाद खलिश से उनकी प्रतियोगिता चल रही थी। खलिश जी ने बहुत परिश्रम से रुपये इकट्ठे कर और कुमार वीरेंद्रबहादुर सिंह से ज्मीन हासिल कर राजेंद्र-आश्रम नाम से एक भवन बनवाया था। कुछ पैसे देने को रह भी गए थे, पर खलिश जी और श्री यदुनंदन शर्मा के बीच वैमनस्य बढ़ने का एक फल यह हुआ कि कांग्रेस को किसानपक्षवालों ने अपने हाथ कर लिया। उनकी हठधर्मी इतनी दूर तक चली गई कि प्रांतीय कमिटी के प्रस्तावों को काम में लाने से इनकार करने लगे। नतीजा यह हुआ कि एक दो बार चेतावनी पाकर जब वे न सुधरे तब प्रांतीय कमिटी ने जिला कांग्रेस कमिटी को तोड़ कर उसका काम चंद कांग्रेसवालों के हाथ में दे दिया। इस तौर पर कुछ दिनों तक काम चलता रहा। अंत में स्वामी जी ने श्री यदुनंदन शर्मा और खलिश जी के बीच सुलह कराने की कोशिश की और दोनों पक्ष के लोगों ने मुझे गया कांग्रेस कमिटी का सभापति होने के लिए आग्रह किया। सुलह हो जाय, इस गरज से मैंने इस पद को स्वीकार किया। मुझे इतनी फुरसत नहीं थी कि मैं जिले का काम सँभालता। प्रांत के ही इतने काम मेरे सर पर थे कि उनसे छुटकारा मिलना मुश्किल था।

इधर किसान जाँच कमिटी के कामों ने और भी बोझ बढ़ा दिया था। तौभी जब कभी जिला काँग्रेस कमिटी की बैठक होती मैं उसमें शामिल होता रहा। एक दो बार शर्मा जी जो अपना अलग एक आश्रम बना कर नियामतपुर में बेलागंज स्टेशन के नजदीक रहते थे, साइकिल से मीटिंग में ठीक समय पर नहीं पहुँच सके। कमिटी ने कुछ निश्चय किया जो शर्मा जी को पसंद नहीं पड़ा। इसकी शिकायत की चिट्ठी उन्हों ने इस ढंग से मेरे पास लिखी कि मैंने उनको अशिष्ट समझ कर स्वामी जी से उसका जिक्र भी किया। स्वामी जी और शर्मा जी में ज्यादा पटती थी। उनके लिए किसान सभा का काम काँग्रेस के कामों से ज्यादा जरूरी था, जिस से खलिश जी और शर्मा जी के बीच सुलह का मार्ग बहुत दिनों तक बनाये रखना असंभव हो गया।

६

श्री जवाहरलाल नेहरू लखनऊ काँग्रेस के सभापति हुए। उनके भाषण में समाजवाद की प्रशंसा और काँग्रेस को उसकी ओर झुकाव की प्रेरणा प्रचुर मात्रा में मौजूद थी। अधिवेशन में ही इस तरह के भाव का प्रकाशन और प्रदर्शन हुआ जिससे पता चलने लगा कि काँग्रेस के लिए एक कठिन युग आगया, और उसमे गांधीवादी ढंग से काम करने की पूरी

को वर्किंग कमिटी में रख लिया। श्री जयप्रकाश नारायण जिन्हों ने अखिल भारतीय सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना १९३४ ई० में पटने में की थी, वर्किंग कमिटी के सदस्य बनाए गए, यद्यपि उस साल उनका नाम ए० आई० सी० सी० या कांग्रेस डेलिगेट में भी नहीं आया था। नेहरू जी का कहना था कि मेंबर होने के बाद भी यदि ये डेलिगेट चुन लिए जायँ तो यह कार्रवाई जायज़ होगी। आगे चल कर जब उनका चुनाव प्रांत में डेलिगेट या ए० आई० सी० सी० में न हो सका तब उन्हों ने सदस्यता से इस्तीफा दे दिया। यह तो हुई वर्किंग कमिटी के चुनाव की बात। नेहरू जी ने अपने राष्ट्रपतित्व में किसान और मज़दूर संगठन को बढ़ाने के लिए काफी जोर दिया। समाजवादियों को उनके रुख से, उनके भाषण से, उनके उत्साहवर्द्धक लेखों से अपना प्रभाव बढ़ाने में काफी मदद मिली। मेरे सूबे में किसान आंदोलन बहुत जोर पकड़ने लगा। उसके संचालन का नेतृत्व धीरे-धीरे समाजवादियों के हाथ में आ गया।

१९३४ ई० में जब श्री श्यामनंदन सहाय (रायबहादुर) ने प्रांतीय कौंसिल में बंगाल टेनैंसी ऐक्ट में संशोधन करने का एक बिल पेश किया तब किसान सभा ने उसके विरोध में खूब जोरों की आवाज़ उठाई थी। बीच में जमींदारों ने राजेंद्र बाबू से उस संशोधन के विषय में सुलह करने की बात पेश की। प्रांतीय कांग्रेस वर्किंग कमिटी ने तीन आदमियों की एक कमिटी

उस काम के लिए बना दी। उसमें स्वामी जी और बलदेव बाबू भी शामिल किए गए। बलदेव बाबू के ही घर पर किसान सभा की बैठक होती थी और उनकी दिलचस्पी इस ओर बहुत रहती थी। साथ ही कानून की बारीकियों में उनकी जानकारी जमात के सभी लोगों से ज्यादा थी। जहाँतक मुझे याद है, जमींदारों के साथ किसी तरह की सुलह न हो सकी। किसान सभा का विरोध इस बिल के प्रति बढ़ता ही गया। अंत में सरकार ने उसे स्थगित ही कर दिया।

किसान जाँच-कमिटी की रिपोर्ट लिखी जा चुकी थी, पर उसी समय मंत्रिमंडल के बन जाने से कमिटी की बैठक न हो सकी और रिपोर्ट भी स्वीकृत न की जा सकी। इसी से यह आजतक प्रकाशित न हो सकी। जाँच करते समय दो चार जगहों के जो अनुभव हुए उनके विषय मे कुछ लिख देना आवश्यक समझता हूँ। किसानों की तरफ से जो गवाहियां दी जाती थीं उनमे जमींदारी प्रथा का अंत करने पर जोर दिया जाता था। इसके समर्थन मे कहा जाता था कि जमीन पर जमींदारों का कोई हक नहीं है। गया जिले मे भावली के विषय मे शिकायत, हाल में की गई नक्दी की ऊँची दर, जबरदस्ती आबवाब की वसूली, बकाश्त छीन लेना और साल-साल बदलते रहना, कई तरह की नाजायज सलामियों का लेना, लगान वसूल करने मे सख्ती करना, मार-पीट तक करना, अमलों को मनमानी अत्याचार करने देना इत्यादि मुख्य शिका-

यतों के बयान किए गए। एक स्थान पर तो बिच्छू पालने की बात भी कही गई। जब किसी असामी को विशेष सताना होना था तब उसे बिच्छू से कटाया जाता था। उन बयानों को सुन कर रोंगटे खड़े हो जाते थे! बावजूद तटस्थभाव रखने के हमलोगों को कभी-कभी क्रोध और आवेश हो जाता था। मैं गया जिले का रहनेवाला था। मेरे लिए भी कई शिकायतें नई मालूम पड़ती थीं। थोड़ा बहुत रंजित होते हुए भी ज्यादातर शिकायतें सही थीं, पर बहुत अंश में कानून में परिवर्तन होने पर ही वे दूर की जा सकती थीं। खास खास जगहों में खास खास तौर की शिकायतें मिलीं, पर अधिकतर लगान बढ़ाने और सर्वे के खिलाफ लगान वसूल करने की शिकायत सुनने में आई। भावली-प्रधान जगहों में जमींदारों तथा अमलों की ज्यादती करने की बहुत गुंजाइश रहने से वहाँ के लोगों के ऊपर मनमाना अत्याचार किए जाने की कथाएँ सुननी पड़ीं।

दरभंगा जिले में एक स्थान पर जाने के लिए कई मील तक नाव पर जाना पड़ा। वहाँ की रैयतों के बयान लेकर संध्या होते-होते वापस आना पड़ा। जब हमलोग सुपौल गए तब वर्षा आ जाने के कारण रेल पर एक फुट पानी चढ़ गया था। बी० एन० डब्ल्यू० रेलवे की गाड़ी एक अंधी बुढ़िया जैसी लाठी के सहारे धीरे-धीरे चलती हुई दिखाई पड़ी। हमारे *साथ एक पुलिस शार्टहैंड रिपोर्टर जो सेकेंड क्लास में जा रहे* थे, मारे डर के जबतक गाड़ी पानी में डूबी हुई पटरियों पर

चलती रही, तब तक नमाज पढ़ते रहे।

७

१९३५ के भारत-शासन विधान को काँग्रेस ने कबूल नहीं किया। सैकड़ों प्लैटफार्मों से तथा काँग्रेस कमिटियों की बैठकों में उसे अस्वीकार करने के प्रस्ताव पास किए गए। लखनऊ काँग्रेस में भी उसके विरोध में प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। नई शासन-प्रणाली को काम मे न लाने का संकल्प दुहराया तिहराया जाता था। उसके बावजूद भी एसेंबली के चुनाव में हिस्सा लेना आवश्यक समझा गया। सरकार के हिमायतियों को एसेंबली में जाने न देना तथा नवीन शासन-प्रणाली को तोड़ने के निमित्त एसेंबलियों पर कब्जा करने का निश्चय किया गया। तदनुसार एसेंबली के चुनाव में भाग लेना अनिवार्य हो गया और उसकी तैयारी होने लगी। प्रांतीय काँग्रेस कमिटी की ओर से सब जिला कमिटियों को ताकीद कर दी गई कि वोटरों में अपने दल के लोगों को दाखिल करने में सतर्क रहें। ऐसे व्यक्ति जिनको उम्मीदवार बनाया जा सकता था उनके नाम वोटरों में दर्ज रहें।

सर गणेश और मि० अजीज दोनों मंत्रियों की जोड़ी अपने पक्ष मे बहुमत बनाने के लिए तत्पर दीख पड़ी। जिले जिले का दौरा कर अपनी पार्टी को मजबूत बनाने के लिए सब तरह की तदबीरें वे करने लगे। जमींदारों का संगठन मजबूत बनाने में ही उनका हित था, इसलिए जमींदारों के साथ परामर्श

होने लगे। कांग्रेस की ओर से इस बात का प्रयत्न किया जाने लगा कि किस तरह अपने लोगों को अभी से सतर्क रखा जाय और सारी ताकत मिलाकर एसेंबली में ज्यादा से ज्यादा तादाद में कांग्रेसी मेंबर भेजे जा सकें। किसान सभा और सोशलिस्ट पार्टी एकमत्त होकर काम करने के लिए इच्छुक थीं। उनका विरोध कांग्रेस कमिटियों के ही अंदर होता था, पर जब कोई फैसला कर लिया जाता था तब कांग्रेस के साथ मिलकर ही उनकी ओर से भी तबतक काम होते रहे थे। उम्मीदवारों के चुनाव में भी उनका यही रुख रहा। हमलोगों को इस एक्य-भाव ने एसेंबली चुनाव में आशातीत सफलता दी।

जमींदारों, पूंजीपतियों तथा प्रभावशाली लोगों के साथ बड़े पैमाने पर टक्कर लेना था। वोटरों की संख्या बहुत बढ़ गई थी, पर उनकी शिक्षा नाम-मात्र की हो सकी थी। किसान जाँच कमिटी को लेकर कितने जिलों में हमलोगों की पहुँच हुई थी, किंतु उससे और चुनाव से कोई संबंध न रहने के कारण हमने वोटरों के शिक्षण का कोई प्रबंध अब तक किया न था। साथ ही साथ हमारी ओर से जो उम्मीदवार खड़े हो सकते थे उनको पैसे का अभाव था और प्रभावशाली धनी व्यक्तियों से कितनी सीटों के लिए संघर्ष होनेवाला था। इस समस्या को हल कर आगे कदम रखना दुष्कर जान पड़ता था। पर पहले से किया ही क्या जा सकता था। आल इंडिया पार्लियामेंटरी बोर्ड से हमको कुछ मदद जरूर मिलने वाली थी, पर जितनी रकम मिलने

वाली थी, वह तो बहुत ही थोड़ी होती। अपने प्रांत में सेठ रामकृष्ण डालमिया से मदद मिलने की बात एसेंबली चुनाव (सेंट्रल एसेंबली) के कारण असंभव दीख पड़ती थी, तथापि राजेंद्र बाबू ने एक बार डालमिया जी से मिल कर बात कर लेने का निश्चय किया। हम दोनों एक दिन मोटर से डालमिया-नगर पहुँचे। दिन भर वहीं रहे। शामकी गाड़ी से राजेंद्र बाबू वर्धा चले जाने वाले थे। दिन भर में करीब पाँच छः घंटे तक डालमिया जी से बातें होती रहीं। एक-एक सीट को लेकर काँग्रेस जीतेगी या हारेगी, इस पर उनके एतराजों का जवाब देता रहा। बहुत वाद-विवाद के बाद उनको विश्वास हुआ कि काँग्रेस कम से कम अस्सी पचासी सीटों पर अपना कब्जा अवश्य करेगी। इसी तरह उनसे बातें होती रहीं और मुझे ही उनके सवालों का जवाब देना पड़ता था। अंत में मेरे मन में उनके प्रति उदासीनता का भाव उत्पन्न हो गया। मुझे उनके पैसे लेने में असंतोष मालूम देने लगा। यद्यपि वे बहुत आगा-पीछा कर और अपने जामाता श्री शांति प्रसाद से सलाह-मशविरा करने के बाद तीस हजार रुपये देने को राजी हुए, तथापि दिन भर की बहस और उनके प्रश्नों के तरीके ने मेरे मन में कुत्सा का भाव ला दिया था। जब राजेंद्र बाबू शाम की ट्रेन से वर्धा जाने लगे तब मैंने उनसे कातर शब्दों में कहा कि यदि आप सिर्फ पचीस हजार रुपये भी बाहर से ला दें तो मैं डालमिया जी के पैसे न लूँ। उन्होंने मेरी बात कबूल करली, क्योंकि उनके

ऊपर भी इसी तरह की प्रतिक्रिया आज के सवाल-जवाब से हो गई थी। आखिर में भी शाम को पटने वापस आ गया और डालमिया जी से उसके बाद किसी तरह की चर्चा उस विषय में नहीं की।

चुनाव के सिलसिले में मैं शिमला से प्रत्येक सप्ताह पटने आया करता था और एक दिन ठहर कर जरूरी कामों को देख भाल कर फिर शिमला लौट जाता था। चुनाव के कामों में धीरे-धीरे जोश आने लगा। जैसे-जैसे चुनाव की तिथि निकट पहुँचती गई वोटरों और दिहात के रहनेवालों को उत्साह बढ़ता गया। उम्मीदवारों के नाम चुनने में भी काफी दिक्कत उठानी पड़ी। वर्किंग कमिटी की बैठक कई दिनों तक लगातार होती रही। स्वामी जी ने सहयोग दिया था, पर कितनी सीटों पर अपने आदमियों को चुनवाने के लिए अड़ जाते थे। एक दिन तो कमिटी से इस्तीफा देने के लिए भी तैयार हो गए। राजेंद्र बाबू के पास एक लंबी चिट्ठी लिख कर अपनी नाखुशी, हाजीपुर सीट पर श्री किशोरीप्रसन्न सिंह को न लेकर श्री रामेश्वरप्रसाद सिंह को लेने के कारण, तथा और कितनी सीटों पर उनके मन चाहे उम्मीदवार नहीं लिए जानेकी वजह से जाहिर की। राजेंद्र बाबू ने उनको तो समझा बुझाकर राजी कर लिया। पर जब सारी लिस्ट तैयार हो गई तब उन्हों ने अपने असंतोष को प्रकट किया। राजेंद्र बाबू का कहना था कि चुनाव में दस बारह सीटें उनकी मर्जी के खिलाफ बाँटी गई। अगर उनको इस

वजह से इस्तीफा देना होता तो उतनी ही वार इस्तीफा दे चुके होते।

चुनाव के समय दरभंगा जिले की एक सीट पर काफी मतभेद का प्रदर्शन हुआ। श्री धनराज शर्मा मधुबनी क्षेत्र के लिए उम्मीदवार थे, और श्री चतुरानन दास भी उसी सीट के लिए दूसरे उम्मीदवार थे। श्रीबाबू का हृदय श्री धनराज शर्मा की तरफ था। मेरे ऊपर कितने मित्रों के जरिये जोर पहुँचाया गया कि मैं शर्मा जी का समर्थन करूँ। मेरे मनमें उनके प्रति श्रद्धा का भाव तो हो ही नहीं सकता था, ज्यादा से ज्यादा मैं अपने को जब्त रख सकता था। श्रीबाबू के कहने पर भी मैं उनके लिए वोट देने से मजबूर था। जब कमिटी में उनके नाम पर वोट लिया गया तब मैं बहुत ज्यादा दबाव पड़ने की वजह से चुप रह गया और किसी को वोट नहीं दिया। मैं समझता हूँ कि श्रीबाबू को इससे दुःख पहुँचा होगा, पर मैं अपनी भावनाओं से लाचार था। शर्मा जी नहीं चुने गए। श्री चतुरानन दास ही काँग्रेस के उम्मीदवार हुए श्री यमुना कार्जी को लेकर भी इसी तरह का वाद-विवाद चला। स्वामी जी के ये दोनों अपने सहयोगी थे। कमिटी ने श्री धनराज शर्मा को इनकार कर कार्जी जी को उम्मीदवार बनाना मंजूर कर लिया।

शाहाबाद जिले के जिन पाँच उम्मीदवारों ने दरख्वास्त दी उन्होंने एक मत होकर वर्किंग कमिटी को सूचित कर दिया कि यदि उन में से एक भी न चुना जायगा तो शेष चार भी खड़े

होने से इनकार कर देंगे। कारण इसका यह था कि श्री गुप्तेश्वर पांडेय श्री रामायण प्रसाद के विरोध में भभुआ से खड़ा होना चाहते थे और श्री बुद्धनराय वर्मा के खिलाफ डालमिया जी ने सेठ जमुनालाल बजाज तथा श्री वल्लभ भाई पटेल से शिकायत की थी। श्री हरगोविंद मिश्र को महाराजा डुमरांव के विरोध में खड़ा कराया जाता था। श्री हरिहर प्रसाद सिंह ससराम क्षेत्र से खड़ा होने के लिए उम्मीदवार थे और मुझको शिमले में पत्र लिखकर जबतक उनसे मुलाकात न हो जाय तबतक इस संबंध में कोई काम करने के लिए निषेध किया था। इस तरह उन लोगों की गुत्थियाँ लगी हुई थीं। यद्यपि श्री रामायण प्रसाद प्रारंभ से ही भभुआ में काम करते आ रहे थे तथापि उस समय के कांग्रेस-कार्यकर्ता उनके पक्ष में नहीं दीख पड़ते थे। श्री हरनंदन सिंह को शामिल कर उन पाँचो जनों की गुट्टी बनी और उनको सफलता भी मिली। राजेंद्र बाबू को श्री रामायण प्रसाद के न चुने जाने पर खेद हुआ अवश्य, पर उन्होंने अपने भाव को जाहिर तक न किया। अपनी महानता से उस विष की घूँट को पीकर भी पहले - जैसा शांत बने रहे।

हाजीपुर में श्री दीपनरायण सिंह रायबहादुर श्यामनंदन सहाय के मुकाबले में खड़े किए गए। उस क्षेत्र में राय बहादुर की जमींदारी के अलावे उनका प्रभाव बाहर के लोगों पर भी बहुत ही अधिक था। पैसे की कमी थी नहीं। योग्यता, कार्य-कुशलता तथा लोगों के मन को खींच लेने का गुण, सभी कुछ उनके पक्ष

में ही था। दीप बाबू खर्च नहीं कर सकते थे, अतएव उस क्षेत्र में पाँच हजार का खर्च काँग्रेस कमिटी की ओर से होने का फैसला हुआ। इस तरह गया जिले के नवादा क्षेत्र से कोई उम्मीदवार नहीं मिल रहा था। गौरी बाबू ने श्रीरामेश्वरप्रसाद सिंह के खिलाफ खड़ा होने से साफ-साफ इनकार कर दिया। अंत में मैंने श्रीयमुना प्रसाद सिंह को वहाँ से उम्मीदवार होने के लिए राजी किया। उनके क्षेत्र में भी कमिटी ने पाँच हजार खर्च करने की मंजूरी दे दी। और और क्षेत्रों में भी विरोध होता ही और उनके लिए भी कमिटी की ओर से थोड़ी बहुत मदद देने का निश्चय हुआ।

८

एसेंबली के चुनाव के साथ ही कौंसिल (अपर-चेंबर) का चुनाव चलने वाला था। उसके वोटरों में जमींदारों की ही विशेष संख्या थी। किसान आंदोलन ने काँग्रेस के प्रति जमींदारों के कान खड़े कर दिए थे। कौंसिल के लिए वोट मिलना कठिन हो गया था। उस पर भी काँग्रेस की ओर से कौंसिल के लिए भी उम्मीदवार खड़े किए गए। यह विचार किया गया कि एक दो जगहों में अपने उम्मीदवार न भी खड़े किए जायँ, यदि वहाँ से जो जमींदार खड़ा होना चाहते हों वे काँग्रेसको आर्थिक सहायता दे दें, क्योंकि उन चुनावों में उम्मीद से कहीं ज्यादा खर्च होने की संभावना थी। इस तरह पर हमें कुछ रुपये मिल गए और कुछ रुपये एसेंबली मेंबरों द्वारा कौंसिल में चुने जानेवालों से अगाऊ

मिल गए। इस तरह चुनाव के खर्च के लिए हमारे हाथ में यथेष्ट रकम आ गई। पहले मैं डरता जरूर था कि रुपये पैसे की दिक्कत सुलझने में बड़ी कठिनाई आवेगी; पर जैसे जैसे समय बीतता गया और चुनाव का काम आगे बढ़ता गया, रुपयों का अभाव भी दूर होता गया। डालमिया जी ने संवाद भेजा कि उनकी बातचीत सरदार पटेल के साथ हो गई और उन्होंने डालमिया जी से रुपये लेना स्वीकार कर लिया है। अतएव उन्होंने मुझे चंदे का रुपया ले जाने के लिए बुला पठाया। मैं समझा कि अब उनका एहसान हम पर नहीं रहा। सरदार पटेल ने आज्ञा दे दी है तो मुझे रुपये लेने में संकोच क्यों हो। वादा के मुताबिक उन्होंने रुपया दे दिया, पर साथ ही काफी रकम सर गणेश और मि० अजीज को भी चुनाव काम से खर्च करने के लिए दी। इसका अर्थ साफ था कि चाहे जिस पार्टी की जीत हो उनके लिए दोनों ही बराबर थे।

चुनाव को संचालित करने के लिए श्रीबाबू ने भागलपुर डिविजन, रामदयालु बाबू ने तिरहुत डिविजन, रामनारायण बाबू ने छोटा नागपुर डिविजन और मैंने पटना डिविजन का भार लिया। पैसे सब उम्मीदवारों को आवश्यकतानुसार दिए जाने लगे। करीब करीब अस्सी पचासी हजार रुपये हमने उठाए और चुनाव के काम में खर्च किए। राजेंद्र बाबू वर्धा जाकर बीमार हो गए और चुनाव के काम में मदद देने से असमर्थ जैसे हो रहे। उनकी अनुपस्थिति में मेरे

सर पर सारा बोझ आपड़ा। आरंभिक काम समाप्त हो ही गया था, रहा रुपये पैसे का प्रबंध। उसमें भी आधा से ज्यादा इंतजाम उन्होंने कर ही दिया था, शेष का प्रबंध उपर्युक्त तरीके पर होगया राजेंद्र बाबू पटना लौटे, पर फिर भी बीमार हो रहे। मुश्किल से दो चार जिलों में भ्रमण कर सके। जब जब बीमारी बढ़ जाती थी दौरा करना रोक देते थे, पर जरासा भी स्वस्थ से हुए कि फिर काम में लग जाते थे।

राष्ट्रपति श्री जवाहरलाल नेहरू का दौरा सारे प्रांत में चुनाव के सिलसिले में हुआ। मैं उनके साथ बराबर रहा। नेहरूजी का बिहार-प्रवेश बक्सर में हुआ और वहाँ से ही तूफानी गति से दिन में कितनी सभाओं में भाषण देते, रात को एक एक बजे तक इस सिलसिले को कायम रखते थे। मुश्किल से चंद घंटे रात में सोने को मिलते थे। पहला दिन जब वे बक्सर पहुँचे तब सुबह में बक्सर की सभा में भाषण दे कर ब्रह्मपुर स्थान में भाषण देते दोपहर को आरा शहर पहुँचे। भोजन कर वहाँ भाषण दे पटना जिले के बिक्रम, नौबतपुर, फुलवारी इत्यादि स्थानों की सभाओं में शरीक होते रात एक बजे पटना शहर पहुँचे। लोगों में उत्साह ऐसा था कि चाहे सभा के नियत पर वे पहुँचे अथवा नहीं, उनकी इंतजारी में लोग बैठ रहते थे। पटने जिले का कार्यक्रम उदाहरण स्वरूप समझना चाहिए, क्योंकि जिन जिन जिलों का दौरा उन्हों ने किया जनता में इसी तरह का उत्साह मिलता गया। हमलोग पटने से गया

और वहाँ से हजारीबाग फिर राँची होते हुए जमशेदपुर पहुँचे। रात को श्री रहिन का आतिथ्य ग्रहण किया। नेहरूजी के साथ ताता के लोहे का कारखाना देखने गया। पहली बार लोहा ढालने का यंत्र देखा। भयंकर आवाज से कान फटे जाते थे और बिजली की रोशनी इतनी तेज थी कि आँखें उस ओर टिकती न थीं। हमलोगों को एक-एक चश्मा इस तरह का दे दिया गया था जिसके सहारे हम उस प्रचंड ज्वाला को आसानी से देख सकें।

जमशेदपुर से सुवर्ण रेखा पार कर मानभूम जिले का भ्रमण किया। धनबाद झरिया होते वर्द्धमान स्टेशन पर कुछ समय बिताकर रात की ट्रेन से साहब गंज (संताल-परगना) पहुंचे। वहाँ दो बजे रात तक सभा में उनकी इंतजारी की जा रही थी, परंतु उन्हों ने उस समय सोते से जगाने की मनाही कर दी थी, अतएव मैं ही सभा में गया। सबेरे की स्टीमर से गंगा पार कर पूर्णिया जिले में प्रवेश किया और जिले के कितने स्थानों में भाषण देते फिर इसी प्रकार मुंगेर तथा दरभंगा जिलों को लांघते हम मुजफ्फरपुर जिले में आ पहुँचे। रास्ते में जैसे-जैसे नेहरू जी की मोटर बढ़ती गई जनता की अपार भीड़ बीच-बीच में उनकी गाड़ी रोक कर उनसे दो-चार शब्द सुनने की उत्सुकता प्रकट करती गई। स्वयं श्री जवाहरलाल जी जहाँ भी कुछ व्यक्तियों को एकत्र देखते मोटर रुकवा कर उनको कुछ न कुछ उपदेश देते आगे बढ़ते थे। संध्या को मुजफ्फरपुर शहर होकर

दिहात में एक या दो सभाएँ कर रात की ट्रेन से ही वापस जाने का निश्चय उन्हों ने कर लिया। श्री ब्रजनंदन साही ने अपने चुनावक्षेत्र में दो सभाएँ और बुला रखी थीं। नेहरू जी को वहाँ जाने का समय न मिलने पर उनको बहुत दुःख हुआ। कातर शब्दों में बहुत विनय के साथ उन सभाओं में दर्शन देने के लिए साही जी ने प्रार्थना की, पर वे राजी न हुए। लाचार मैं ही उन जगहों में गया। मुझे बोलने का अभ्यास तो था नहीं, लोगों को नेहरू जी की अनुपस्थिति का कारण बता रात को १२ बजे तिलक-मैदान पहुँचा। तिलक-मैदान की सभा में वे नहीं पहुँच सके थे, पर सौभाग्य से राजेंद्र बाबू शाम की गाड़ी से वहाँ आगए थे। उन्हों ने सभा का काम संपादन कर दिया। राजेंद्र बाबू से बातें कर मैं पटना लौट आया।

आठ दिनों तक लगातार तूफानी दौरे में नेहरू जी के साथ घूमता-घूमता एकदम थकावट से परेशान हो रहा था। किस तरह मैंने इतनी तकलीफें बरदाश्त कर लीं, आज उसे याद कर आश्चर्य होता है। नेहरू जी की अपार शक्ति का परिचय उसी समय मुझे मिला। पंद्रह सोलह घंटे तक मोटर या रेल गाड़ी पर रहते हुए, पाँच सात बृहत सभाओं में भाषण देते, रोज-रोज की डाक सँभालते और उसी बीच में जिन्ना साहब के बयानों का उत्तर देते, श्री जवाहरलाल नेहरू ने अपनी अद्भुत शक्ति तथा दृढ़ता का परिचय दिया। मुजफ्फरपुर जिले

में एक एक सभा में तीस तीस हजार आदमी इकट्ठे होते थे। जमशेदपुर में जो मीटिंग हुई थी, लाउडस्पीकर के फेल कर जाने के कारण मुश्किल से उसको सँभाला जा सका था। इस तरह का तजरुबा हमें कितने स्थानों पर हुआ। नेहरू जी का यह तूफानी दौरा बिहार के इतिहास में स्मरणीय रहेगा। उन सभाओं में वे एकही विषय पर बराबर जोर दिया करते थे। हिंदुस्तान को आजाद बनाकर पंचायती राज कायम करना, यही कांग्रेस का उद्देश्य है। इसी की पूर्त्ति के लिए कांग्रेसी लोगों को एसेंबली में प्रविष्ट कराकर मौजूदा शासन-विधान को खतम करना है और नये विधान का संगठन कराना है। भाषण चाहे जबरदस्त न भी हो, पर उनके नाम के साथ कुछ ऐसे संस्मरण लगे हुए थे कि लोगों की भीड़ जहाँ भी उनके जाने की खबर पहुँचती थी, बड़ी तादाद में हो जाती थी। इस तरह का उत्साह प्रदर्शन मैंने पहले कभी नहीं देखा था।

६

यों तो मैं सारे चुनाव में ही दिलचस्पी लेता था और ऐसा करना समुचित था ही, पर मैं पटना डिविजन के जमींदारी-क्षेत्र के चुनाव में विशेषरूप से संलग्न था। कांग्रेस को सर गणेश की पार्टी के साथ प्रतियोगिता थी। सर गणेश ने साधारण चुनावक्षेत्र से खड़े होने की हिम्मत नहीं की। अतएव किसी तरह अपने नाम पर सेश की मात्रा बढ़ा कर जमींदारीक्षेत्र के वोटर हुए और वहीं से चुनाव में खड़े हुए। उनके विरुद्ध

कुलहड़िया के श्री हरवल्लभनारायण सिंह (स्व० चंद्रशेखर प्रसाद सिंह के पुत्र) खड़े हुए। हमें तो सर गणेश के साथ लड़ना ही था, क्योंकि यदि वे निर्विरोध चुन लिये जाते तो सारे चुनाव में हमारा विरोध करने लगते। इसलिए अपनी पार्टी के न रहने पर भी श्री हरवल्लभनारायण की मदद करने के लिए हमलोग तैयार हो गए। महाराज डुमरांव को श्री हरगोविंद मिश्र से मुकाबला था और उनको कामयाब होने की उमीद घटती जाती थी। जब वोट गिने गए तब सिर्फ दो हजार वोट से ही उनकी हार हुई। मेरा ख्याल यह था कि यदि महाराजा डुमरांव जिनके हाथ में दस पंद्रह जमींदारों के वोट थे और जिन पर सर गणेश की हार या जीत बहुत कुछ निर्भर करती थी, उन वोटों को अपने हाथ में करलें और कांग्रेस से इस बिना पर सुलह करलें कि उन वोटों के बदले हम श्री हरगोविंद मिश्र को उनके विरोध से हटालें तो एक सीट छोड़ देने से कांग्रेस की कोई क्षति नहीं होती और अपने प्रतिद्वंदी को हराकर हम एक प्रकार से अन्यान्य सीटों से निश्चित हो जाते। जिस रोज मैं श्री जवाहरलाल जी की अगवानी करने बक्सर जा रहा था महाराजा से एकांत में मिला और उनको यह उपाय सुझाया। पीछे वर्किंग कमिटी ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया और श्री हरगोविंद मिश्र ने भी हटने से अनिच्छा प्रकट की। महाराजा ने पंद्रह या सत्तरह वोट जो अपने कब्जे में कर रखे थे सर गणेश को दे दिए। सर गणेश जिस रोज जीते उसी रोज

सैकड़ों तार इस आशय के कि 'सर गणेश की जीत हुई और कांग्रेस की हार' सभी चुनाव-क्षेत्र के रिटर्निंग आफिसरों के नाम उन्होंने सरकारी खर्चे से भिजवाए। ऐसा करने का मतलब यह था कि यह खबर पहुँचते ही वोटरों में आतंक फैल जायगा और कांग्रेस का प्रभाव जो उन दिनों सभी स्थानों पर साफ मालूम पड़ता था कमजोर हो जायगा। तार की खबर पाकर हम कुछ चिंतित हुए जरूर, पर उसका कुछ भी असर चुनाव पर नहीं पड़ा।

जब चुनाव में सभी स्थानों से जीत की खबरें पहुँचने लगीं तब डालमिया जी ने मुझे टेलीफोन द्वारा जितने रुपये ज्यादा की दरकार हो, मदद करने का वचन दिया। मैंने उनसे वादे से अधिक रुपया लेने से इनकार कर दिया। मैं व्यक्तिगत रूप से उनका एहसान लेना भी नहीं चाहता था। डालमिया जी अपने दामाद श्री शांतिप्रसाद जी को कहीं न कहीं से एसेंबली में भेजना चाहते थे और मैं उसमें कोई हानि भी नहीं देखता था, पर वर्किंग कमिटी के मेंबरों में और विशेषकर जिले में काम करने वाले प्रमुख व्यक्तियों में उनके प्रति उतनी श्रद्धा न थी। इसी वजह से किसी जिले में इस काम की पूर्ति होने में बाधा नजर आती थी। अंत में उस प्रस्ताव को छोड़ ही देना पड़ा।

चुनाव समाप्त हो गया। रुपये की कमी नहीं हुई। जरूरत से ज्यादा लोगों ने खर्च किया। मदद करीब करीब

सभी उम्मीदवारों को कम और बेश मिलती रही। बहुतों ने कर्ज के रूप में बैंक आफ बिहार से हमारी जमानत पर रुपये लिए। चुनाव हो जाने के बाद उसे लौटा देने का वादा था और बैंक के नाम हैंडनोट में ऐसा ही लिखा गया था, पर दो वर्षों तक मेंबरी कर लेने पर भी किसी ने अपने कर्ज के रुपये अदा न किए। श्री जवाहरलाल जी के साथ जब मैं भ्रमण कर रहा था तब उन्हों ने मुझे स्पेन की सहायता के लिए कुछ रुपये उठवा देने की बात कही थी। मैंने उनसे कहा था कि जब मेंबरों का चुनाव हो जायगा और बैंक का रुपया अदा हो जायगा, तब कुछ रुपये इस काम के लिए मिल सकेंगे। पर चुनाव हो जाने पर कोई मेंबर जिन्होंने बैंक से रुपया लिया वापस करने पर राजी नहीं हुए। लाचार काँग्रेस फंड से ही बैंक का रुपया वापस कर दिया गया और स्पेन की मदद न की जा सकी।

१०

बिहार प्रांत के चुनाव के बाद ही संयुक्त-प्रांत में चुनाव होने को था। श्री गोविंदवल्लभ पंत ने सेंट्रल एसेंबली के चुनाव में विपिन बाबू के क्षेत्र में कई स्थानों में भाषण दिए थे, और विचारशील सुवक्ता होने की वजह से उनका असर भी पड़ा था। इस बार के चुनाव में भी हमलोगों की सहायता के लिए उन्हें कष्ट उठाना पड़ा था। उनका पत्र आया कि बिहार के चुनाव से फुरसत पाए हुए कार्यकर्त्ताओं को उनके प्रांत में चुनाव में

मदद देने के लिए भेज दिया जाय। मैंने वैसा ही किया और प्रांत के बहुतेरे लोग उनके यहाँ के भिन्न भिन्न जिलों में काम करने के लिए पहुँच गए। मैं भी इलाहाबाद और प्रतापगढ़ जिलों में थोड़ी-बहुत सहायता देने की इच्छा से गया और जब तक उनका चुनाव खतम नहीं हुआ तब तक वहाँ रहा।

इस बीच में हमारे यहाँ के चुनाव के नतीजे निकलने लगे। फोन से मुझे एक-एक कर अपने यहाँ के समाचार मिले और उमीद से ज्यादा कामयाबी होने की खबर पाकर जितनी खुशी होनी चाहिए थी उससे अधिक खुशी हुई। मैं अपने चुनाव-क्षेत्र में नहीं गया था। कारण, सर गणेश के जोर लगाने पर भी किसी जबरदस्त उमीदवार को हमारे मुकाबले में खड़ा होने की हिम्मत नहीं हुई और जिनको खड़ा किया गया उनको मुश्किल से चार सौ वोट और वह भी पंद्रह हजार के मुकाबले में मिल सके। उस समय काँग्रेस में अपूर्व ऐक्यभाव हो गया था और परस्पर का मतभेद भूल कर सभी विचार के लोगों ने कँधे से कंधा मिलाकर काम किया था।

११

१९३७ ई० के आरंभ में चुनाव कांड खतम हो गया। आगे क्या प्रोग्राम होगा, इस पर वाद-विवाद शुरू हो गया। सोशलिस्ट पार्टी ने अपना रुख साफ कर दिया कि बहुमत होने पर भी हमें मंत्रिमंडल नहीं बनना चाहिए। राष्ट्रपति श्रीजवाहर लाल नेहरू की यही राय थी। अतएव इसकी पुष्टि समाजवादियों

के दल मे जोरों से हो रही थी। इलाहाबाद से मैं एसेंबली की बैठक में शामिल होने दिल्ली चला गया। हिंदुस्तान टाइंस् उस समय सब प्रांतों के प्रमुख व्यक्तियों के बारे में लेख छापने लगा। बिहार के बारे में भी एक लेख छपा। उसमें मेरे संबंध में कुछ प्रशंसा सूचक बातें लिखी गईं जिनसे परस्पर द्वेष पैदा होने का आभास मिलता था। यह भाव कहाँ तक उचित या अनुचित था, इसका विश्लेषण करना सम्भव नहीं, क्योंकि उसके बारे में कुछ उड़ती पुड़ती खबर ही मेरे कानों तक पहुँची। उस लेख के लेखक समझे जाने की वजह से विपिन बाबू क्रोध के पात्र बने, पर उस भाव का शीघ्र अंत हो गया।

चुनाव के बाद एक सम्मेलन करने का प्रस्ताव आया। राष्ट्रपति श्री जवाहरलालजी ने इसका प्रस्ताव किया था। मार्च महीने में दिल्ली में ही सम्मेलन होना निश्चित हुआ। हमलोग तो उन दिनों वहाँ थे ही। नये शासन विधान के अनुसार जिस दल का बहुमत होता उसको ही शासन-सूत्र अपने हाथ में लेना चाहता था। कांग्रेस पार्टी का बहुमत कम से कम छः प्रांतों में हो गया था। इसलिए यह फैसला करना जरूरी हो गया था कि कांग्रेस पार्टी का रुख अप्रेल महीने के पहले साफ हो जाय। अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी की बैठक इसी सिलसिले में दिल्ली में ही की गई। पद ग्रहण को लेकर सभी जगहों में, अखबारों में तथा कांग्रेस कमिटियों में बहुत वाद-विवाद चल रहा था। आल इंडिया कांग्रेस कमिटी ने पद ग्रहण के पक्ष में

बहुमत से प्रस्ताव कबूल कर लिया। श्री जवाहरलाल जी ने इस संबंध में वर्किंग कमिटी से प्रस्ताव स्वीकृत हो जाने पर भी अपनी राय जाहिर करते हुए एक लंबा भाषण दे डाला। इस पर भी लोगों की राय पद ग्रहण के पक्ष में कायम ही रही और उनके विरोध से उस पर कोई असर नहीं आया।

पद ग्रहण का प्रस्ताव स्वीकृत हो जाने के बाद महात्माजी एक प्रस्ताव वर्किंग कमिटी के सामने लाए। उसका आशय यह था कि जब तक प्रांतीय गवर्नर इस बात का एलान न कर दें कि १९३५ के गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की उन धाराओं को जिनसे उनको विशेष अधिकार प्राप्त था, काम में न लावेंगे, तब तक कांग्रेस पद ग्रहण नहीं करेगी। इस प्रस्ताव ने देश में एक अजीब स्थिति पैदा कर दी। राजेंद्र बाबू ने इसकी एक प्रति हमलोगों के पास भेजकर हमारी राय दरियाफ्त की। प्रस्ताव पढ़ते ही हमलोगों का यह ख्याल हुआ कि पद ग्रहण के पक्ष में राय रखते हुए भी कांग्रेस के लिए मंत्रिमंडल बनाना अब असंभव हो गया, क्योंकि कोई भी गवनर गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट द्वारा प्राप्त अधिकार को काम में न लाने का वादा कैसे कर सकता है! मैंने राजेंद्र बाबू से इसका विरोध किया और कहा कि पद ग्रहण का प्रस्ताव करना ही फिजूल था जब कि हम इस शर्त के साथ उसे कबूल करते हैं। इसकी चर्चा राजेंद्र बाबू ने महात्माजी से कर दी। मेरी और श्रीबाबू की बुलाहट महात्माजी के यहाँ हुई। सुबह के टहलते समय हमलोगों से उन्होंने बातें

कीं। हमारे विरोध की दलीलें सुनने के बाद उन्होंने कहा कि तुम लोग समझते नहीं हो। सरकार तुमको मंत्री बनाने के लिए उत्सुक नहीं है। अभी वह चाहती है कि तुम मंत्री बनो, पर तुम्हें वह कुछ अधिकार देना नहीं चाहती। यदि तुम बिना शर्त्त के पद ग्रहण करते हो तो आज तुम्हें कुर्सी पर बिठाकर कल बैठने को स्टूल देगी। उस समय तुम कुछ कर नहीं सकते। लाचार हो जाओगे। अतएव जब तक सरकार यह शर्त्त कबूल न करे पद ग्रहण नहीं किया जाय। इन थोड़े से मार्मिकशब्दों का असर हमारे हृदय पर पड़ा। मैं समझ गया कि महात्माजी का विचार बहुत ही ठीक है और प्रस्ताव के पक्ष में मेरी राय हो गई। पीछे जब मंत्रिपद ग्रहण किया तब महात्माजी की इस दूरदर्शिता का परिणाम झलकने लगा। यदि बिना शर्त्त के हमलोग पद ग्रहण करते तो आज इंडिया सरविसेज पर तो हमारा कुछ प्रभाव होता ही नहीं, प्रांतीय दायरे में भी हमारा अधिकार बहुत दूर तक सीमित रह जाता। हमारी आज्ञाओं की पाबंदी नहीं की जाती और अवहेलना होते रहते भी हम उन अफसरों के विरुद्ध गवर्नर की मर्जीके खिलाफ कुछ कर नहीं सकते।

वर्किंग कमिटी की बैठक में महात्माजी ने अपने प्रस्ताव को समझाते हुए जो बातें कही थीं वे मुझे आज भी याद हैं। पद ग्रहण के पक्ष में उनकी राय क्यों हुई, इसका विश्लेषण करते हुए महात्माजी ने कहा कि मैं चाहता हूँ कि एक दफा तुम्हारे हुक्म से एक बालू का पार्सल भी एक स्थान से दूसरे स्थान तक

चला जाय। जितने अफसर हैं उनकी समझ में आ जाय कि जब एक बार तुम्हारी हुकूमत के मातहद वे रह चुकेंगे तब फिर उनके दिमाग में यह ख्याल हमेशा के लिए बैठ जायगा कि तुम्हारे पद छोड़ने के उपरांत भी तुम दुबारे पद ग्रहण कर सकते हो। अतएव उनके रुख में जो अभी अंग्रेजीपन है उसमें कुछ परिवर्त्तन हो जायगा और तुम्हारे बाहर चले जाने पर भी उन्हें इस समय से नाजायज़ काम करने में हिचक होती रहेगी। तुम्हारा भूत उनके दिमाग में बना रहेगा। उन बातों में कितनी दूर की सूझ छिपी हुई थी, उसे आज हम अनुभव से देख सकते हैं। जेल के अंदर ही जो चित्र १९२०—२१, १९३०—३४ में देखने में आता था वह आज १९४०—४१ में नहीं है।

चौथा अध्याय

हमारे प्रांत मे एसेंबली का लीडर कौन हो, इसे लेकर एक छोटा मोटा आंदोलन-सा खड़ा हो गया। श्रीकृष्णवल्लभ सहाय और प्रो० अब्दुल बारी ने मुझको इस पद के लिए योग्य समझा और इस ख्याल के मुआफिक लोगों को बनाने लगे। श्रीबाबू स्वराज्य पार्टी के लीडर कौंसिल में रह चुके थे, अतएव बहुतों को यह स्वयं सिद्ध-सा मालूम होने लगा कि इस बार एसेंबली में भी वही चुने जायँगे। इधर एसेंबली के चुनाव तथा बिहार सेंट्रल रिलीफ कमिटी के कामों के कारण मैं कुछ ज्यादा मशहूर हो गया था। पर मेरे दिल में यह ख्याल पैदा ही नहीं हुआ कि मै लीडर बनूँ। जब कृष्णवल्लभ बाबू और बारी साहब ने इस विचार को मेरे सामने रखा तब मैंने उनको उत्साहित नहीं किया। इसकी चर्चा चली नहीं कि भिन्न भिन्न जमात में तरह तरह की बातें होने लगीं। किसी ने इस विषय को जाति की नजर से देखा तो किसी ने मैत्री के नाते। मैंने अपने मन मे निश्चय कर लिया कि श्रीबाबू के मुकाबले में इस पद के लिए इच्छुक नहीं हो सकता। मुझे व्याख्यान देने का अभ्यास भी नहीं था, इस कारण और भी मेरा विचार हुआ कि मैं इस पद के योग्य नहीं हूँ। श्रीबाबू का सौहार्दपूर्ण ऋण मेरे ऊपर इतना है कि मैं उनका प्रतिद्वंद्वी बनने की कल्पना नहीं कर सकता। इस विचार को मैंने राजेन्द्र बाबू से भी कहा। प्रांत पर सर गणेश

का आधिपत्य चलता आ रहा था। उन्होंने सूबे मे एक नई विचार शैली कायम कर ली थी। उस प्रवाह में सभी तबके के लोग वह रहे थे। उसकी धारा को रोकना कुछ आसान काम नहीं था। इन वातो पर खूब गौर से विचार करने के वाद राजेंद्र वावू और मैंने इस निश्चय को कबूल किया था कि श्री वावू ही इस काम के योग्य हैं और उन्हींको लीडर होना चाहिए। ब्रजकिशोर वावू इस राय से सहमत नहीं थे और मेरे कितने मित्रों एवं समर्थकों को भी यह राय ठीक नहीं जँचती थी। मैंने अपने दो निकटस्थ मित्र और संबंधी से वातें कर अपने विचार के अनुकूल उनको वना लिया था। वास्तव मे मेरे ख्याल को उन्होंने पसंद किया। इसी तरह मैंने अपने निश्चय को मजबूत बना लिया। इसी वीच मैं एक दिन राजेंद्र वावू के साथ राय ब्रजराज कृष्ण के यहाँ पटनासिटी जा रहा था। साथ में प्रो० वारी और श्री कृष्णवल्लभ सहाय भी थे। श्री कृष्णवल्लभ सहाय मेरे सहायक के रूप मे कितने वर्षों तक भिन्न भिन्न संस्थाओं में काम कर चुके थे और उनकी विचार धारा मेरे अनुकूल ही रहती चली आई थीं। वारी साहव कुछ स्वतंत्र विचार रखनेवाले थे। विद्यापीठ में कुछ दिनो तक प्रोफेसरी करने के वाद राजेंद्र वावू के साथ प्रात के दौरे मे जाया करते थे। १९३२ ई० के सत्याग्रह संग्राम मे डिक्टेटर रह चुके थे और सजा पाकर जेल जाने का मौका भी प्राप्त किया था। जेल से छूटने के वाद समाजवादी दल के सभापति हुए,

पर कुछ ही दिनों के बाद मतभेद के कारण उससे हट गए थे। चुनाव में मुसलमानी क्षेत्र में कामयाबी हासिल करने के लिए काफी वोट प्राप्त किया था। भीतर-भीतर डॉक्टर महमूद से प्रतियोगिता का भाव भी उनमें मौजूद था, ऐसी मेरी धारणा है। जब वे और श्रीकृष्णवल्लभ सहाय मेरा पक्ष ग्रहण कर मेंबरों की राय अपने अनुकूल बना रहे थे तब मेरी रजामंदी हासिल करना जरूरी हो गया। इस मौके पर राजेंद्र बाबू से उन्होंने इस बात का जिक्र किया। मैंने उनके सामने ही कह दिया कि उनकी बातों से मैं सहमत नहीं हूँ और जो कुछ वे दोनों कह रहे हैं स्वतंत्ररूप से ही। राजेन्द्र बाबू के साथ, जैसा मैं लिख चुका हूँ मेरी सलाह पहले ही हो चुकी थी। उन दोनों के प्रयत्न तोभी जारी रहे और कहा जाता है कि उतने प्रयत्न के फलस्वरूप दो तिहाई मेंबरों की राय उनके अनुकूल हो गई थी।

पार्टी की बैठक बुलाई गई। मेंबरों की उपस्थिति काफी थी। वर्किंग कमिटी के मेंबर भी उपस्थित थे। बातें आपस में चल रही थीं कि कौन लीडर चुना जाय। रामदयालु बाबू ने कहा कि तीन उमीदवारों के नाम लिए जाते हैं, अतएव ये तीनों वर्किंग कमिटी में शरीक न हों। श्रीबाबू, रामदयालु बाबू और मैं तीनों मीटिंग से हटे। मैं पार्टी लीडर का उमीदवार नहीं था, फिर भी मेरे नाम का उल्लेख किया गया और मुझे भी वहाँ से हट जाना पड़ा। वर्किंग कमिटी ने तै किया कि राजेंद्र बाबू प्रत्येक जिले के एसेंबली मेंबरों से एकांत में एक-एक कर पूछ लें

कि किसका लीडर चुना जाना उन्हें पसंद हैं। अतएव उन्होंने ऐसा ही किया, पर इस तरह की बातचीत के दौरान में रामदयालु बाबू भी उनके साथ आ बैठे। बाबू रामनारायण सिंह को यह बात पसंद न आई। औरों को भी रामदयालु बाबू का वहाँ रहना पसंद नहीं था। मीटिंग का समय आ गया। राजेंद्र बाबू की बातचीत अभी चल ही रही थी। मैंने इस बीच में श्रीबाबू का नाम पार्टी लीडर के लिए प्रस्तावित कर दिया। आपस की कानाफूसी बंद हो गई। नियमानुसार समर्थन होने पर सर्व-सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। बीच में श्री जीमूतवाहन सेन ने राजेंद्र बाबू को पार्टी लीडर बनने के लिए अपनी ओर से प्रस्ताव किया, पर राजेंद्र बाबू की रजामंदी न पाने से उसका समर्थन नहीं हुआ। श्रीबाबू के लीडर चुने जाने के बाद आपस की गलतफहमी खतम हो गई। 'इंडियन नेशन' ने अपने एक लेख में मेरी जीवनी पर प्रकाश डालते हुए लीडर के लिए उमीदवार न होने को मेरा आत्म-बलिदान बतलाया, पर उससे मेरे प्रति कुछ लोगों का द्वेष ही बढ़ा, मेरा कुछ लाभ उससे नहीं हुआ।

२

उसी साल प्रांतीय राजनीतिक सम्मेलन प्रो० बारी के सभापतित्व में मशरक (सारन जिला) में हुआ। एसेंबली के खर्चे का हिसाब पेश हो कर स्वीकृत हुआ। एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पर विचार हुआ। मैं कह चुका हूँ कि

किसान सभा की ओर से जमींदारी प्रथा उठा देने के लिए जोरों से आंदोलन चल रहा था। एक साल पहले जिला राजनीतिक सभा, गया की बैठक बारसलीगंज मे श्री राजेंद्र प्रसाद के सभापतित्व मे हुई थी। इस बढते हुए आंदोलन को रोकने का मैं एक उपाय उचित समझता था कि जमींदारी प्रथा को अंत कर वाजिब मुआवजा दे कर सरकार उसे खरीद ले। यही प्रस्ताव मैंने बारसलीगंज मे उपस्थित किया। बहुत बहस मुबाहसे के बाद यह स्वीकृत हो गया था। मशरक कांफरेंस में इस प्रस्ताव से मुआवजा दे कर जमींदारी खरीदने का अंश उड़ा दिया गया। सरकार को चाहिए कि सारी जमींदारियाँ अपने अधिकार में कर ले और जमींदारों को कीमत देने की बात उठे ही क्यों। इस पक्ष के लोगों के विचार में जमींदारों का जमीन पर कुछ हक है ही नहीं, फिर दाम देने का सवाल ही कैसे उठ सकता है। प्रस्ताव पर बहुत जोर से वाद विवाद हुआ। श्री रामनंदन मिश्र ने प्रस्ताव के पक्ष में बहुत से प्रतिनिधियों को राजी कर लिया था। उन दिनों इस तरह के विचार उत्कर्ष पर पहुँच चुके थे और विपक्ष में जितनी दलीलें दी गईं, बहुमत पर उनका कुछ असर नहीं हुआ। प्रस्ताव पास हो गया।

मशरक कान्फ्रेंस मे ही श्रीबाबू के नाम से प्रांतीय गवर्नर का निमंत्रण पत्र पहुँचा। पहली मुलाकात मे जो पटने मे हुई थी, महात्माजी के प्रस्ताव के कारण लाट साहब ने अपने विशेषाधिकार के न प्रयोग करने के संबंध मे अपनी ओर से किसी तरह

का आश्वासन देने से इनकार कर दिया था। सभी प्रांतों में जहाँ जहाँ कांग्रेस पार्टी का बहुमत था, एक ही तरह के जवाब गवर्नरों की ओर से मिले थे। कांग्रेस के मंत्रिमंडल बनाने से इनकार करने पर सभी सूबों में अस्थायी मंत्रिमंडल भी बन गया था। महात्माजी अपने प्रस्ताव पर अटल थे। अखबारों में इस विषय को लेकर बहुत विवाद चल रहा था। बड़े-बड़े कानून दां अपनी अपनी राय अखबारों में प्रकाशित कर रहे थे। लंदन के विद्वान् प्रो० कीथ ने भी अपनी सम्मति कांग्रेस के विचार के पक्ष में दी थी। इधर अस्थायी मिनिस्ट्री से हमारे प्रांत में बहुत क्षोभ उत्पन्न होने लगा था। सरकारी नौकरों के बीच एक प्रकार का आतंक फैल गया था। वाइसराय ने एक भाषण में इस बात का इशारा किया था कि गवर्नरों को आजादी है कि जिस तरह की शर्तें कांग्रेस की ओर से माँगी जा रही थीं उस तरह की शर्तें मिली जुली भाषा में दे सकते हैं। इस वक्तव्य से लोगों को यह उमीद हुई कि अब कांग्रेस के लिए मंत्रि मंडल बनाने में आसानी हो जायगी। इसी बयान के बाद रांची से गवर्नर ने श्रीबाबू को बुलाने का संवाद छपरा के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की मारफत भेजा।

२

मशरक से लौट कर छपरे में हमलोग श्रीचंद्रदेवनारायण वकील के यहाँ रात में ठहरे। यहीं पर एक छोटी-सी मीटिंग जैसी हुई। राजेंद्र बाबू, रामदयालु बाबू, बारी साहब, श्रीबाबू

और मैं उसमें शरीक हुए। बात चली कि मिनिस्ट्री की बनावट किस प्रकार की जाय। ख्याल था कि जितने मिनिस्टर मौजूदा समय में थे कांग्रेस की ओर से भी उतने ही रहें। हमारे प्रांत में चार ही आदमियों की एक्सिक्यूटिव कौंसिल और मिनिस्ट्री पहले से चली आती थी। अतएव इतनी ही संख्या कांग्रेस के लोगों की भी रहे। इसी बात चीत के सिलसिले में प्रो० बारी ने कह डाला कि श्रीबाबू, डॉक्टर महमूद और अनुग्रह बाबू मिनिस्टर हों, रामदयालु बाबू स्पीकर हों और चौथा मिनिस्टर अछूत वर्ग से लिया जाय तो ठीक है, नहीं तो चौथा नाम पीछे चुन लिया जायगा। बारी साहब के इस कथन ने हमारा रास्ता बहुत कुछ साफ कर दिया। रामदयालु बाबू मिनिस्टर बनाये जायँ या स्पीकर, इसे कोई कहना नहीं चाहता था, पर बारी साहब के कथनोपरांत रास्ता सीधा दीखने लगा। बातें यहीं तक होकर रह गईं और श्री बाबू लाट साहब से मिलने के लिए राँची गए।

जुलाई महीना था। लाट साहब के साथ क्या बातें होंगी, यह जानने के लिए लोग उत्कंठित होने लगे। इसके पहले मद्रास गवर्नर से श्री राजगोपालाचारी की बातें हो चुकी थीं और वहाँ पर अस्थाई मिनिस्ट्री ने इस्तीफा दे दिया था और नया मंत्रिमंडल कांग्रेस की ओर से बन चुका था। अतएव इस विषय में किसी को संदेह तो था नहीं। रहा सिर्फ इतनी ही बात का एलान कि किस तारीख से इस प्रांत में मिनिस्ट्री काम करे। श्रीबाबू के साथ गवर्नर की बातें सफलतापूर्वक समाप्त

हुई। सरकार आसमान से नीचे उतर चुकी थी। जुलाई तीसरे सप्ताह में बिहार में भी चार व्यक्तियों का (श्रीकृष्ण सिंह, डाक्टर महमूद, श्री जगलाल चौधरी तथा मैं) मंत्रिमंडल बन गया। जनता ने अपूर्व उत्साह के साथ काँग्रेस की पहली मिनिस्ट्री का स्वागत किया।

बिहार प्रांत में ही क्यों, सारे हिन्दुस्तान में यह पहला अवसर था जब हिंदुस्तानियों के हाथ में इतना भी अधिकार आया। यों तो गवर्नर तक हिंदुस्तानी हो चुके थे। लार्ड एस० पी० सिन्हा बिहार के ही गवर्नर बनाए गए थे, पर उनको न इतनी हिम्मत थी न ताकत कि कोई भी काम अंग्रेज सिविलियनों की राय के खिलाफ कर सकें। हमलोगों को तो यह भी सुनने में आया था कि गवर्नमेंट हाउस में उनके रहन-सहन और खानपान का तरीका भी उनके सेक्रेटरी की मर्जी पर निर्भर रहता था। उन्हें अपनी इच्छा के प्रतिकूल अंग्रेजी रीति से ही जीवन व्यतीत करना पड़ता था। लोगों में यह बात मशहूर थी कि उनको तम्बाकू पीने तथा देशी मिठाइयाँ खाने की भी आजादी न थी। अँग्रेज सरकार को उन पर उतना विश्वास नहीं था। इसका सबूत तो दो अंग्रेज एक्सिक्यूटिव कौंसिलर को उनके साथ कर देने से ही मिल जाता है। कहा जाता था कि चूँकि गवर्नर हिंदुस्तानी और एक एक्सिक्यूटिव कौंसिलर हिंदुस्तानी थे इसलिए दो अंग्रेजों का उनके साथ होना अनिवार्य हो गया था। आगे चल कर जब लार्ड सिन्हा ने

गवर्नरी से डेढ़ या दो साल के अंदर ही इस्तीफा दे दिया तब एक ही अंग्रेज एक्सिक्यूटिव कौंसिलर रहने लगा। यही सिलसिला अंत तक चल रहा था। पुलिस और सिविलियनो के ऊपर हिंदुस्तानियों की हुकूमत आज तक नहीं के बराबर ही रही थी। नये विधान के अनुसार इस वातावरण में बहुत कुछ परिवर्तन हो गया हो, यह बात नहीं थी। पर इतना अधिकार तो जरूर आ गया था कि किसी भी अंग्रेज अफसर को हमारी मर्जी के खिलाफ काम करने की हिम्मत न होती थी। जिस किसी ने ऐसा किया उसे उसकी सजा भोगनी पड़ी और इस वजह से उनके दिल में आतंक सा फैल गया था।

४

मि० यूनुस ने ही प्रांत में मंत्रिमंडल कायम किया था। मैं पहले लिख चुका हूँ कि सर गणेश को हराने का बहुत प्रयत्न किया गया, पर अंत में उनकी जीत हो गई। उमीद यह की जाने लगी कि सर गणेश ही प्राइम मिनिस्टर बनेंगे और उनके ही द्वारा मंत्रिमंडल की स्थापना होगी, पर देखने मे आया कि सर गणेश के साथ आठ दस मेंबर से ज्यादा नहीं थे। कांग्रेस टिकट पर चुने जाने वालों की संख्या करीब-करीब सौ तक पहुँच चुकी थी। हाँ, मुसलमान मेंबरों की एक बड़ी जमात यूनुस साहब का साथ दे रही थी। अतएव यूनुस साहब ने कांग्रेस के अतिरिक्त बहुमत पार्टी के लीडर के नाते मंत्रिमंडल बनाने का दावा किया। छोटानागपुर के कुमार अजीतप्रसाद सिंह के

ऊपर इस ओर या उस ओर बहुमत बना देना निर्भर हो गया, क्योंकि चंद मेंबर, जो छोटानागपुर के थे वे उनका साथ दे रहे थे। मि० यूनुस को कुछ हिंदू मेंबरों की जरूरत थी और सर गणेश बिना मुसलमान मेंबरों के मंत्रिमंडल बनाने से अशक्य थे। इस द्विविधा में बातें चल रही थीं। हमारी सहानुभूति किसी भी मंत्रिमंडल से नहीं थी, पर सर गणेश के विरोध में जिस किसी को भी कामयाबी हो जाती मैं कांग्रेस के हक में उसे अच्छा ही समझता। सर गणेश से हमलोग इसलिए डरते थे कि उनके हाथ मे ताकत आ जावेगी तो हमारी जमात में फूट पैदा करने की कोशिश उनकी ओर से होगी। हमलोग उन दिनों दिल्ली में ही थे। जब यह खबर पहुँची कि मि० यूनुस, मि० वहाब, कुमार अजीतप्रसाद सिंह और श्री गुरुसहाय लाल का मंत्रिमंडल स्थापित हुआ तब हमें संतोष हुआ। पहली अप्रेल को नया शासनविधान कार्यरूप में परिणत हो गया। हिंदुस्तान में जिन जिन प्रांतों मे इस तरह के अल्पमत दल की मिनिस्ट्री बनी उसके प्रति लोकमत का विरोध प्रारंभ से ही रहा और जैसे-जैसे उनका शासन चलता गया विरोध की मात्रा वैसे वैसे बढ़ती गई। बिहार प्रांत में मि० यूनुस के मिनिस्ट्री कबूल करने के बाद ही विरोधप्रदर्शन करने के लिए चंद लोग उनके बंगले पर पहुँचे जिस में श्री जयप्रकाश नारायण भी शामिल थे। पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया और उनको सजा भी मिली।

करता था कि जबतक जमींदारी सरकार के हाथ सुपुर्द कर उसके बदले मुनासिब कीमत लेने पर वे राजी नहीं होते तबतक शांति नहीं हो सकती। किसी भी गवर्नमेंट के लिए बढ़ते हुए किसान आंदोलन के मुकाबले कानून के जरिये उनकी सहायता करना असंभव हो जायगा मेरे इस ख्याल से न हमारे साथी और न दूसरे प्रमुख व्यक्ति सहमत होते थे। मैंने इसपर काफी गौर किया था और अपने मन में इसके सब अंगों पर विचार करने के बाद इस निश्चय पर पहुँचा था। दो वर्ष के बाद जब फ्लाउड कमिटी की रिपोर्ट बंगाल गवर्नमेंट के सामने आई तब उसमें बहुतेरी सिफारिशें मेरे विचार से मिलती जुलती देखने में आईं। इससे मुझे कुछ आनंद तो जरूर हुआ, पर इसके प्रयोग में जितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता उनका चित्र भी स्पष्ट रूप से दीखने लगा।

एसेंबली की बैठक बुलाई गई। जितनी दूर तक जमींदारों के साथ सुलहनामे से कानून में सुधार करना तै हो गया था उतने अंश तक कानून में तरमीम करने का मसविदा पेश होकर एसेंबली और कौंसिल दोनों जगहों से स्वीकृत हो गया। इस बीच में कितनी बार परस्पर का विरोध इस हद तक पहुँच जाता था कि सुलह टूट जाने की संभावना हो जाती थी। किसी न किसी तरह कानून पास हो गया और हमारे कार्यक्रम का पहला अध्याय समाप्त हुआ। सुलह हो जाने के कारण ही कर्ज के सूद और वसूली के विषय में तथा कृषि आयकर (एग्रिकल्चर

इनकमटैक्स) के संबंध में दो मसविदे मैंने एसेंबली मे पेश किए।

सितंबर में जिस दिन मैंने आयकर संबंधी बिल एसेंबली मे पेश किया था उस दिन मुझे बहुत जोर का बुखार हो आया। फेंफड़े में कुछ शिकायत पाई गई और डाक्टरों ने कितने दिनों तक मुझे काम करने से रोक दिया। मिनिस्ट्री आरभ होते समय में सदाकत आश्रम मे ही रहता था, पीछे सरकिट हाउस में आ गया था और बीमारी में यहीं रहा। जब हटाये जाने लायक हुआ तब एक छोटे से सरकारी मकान मे चला गया। मेरे परिवार के लोग भी मेरी बीमारी का हाल सुनकर आ गए। जैसे ही कुछ स्वस्थ हुआ डाक्टरो के मना करने पर भी काम मे लग गया। दुर्गा पूजा की छुट्टी मे मैं एक या दो दिन के लिए इलाहाबाद गया था। फिर तो पटने मे ही बराबर रह गया और जरूरी कामों को अंजाम देता रहा।

उस समय बिहटा में जो भयानक रेलवे दुर्घटना हुई थी उसके संबंध मे जाँच करने के लिए भारत सरकार की ओर से एक ट्राइब्यूनल बनाई गई थी। जब मैं इलाहाबाद मे था तब मेरे पास एक तार इस संबंध का पहुँचा कि बिहार सरकार की ओर से भी एक वकील घायल व्यक्तियों की तरफ से पैरवी करने के लिए रखा जाय। बिहटा दुर्घटना में आहत लोगों की सेवा-शुश्रूषा तथा उनके परिवार के साथ पत्र-व्यवहार करने में श्रीअवधेशनंदन सहाय वकील ने काफी दौड़ धूप की थी। इस

संबंध का ज्ञान भी उन्हें पूरा हासिल हो गया था। राजेंद्र बाबू इस राय से सहमत थे कि उनको ही बिहार सरकार की तरफ से आहत तथा पीड़ित व्यक्तियों के पक्ष में पैरवी करने को भेजा जाय। प्राइम मिनिस्टर की गैरहाजिरी में डी० आई० जी०, सी० आई० डी० तथा चीफ सेक्रेटरी की सलाह से उनको इस काम के लिए मुकर्रर किया। कुछ मित्रों ने आगे चलकर इसे गलत काम करार दिया, पर मैं अभी तक अपनी गलती समझ नहीं सका। श्रीअवधेशनंदन सहाय न हमारे मित्रों में से थे, न उनसे मुझ को किसी तरह की घनिष्टता ही थी। मैंने सोचा और राजेंद्र बाबू की भी राय मुझे इस पक्ष में मिल चुकी थी कि जितने लोगों को उस दुर्घटना के संबंध में जानकारी थी उनमें सब से योग्य वे ही थे। आगे चलकर उनको कुछ दिनों के लिए ऐसिस्टेंट गवर्नमेंट ऐडवोकेट का काम भी मिला था। एक दल के लोगों में उनकी बहाली खटकती रही।

इसी समय श्री एस० के० पी० सिन्हा, जो गया डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के इंजिनियर थे और जिनका जिक्र पहले आ चुका है, के मुकदमें की अपील हाईकोर्ट में सुनवाही के लिए तैयार हो गई थी। एक प्रश्न का जवाब देने के सिलसिले में उनकी फाइल मेरे पास आई। उन दिनों मैं बीमार होकर डेरे में ही रहता था। मैंने उनके मुकदमे के संबंध में एक नोट गवर्नर साहब के पास लिख कर भेजा। मुकदमे का सारांश यह था कि गया बोर्ड के जब्त हो जाने पर मि० हमीद, जो वहाँ के

स्पेशल आफिसर बनाए गए थे, ने संभवतः सर गणेश की इच्छा के अनुसार कुछ दोष लगा कर सिन्हा साहब को बोर्ड की नौकरी से अलग कर दिया था। फाइल देखने से यह पता नहीं चलता था कि इतने बड़े काम को बिना सरकार की मंजूरी के मि० हमीद ने अपनी जवाबदेही पर करने की हिम्मत कैसे की। पीछे गवर्नर सर मेरिस हैलेट ने श्री बलदेव सहाय ऐड-वोकेट-जेनरल से कहा था कि उनकी बरखास्तगी की जवाबदेही हमीद के ऊपर नहीं है, उसने तो सर गणेश के कहने मुताबिक काम किया था। सिन्हा ने अपनी बरखास्तगी के बाद दीवानी मुकदमा दायर किया। सब-जज के इजलास से उनको एक लाख से ऊँचा हरजाने को डिग्री मिली। सरकार की ओर से उसकी अपील हुई थी। सब जज के इजलास में सरकार ने तीस हजार रुपये और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ने भी उतने ही रुपये अलग मुकदमे की पैरवी में खर्च किए। कम से कम तीस हजार हाईकोर्ट में भी खर्च होता ही, क्योंकि मि० हमीद को बचाने के लिए सरकार को ऐसा करना ही पड़ता। मैंने देखा कि सिन्हा के साथ ज्यादती की गई है। सर गणेश ने अपनी जिद रखने के ख्याल से उनको बोर्ड से अलग कराया। १९३० ई० से १९३७ तक सिन्हा मुकदमा लड़ते रहे और नौकरी से अलग रहे। हजारों रुपये की बरबादी उठाई। पबलिक फंड से भी हजारों रुपये की बरबादी की गई और आगे को जाने की संभावना भी बनी रही। ऐसी हालत में मैंने सोचा कि न्याय

तो यही कहता है कि इस मुकदमे को अब खतम कर दिया जाय और डिग्री की रकम कम बेश कर अपील में सुलहनामा दाखिल हो जाय। पर मैं अपने को इस काम के योग्य नहीं समझता था, कारण मुझे सर गणेश से तकरार थी और सिन्हा को मैंने ही उनकी इच्छा के प्रतिकूल डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में नौकरी दी थी। अतएव इन सब बातों को लिख कर मैंने सर मैरिस हैलेट को इस मुकदमें की पंचायती कर देने की सलाह दी। सर मैरिस ने सिन्हा, हमीद और श्री रामेश्वरप्रसाद सिंह, चेयरमैन डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से अलग अलग बातें कीं और सबने उनके फैसले को कबूल कर लेने का वचन दिया। गवर्नर साहब ने सब बातों को सोच-विचार कर अपना फैसला दे दिया। उसके अनुसार सिन्हा को दस हजार खर्चे का मिला और पांच वर्षों के लिए सरकारी नौकरी मिली। मेरा उद्देश्य न्याय दिलवाने और नाहक लड़ाई में रुपया खर्च न हो इसे रोकने का था। यह पूरा हुआ।

ऐडवोकेट जेनरल की नियुक्ति के संबंध में भी कुछ लोगों की आपत्ति हुई। पहले सर सुलतान ऐडवोकेट जेनरल थे, किंतु उस समय वे कौंसिल मेंबर होकर शिमले में थे। अपने पद से उनको छुट्टी मिल गई थी। सवाल उठा उनकी जगह पर कौन ऐडवोकेट जेनरल हो। हमारी जमात में बलदेव बाबू से बढ़ कर कोई दूसरा व्यक्ति नजर में नहीं आता था। हमारे दृष्टिकोण को समझनेवाला हमसे सहानुभूति रखनेवाला और

साथ ही कानून का विशेषज्ञ उनसे बेहतर कोई नजर नहीं आया। सर सुलतान को हम उनकी जगह से हटाना नहीं चाहते थे। हाईकोर्ट का काम उनके जिम्मे छोड देने को तैयार थे। यो तो श्री पी० आर० दास भी ऐडवोकेट जेनरल बनाए जा सकते थे, पर उनसे हमारा काम नहीं चल सकता। कारण वे इतने बड़े थे कि उनको महीनो ऐसेंबली में रोक रखना असंभव होता। इन कारणों से भी बलदेव बाबू ही इस काम के लिए हमलोगों की राय में ठीक जँचे। डाक्टर महमूद को इससे कुछ नाइत्तफाकी हुई थी, पर जब बातें समझा दी गई तब उनको भी यह राय पसद आई। बलदेव बाबू हमारे साथ काफी तौर पर खटे और कानून बनाने में उन्होंने यथेष्ट सहायता दी।

३

जमीन और लगान सबंधी कानून की एक किश्त बन गई। दूसरी किश्त के बारे में बातें चलती रहीं। मंत्रियों का दौरा भी शुरू हो गया। श्रीबाबू और मैंने पटना और गया जिले का दौरा एक ही साथ किया। गया जिले में खासकर जमींदारों का विचार जानना जरूरी था और उनको समझा बुझाकर राजी करना भी हमारे दौरे का मकसद रहता था। किसानों के प्रतिनिधियों को भी अपनी कहानियाँ बताना आवश्यक था।

आरा शहर भी हम गए। और वहाँ की चंद संस्थाओं द्वारा अभिनंदित हुए। जैसे जैसे हमलोगों की बातचीत जमींदारों के साथ होती गई वैसे वैसे स्वामी सहजानंद और श्रीयदुनंदन शर्मा

की जमात की ओर से कांग्रेस मिनिस्ट्री के प्रतिकूल वायुमडल बनाया जाने लगा। १६३६ नवंबर महीने की बात है। मैं उन दिनों कॉटेज अस्पताल में अस्वस्थ पडा था। उन्हीं दिनों गया जिला के एक किसान कार्यकर्त्ता, जो स्वामीजी के अनु-यायियों मे से थे, मुझसे मिलने अस्पताल ही आए। उन्होंने मुझ से कहा कि मत्रिमडल बनने के कुछ ही दिनो के बाद स्वामी जी की अध्यक्षता मे किसान सभा के अंतरंग कार्य-कर्त्ताओं की एक बैठक हुई थी जिसमे कांग्रेस मिनिस्ट्री को तग करने का परामर्श किया गया था। उसी निश्चय क अनुसार मिनिस्ट्री बनते ही तरह तरह के आदोलन होने शुरू हो गए। श्रीयदुनंदन शर्मा खासकर गया जिले मे इस भाव का प्रचार करने लगे कि किसानों की लगान माफ हो जाय और जमींदारी प्रथा का अंत कर दिया जाय। स्वामीजी ने जिले जिले में भ्रमण कर इसी तरह का प्रचार करना जोरों से आरंभ कर दिया था। मुगेर, चंपारन तथा छपरे से खबर आई कि वहा उनके व्याख्यानों मे खुले तौर पर विद्रोह फैलाने का प्रयत्न रहता था। दिसंबर मे प्रातीय वर्किंग कमिटी की एक बैठक में उनके कामों की आलोचना की गई और कांग्रेस कमिटियो को हिदायत दी गई कि उनके साथ कांग्रेसवालों का सहयोग न रहे। इससे स्वामीजी को और भी चिढ़ हुई। कांग्रेस से अलग होकर उन्होंने अपनी किसान सभा के जरिये विष फैलाने का काम जारी रखा। गया जिला के जहानाबाद इलाके में जमींदारो की स्थिति डावा-

ढोल हो गई। जगह-जगह पर मारपीट, बकाश्त पर कब्जा और सरकारी हुक्म की अवमानना की रिपोर्टें पहुँचने लगीं। यह ठीक था कि बकाश्त के मामले में जमींदारों की ओर से काफी धाँधली होती रही थी और नये कानून के जरिये उनका अंत भी करने का प्रयत्न किया जा रहा था; पर किसानों के बीच अधीरता के साथ ही विरोध भाव इतनी दूर तक पैदा कर दिया गया था कि वे लोग किसी तरह के नियंत्रण को कबूल करने के लिए तैयार नहीं दीख पड़ते थे। जिला मैजिस्टेट मि० हार्डमैन के प्रति मेरा ख्याल था कि वह एक सच्चा मिहनती जिला आफिसर है और जिलेके वातावरण को ठीक रखने के लिए तत्पर भी दीख पड़ता था। जिला अफसर बराबर यह चाहते थे कि स्वामी जी और श्री यदुनंदन शर्मा गिरफ्तार कर लिए जायँ। वे इसके लिए ताकाजा भी किया करते थे। हम चाहते थे कि देहातों में बदगुमानी फैलाने वाले छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता ही गिरफ्तार किए जायँ जिससे गाँवों में शांति बनी रह सके। मि० हार्डमैन इसके प्रतिकूल थे। वे बड़े बड़े नेताओं को गिरफ्तार कर आतंक फैलाने के साथ ही काँग्रेस मिनिस्ट्री को जनता की नजर में अप्रिय बनाना चाहते थे। हमलोग भी अपनी बात पर अटल थे और स्वामी जी तथा शर्मा जी की गिरफ्तारी को टालते रहे। हार्डमैन इससे असंतुष्ट तो हुए ही, उन्हों ने अपने मातहद सब सब-डिविजनल अफसरों को आदेश दे दिया कि गाँवों में बद-गुमानी फैलाने वाले छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता भी तबतक गिरफ्तार

न किये जायँ जबतक उनके विरुद्ध सबूतों को भेज कर उनसे अनुमति न माँग ली जाय। इसका परिणाम यह हुआ कि इस संबंध में हमारी नीति असफल हो गई।

इसी समय 'सर्चलाइट' में एक गुप्त गश्ती चिट्ठी जो ब्रेट साहब ने चीफ सेक्रेटरी की हैसियत से सब जिला मैजिस्ट्रेटों के पास भेजी थी, प्रकाशित हुई। एक बड़े अफसर ने ही उसकी प्रति एडिटर को दे दी थी। उसका आशय था कि मिनिस्ट्रों की कोई चिट्ठी या कोई हुक्म किसी भी अफसर के लिए मान्य नहीं है जब तक कि वह सेक्रेटरी या असिस्टेंट सेक्रेटरी की दस्तखत से न भेजा गया हो। कानून की एक स्वीकृत पद्धति के अनुकूल होते हुए भी यह गश्ती चिट्ठी मिनिस्ट्रों की जानकारी के बिना गुप्त रूप से भेजी गई थी। उसके वाक्य ऐसे थे जिनके पढ़ने से मंत्रीमंडल की तौहीनी होती थी। 'सर्चलाइट' ने एक जबरदस्त संपादकीय टिप्पणी द्वारा उस गश्ती चिट्ठी की कड़ी आलोचना की और मिनिस्ट्रों को उसके विरुद्ध कार्रवाई करने की चुनौती भी दी। मालूम हुआ कि दुर्गा पूजा की छुट्टियों में कमिश्नर और कुछ अंग्रेज जिला मैजिस्ट्रेटों ने गवर्नर साहब के साथ गुप्त मंत्रणा कर इस तरह का सरक्युलर निकालने के लिए आग्रह किया था। ऐसा करने का कारण यह बतलाया जाता था कि प्राइम-मिनिस्टर ने दुमका के सुपरिंटेंडेंट के नाम हिंदू-मुस्लिम झगड़ा संबंधी किसी मुकदमे को उठा लेने के संबंध में निजी ढंग से एक पत्र लिखा था। वहाँ

के सुपरिंटेंडेंट थे श्री अवधकिशोर प्रसाद सिंह। उन्हों ने उस पत्र की नक़ल डी० आई० जी० के पास भेज दी और फिर उस की खबर चीफ सेक्रेटरी या गवर्नर को भी मिल गई। इसी पत्र की बुनियाद पर और जहाँ जहाँ हमलोगों का दौरा होता था वहाँ जिला अफसरों से जो कुछ राय मशविरा स्थानीय संस्थाओं के संबंध में होती थी, उसे लेकर यह गुप्त सरक्यूलर निकाला गया था,।

अंग्रेजी सरकार हमारे हर काम की जानकारी रखना चाहती थी। बिना सेक्रेटेरियट के ही सीधे सीधे किसी आदेश पत्र का किसी अधीनस्थ अधिकारी के पास पहुँचने और उसके अनुसार काम हो जाने से उसको अंधकार में ही रहना पड़ता कि हम क्या कर रहे हैं और क्या करना चाहते हैं। बात यह ठीक है भी और मुमकिन था कि चीफ-सेक्रेटरी यदि इस बात को हमारे सामने रखते और इस तरह का आदेशपत्र निकलवाना चाहते तो संभवतः किसी को उज्र नहीं होता। हाँ, उसकी भाषा शिष्ट होती।

ब्रेट सरक्यूलर के नाम से वह गश्ती चिट्ठी मशहूर हो गई। हमलोगों ने उसके खिलाफ अपनी धारणा कायम की और ब्रेट साहब के ऊपर अनुशासन की कार्रवाई करने की इच्छा प्रकट की। बिना गवर्नमेंट की इजाजत लिए उनको भी कोई आज्ञा निकालने का अधिकार नहीं था। इस बात का उनके पास कोई जवाब नहीं था। बहुत इधर-उधर के बाद

कहा गया कि तीन महीने के बाद वे छुट्टी में चले जायँगे, इसलिए उनके प्रति इतनी कृपा की जाय, जिससे उस समय तक चीफ सेक्रेटरी की जगह से वे न हटाये जायँ और न उन्हें अनुशासित ही किया जाय। जिस सरक्यूलर को उन्हों ने निकाला था उसे वापस लेने की आज्ञा दी गई और उससे जो बदगुमानियाँ फैल गई थीं उनको दूर करने के ख्याल से सरकार की ओर से अखबारों में एक वक्तव्य प्रकाशित किया गया। इसका नैतिक प्रभाव सब तबके के लोगों पर पड़ा और जिन अफसरों को मन्त्रिमंडल के प्रतिकूल भाव था उनके ऊपर इसकी वजह से सब प्रकार का आतंक छा गया। ब्रेट साहब बहुत ही होशियार और ईमानदार थे, पर साथ ही थोड़ा झक्की अफसर थे। उनके दिमाग में नये विधान के कारण कोई बहुत परिवर्तन नहीं हो पाया था। इस घटना के बाद उनके दिमाग में कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ, पर उस ख्याल के चंद ही अफसर बच रहे थे जिनको नये विधान से संतोष नहीं था और हिंदुस्तान से धीरे-धीरे चले जाने में ही उनका कल्याण था।

उस समय एक और बहाली मुझे करनी पड़ी जिसकी वजह से मुझे शांति मिली। हजारीबाग जिले का निवासी एक युवक ने सरकारी खर्च से विलायत में तालीम पाई थी। वहाँ से फ्यूएल इंजिनियर की डिग्री हासिल कर वह बिहार लौटा था। उस समय अजीज साहब डेवलपमेंट के मिनिस्टर थे। उन्हों ने भारत सरकार के रेलवे विभाग में उसको जगह देने के लिए

सिफ़ारिश की थी। हमलोग जब एसेंबली के मेंबर थे तब भी उनकी ओर से रेलवे मेंबर और फाइनैनसियल कमिश्नर रेलवे के पास उसका केस रखा था और उसको रेलवे में जगह देने के लिए ज़ोर लगाया था। पर हमलोगों की सिफ़ारिशें बिलकुल असफल रहीं। जब मैं मंत्री बना तब उस युवक ने हमलोगों से अपने लिए कोई स्थान देने की बात कही। जो डिग्री उसने प्राप्त की थी उसके अनुकूल प्रांतीय सरकार के मातहद कोई स्थान था ही नहीं। भाग्य से उस समय फैक्टरी इंस्पेक्टर की जगह ख़ाली हुई। रेवेन्यू डिपार्टमेंट के कॉमर्स विभाग के मातहद वह जगह थी। गोपी बाबू उस समय उस विभाग के सेक्रेटरी थे। मैंने उनसे इस बारे में ज़िक्र किया। उन्हों ने इनकी योग्यता की परीक्षा कर उन्हें इस काम के योग्य ठहराया, पर ग्रेट साहब ने अपनी ओर से यह आपत्ति की कि पब्लिक सरविस कमीशन की मंजूरी बिना उनकी बहाली नहीं हो सकती। मैं लाचार हो गया। उस नवयुवक की असहायता चरम सीमा तक पहुँच गई थी। वह इतना अधीर हो गया था कि यदि इस बार उसको नाकामयाबी होती तो आत्महत्या करने पर तैयार था। मैं उसके भावों को जान गया। मैंने गवर्नर के पास उसकी सारी कथा लिख कर भेज दी और उनकी सम्मति माँगी। शाम को फाइल उनकी चिट्ठी के साथ वापस आ गई। हमारी राय उनको पसंद थी, और हमको इस तरह की कठिनाई जब तब आ पड़े उसमें सहायता देने की बात भी उनने लिखी। नवयुवक

को जब यह खबर मिली तब खुशी से उसकी आँखों से आँसू निकल आए। मेरे पैरों पर गिर पड़ा। दस वर्ष तक इंतजार करने के बाद भी एक बिहारी युवक को जिसपर सरकार ने बीस हजार से ज्यादा खर्च किया, कोई काम न मिले, यह कितने दुःख की बात थी।

१०

उन दिनों हमलोगों को दम लेने की फुरसत भी नहीं रहती थी। किसान सभा का आंदोलन बहुत जोर पकड़ गया था। किसी न-किसी तरह के असंतोष फैलाने के कारनामों की खबर हमलोगों को मिलती जाती थी और हमें बराबर ही कहीं न कहीं दौरे पर जाना और लोगों को समझाने का प्रयत्न करते रहना पड़ता था। जहाँ जहाँ हम जाते थे, बड़ी तादाद में लोग एकत्र होते थे और हमारे वक्तव्यों को दिल लगा कर सुना करते थे।

सारन जिला बाढ़ के भीषण प्रकोप से प्रत्येक वर्ष पीड़ित होता आया है। बिहार सेंट्रल रिलीफ कमिटी के सेक्रेटरी की हैसियत से ताजपुर और आदमपुर की बांधों को बंधवाने की मैंने कोशिश की थी। इस साल भी जबरदस्त बाढ़ आई और छपरा जाने के लिए मेंबरों ने तथा जनता के अन्य प्रतिनिधियों ने मुझ से आग्रह किया। कुछ लोगों ने 'सर्चलाइट' में इस संबंध में लेख छपवा कर सुधार के उपाय बताने की चेष्टा की। मैं छपरा शहर तक ही जा सका। नाव से कुछ दूर तक मशरक की ओर गया। लौट कर लोगों से मिला और एक बड़ी सभा में भाषण

दिया। मैंने सारन जिले की समस्याओं पर रोशनी डाली। इस परिस्थिति में क्या करना चाहिए और जल्द से जल्द क्या किया जा सकता है, यह बताया। लोगों को मेरे आश्वासन से संतोष हुआ।

बाढ़ से बचने के लिए क्या प्रबंध किया जा सकता है, इस निमित्त एक फ्लड कांफरेंस पटने में बुलाया। गवर्नर ने उसका उद्घाटन किया और मैंने सभापति का कार्य संपादित किया। सूबे के सभी बाढ़-पीड़ित जिलों से सरकारी और गैर-सरकारी प्रतिनिधि बुलाए गए। निजाम स्टेट के एक इंजिनियर भी जो उस काम में दक्ष समझे जाते थे बुलाए गए। राजेंद्र बाबू को मुख्य विषय पर बोलने के लिए आग्रह किया गया था, पर अस्वस्थता के कारण उनकी अनुपस्थिति में लिखित भाषण ही पढ़ा जा सका। बेतिया राज के इंजिनियर ने एक लंबा लेख पढ़ा। दूसरे जिलों के प्रतिनिधियों ने भी अपने-अपने विचार कांफरेंस के सम्मुख रखे। तजवीज यह हुई कि सारन जिले में जमीन की सतह का नाप लेने के लिए एक स्टाफ बनाया जाय और कोशी नदी के उद्गम का, जो नेपाल की तराई में है, सर्वे किया जाय। बांध रहे या तोड़ दिया जाय, इस पर काफी बहस रही। किसी निश्चय पर पहुँचना असंभव हो गया। कारण, रेलवे लाइन उत्तर बिहार के सब जिलों में फैली हुई है और जब बांध हटाने का फैसला किया जाता तब रेलवे लाइन को तोड़ना पड़ता। यह एक विचित्र बात होती, अतएव मौजूदा

बांधों की रक्षा करते हुए नये बांध बांधने की नीति के लिए अवसर आने पर विचार किया जाय, यही बहुमत को स्वीकार था। सारन जिले में बाढ़ यू० पी० के बलिया जिले की बांध की वजह से भयानक हो जाती थी। अतएव वहाँ की गवर्नमेंट से सलाह करना जरूरी था। दोनों सूबों के कुशल इंजिनियरों का एक संयुक्त संमेलन लखनऊ में किया गया। डा० महमूद और मैं दोनों उसमें शामिल हुए। पं० श्री गोविंदवल्लभ पंत उसके सभापति हुए। एक ही दिन मैं वहाँ रह सका। प्राइम मिनिस्टर ने आवश्यक कार्यवश तार देकर मुझे पटने बुला लिया। बाढ़ के संबंध में जितने उपाय करने चाहिए उतने अब तक भी नहीं हो सके और कुछ बातों में आर्थिक कठिनाई के अतिरिक्त बड़ी-बड़ी दिक्कतें भी हैं।

ऊख की समस्या का हल करने के लिए डा० महमूद के नेतृत्व में एक सम्मेलन पटने में हुआ। मिलों के ऊपर शासन कायम करना तथा खेतिहरों को उचित दाम दिलाने तथा ऊख की खेती को कब्जे में रखने के उद्देश्य से कानून बनाए गए। यह एक नयी चीज थी, अनुभव प्राप्त करके ही धीरे-धीरे सुधार किया जाना संभव था। केवल कानून से खेतिहरों की रक्षा नहीं हो जाती।

कोअपरेटिव डिपार्टमेंट को पुनर्जीवित करना भी हमारा एक मुख्य काम था। सोसाइटियों की दशा बिलकुल खराब हो गई थी। कर्ज का बोझ इस तरह बढ़ता जा रहा था कि

प्रोविंसियल वैंक के ऊपर भी उसका धक्का पड़ने वाला था। सर सुलतान और मि० यूनुस आदि बैंक के डाइरेक्टर इस संस्था को मरने से बचाने के लिए हमारे पास डेपुटेशन लाए। अर्थ-मंत्री होने की हैसियत से जब तक मैं उसके लिए रुपया देने पर राजी न होता तब तक कोई स्कीम काम में आ ही नहीं सकती थी। अतएव मेरा और मेरे सेक्रेटरी मि० प्रायर का सहयोग अनिवार्य समझा गया। जो बैठक उस विषय पर विचार करने के लिए बुलाई गई उसमें हमलोगों की शिरकत जरूरी हो गई। बहुत बहस मुबाहशे के बाद सोसाइटीज तथा सेंट्रल बैंकों की हालत जाँचने के लिए एक स्टाफ की मंजूरी दी गई। जैसे जैसे उनकी मौजूदा हालत की रिपोर्ट मिलती जाय वैसे वैसे उन पर विचार कर एक निश्चित नीति कायम की जाने की तजवीज भी कबूल हुई।

११

हमारी मिनिस्ट्री का प्रारंभिक काल परस्पर प्रेम, सौहार्द था विश्वास के साथ बीता। जुलाई से दिसंबर तक श्रीबाबू और मैंने विशेषतर कांग्रेस कमिटियों की हुकूमतों को सहते हुए, किसानों की रोज रोज की माँगों पर विचार करते तथा उनकी समस्याओं को सुलझाने की कोशिश करते हुए अपना समय बिताया। कामों की भीड़ तथा मिलनेवालों की संख्या नित प्रति बढ़ती जाती थी। मेरा यह रुख रहा कि जितने लोग भी मिलने आते मैं उनसे मिल लेता और जो कुछ मुनासिब सवाल

जवाब करना होता कर लेता था। किसी को वापस नहीं लौटाता। जैसा भोजन सदाकत आश्रम में मिलता था वैसा ही घर पर भी मिलता गया और जिस तरह एक ही कमरा बैठक, पुस्तकालय, आफिस आदि के लिए सदाकत आश्रम में था, उसी तरह, या उससे कुछ बड़ा कमरा इन कामों के लिए अपने नये मकान में बना लिया। मुलाकात करनेवालों को जहाँ भी मैं रहता बुला लेता था। कभी-कभी तो बहुतेरे मुलाकातियों को एक साथ ही बुला लेता अथवा जहाँ वे बैठे रहते वहाँ चला जाता और उनसे बातें कर लेता। इस तरह रहने के कारण फाइल देखने की फुरसत दिन में बहुत कम मिलती थी। रात में ही फाइलों पर आदेश लिखा करता था। एकबार सब विषयों से जानकारी प्राप्त कर लेने के बाद मुझे अपना आदेश या राय लिखने में देर नहीं होती थी और शायद ही मेरे यहाँ कोई फाइल बहुत देर तक रह पाती थी। इस विषय में मेरे अन्य साथियों के मुकाबले मुझको कुछ ज्यादा सहूलियत इसलिए थी कि १९२१ ई० लेकर १९३७ ई० तक मेरा सारा जीवन किसी न किसी रूप में आफिस के ही काम से सरोकार रखता आया था।

हमलोगों ने यह भी निश्चय किया था कि सभी जरूरी फाइलों पर आपस में सलाह कर ही राय लिखा करेंगे। बीच बीच में मिनिस्टरों और पार्लियामेंटरी सेक्रेटरियों की बैठकें मुख्य मुख्य विषयों की तजवीज करने के लिए होती रहती थीं। पहले तो प्रत्येक सप्ताह में मिलने की बात रही। राजेंद्र बाबू इस बात

पर बराबर जोर देते रहे। कुछ रोज तक तो यह सिलसिला चला, पर आगे कोई न कोई ऐसा कारण आ जाता था कि इस तरह की साप्ताहिक बैठकें न की जा सकीं। इससे जो क्षति हुई उसकी पूर्ति अब तक भी नहीं हो पाई। भविष्य मे क्या होनेवाला है, उसे आज मैं देख नहीं सकता।

प्राइम मिनिस्टर का मेरे ऊपर अटूट विश्वास था। कोई भी जरूरी काम ऐसा नहीं हुआ जिसमें मेरी सलाह न ली गई हो। उन दिनों बहुत से नाजुक सवाल उठ आया करते थे और एक एक प्रश्न को सुलझाने मे हमें सारी शक्ति लगानी पड़ती थी। इसलिए भी तथा उनका विश्वास मेरे ऊपर था इस कारण भी मेरी बुलाहट प्राय. प्रत्येक दिन उनके यहाँ होती रहती थी। हमलोग इस समय एक दूसरे से काफी फासले पर रहते थे तौभी जरूरत होने पर बुला लेने और मेरे चले जाने में किसी तरह की हिचकिचाहट नहीं हुई।

बहुत कोशिश करने पर उनलोगों को हाल तथा दर्शक-गैलरी से हटाया जा सका। समझा बुझा कर उनको वहाँ से हटाने के बाद ही एसेंबली की बैठक प्रारंभ हो सकी।

१२

किसान सभा का संगठन गया जिले में काफी जबर्दस्त था। यहाँ की काँग्रेस कमिटी पर भी उनका ही आधिपत्य हो गया था। गांधीवादी काँग्रेसियों की संख्या नाम मात्र को रह गई थी। इस जिले की यह विशेषता रही है कि जिस मार्ग को पकड़ा उसी पर सब आ पड़ते हैं। जितनी तेजी से किसी मार्ग को पकड़ते हैं उतने ही तपाक से उसे छोड़ते भी हैं। पहले तो किसान सभा ने जोर पकड़ा, पीछे सब समाजवादी पार्टी के सदस्य बन गए। सोशलिस्ट पार्टी के श्री रामदेव सिंह नामक एक नवयुवक ने मुझे अपने यहाँ गोह थाने में दौरा करने का निमंत्रण दिया। मेरे चुनाव क्षेत्र के अंतर्गत ही यह स्थान पड़ने के कारण भी मैंने वहाँ जाना कबूल कर लिया। उसी सिलसिले में काँग्रेस वालों ने रफीगंज थाना तथा बार (मदनपुर थाना) में भी सभा करने का प्रबंधकर लिया। इस समय काँग्रेस के साथ किसान सभा और सोशलिस्ट पार्टी की प्रतिद्वंद्विता चल रही थी। सरदार पटेलने कितनी जगहों पर अपने भाषण में कहा था कि यदि उनका ही बहुमत काँग्रेस में हो जाय तो हम उनके हाथ काँग्रेस को भले ही सुपुर्द कर दें, पर जब तक ऐसा नहीं होता तब तक काँग्रेस में अपना बहुमत

बनाये रखना हमारा अभीष्ट होगा।' सोशलिस्ट कहलानेवालों का इस समय यह प्रयत्न बहुत जोरों से होने लगा कि अपना दल मजबूत बना काँग्रेस पर कब्जा करें और अपने तरीके से इसका संचालन करें। श्री जवाहरलाल के लगातार दो साल तक राष्ट्रपति हो जाने से इस ख्याल को यथेष्ट प्रोत्साहन मिला। उसके बाद श्री सुभाषचंद्र बोस का हरिपुरा काँग्रेस का सभापति मनोनीत होना इस विचार की पुष्टि के पक्ष में ही गया। इसी तरह का वातावरण फैल रहा था जब कि इस साल की काँग्रेस के प्रतिनिधियों का चुनाव होने को था। दिसंबर की २२—२३ तारीख को मैंने गया और दूसरी जगहों का दौरा करने का कार्यक्रम ठीक किया। इसकी सूचना भी जिला आफिसर को न दी जा सकी, क्योंकि बहुत जल्द जल्द काम करना होता था।

श्री पारसनाथ त्रिपाठी हमारे पुराने परिचितों में से थे। कालेज में मैं जब पढ़ता था उसी समय से उनसे घनिष्टता हो गई थी। इस समय उनका विचार 'पाटलिपुत्र' के लिए, जिसे अपने संपादकत्व में उन्हों ने आरा से प्रकाशित करना शुरू कर दिया था, मेरे जरिये कुछ मदद प्राप्त करने की थी। मैंने चाहा भी था कि काँग्रेस का प्रचार काम उनके सुपुर्द किया जाय और मंत्रिमंडल की कार्रवाइयाँ उनके अखबार में छपें। इस तरह उनके पत्र की ग्राहक संख्या बढ़ाने में सहायता पहुँचे। उनसे चिट्ठी-पत्री चल रही थी। उन्हों ने मेरे साथ गोह की सफर में जाने का निश्चय प्रकट किया। बहुत मना करने पर भी मुझे

उनको अपने साथ ले चलने के लिए राजी हो जाना पड़ा था। २३ दिसंबर के प्रातः मैं चलने वाला था, इसलिए २२ दिसंबर की शाम तक वे पटना आ जाने को थे। जब निश्चित समय पर वे नहीं पहुँचे तब मुझे एक तरह की खुशी ही हुई। पर जब २३ ता० के प्रातः, मैं तैयार होकर निकला तब उनको अपनी मोटर पर बैठा पाया। श्री जी ने भी मेरे साथ सफर मैं चलने के लिए हठ किया। मैंने उसे आज की सफर में जाने से मना किया और भविष्य में बराबर अपने साथ ले चलने का वचन भी दिया।

इस तरह हम सुबह में चल कर गया में कुछ देर ठहरते हुए संध्या से पहले गोह पहुँचे। आम जलसे में मैंने भाषण दिया। श्री यदुनंदन शर्मा अपने दलबल के साथ वहाँ पहुँचे हुए थे। किसान सभा की ओर से मानपत्र छपवाकर लेते आए थे जिसमें कांग्रेस-मंत्रिमंडल के कामों की निंदा का भाव ही प्रदर्शित था। मुझ को यह खबर गया में ही मिल गई थी। सभा में प्रस्ताव हुआ कि किसानों के प्राण श्री यदुनंदन शर्मा आज की सभा के सभापति बनें। मुझे किसी खास गरोह के साथ संबद्ध होना मंजूर न था। मैंने सभा में बोलने से इनकार कर दिया। पीछे रामप्रताप बाबू सभा के सभापति बनाए गए। सभा को काम खत्म कर मैं उस रात को वहीं के डाकबँगले में रहा। दूसरे दिन प्रातःकाल रफीगंज में कितनी सभाओं में शरीक होता शाम को वार पहुँचा। वहाँ की सभा में भाषण

देकर मैं कुछ देर के लिए अपने घर पर भी गया। मेरा घर उसी रास्ते पर है। घर में दस-पाँच मिनट ठहरने के बाद औरंगाबाद के सब-डिविजनल अफसर राय बहादुर रामेश्वर सिंह से मिला। तब तक कुछ अँधेरा हो गया था। उनके यहाँ कुछ देर ठहर कर आठ बजे रात को ही मैं पटना आने लिए तैयार हो गया। राय बहादुर ने उस समय यात्रा न करने का आग्रह किया, किंतु मैंने कहा कि ता० २५ के प्रातः पटने में एक भले आदमी से मिलने का वादा किया है। इसके साथ ही आरा के प्रांतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में पहुँचने की बात भी कही है। ऐसी दशा में आज रात को ही पटना पहुँच जाना मेरे लिए आवश्यक हो गया है। श्री शंकरदयाल को वहीं छोड़ मैं त्रिपाठी जी के साथ उसी समय वहाँ से रवाना हुआ। रास्ते में पामरगंज में भी मुझे रुकने को कहा गया। मैंने ड्राइवर से पूछा कि वह रात को चल सकेगा या नहीं। मेरा अपना ड्राइवर बीमार हो गया था और नया ड्राइवर कभी उस रास्ते से आया नहीं था। जब उसने चलने की तत्परता दिखाई तब मैंने उसे मोटर आगे बढ़ाने को कहा। पचास मील की गति से मोटर दौड़ने लगी। जब दाऊदनगर से दो मील इधर ही था तब मुझे एक पल में भास हुआ कि मोटर गलत रास्ते पर चली जा रही है और मेरे मुँह से कुछ शब्द निकल भी न पाया था कि बड़े जोर से एक दरख्त के साथ टकरा कर मोटर रुक गई! एक भीषण दुर्घटना हो गई! मैं ड्राइवर की बगल में बैठा हुआ

था। मुझे ऐसा मालूम पड़ा जैसे इंजिन मेरे दोनों पैरों पर खिसक आई और मेरे दोनों पैर टूट गए। मेरे छाती की हड्डियाँ भी टूट गईं और हाथ में भी काफी चोट पहुँची। मैंने मोटर का दरवाजा खोलना चाहा, पर हाथ में ताकत नहीं थी। ड्राइवर को दरवाजा खोलने कहा। मेरे पैरों में भी बल नहीं रह गया था। मैं मोटर से नीचे लुढ़क पड़ा। मेरे साथ त्रिपाठी जी थे। दूसरा साथी मेरा नौकर और तीसरे दाऊदनगर के नजदीक के रहने वाले श्री केदारनाथ सिंह थे। त्रिपाठी जी को विशेष चोट लगी और वे कराह रहे थे। यों तो और दोनों आदमी कराह रहे थे, पर उनका कराहना भिन्न तरह का था। मैंने ड्राइवर से कहा कि एक लारी पीछे छोड़ आया हूँ, वह जब यहाँ पहुँचे तब उसे रोक कर हमलोगों को दाऊदनगर ले चलने को कहना। ड्राइवर को सब से कम चोट थी, इसलिए वह होश में ही था। मैं समझता था कि मैं अशक्य हो गया हूँ, शायद बेहोश भी हो जाऊँ तो ताज्जुब नहीं। कुछ देर में लारी आ पहुँची। मैं होश में ही था। मैंने उसको ठहरने और सब लोगों को उस पर ले लेने के लिए कहा। वह जान-पहचान का आदमी निकला। मुझे उठा कर लारी में सुला दिया गया। सब साथियों को भी लारी में ले लिया। मैंने उसे थाने पर से पुलिस के सिपाहियों को लेकर अस्पताल ले चलने को कहा। मुझे ताकतवर आदमी उठावे, नहीं तो बहुत दर्द होगा, यह बात भी बताई। जब मैं अस्पताल में दाखिल हो गया तब श्री रामवृक्ष

सिंह, सब-इंस्पेक्टर से कहा कि तीन तार, एक एस० डी० ओ० औरंगाबाद, दूसरा सिविल सर्जन—गया, और तीसरा मेजर भार्गव को पटना, देदो। उसने ऐसा ही किया। डाक्टर ने मेरा एक पैर स्प्लिंट से बाँध दिया, पर दूसरा स्प्लिंट वहाँ था ही नहीं, इससे दूसरा पैर यों ही छोड़ दिया। मैंने डाक्टर से एँटी-टिटैनस-इंजेकशन देने को कहा, पर वह दवा भी वहाँ नहीं थी। १२ बजते-बजते रात में ही रायबहादुर रामेश्वर सिंह एस० डी० ओ० आ पहुँचे और मेरा चार्ज उनके जिम्मे हो गया। चार बजे भोर को असिस्टेंट सर्जन गुप्ता गया से आ गए। मेरी दशा देख कर उनको निश्चयात्मक रूप से कुछ कहने की हिम्मत नहीं हुई। मुझे दर्द था, पर अपनी जिंदगी का भय नहीं मालूम करता था। मेरा ख्याल था कि चोट लगी है, जल्द ही अच्छा हो जाऊँगा। सवेरे जब मेजर भार्गव एक छोटा-सा अस्पताल एँबुलेंस कार पर लेते आ पहुँचे तब मुझे इतमीनान हो गया। मुझे मरने का डर तो कभी हुआ ही नहीं था। उनके पहुँच जाने से शीघ्र स्वस्थ होने की आशा उत्पन्न हो गई।

मेरी नब्ज कमजोर हो गई थी। मैं हटाया नहीं जा सकता था। डाक्टर बनर्जी, डा० शरण, डा० सिन्हा एक-एक कर धीरे-धीरे सब पहुँचने लगे। हमारे साथियों में श्री जगलाल चौधरी, श्री विनोदानंद झा, श्री कृष्णवल्लभ सहाय, श्री मथुरा प्रसाद, श्री पाण्डेय नरसिंह सहाय, श्री बलदेव सहाय, श्री व्रज-नन्दन प्रसाद आदि आते गए। मुझे याद नहीं पड़ता कि मैं

होश में था या बेहोश जब ये लोग आए। बीच-बीच में होश होता था या जाग उठता था तो लोगों को देख लेता था और पहचान भी लेता था। सर मैरिस हैलेट को मेरी दुर्घटना की खबर नेतरहाट में लगी तो उन्होंने तार से खबर मँगवाई, ऐसा सुनने में आया। रात में ग्लुकोस का इंजेक्शन दिया गया। उससे इतने जोर का कंपन पैदा हो गया कि मालूम पड़ा कि मैं बिस्तर पर से नीचे गिर पड़ूँगा। कोई डाक्टर वहाँ थे। उन्हों ने इंजेक्शन दिया तो शांति हुई। इस तरह २४ और २५ दिसंबर की रातें दाउदनगर में ही बितानी पड़ीं। सुना कि जब मुझे वहाँ से पटना ले चलने की तैयारी होगी तब किस तरह वहाँ ले जाया जाऊँगा, इस पर विचार होने लगा। मथुरा बाबू ने एक स्पेशल ट्रेन का प्रबंध कर लिया। शायद पामरगंज या सोन-ईस्ट-बैंक से जाने की बात हो रही थी, पर मैं तो मोटर या रेल से सफर नहीं कर सकता था, क्योंकि वैसा करने से मेरे टूटे हुए पैरों में काफी धक्का पहुँचता। मैंने बताया कि डिहरी में मोटर-लंच है। उसे मँगा लेने से उस पर चारपाई रखकर मुझे ले चलने में ज्यादा सुभीता होगा। यह राय लोगों को पसंद आई। २६ दिसंबर के ग्यारह बजे दिन को मोटर-लंच से ही मुझे पटने ले चलने का प्रबंध हो गया। एक डाक्टर बराबर मेरे साथ बैठे रहे और थोड़ी-थोड़ी देर पर दवा देते चले। रास्ते में जहाँ-जहाँ खबर पहुँची सैकड़ों की तादाद में लोग मुझे देखने आ जाते थे। अरवल में शाह साहब ने सबको खिलाया-

पिलाया। फिर कारवान आगे बढ़ा। संध्या से कुछ पहले जब एक स्थान पर मोटर-लंच खड़ी हुई तब मैं छोटे साहब (सत्येंद्र जी) और श्री जी को देख कर विह्वल हो गया। मेरी सारी सहन शक्ति एक क्षण के लिए टूट-सी गई, ऐसा जान पड़ा। उनलोगों को वापस पटने चले जाने के लिए कह कर मैंने फिर भी अपने को सँभाला। ११—१२ बजे रात को हम खगौल लौक पर पहुँचे। वहीं उतारने का बंदोबस्त हुआ था। मेडिकल कालेज के नजदीक मुझे ले जाना, कनाल का मुँह भरा रहने के कारण, मुनासिब नहीं समझा गया। वहाँ से ऐंव्यूलस द्वारा अस्पताल ले जाना ही ठीक समझा गया। जब मेरा पलँग ऐंब्युलेंस पर रखा गया और मोटर चली तो बहुत धीरे-धीरे चलने पर भी मेरे सारे शरीर में कंपन तथा जर्क के कारण दर्द होना शुरू हो गया। डा० भार्गव तो रात को मुझे अपने मकान में ही छोड़ देना चाहते थे, क्योंकि यह रास्ते में पड़ता था। मैंने कहा कि अब जो तकलीफ होनी है उसे एक बार ही सह लेना अच्छा होगा। अतएव मुझे अस्पताल में ही पहुँचा देना ठीक होगा। पाँच-छः मील की यह सफर इतनी तकलीफ-देह थी कि प्रत्येक पाँच मिनट पर मैं पूछता रहा कि कहाँ पहुँचा, अस्पताल कितनी दूर रह गया। कॉटेज अस्पताल में मैं पहुँचाया गया और रात को इंजेक्शन देकर छोड़ दिया गया। मुझे नींद जैसी आगई और कुछ देर के लिए सब भूल गया।

देने के साथ ही मुझे नींद आ जाती थी, पर जब जग जाता था तब मालूम पड़ता कि वर्तमान अवस्था से मृत्यु कहीं अच्छी चीज होती। प्रत्येक दिन इस कदर थकावट हो जाती थी कि मृत्यु की कामना करने लगता था। कुछ देर के बाद ही हृदय में, न मालूम कहाँ से, एक अपार शक्ति पैदा हो जाया करती थी जिससे मैं अपनी सारी तकलीफों को भूल कर मृत्यु से लड़ने के लिए तैयार भी हो जाता था। प्रातःकाल वंदेमातरम्, जन्मभूमि के प्रति भक्ति और त्याग के भाव भरे हुए ग्रामोफोन के रेकर्ड सुन लेता था। इससे हृदय में उत्साह और आनंद का संचार हो आता था।

३

इस तरह पहला महीना बीत गया। बीच बीच में एक्सरे से मेजर भार्गव हड्डियों की अवस्था को देख लिया करते थे। अपनी जगह पर धीरे-धीरे पहुँचने की कोशिश करने वाली हड्डियाँ एक्सरे की तसवीर में साफ-साफ आ जाती थीं, पर उन्हें देखने से संतोष नहीं होता था। महीने के बाद भी वे अपने स्थान पर नहीं पहुँच पाई थीं। दाहिने पैर की हड्डियाँ डाक्टरों की आशा के प्रतिकूल चंद हफ्ते के अंदर ही अपनी जगह पर इस तरह आ बैठीं कि मालूम हुआ किसी ने यौगिक क्रिया से ऐसा कर दिया हो। बाँए पैर की हड्डियों ने, जिनके जुटने की आशा दाहिने से पहले की जाती थी, काफी समय लेने की सूचना देना शुरू कर दिया।

होश आने के बाद ही मेरा ख्याल श्री पारसनाथ त्रिपाठी की ओर गया। परिवार के अकेले जीविकोपार्जन करने वाले व्यक्ति को दुर्घटना के चक्र में फँस जाने से जो विपत्ति आ पहुँची उसकी कल्पना कर मैंने शाहाबाद के मित्रों से उनके परिवार के भरण-पोषण के निमित्त आग्रह किया। उस समय तक और उसके बाद कुछ दिनों तक उनकी मृत्यु की बात मुझ से नहीं बताई गई थी। मैं तो यही समझता था कि वे अस्पताल में पड़े हुए हैं और जब तक अच्छे नहीं हो लेते उनके परिवार की देख रेख करने वाला और दूसरा था ही कौन। इसलिए जहाँ तक मुझे याद है, राजासाहब सूर्यपुरा और श्री राधामोहन सिंह से मैंने उनके विषय में कहा था। उन लोगों ने इस तरह मेरी बातों का उत्तर दिया जिससे मुझे यह पता न लगा कि उनका देहांत हो गया है। पीछे मालूम हुआ कि सभी मुलाकातियों से ताकीद कर यह कह दिया जाता था कि पारसनाथ जी की मृत्यु का जिक्र करें ही नहीं, बल्कि जिससे उनके जीवित रहने का ही विश्वास मुझ पर बना रहे, ऐसा करें। उनकी मृत्यु तो घटना वाली रात को ही हो गई थी। उनकी लाश जब दूसरे दिन साहित्य-सम्मेलन के ठीक अधिवेशन के समय आरा पहुँची तब लोगों ने उनके उस पत्र की याद कर जिसमें उन्होंने मरते-जीते सम्मेलन में पहुँचने की दृढ़ आशा दिखलाई थी, एक सर्द आह खींची। उनके शोक में अधिवेशन स्थगित कर दिया गया।

पंद्रह दिनों तक अस्पताल में पड़े रहने के बाद, जहाँ तक

मुझे याद है, प्रांत के गवर्नर सर मैरिस हैलेट ने मुझे देखने का कष्ट किया। प्रथा के अनुसार लेडी हैलेट ने फूलों का गुलदस्ता उनकी मारफत मेरे लिए भेजा था। कुछ विषयों पर बातें करते-करते उन्होंने कहा कि आपके साथियों में से एक घटनास्थल पर ही या उसके बाद ही मर गया। मैंने इसका जोरों से खंडन किया और बतलाया कि मेरे सब साथी अस्पताल में ही पड़े हुए हैं। हैलेट साहब ने मेरे उत्तर को सुन कर इस प्रसंग को यहीं खतम कर दिया। संभवतः उनको भाषित हो गया कि मृत्यु की बात मुझ से छिपायी जा रही है। इंसपेक्टर जेनरल ने उनसे कहा था कि मेरी चोट ऐसी संगीन थी कि मेरा जी उठना ना-मुमकिन था। मेरे लिए जीवन की आशा यदि थी तो इसी वजह से कि मैं प्रसन्नचित्त रहा करता था।

पटना हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस सर कूर्टनीटेरेल देखने में बड़े हट्ठे कट्ठे थे, पर पेट की बीमारी के कारण बहुत परेशान रहा करते थे। उनका आपरेशन भी अस्पताल में ही हुआ था। उन दिनों वे अच्छे थे, और मुझे दो बार देखने आए थे। उनकी आदत खुब ठहाके की हँसी हँसने की थी। मुझको अपने-जैसा हँसते पाकर उन्होंने कहा था कि तुम्हारे साथ समवेदना प्रकट करना अनावश्यक है। तुम तो बीमार जैसा रहते नहीं। डाक्टरों की यही धारणा थी कि मैं प्रफुल्लचित्त रहा करता था इसी से मेरी बीमारी दूर होने में यथेष्ट सहायता मिलती थी। मेरे मन

तकलीफ अलबत्त काफी होती रही। यहां तक कि पहले महीने भर मुझे इस तरह हँसते रहने पर भी शाम होते-होते थकावट आ जाती थी और इस कष्ट से मृत्यु श्रेयस्कर मालूम पड़ती थी।

सर मैरिस हैलेट ,जब चार महीने की छुट्टी पर जाने लगे और उनकी जगह पर सर टौमस स्टूअर्ट का आगमन हुआ तब विलायत जाने से पहले वे मुझसे फिर अस्पताल में मिलने आए। मैंने उनसे युक्तप्रांत के गवर्नर होने की बात कही, पर उन्होंने उसे हँस कर ही टाल दिया। सर टौमस स्टूअर्ट से मेरी पहली मुलाकात अस्पताल में ही हुई। उस समय मेरे दोनों पैर खोल दिए गए थे। आधा शरीर से लेट सकने की ताकत भी उस समय तक आ चुकी थी और लकड़ी के सहारे खड़ा होने की ताकत धीरे धीरे बढ़ती जा रही थी। सर टौमस ने भी बहुत नम्रता का व्यवहार किया। मुझे बिस्तर पर जैसे के तैसे पड़े रहने का आग्रह करते हुए मेरे बहुत नजदीक आ बैठे। उनके संभाषण से यह मालूम हुआ कि प्रांत की परिस्थिति से उनकी जानकारी न रहते हुए भी यहाँ के सारे प्रश्नों को वे समझने की चेष्टा कर रहे हैं। मुझसे दस बीस मिनट तक इस प्रांत के मसलों पर जो बातें हुईं उससे मैंने यही निष्कर्ष निकाला कि नम्र प्रकृति का प्रदर्शन करते हुए भी सर टौमस काफी सख्त मिज़ाज के हैं। उनका व्यवहार सर मैरिस के मुकाबले कड़ा साबित हो तो कुछ आश्चर्य नहीं।

महाराजा दरभंगा ने दो बार अस्पताल आने की कृपा

की थी। बैठने के लिए बहुत जिद् करने पर भी जब तक पास रहे, खड़े ही रहे। पीछे महाराजा डुमरांव, राजा बहादुर अमाँवा आदि प्रांत के बड़े-बड़े धनीमानी सज्जनों ने मुझे अस्पताल में देखने का कष्ट उठाया। मुलाकातियों से मुझको बहुत आश्वासन मिलता था। हाईकोर्ट के कुछ जजों ने भी आने की कृपा की। मि० अजीज ने यह संवाद भेजा था कि बीमारी की अवस्था में कष्ट देना मुनासिब नहीं समझ कर ही वे नहीं आए। पीछे उनको अपने एक काम के सिलसिले में अस्पताल आने का कष्ट उठाना पड़ा। सर गणेश का मैं बड़ा आभारी हुआ। घटना के पाँच-सात दिनों के अंदर ही वे अस्पताल आए और यह कह कर मुझे आश्वासन दिया कि ईश्वर को तुमसे कुछ काम लेना मंजूर था, इसीसे उन्होंने तुम्हारी जिंदगी बचा ली। इन शब्दों से मैं बहुत ही प्रभावित हुआ। मंत्रीपद ग्रहण करने के बाद उन्होंने बधाई का संदेशा भेजते हुए भी लिखा था कि मैं फाइनेंस और लोकल सेल्फगवर्नमेंट के कामों के संचालन करने के लिए बहुत उपयुक्त था। सर गणेश की इन बातों से शिष्टाचार के नाते ही, मुझे बहुत संतोष हुआ।

४

राजेंद्र बाबू मुझे देखने घर से आए थे। फिर पटने में प्रांतीय कांग्रेस कमिटी की एक बैठक मे जो उस समय हुई, शामिल होने के बाद वापस चले गए थे। वहां वे बहुत बीमार हो गए। उनकी बीमारी का हाल जब मुझे मालूम हुआ तब मैंने डाक्टर

बनर्जी से उन्हें अस्पताल में ही लिवा लाने का आग्रह किया। फरवरी और मार्च महीने में कॉटेज अस्पताल में ही रहकर उनकी दवा कराने का प्रबंध किया गया। जब वे अच्छे होने लगे तब उनके दर्शन अक्सर मुझे अपने कमरे में ही हो जाया करते थे। मेरे लिए तो चारपाई पर चौबीस घंटे एक ही स्थिति में पड़े रहने के सिवा करवट बदलने की भी इजाजत नहीं थी। दोनों पैरों में जंजीर के जरिये एक एक मन के बोझ टंगे हुए थे। मैं टस-से-मस नहीं हो सकता था।

प्राइम मिनिस्टर ने मेरे मातहद के कामों को स्वयं अपने ऊपर ले लिया था। जब कुछ ताकत मालूम होने लगी और जीवन के विषय में संदेह दूर हो गया तब धीरे-धीरे मैंने अपने विभाग की फाइलों को देखने की इच्छा प्रकट की। अपने साथ श्री रघुनंदन पांडेय, डिपुटी मैजिस्ट्रेट को मैंने पर्सनल ऐसिस्टेंट जैसा रहने के लिऐ आग्रह किया। फाइलें पढ़कर वे मुझे बता देते थे और मेरे आदेशों को अपने हाथों से लिख दिया करते थे। उस पर मैं अपनी दस्तखत बना देता था। बहुतों को ऐसा करना उचित नहीं लगा और जब इसकी खबर मुझे लगी तब मैं लेटे-लेटे ही अपनी फाइलों को पढ़कर उन पर आदेश लिखने लगा। यदि कोई लंबा आदेश लिखना होता तो स्टीनोग्राफर को लिखा दिया करता। इस तरह धीरे-धीरे सारे कामों को मैंने अपने हाथ में कर लिया। एक महीने के बाद फाइल संबंधी सब काम मैं खुद ही करने लगा।

फ़रवरी के आरंभ में ही राजबंदियों के छोड़ने का प्रश्न गंभीर हो उठा। फ़ैज़पुर कांग्रेस ने निर्वाचन के घोषणा पत्र में राजबंदियों की रिहाई को अपने कामों में से एक विशेष काम मानकर देश से वोट के लिए अपील की थी। बहुत से राज-नीतिक बंदी अंडमन जा चुके थे। उनकी शिकायतें समय-समय पर भारत की केंद्रीय सरकार तक पहुँचती रहती थीं, पर उन पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। जब प्रांतों में नवीन विधान के अनुसार मंत्रिमंडलों का संगठन हुआ और सब प्रांतों में कांग्रेसी मंत्रिमंडल बनाए गए तब अंडमन-स्थित बंदियों को अपनी स्थिति के प्रदर्शन का विचार दृढ़ हो गया। अपने साथियों के शासन-पद पर आ जाने से उनकी हिम्मत भी बढ़ चली। अपनी माँगों की पूर्ति कराने के लिए उन लोगों ने भूख-हड़ताल करने की धमकी दी। कुछ दिनों के बाद अवधि बीत जाने पर भी जब उनकी माँगें पूरी नहीं हुई तब भूख-हड़ताल शुरू कर दिया। जैसे जैसे वहाँ की परिस्थिति गंभीर होने लगी भारतवर्ष के सभी प्रांतों से उनकी माँगों की पूर्त्ति के पक्ष में आवाज उठने लगी। प्रांतीय शासकों पर जोर दिया जाने लगा कि अपने-अपने प्रांत के राजबंदियों को अंडमन से वापस बुला लेने के लिए भारत की केंद्रीय सरकार को मजबूर करें। सलाह हुई कि सभी प्रांतों के लोग इस सवाल को भारत सरकार के सामने रखें। वैसा ही किया गया। राजबंदियों में ज्यादातर बंगाल, बिहार, युक्तप्रांत और पंजाब के ही रहनेवालों की संख्या

थी और उनमें केवल दो ही प्रांत कांग्रेस मंत्रिमंडल के अधीन थे। जब उनलोगों को वापस लौटाने का आंदोलन जोर पकड़ने लगा तब भारत सरकार को मजबूर होकर उन बंदियों को अपने-अपने सूबे में लौटा लाने के लिए राजी होना पड़ा। राजबंदियों ने नेताओं का आश्वासन पाकर भूख-हड़ताल छोड़ दिया। अपने सूबे में आ जाने के बाद उनलोगों के दिल में यह ख्याल हो उठा कि अब उनकी रिहाई होने में अधिक विलंब न होगा। उनके बाहर के साथियों ने उनको अपनी रिहाई के लिए भूख-हड़ताल करने को उत्तेजित किया। साथ ही बड़े बड़े शहरों में जुलूस निकाले जाने लगे और 'राजबंदी-छोड़ दो' के नारे बुलंद होने लगे। मंत्रिमंडल पर इसका असर पड़ ही रहा था। इसी समय हरिपुरा कांग्रेस की तिथि नजदीक आती जा रही थी। आल इंडिया कांग्रेस वर्किंग कमिटी के सामने यह प्रश्न चल रहा था। कमिटी को भी अपना रुख स्थिर करना पड़ा। इधर भूख-हड़ताल के कारण किसी भी निश्चय पर जल्द से जल्द पहुँचना अनिवार्य हो गया।

प्रांतीय मंत्रिमंडल को सलाह दी गई कि इस विषय में प्रांतीय गवर्नरों से परामर्श करें और अपना रुख उनके सामने रखकर उनका निश्चय जानने की कोशिश करें। बिहार और युक्तप्रांत में ही कांग्रेस मंत्रिमंडल के द्वारा यह प्रश्न उठाया जा सकता था। वर्किंग कमिटी का निश्चय हमारे यहाँ पहुँच गया। गवर्नर से बातें हुईं। उनका रुख सभी बंदियों को एक साथ

मुक्त करने के प्रतिकूल था। प्रत्येक बंदी के गुणदोष का अलग-अलग विचार कर वे छोड़ देने के लिए राजी थे, पर सबों को नहीं। कांग्रेस की ओर से कहा गया कि गवर्नर को मंत्रिमंडल की सलाह मानना अनिवार्य है, चाहे वह सलाह एक बंदी की रिहाई के लिए हो या सब की। इसी बीच मौलाना आजाद बिहार आए और कुछ देर के लिए मुझ से मिलने अस्पताल भी आए। सलाह कर प्राइम मिनिस्टर के साथ वे राजबंदियों को भूख-हड़ताल के बारे मे समझाने हजारीबाग गए। उनको आश्वासन दिया गया कि यदि उनको रिहाई नहीं हुई तो मंत्रि-मंडल इस्तीफा दे देगा। इस पर भूख-हड़ताल तोड़ दिया गया। उनके छोड़ने और न छोड़ने का प्रश्न गवर्नर और मंत्रियों के बीच मे आगया।

श्री जवाहरलाल ने अपने सरक्यूलर में राजबंदियों के न छोडे जाने की अवस्था में मंत्रिमंडल को इस्तीफा दाखिल करने की सलाह भेजी। इस समय हमारे प्रांत में हलचल-जैसी मच गई थी। अब इस्तीफा देने ही की बात है इससे सब लोग चकित हो गए। हिंदुस्तानी अफसरों की ओर से हमलोगों के पास इस आशय के संदेश आने लगे कि मंत्रिमंडल का इस्तीफा देना गलत काम होगा, और राजबंदियों की मुक्ति का प्रश्न लेकर ऐसा करना उचित भी नहीं है। इधर हम लोगों के मन में भी इस तरह के प्रश्न उठते थे। श्री जवाहरलालजी के पत्र को जब मैंने पढ़ा और उसमें यह लिखा देखा कि महात्माजी की भी यही

आज्ञा है तब तो मेरे मन से रहा सहा संदेह भी दूर हो गया। मेरा मन स्थिर और शांत हो उठा। जब महात्माजी का भी ऐसा विचार है तब यह केवल मान्य ही नहीं, इसके सिवा दूसरा कोई सही निश्चय हो भी नहीं सकता—इस भाव से हमारा हृदय परिपूर्ण हो गया। प्राइम मिनिस्टर ने बंदियों को छोड़ने का आदेश लिखा और गवर्नर ने उसे काम में न लाने की आज्ञा निकाली। एक विचित्र सनसनी सी फैल रही थी। मंत्रिमंडल ने इस्तीफा दाखिल कर दिया। बिहार और युक्तप्रांत में यह नाटक खेला जा रहा था और इससे जनता प्रभावित हो रही थी। पटना शहर ने एक बहुत बड़ा जुलूस निकाला। मेरा फोटो उस जुलूस में निकाला गया, क्योंकि अपने साथियों के साथ मैं उसमें शामिल नहीं हो सका था।

अब प्रश्न उठा कि मेरे विषय में क्या हो। इस्तीफा मंजूर होने के बाद से क्या मेरी सेवा शुश्रूषा में कोई अंतर आ जायगा! कॉटेज अस्पताल अभी तक बड़े-बड़े अफसर के लिए ही रिजर्व समझा जाता था। खासकर अंग्रेज अफसर ही यहाँ रखे जाते थे। जब मैं मंत्री नहीं रहूँगा तब क्या मेरे साथ अस्पताल के डाक्टरों और नर्सों का साविक दस्तूर व्यवहार होगा! प्राइम मिनिस्टर ने गवर्नर से मेरे बारे में जिक्र किया तो गवर्नर ने कहा कि उनके प्रति जैसा व्यवहार होता आ रहा है उसमें इस्तीफा के कारण कोई अंतर नहीं आवेगा। उसी दिन चीफ सेक्रेटरी ब्रेट ने अस्पताल के सुपरिंटेंडेंट परेरा को टेलीफोन से

कह दिया कि मेरे प्रति व्यवहार में कोई अंतर न हो।

ग्रेट छुट्टी में जाने वाले थे। इस समय यह प्रश्न उठा कि अब तो मंत्रिमंडल ने इस्तीफा दे ही दिया, फिर उनकी छुट्टी क्यों न रद्द कर दी जाय। इस तरह की अफवाह उड़ने लगी। इधर डाक्टरों के ऊपर इस इस्तीफा का जो प्रभाव पड़ा उसका जिक्र भी कर देना मुनासिब मालूम पड़ता है। मेजर भार्गव ने कहा कि उनके लिए तो मैं रोगी हूँ—मैं मिनिस्टर हूँ या नहीं, इससे उनके व्यवहार में कोई अंतर क्यों पड़े। डाक्टर गया कुमार मेरी सेवा करने के लिए नियत कर दिए गए थे। दिनरात उनकी ड्यूटी मेरे ही साथ थी। उन्होंने पुत्र से भी ज्यादा भक्ति और स्नेह के साथ मेरी सेवा की। उनके ऊपर भी इस्तीफा का कोई असर नहीं होने को था। अतएव मेरे लिए एक ही प्रश्न रह गया था, वटिंग अस्पताल में रहने का खर्च कहाँ से आवेगा। सरकारी पद पर रहते हुए नियमानुसार मुझे बहुत से खर्चों से छुटकारा हो जाता था। अब इस खर्च का भार कौन लेगा। मेरे एक अभिन्न मित्र ने मेरे अस्पताल में रहने का खर्च अपने ऊपर लेने की पहले भी इच्छा प्रकट की थी। उस समय मैं इसे स्वीकार नहीं कर सका था। एक दूसरे मित्र ने भी मुझ से कुछ कहने की क्षमा चाही। मैं इसे समझा नहीं। वचन दिया कि जो इच्छा हो वह कहा जाय। उन्होंने बहुत ही आजिजी के साथ कहा कि आप अपने अस्पताल के खर्च के लिए फिक्र न करेंगे। जितने हजार भी खर्च पड़ेंगे उसकी जिम्मेवारी अपने

ऊपर लेने की उत्सुकता दिखलाते हुए मुझसे आग्रह किया कि पहले जिस तरह मेरी शुश्रूषा होती रही थी वैसी ही होती रहे। इन वचनों को सुन कर मेरी आँखों में आँसू छल छला आए! मेरा हृदय इतना उमड़ आ या कि मुख से कोई शब्द न निकल सका। उनके उद्गार ने मेरे हृदय को बहुत ही ढाढ़स दिया। मैंने मंत्रीपद से इस्तीफा दे दिया था और मुझसे उनके किसी तरह के स्वार्थसाधन की आशा भी न थी, ऐसी स्थिति में पुरानी मित्रता से प्रेरित होकर और मेरी अशक्यता में मुझे उत्साहित करने तथा सहायता देने का वचन देकर उन्हों ने अपनी सहृदयता का परिचय दिया। मालूम नहीं इस बात को और कितने लोग जानते होंगे, पर मुझे विश्वास है कि उनमें दिखलाने की जरा भी इच्छा न थी।

जब मैं अस्पताल में ही था तब चीफ जस्टिस सर कूर्टनी-टेरेल अकस्मात् बहुत बीमार हो गए। श्री पी० आर० दास ने श्री मुरलीमनोहर प्रसाद (सर्चलाइट-संपादक) द्वारा एक पत्र मुझे लिखा कि इतने बड़े अफसर की जान बचा लेना मेरे हाथ में है। उन्हों ने सलाह दी कि विख्यात सर्जन डाक्टर एल० एम० बनर्जी से चीफ जस्टिस के रोग का निदान कराकर उनसे ही आपरेशन कराने का प्रबंध सरकारी खर्च से कराया जाय। प्रशंसित डाक्टर महाशय उस समय मेडिकल कालेज के छात्रों की परीक्षा लेने पटना आए हुए थे। उन्हों ने मुझे भी अस्पताल में आकर देखने का कष्ट उठाया था। मैंने मेजर भार्गव से उस पत्र का

सरदार वल्लभभाई पटेल ने हरिपुरा में इस मसले के ऊपर रोशनी डालते हुए सोशलिस्ट भाइयों की खिल्ली उड़ाई थी। उनकी इस प्रकार की अनावश्यक हरकतों से कांग्रेस मंत्रियों के कामों में कितनी कठिनाइयां उपस्थित हो जाती थीं, उसकी ओर उन्होंने इशारा किया था। कुछ ही दिनों तक यह अवस्था कायम रही। हमलोगों को यह विश्वास था कि गांधी जी की सलाह से यह काम किया गया है तब इसका प्रतिफल भला ही होगा। हमारे इस्तीफे मंजूर नहीं होंगे, यह आशा उस समय नहीं थी। हमलोगों ने सरकारी मकानों को खाली कर अपने अपने असबाब वहाँ से हटा लिए। जब इस्तीफा मंजूर होने में विलंब होने लगा तब लोगों को पुन: आशा होने लगी कि संभवत: वह मंजूर न हो। इसी बीच में महात्मा गांधी ने अपनी राय तात्कालिक परिस्थिति पर प्रकट की। चंद बड़े-बड़े लोगों ने भी अपने-अपने बयान दिए। वाइसराय का भी विचार-पूर्ण वक्तव्य प्रकाशित हुआ। इसके बाद ही मंत्रिमंडल का इस्तीफा वापस लेने का आग्रह बिहार और युक्तप्रांत के गवर्नरों ने किया। हमलोग मंत्रीपद पर पुनः आसीन हो गए। ग्रेट सरक्यूलर लेकर जो कांड हुआ था उससे भी हमारी मर्य्यादा बहुत बढ़ गई थी। अंग्रेज अफसरों के ऊपर हमारी धाक कायम हो चुकी थी। अब इस्तीफा वापस हो जाने के बाद समाजवादियों तथा सरकारी अफसरों, दोनों पर इसका जबर्दस्त असर पड़ा। हमारा रास्ता पहले से ज्यादा साफ मालूम होने लगा।

धीरे-धीरे राजबंदियों की रिहाई होने लगी। एक-एक कर वे लोग पटने आने पर मुझसे भी अस्पताल में मिलने आने लगे। सब के सामने यह प्रश्न था कि उनके भावी जीवन के संचालन में हमलोगों से क्या मदद मिल सकती थी। कितने को मैं पहले से जानता था। हजारीबाग जेल में साथ रहने के कारण कुछ पूर्व-परिचित भी थे। उस समय श्री योगेंद्र शुक्ल से मेरा परिचय नहीं था। इसी तरह दो-चार ऐसे लोग भी थे जिनके नाम से ही मैं परिचित था। अब तो सब से जान-पहचान हो गई। मैंने उनको आश्वासन दिया कि अपनी शक्ति भर उनकी सहायता करने को तैयार रहूँगा, बशर्ते उनका आगे का रास्ता ठीक रहे। कुछ दिनों तक तो सद्भाव कायम रहा, पर पीछे परिस्थिति कुछ ऐसी बदलती गई कि हमलोगों को भिन्न-भिन्न रास्ते पर चलने के लिए मजबूर होना पड़ा।

६

राजबंदी कांड खतम हुआ। मंत्रियों का कार्यक्रम साबिक दस्तूर चलने लगा। समाजवादियों का रुख फिर पहले जैसा होने लगा। मार्च और जुलाई के बीच में जमशेदपुर की ओर हमलोगों का ध्यान विशेष रूप से फिरा। प्रो० बारी एसेंबली के डिपुटीस्पीकर और कांग्रेस पार्टी के चीफ ह्वीप थे। उन्होंने जमशेदपुर में अपना कार्यक्षेत्र बना कर वहाँ के मजदूरों को संगठित करने में अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। अच्छे वक्ता होने के अलावे व्यावहारिक आदमी जैसा काम भी करना

शुरू किया था। कुछ दिनों में अपने परिश्रम और अध्यवसाय से मजदूरों के ऊपर यथेष्ट प्रभाव हासिल करने का गौरव उनको प्राप्त हो चुका था। दो बड़ी अंग्रेजी कंपनियों में बहुत दिनों से असफल हड़ताल चल रहा था। कंपनियाँ शक्तिशाली होने की वजह से हड़तालियों की मांगें ठुकरा कर अपनी स्थिति कायम रखने के लिए तुली हुई थीं। प्रो० बारी ने हमलोगों को इस झगड़े में बीच-बचाव कर मजदूर और कंपनी में सुलह करा देने का बराबर आग्रह करना जारी रखा था। जब मैं अस्पताल में ही था, मुझे कंपनी के संचालकों को बुला कर बातें करने की सूझी। दोनों पक्षों के सामने मैंने यह प्रस्ताव रखा कि आपस में जिन-जिन बातों के ऊपर मतभेद चल रहा है उन्हें पंच के जरिये तै कराने के लिए राजी हो जायँ। जिस पक्ष को पंच का फैसला नापसंद होगा उस पक्ष को सरकार की तरफ से कोई सहायता पाने की आशा न रखनी होगी। दोनों पक्षों को अंत में इस सुझाव को कबूल करना पड़ा। उसके बाद ही हड़ताल खतम हो गया, और साबिक दस्तूर काम होना शुरू हो गया।

बेतिया राज कोर्ट-आफ-वार्डस के मातहद बहुत जमाने से चला आ रहा है। प्रांत में दरभंगा के बाद उसी का स्थान है। सालाना आमदनी तीस लाख रुपये के लगभग है। आज तक बेतिया राज के इतिहास में, जब से वह कोर्ट-आफ-वार्डस के मातहद गया, किसी भी हिंदुस्तानी का प्रवेश मैनेजर की जगह पर न हो पाया था। सर गणेश के जमाने में कौंसिल में बहुतेरे

सवाल जवाब होते रहे। जनसाधारण की यह धारणा थी कि महारानी बेतिया सचमुच पगली नहीं हैं, वलिक उनको बलात् राज्य से हटाने के लिए यह षड्यंत्र किया गया है। बेतिया महारानी के निकट किसी हिंदुस्तानी पब्लिकमैन को जाने की इजाजत भी नहीं दी जाती थी। इसका कारण भी यही कहा जाता था कि ऐसा करने से भेद खुल जाने का डर था। कांग्रेस मिनिस्ट्री बनने के बाद ही वहाँ के प्रबंध संबंधी कुछ प्रश्न एसेंबली में पूछे गए। प्राइम मिनिस्टर ने अपने एक बयान में यहाँ तक कह डाला कि भविष्य में वहाँ हिंदुस्तानी ही मैनेजर बनाए जायँगे। इसका असर जिले के अंदर विद्युत जैसा हुआ। प्रश्न अब यह उठा कि प्रांत में कौन ऐसा प्रमुख और दक्ष व्यक्ति है जिसके जिम्मे यह जवाबदेही का काम सुपुर्द किया जाय। प्राइम मिनिस्टर और मेरे साथ जब कभी सलाह हुई तब हमें यह एक कठिन समस्या जैसी मालूम हुई। हम दोनों की राय में किसी पेंशनयाफ्ता हिंदुस्तानी अफसर को ही यह जगह दिया जाना श्रेयस्कर मालूम होता। कुछ नाम हमारे गैरसरकारी आदमियों के भी आए, पर हमलोगों ने उनको इस पद के लिए उपयुक्त नहीं विचारा।

चंपारन जिले के मेंबरों तथा प्रमुख कांग्रेस कर्मियों की ओर से हिंदुस्तानी मैनेजर की नियुक्ति के लिए तकाजा होने लगा। तुरत कोई योग्य हिंदुस्तानी हमलोगों की नजर में नहीं दीखता था। एक दिन अस्पताल में इस विषय पर बहुत देर

तक राजेंद्र बाबू और रामदयालु बाबू में बातें हुईं। राजेंद्र बाबू बीमार होकर कॉटेज अस्पताल में ही चले आए थे। कुछ दिनों तक तो बिस्तरे से उठने की इजाजत उन्हें भी नहीं थी। स्वास्थ्य कुछ सुधर जाने पर उन्हें टहलने और दिन में, खास कर गंगा के तट पर, बैठने की इजाजत मिल गई थी। इसी अवसर पर बेतिया राज की मैनेजरी के प्रश्न को लेकर रामदयालु बाबू ने अपना विचार उनके सामने इस ढंग से रखा जिसे सुनकर, जहां तक मेरी धारणा है, राजेंद्र बाबू को मानसिक कष्ट पहुँचा था। समुद्र जैसा स्थिर चित्त रहनेवाले महान आत्मा की आंतरिक वेदना को समझना कठिन होने पर भी, मुझ से जब उनकी बातें हुईं तब मेरा ख्याल यह हुआ कि वे हमलोगों की हरकतों से दुखी हैं। अपने मन के भाव को प्रकाशित न कर मुझे अथाह में गोता लगाने को छोड़, बिना कोई रास्ता सुलझाए उन दोनों के बीच जो बातें हुई थी बताकर फिर इस विषय पर किसी तरह की चर्चा करने से इनकार कर दिया। मैंने उनकी राय जानने की इच्छा से फिर इस प्रश्न को उनके सामने रखा भी, पर उन्होंने कोई भी राय देना स्वीकार नहीं किया।

रामदयालु बाबू का प्रस्ताव जिस ढंग से राजेंद्र बाबू के सामने रखा गया वह मुझे जरा भी पसंद नहीं आया। यदि उसे अनासक्त भाव से पेश किया जाता तो मुमकिन था मैं अपने पुराने विचार पर ही अटल रहता। अब यह प्रश्न विशेष जटिल दीख पड़ने लगा। प्रभावशाली-व्यक्तियों ने आवश्यकता

से अधिक इस विषय में दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया। विशेष व्यक्ति के अधिकार सुरक्षित रखने का मसला भी सामने ला दिया गया। जितने ही नये नये सवाल उठाए जाने लगे उतना ही मेरे ऊपर उसका उलटा प्रभाव पड़ने लगा। बेतिया राज की मैनेजरी उन दिनों सभी की जबान पर थी। उसके भिन्न-भिन्न अंगों पर भिन्न-भिन्न समाज में टीका टिप्पणियां होने लगीं। इस तरह का वातावरण जब बन गया तब मैंने अपने मन को स्थिर कर एक निश्चय पर पहुँचने की कोशिश की। चंपारन के काँग्रेसकर्मियों का रुख देख कर और उनकी दलीलों पर विचार कर मैंने यही मुनासिब समझा कि इस प्रश्न का फैसला केवल मंत्रिमंडल न करे बल्कि पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी भी उसमें शामिल किए जायँ। इस राय को सबों ने पसंद किया और इस विषय पर विचार करने के लिए एक बैठक अस्पताल में ही बुलाई गई। जितने दृष्टिकोण से इस पद पर नियुक्ति करने की बातें सोची जाती थीं उनमें एक या दो प्रमुख बना ली गई थी। कई साथियों ने इसके लिए उमीदवार होने की इच्छा प्रकट की थी और कितने हम से मशविरा कर इस पद के लिए प्रार्थी हुए। पर अभी तक हमलोगों ने इस प्रश्न पर सामूहिक रूप से विचार नहीं किया था। अतएव उस दिन की बैठक में दो बातें तै करनी थीं। नियुक्ति किस सिद्धांत पर हो, काँग्रेसमैन या गैर काँग्रेसमैन बहाल किए जायँ और किस व्यक्ति को यह स्थान दिया जाय।

कसरत राय यही हुई कि बेतिया राज अभी तक हिंदुस्तानियों के लिए एक अलभ्य वस्तु समझी जाती रही है। आज जब कांग्रेस के प्रभाव से इस पर अधिकार होना संभव हुआ है तब दूसरे किसी दृष्टिकोण के लिए इसमें स्थान नहीं है। अतएव निश्चय हुआ कि कांग्रेसमैन को ही वह पद दिया जाय। जब कांग्रेस के लोग मंत्रित्व-ग्रहण कर सकते हैं तब इस पद के लिए भी उन्हें योग्य समझने में किसी तरह की दिक्कत नजर नहीं आती।

कांग्रेसमैन को ही जब नियुक्त करने का निश्चय हो गया तब किसको नियुक्त किया जाय, यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठ खड़ा हुआ। चंपारन के कांग्रेसकर्मियों का जोर श्री बिपिनबिहारी वर्मा, बार० एट० ला० की ओर होने लगा। इस प्रस्ताव के अनुकूल सारी दलीलें दी जाने लगीं। सवाल यह था कि बिपिन बाबू इस पद को स्वीकार करने के लिए राजी कैसे हों। बहुत दिनों तक किसी-न-किसी कारणवश उनकी नियुक्ति नहीं हो सकती थी। अंत में जब महात्मा जी ने अपनी राय जाहिर की तब बिपिन बाबू ने इस पद को स्वीकार कर लिया। महात्मा जी का यह वचन 'जाओ, भरत की तरह बेतिया का राज चलाओ' कितना भावपूर्ण था! बिपिन बाबू को ही क्यों, किसी भी जवाबदेह व्यक्ति को यह एक क्षण भी भूलना नहीं चाहिए।

मंत्रिमंडल के बीच बेतिया राज के मैनेजर की नियुक्ति के प्रश्न पर परस्पर विरोध का भाव अंकुरित हुआ जैसा मालूम

पड़ने लगा। अपने अपने विचार पर कायम रहने की चेष्टा होती रही और उसका प्रदर्शन सूक्ष्म तौर पर कितने अन्य प्रश्नों पर भी पड़ा, पर उसका बाह्य प्रदर्शन न होने दिया गया और जब विपिन बाबू की नियुक्ति हो गई तब यह मसला सर्वदा के लिए सुलझ गया। विपिन बाबू को इस पद-ग्रहण में कितनी तरह की शंकाओं का सामना करना पड़ा था और जब अंतिम निश्चय पर पहुँचे तब शासनभार ग्रहण करने के पूर्व मेरे सामने ही अपनी शंकाओं को उन्होंने राजेंद्र बाबू के निकट रखा था। मेरे आश्वासन के बाद उनके मन से शंकाएँ दूर हुईं और उन्होंने उसके बाद ही बेतिया राज का प्रबंध भार ग्रहण किया।

७

हमें अपनी नीति फैजपुर काँग्रेस के प्रस्ताव को अपने सामने रखते हुए निर्धारित करनी पड़ती थी। चुनाव के समय जो घोषणा काँग्रेस की ओर से की गई थी उसमें लगान में काफी (सैकड़े पचास के लगभग) कमी करने की बात कही गई थी। उसके अनुसार बंगाल टेनैंसी ऐक्ट में संशोधन करना आवश्यक था। जमींदारों के साथ समझौता करके ही यह काम किया जा सकता था। जैसा ऊपर जिक्र किया जा चुका है, जमींदारों से सुलह कर कानून का पहला मसविदा कबूल हो चुका था। दूसरा मसविदा भी तैयार हो गया था। उस पर आपस में बहुत मतभेद होने के कारण समय-समय पर पार्टी-मेंबरों की बैठकें करानी पड़ती थीं। इस तरह की बैठकें मेरे मुकाबले में जब-जब होती

थीं तब अस्पताल में ही की जाती थीं। बीच बीच में जमींदारों के साथ भी अस्पताल में ही बातें हो जाया करती थीं। किसी-न-किसी तरह वाद-विवाद करने के बाद समझौता हो जाता था। बीच बीच में मौलाना आज़ाद और राजेंद्र बाबू से परामर्श कर ही अंतिम निर्णय पर पहुँचना संभव होता था।

किसानों के सर से बोझ हटाने के लिए लगान में कमी और बकाश्त का प्रश्न सुलझाने में ज्यादा जरूरी आबपाशी का प्रबंध करना था। जब तक सब जिलों में आबपाशी का पूरा प्रबंध नहीं किया जाता पैदावार या तो अनावृष्टि या अतिवृष्टि के कारण सोलह आना हो नहीं सकती थी। अतएव इस मसले को सुलझाने के लिए मौजूदा कानून में समुचित संशोधन तथा नया कानून बनाना जरूरी हो गया। बिजली के द्वारा भी आबपाशी में सहूलियत प्राप्त करना संभव समझा गया। इसलिए बिजली की स्कीम को भी संचालित करना आवश्यक काम था। यों तो वर्तमान युग को बिजली का ही युग कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। दूसरे-दूसरे सूबों में बिजली के द्वारा कितने प्रकार के व्यवसाय साथ-साथ आबपाशी के काम बहुत दिनों से लिए जा रहे थे। बिजली का प्रश्न भी यहां इतने दिनों तक सुलझाया जा नहीं सका था। मिनिस्ट्री बनने के कुछ ही दिनों के बाद मैंने इस सवाल को उठाया। पुरानी फाइलें देखने से पता चला कि इस तरह का एक प्रस्ताव पहले विचार में लाया गया था। कुछ सलाह मशविरे हुए थे और डिपार्टमेंटल हेड्स

एकत्र होकर उस पर अपनी टीका-टिप्पणियाँ भी कर चुके थे। ससराम के एस० डी० ओ० मि० अजफर ने अपने इलाके के किसान और जमींदारों को यह कह कर जब राय माँगी कि धान की फसल के लिए इस जरिये पानी नहीं मिल सकेगा तब उनकी राय हुई कि ऐसी स्कीम से उनको कुछ लाभ नहीं होने का। इसी बात की रिपोर्ट सरकार के पास पहुँची तो सरकार ने बिजली के प्रस्ताव को स्थगित कर दिया। मैंने जब इस फाइल को देखा तब मुझे सारी कार्रवाई गलत मालूम हुई।

उन्हीं दिनों युक्तप्रांत के चीफ इंजिनियर जिन्हों ने अपने यहाँ बिजली द्वारा ट्यूबवेल का प्रचार किया था अवसर-ग्रहण करनेवाले थे। मैंने उनको अपने प्रांत में एक हफ्ते के लिए बुलाया और यहाँ की अवस्था जाँच कर बिजली कल को इस प्रांत में सफलता मिल सकती है या नहीं, इस पर अपनी राय देने को कहा। उन्हों ने बहुत सी बातों की पूछ-ताछ करने के बाद अपनी राय कायम की और मुझे इस ओर अग्रसर होने के लिए उत्साहित किया।

आबपाशी के साथ चौर आदि से पानी निकालने का प्रश्न भी उसमें शामिल समझना चाहिए। उत्तर बिहार के कितने जिलों में हजारों एकड़ जमीन पानी के अंदर ढके रहने के कारण एक प्रकार बेकार-सी हो रही थी। उनसे पानी निकाल दिया जाय तो हजारों परिवार के भरणपोषण के निमित्त नयी जमीन प्राप्त होने की संभावना थी। इस विषय पर बहुत दिनों से

विचार होता चला आता था। सैकड़ों दरख्वास्तें सरकार के पास पहुँच चुकी थीं, पर कोई स्कीम इस तरह की नहीं निकाली जा सकी थी जिससे इस समस्या को सुलझाने में सहायता मिलती। कांग्रेस मंत्रिमंडल ने इस प्रश्न को सुलझाने का प्रयत्न आरंभ से ही शुरू कर दिया। इसके लिए भी कानून के साथ ही यह कानून भी मिश्रित होने के कारण दोनों एक ही साथ लिए गए। कितने चौरों का माप कराया गया और उनसे पानी निकालने की तदवीर सोची गई। इस विषय पर सलाह करने के लिए जिला अफसरों का सम्मेलन, एक बार मेरे अस्पताल में रहते भी बुलाया गया था, और बाद मौके-मौके पर उनसे सलाहें होती रहीं।

मद्य-निषेध कांग्रेस कार्यक्रम का एक मुख्य अंग रहा है। महात्माजी इसको बड़े सुधारों में स्थान देते रहे हैं। कांग्रेस मिनिस्ट्री के लिए इस प्रश्न को न लेना असंभव था। किस तरह पर मद्य-निषेध सारे प्रांत में जारी किया जाय, यह एक महत्त्वपूर्ण तथा गंभीर सवाल था। बिहार प्रांत की एक चौथाई आमदनी मद्य पान पर कर वसूलने से होती आई थी। आय बढ़ाने के द्वार सीमित थे। हमारा खर्च नये नये सुधार के कारण बढ़ ही गया था, साथ ही कांग्रेस मिनिस्ट्री का जनता की भलाई के कामों में विलंब करना ठीक भी नहीं था, इस लिए प्रांतीय बजट में खर्च घटने के बदले बढ़ता ही जाता था। इस परिस्थिति मे मद्य-पान-निषेध करने से एक करोड़ से अधिक की क्षति अनि-

वार्यतः हो जाती थी। इस कठिन समस्या को सुलझाने के लिए हमें सोचते रहना पड़ता था। शुरू में छोटे पैमाने से मद्य-निषेध का काम करना निश्चित हुआ। सारन जिला पहले पहल इसके निमित्त चुना गया। करीब सात आठ लाख रुपये का नुकसान उससे होता था। आबकारी कमिश्नर और हमारे साथी श्री जगलालजी, दोनों का मतभेद इस प्रश्न पर था। अतएव इस संबंध में एक छोटी-सी कमिटी जैसी मेरे साथ सलाह करने के लिए अस्पताल में पहुँची। थोड़ी देर की बातचीत में ही जो कठिनाई उपस्थित हो गई थी, दूर हो गई। मद्य-निषेध का काम आरंभ कर दिया गया। सरदार वल्लभ भाई पटेल और राजेंद्रबाबू के द्वारा इस कार्य का श्रीगणेश सारन जिले में किया गया।

डाक्टर महमूद कुछ ऐसा काम करना चाहते थे जिससे आम जनता के ऊपर उसका असर पड़े और दुनियां में भी उस विचार को कुछ कदर हो। सयाने लोगों को पढ़ाने का विचार इस उद्देश्य को पूरा करता था। मेरी बीमारी के ही दर्म्यान निरक्षता-निवारण के निमित्त एक आरंभिक आम जलसा किया गया। मैंने भी अपनी शुभकामना भेजी, क्योंकि मैं जलसे में उपस्थित होने से असमर्थ था। इस प्रोग्राम का विकास आगे चल कर हुआ। पैसे के बिना उसे चलाना संभव था नहीं, अतएव यह विषय मंत्रिमंडल के समक्ष पेश हुआ। मेरा ख्याल था कि इस कार्यक्रम को सीमित रूप में चलाने से ही विशेष रूप

से सफलता प्राप्त होने की आशा हो सकती थी। अतएव मैंने बताया कि आरंभ में म्युनिसिपैलिटियाँ, यूनियन कमिटियाँ और जेलों के अंदर ही अनपढ़ लोगों को पढ़ाने की व्यवस्था हो और धीरे-धीरे उसका क्षेत्र सारे प्रांत में विस्तृत किया जाय। एक साथ ही सूबे भर में प्रयत्न करना आगे चल कर असफल हो जायगा, हमलोगों का जोश शुरू में जैसा होता है आगे चल कर उसी पैमाने पर वह कायम नहीं रहता। अतएव मैंने अपना विचार बताया कि अभी छोटे दायरे में ही इसे रखा जाय; पर डाक्टर साहब इस पर राजी नहीं हुए। कुछ अन्य साथियों को भी इसका विस्तृत रूप ही ठीक जँचा। अतएव दो लाख रुपये की मंजूरी इस काम के लिए पहले साल में करनी पड़ी।

प्रारंभ में इस काम के लिए लोगों के दिल में जोश की बाढ़ सी आ गई। गांव-गांव में अनपढ़ सयानों को पढ़ाने का उत्साह प्रदर्शित होने लगा। छः महीने या साल लगते-लगते इसकी चरम सीमा पहुँच गई। सरकार के पास जो रिपोर्टें आती थीं उनमें सब्जबाग ही दिखलाया जाता था और हमारे मित्रों को रिपोर्टों की मोटी फाइलें देख कर काफी खुशी और संतोष होता रहा। असल काम की दृष्टि से वस्तुस्थिति दूसरी थी।

८

जुलाई या उसके आसपास मुझे इतनी ताकत आ गई थी कि मैं कुछ कदम चल लेता था और मोटर पर बैठ भी सकता था। डाक्टरों ने मुझे अस्पताल से छुटकारा देने में कोई

एतराज नहीं किया। उसी दिन मैंने जमशेदपुर की सफर का प्रोग्राम स्थिर किया। इतनी लंबी सफर मोटर से ही करना तै हुआ। विचार था कि इस सफर को यदि पूरा कर सका तो मुझे विश्वास हो जायगा कि मैं अच्छा हो गया और मेरे पैर फिर भी काम लायक हो गए। विचार हुआ कि बीच-बीच में ठहरता हुआ जमशेदपुर जाऊँ। अतएव नवादा, रजौली होता हुआ पहला दिन हजारीबाग पहुँचने का प्रोग्राम रहा। दूसरे दिन वहाँ से चल कर शाम तक रांची और रात में वहीं ठहरने का निश्चय किया गया। तीसरे दिन चाइवासा, चक्रधरपुर होता शाम को जमशेदपुर पहुँचना तै हुआ। रास्ते में जहाँ-जहाँ होता गया कितने कामों में भाग लेता गया। राँची में जो सूबे की ग्रीष्म-राजधानी समझी जाती है, प्रथम आगमन के उपलक्ष में बहुत ही उत्साह और प्रेम प्रदर्शित किया गया। शहर के बाहर से ही जुलूस के साथ मैंने नगर में प्रवेश किया। कांग्रेस आफिस में झंडा फहरा कर दरभंगा के श्री चतुराननलाल दास, एम० एल० ए० से मिलने के लिए मैं इटकी सेनिटोरियम गया। उन दिनों वे राजयक्ष्मा से पीड़ित होकर वहाँ इलाज करा रहे थे। वहाँ से लौट कर रात को सरकिट हाउस में रहा।

चक्रधरपुर और चाइवासा में भी कितनी सभाओं में शरीक होता हुआ संध्या को जब जमशेदपुर पहुँचा तब वहाँ अभूतपूर्व जुलूस के साथ, जो कई मील लंबा था, सरकिट-हाउस पहुँचा। उन दिनों जमशेदपुर के मजदूरों में एक नवीन जागृति

पशन लेने के लिए उन्हें मजबूर होना पड़ा था। उस पर भी कुछ टीका-टिप्पणी चल रही थी। बंगाल के अखबारों में तथा स्थानीय बिहार हेरल्ड में इस तरह के विषयों को लेकर मंत्रिमंडल पर काफी आक्षेप किए जा रहे थे। राष्ट्रपति श्री सुभाषचंद्र बोस ने कांग्रेस वर्किंग कमिटी में इस विषय को छेड़ा। डा० राजेंद्र प्रसाद को इस मसले पर विचार करना तथा फैसला देने के लिए पंच मुकर्रर किया गया।

बिहार प्रांत बंगाल का एक टुकड़ा जैसा बहुत दिनों से समझा जाता रहा था। यहाँ की वेश-भाषा भिन्न होते हुए भी बंगाल के साथ रहने के कारण यहाँ के निवासियों को विकास का यथेष्ट अवसर न मिलना स्वाभाविक ही था। राष्ट्रीयता का संकुचित भाव सदैव ही रहता आया था और पढ़े लिखे लोगों के लिए नौकरी ही जीवन को सब से बड़ी महत्त्वाकांक्षा समझी जाती थी। उच्च पद प्राप्त कर लेने से अर्थसंचय के साथ ही समाज में प्रतिष्ठा भी मिलने लगी थी। १९०५—६ ई० में जब दुनियाँ में राष्ट्र का एक नवीन भाव जाग्रत हो रहा था, तब बंगाल पर भी उसका असर पड़ा था। जब लार्ड कर्जन की नीति के अनुसार बंगाल के दो टुकड़े किए गए तब इस राष्ट्रीय भाव ने बंगाल में उत्तेजक रूप धारण कर लिया। क्रांतिदल तथा बमवादियों का पैदा होना, ऐसी स्थिति में ही, ज्यादा संभव हो गया। बंगाल-विच्छेद का आंदोलन बंगाल के कोने-कोने पहुँच गया। बिहार भी उससे वंचित नहीं था। यहाँ के

बंगाली भाइयों ने इस आंदोलन को चलाना चाहा तो पढ़े-लिखे बिहारियों ने भी उनके साथ सहानुभूति दिखलाई। पर जब यहाँ के लोगों को सरकारी नौकरियाँ पहले की अपेक्षा अधिक संख्या में मिलने लगी और उच्च पद दिए जाने लगे तब बिहार-निवासियों के हृदय में भी एक नया लोभ पैदा हुआ और बिहार को बंगाल से अलग करने की आवाज उठने लगी। जिन-जिन कारणों से बंगाल को दो टुकड़ों में बाँटने का विरोध किया जाता था वे ही सब कारण बिहार को बंगाल से अलग करने के निमित्त दिए जाने लगे। लार्ड हार्डिंज के जमाने में सर अली इमाम वाइसराय के एक्जिक्यूटिव कौंसिल के मेंबर थे। उस समय बंगाल को एक कर देने का प्रस्ताव पेश हुआ। इधर कलकत्ते में, व्यापार-केंद्र के साथ ही भारतवर्ष की राजधानी रहने कारण नवीन राष्ट्रीय आंदोलन को, जो विप्लव-कारियों का जन्म देनेवाला समझा जाता था, जोर मिलता था, ऐसा ख्याल किया जाने लगा। लार्ड हार्डिंज की सरकार ने इस निमित्त भी, तथा हिंदुस्तान के लोगों के दिल में प्राचीन भाव को उत्पन्न करने के विचार से प्रेरित हो, कलकत्ते से राजधानी दिल्ली ले जाने का निश्चय किया। साथ ही बिहार को बंगाल से पृथक् कर एक नया प्रांत बनाने का प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ। बादशाह पंचमजार्ज के मुख से दिल्ली दरबार में घोषणा करा कर इसको सर्वांग पूर्ण करा दिया गया।

पटना बिहार की राजधानी हुई। पूर्व बंगाल फिर से

पश्चिम बंगाल के साथ मिल कर अपने पुराने रूप में आ गया। ढाका में पूर्व बंगाल की राजधानी बनी थी, अब फिर वह श्रेय-शून्य हो गई। वहाँ का सेक्रेटेरियेट तोड़ दिया गया। जितने कर्मचारी वहाँ रखे गए थे, प्रायः उन सबों की बदली पटना सेक्रेटेरिएट में कर दी गई। इसी कारण पटने में बंगाली कर्मचारियों की संख्या दफ्तर के अंदर पहले शतप्रतिशत हो जाना कोई आश्चर्य की बात न थी। सरकार की ओर से वादा किया गया कि जैसे जैसे पुराने कर्मचारी 'अवसर-ग्रहण करते जायँगे, उनके स्थान पर बिहारी कर्मचारियों की ही नियुक्ति होती जायगी। इस वादे की रक्षा पूर्ण रूप से नहीं हो सकी। कारण यह हुआ कि जितने डिपार्टमेंट थे उनके अफसरों ने ऐसा प्रबंध किया कि किसी असिस्टेंट के पेंशन लेने के पहले से ही अपने नातेदार या दोस्त को काम सीखने के लिए रख कर उस विभाग के काम में उसे दक्ष बना देते थे। जब नियुक्ति का समय आता था तब अनुभव-प्राप्त उमीदवार कह कर उसको नौकरी मिल जाती थी। इस रहस्य को जब लोग जान गए तब प्रांत के निवासियों में असंतोष बढ़ना स्वाभाविक ही था। ऊपर के अफसरों तक उनकी पहुँच तो थी नहीं, इसलिए उनकी सुनवाही होती ही कैसे! बंगाली-बिहारी प्रश्न की जड़ में इस तरह की नाजायज हरकतों से कुछ चुने हुए लोगों के संबंधियों को ही नौकरियाँ दिलाने की कोशिश समझी जाय तो कुछ अत्युक्ति नहीं होगी। ऐसा होना कुछ अस्वाभाविक नहीं था। जो कोई

भी जिस विभाग का प्रधान है, उसके लिए अपने परिचित, संबंधी या मित्र को मदद देना बहुत साधारण-सी बात हो जाती है।

जब कांग्रेस का मंत्रिमंडल बना तब जिन लोगों के साथ अन्याय किया गया था उन्हें न्याय पाने की आशा हो गई। इस तरह के बहुत से दृष्टांत हमारे सामने पेश होने लगे जिनकी सचाई को जान लेने के बाद उस तरह का अन्याय रोकना हमारा कर्त्तव्य हो गया। इसमें संदेह नहीं कि जो बात बीत गई थी उसमें उलटफेर करना अनुचित के साथ ही कठिन भी था। अतएव भविष्य में उस तरह का अन्याय न हो उसी की ओर हमारा ध्यान जाना मुनासिब था। दो चार ऐसे दृष्टांत सामने आते गए जिनमे पुरानी नीति के अनुसार किसी नये आदमी को दफ्तर में घुसना संभव नहीं हुआ। इससे उनके स्वार्थ को धक्का लगा। हमारे खिलाफ आंदोलन का श्रीगणेश यहीं हुआ। इसी सिलसिले में श्री कृष्णावल्लभ सहाय ने जो हमारे पार्लियामेंटरी सेक्रेटरियों में बहुत योग्य समझे जाते थे, किसी स्थान पर भाषण देते हुए कह डाला कि यह स्थान विहार का अंग जैसा नहीं मालूम पड़ता। प्रांत के निवासियों की जगह दूसरे प्रांत वालों की तादाद वहाँ कहीं ज्यादा थी। इसके तरह-तरह के अर्थ लगाए गए। अखबारों में भी आंदोलन की तरह उभाड़ आई। जितना कुछ हुआ सब स्वाभाविक था।

आंदोलन के लिए मसले की कमी नहीं थी। कोई न

कोई ऐसा दृष्टांत निकल ही आता था जिसको लेकर अखबारों में नुकताचीनी होती रहती थी। श्री पी० आर० दास ने बंगालियों के अधिकार की रक्षा के निमित्त जितने काम होते रहे उनका नेतृत्व ग्रहण किया। उनका कहना था कि कांग्रेस राष्ट्रवादी संस्था है। कांग्रेस के मंत्रियों को सारे देश को एक राष्ट्र समझ कर ही नौकरी देने की नीति निर्धारित करनी चाहिए। अतएव प्रांतीयता की इसमें कोई गुंजायश हो ही नहीं सकती। किसी प्रांत में बस जाने की इच्छा प्रकट कर देना ही डोमिसाइल्ड सर्टिफिकेट हासिल करने के लिए काफी समझना चाहिए। सिद्धांत की दृष्टि से उनके विचार में सचाई की मात्रा रहते हुए भी वास्तविकता से यह कितनी दूर था वह तत्कालीन वायुमंडल ही सिद्ध करता था। इतने पर भी राजेंद्र बाबू का जो फैसला हो वह तो हमें मान्य होने को ही था। इस विषय पर दोनों पक्षों की दलीलें सुनने के लिए राजेंद्र बाबू ने दिल्ली में ही सब को बुलाया। उस समय यूरोप में लड़ाई छिड़ने की आशंका हो रही थी। अतएव कांग्रेस वर्किंग कमिटी की बैठक दिल्ली में ही बुलाई गई थी, क्योंकि यूरोपीय युद्ध में कांग्रेस के रुख पर विचार करना आवश्यक हो गया था। प्रांतीय मंत्रिमंडलों में से भी कोई-न-कोई इस बैठक में शरीक होने के लिए आमंत्रित हुए थे। श्री जवाहरलाल नेहरू इस समय यूरोप में थे और अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति पर अपनी संमति समय समय पर वर्किंग कमिटी के पास भेजते रहे थे।

बिहारी-बंगाली प्रश्न तथा वर्किंग कमिटी की बैठक में शरीक होने के उद्देश्य से हमलोग भी दिल्ली पहुँचे। मोटर-दुर्घटना के बाद यह पहली बार मुझे गांधी जी के दर्शन का अवसर प्राप्त हुआ था। जब मैं हरिजन कॉलोनी गया और महात्मा जी के कमरे में प्रविष्ट हुआ तब उन्होंने कुशलोपरांत तुरत मेरे बैठने के लिए एक ऊँची चीज की व्यवस्था करने का आदेश दिया। उनको पैरों की कमजोरी का हाल मालूम था। मुझ जैसे व्यक्ति के प्रति स्नेहपूर्ण आदर का भाव दिखला कर उन्होंने अपनी महानता का ही परिचय दिया। मैं स्नेह-गद्गद् हो गया। संसार के एक महापुरुष का एक छोटी-सी बात की ओर अचूक ध्यान रखना उनके महत्त्व को कितना ऊँचा कर देता है!

इस मौके पर वर्किंग कमिटी ने युद्ध छिड़ जाने पर अपना रुख निश्चित करने की सलाह की। महात्मा जी ने कांग्रेस का नेतृत्व करने से इनकार किया। उनका कहना था कि मेंबरों को अहिंसा में पूरी आस्था नहीं है। जब तक अहिंसा को ही एकमात्र अस्त्र के रूप मे हमारे स्वराज्य लेने और रखने के लिए कांग्रेस कबूल नहीं करती तब तक वे युद्ध छिड़ने पर हमारा नेतृत्व नहीं करते। अपने दृढ़ निश्चय को प्रकट करते हुए गांधी जी ने श्री जवाहरलाल जी को यूरोप से लौटने तथा उनके हाथों में कांग्रेस का भार देने की सलाह दी। उस समय राष्ट्रपति बोस से महात्मा जी बार-बार कहते थे कि इस अवसर पर उनको ही नेतृत्व करना चाहिए, पर उन्होंने अपनी ओर से कोई

कार्यक्रम उपस्थित नहीं किया। बंगाली बिहारी प्रश्न पर दोनों पक्षों की बहस सुनने के बाद राजेंद्र बाबू ने अपना फैसला देने के लिए दूसरी तिथि निश्चित कर दी। हमलोग इन सब सभाओं का काम खतम होने पर पटना लौट आए।

९

प्राइम मिनिस्टर जब स्वास्थ्य सुधार के लिए मसूरी चले गए थे तब समाजवादियों ने एक बड़ा हड़ताल रोहतास इंडस्ट्रीज मे करा दिया। श्री बसावन सिंह का यहाँ के मजदूरों पर बड़ा प्रभाव था और उनके ही नेतृत्व में यहाँ का हड़ताल शुरू हुआ। जब कुछ दिन हड़ताल चलता ही रहा और अन्य हड़तालियों के साथ श्री बसावन सिंह गिरफ्तार हो गए तब समझौते की बात पेश हो गई। डालमिया जी ने हमारे पास टेलिफोन द्वारा सुलह करा देने के लिए संवाद भेजा। मैंने श्री विद्याभूषण शुक्ल को डेहरी भेजा। डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट तथा चीफ सेक्रेटरी को भी दृढ़तापूर्वक वहाँ की परिस्थित को सँभालने के लिए आदेश दिया। हड़तालियों ने इस बीच में कुछ हिंसा-वृत्ति अख्तियार कर ली और पुलिस क मुलाजिमों को कुछ चोट पहुँची जिससे सरकारी अफसरों का रुख हड़तालियों के विरुद्ध हो गया। डालमिया जी ने मजदूरों के प्रति बढ़ती हुई सख्ती का अनुभव किया तब स्वयं ही सुलह कर ली। सरकार की ओर से मजदूर नेताओं को जेल से रिहा कर सुलह के काम में आसानी ला दी गई। हमारे कुछ साथियों ने, न मालूम किस उद्देश्य से, लाठी

चार्ज के प्रश्न पर अपनी नुकताचीनी प्रकट की। मैं जानता था कि उनके स्वभाव को देखते हुए इस तरह के उद्गार केवल द्वेष-सूचक ही थे।

हमारी मिनिस्ट्री का मध्यकाल इसी तरह खतम हो गया। मेरे लिए यह साल बड़ा मनहूस साबित हुआ। मर कर जी सका और जो कुछ सेवा प्रांत की मुझ से बन पड़ी उससे मुझे संतोष नहीं हुआ। परस्पर के सद्भाव में भी कमी होने लगी और ऐसा जान पड़ने लगा कि हमलोगों के बीच एक दीवार सी खड़ी होने लगी। अपनी असफलता के कारण सहयोगियों से परामर्श करने का अवसर मुझे कम मिलने लगा और कुछ कान भरनेवालों को भी यह परिस्थिति अनुकूल साबित हुई। कारण चाहे जो भी रहा हो, मुझे अनुभव होने लगा कि जिस अटूट विश्वास के साथ हमने कार्यारंभ किया था उसका बहुत कुछ अंश कमजोर पड़ता जा रहा है और अंतकाल में तो परस्पर का विश्वास बहुत अंश में क्षीण हो गया। विच्छेद के भाव की दीवार जबर्दस्त शकल में हमारे बीच खड़ी होती नजर आने लगी।

जनवरी से अक्टूबर १६३६ ई० का समय मंत्रित्व का अंतिम काल था। इसी बीच में यूरोपीय युद्ध छिड़ जाने के कारण कांग्रेस-मंत्रिमंडल को इस्तीफा देना पड़ा। मुझे खुशी हुई। मनसे एक बड़ा बोझ उठ गया। विपाक मतभेद का अंत होने को आया। यद्यपि राजनीतिक कारण से ही हमें

त्याग-पत्र देना पड़ा तथापि पारस्परिक मनोमालिन्य के अंत हो जाने से चित्त को विशेष शांति मिली। मेरे अन्य साथियों के ऊपर इसका क्या असर पड़ा, उसे मैं जान नहीं सका और न जानने की चेष्टा ही की। जरूरत भी नहीं समझा। कारण चाहे जो भी हो, इस्तीफा अनिवार्य था और वह होकर ही रहा। इस काल में जो कुछ काम हुए उनका साधारण जिक्र करते हुए विहंगम दृष्टि से सत्ताईस महीनों के कार्यों पर दृष्टिपात करते हुए संस्मरण के इस भाग को समाप्त करूँगा।

उन चंद महीनों के अंदर जिन कामों का आरंभ किया था उन्हें आगे बढ़ाना अभीष्ट था। उनकी पूर्त्ति के निमित्त कानून में आवश्यक संशोधन तथा अन्य कार्रवाइयाँ की जाती रहीं। साधारण जनता का रुख कांग्रेस मंत्रिमंडल के प्रति उदासीन होता जाता था। उसके कितने ही कारण थे। सत्ताइस महीनों के अंदर किसान आंदोलन को जितनी ताकत हमारी मौजूदगी से मिली उतनी उसके पहले किसी भी कारण से उसको प्राप्त नहीं हो सकी थी। किसान सभा तथा समाजवाद के संचालकों का उन दिनों केवल कांग्रेस मंत्रिमंडल की गलतियाँ निकाल कर जनता में उनका तरह-तरह की मनगढ़ंत शिकायतों द्वारा नीचा दिखलाने का प्रयत्न विशेष रूपसे होता रहा। शुरू में तो उनका भाव-कमसे कम समाजवादियों का-पवित्र कहा जा सकता था, क्योंकि किसानों में बल संचार करना भी उनका उद्देश्य था। जैसे-जैसे संघर्ष बढ़ाने का प्रयत्न होने लगा, शुद्ध

किसान मजदूर हित के बदले स्थानीय कार्यकर्त्ताओं का आत्म-सम्मान, तथा आत्मोन्नति की बुद्धि से प्रेरित प्रोग्राम को ही अपनाने लगे। जगह जगह पर बकाश्त की समस्याएँ खड़ी की जाने लगीं। इसमें संदेह नहीं कि कानून में परिवर्त्तन होते रहे और यदि उन संशोधनों को ईमानदारी से काम में लाया जाता तो किसानों की बहुतेरी शिकायतें जड़मूल से नष्ट हो जातीं, पर एक ओर तो जमींदार अपने जायज और नाजायज हकों को इस जोर से पकड़े रहते थे कि कानून-परिवर्त्तन को कार्यरूप में परिणत होने देने में अनेक बाधाएँ उपस्थित करते थे और दूसरी ओर किसानों की भलाई की तरफ दृष्टि न रख समाजवाद का मुख्य ध्येय-वर्ग-संघर्ष-को ही अपने सामने रख किसान समस्याओं को पेश करना किसान सभाओं का लक्ष्य होने लगा। ऐसी हालत में संघर्ष अनिवार्य हो गया। सरकारी आदेशों को ठुकरा कर अपने मन चाहे प्रयोग को सिद्ध करने के अभीष्ट ने जमींदार-किसान-संघर्ष के स्थान में सरकार और किसान के बीच संघर्ष पैदा कर दिया। फलस्वरूप कई जिलों में बकाश्त सत्याग्रह का जन्म हुआ। कहीं सफलता मिली, कहीं किसानों को नुकसान भी उठाना पड़ा। जहाँ-जहाँ सत्याग्रह के संचालन में अहिंसा की कुछ कदर होती रही वहाँ सत्याग्रह की सफलता की मात्रा विशेष रही, पर ज्यादातर जगहों में किसानों को तकलीफ ही मिली।

गया जिले का रेवरा सत्याग्रह और दरभंगा के दो तीन

और-और सूबों में चाहे जो भी होता रहे, विहार में हमलोग इसे स्थानीय प्रश्न बना कर जैसे हो वैसे आपस में सुलझा लें। अखिल भारतीय मुस्लिम लीग यहाँ मजहबी मामले को हल करने में किसी तरह की अड़चन न लगावे। इसे ध्यान में रख कर ही यहाँ के मसलों को तै कर दिया जाय। अजीज साहब स्वयं किसी हिंदू नेता के साथ देहातों में घूमने और उसके अनुकूल वातावरण पैदा कराने के पक्ष में थे। मैं भी अपनी ओर से इस काम में सहायता पहुँचाने के लिए इच्छुक था। उन दिनों गोकुशी के मसले पर कुछ वैमनस्य चल रहा था। जहाँ-जहाँ रिवाज न भी था वहाँ खुले तौर पर गोकुशी का हक मांगा जाता था। साथ ही गोमांस बेचने में किसी तरह की बाधा न पड़े, इसके लिए भी सुविधा खोजी जा रही थी। हमारी तरफ से सिद्धांततः कोई रुकावट का ख्याल नहीं था। प्रश्न था कहाँ तक सरकार की मदद सुदूर गांवों में पहुँच सकती थी जब कि हिंदु-मुस्लिम के बीच दंगे का भय हो जाता था। कानून से हक मान लेने पर भी सैकड़ों पीढ़ियों की जमी हुई संस्कृति को बिना परस्पर सद्भाव के केवल सरकारी मदद के बल पर एकबारगी उठा देना संभव नहीं था। गांवों में हिंदुओं के भड़के हुए भावों को लाठियों से कुचल डालना भी नामुमकिन था। अतएव मुस्लिम जनता की रक्षा की दृष्टि से ही आपस के सद्भाव को कायम रखना बहुत जरूरी था। पर लीग की रहनुमाई करने वालों को संघर्ष पैदा करना ही अभिष्ट था। समझौते के लिए

किसी तरह की ख्वाहिश थी नहीं, बल्कि मौका मिलने पर पारस्परिक वैमनस्य को उभाड़ने में भी कोई कसर न की जाती थी। ऐसे वातावरण में किसी तरह का सुलझाव असंभव हो गया। रह गया जहाँ-जहाँ फसाद हों वहाँ जल्द-से-जल्द पहुँचना, उसकी तहकीकात करना और अपराधी को सजा दिलाना। यह काम होता रहा; पर इससे आग बुझने के बदले भड़कती ही गई। कितनी जगहों में हिंदू-मुस्लिम दंगे हुए। एक जगह हिंदुओं की एक बड़ी जमात मुसलमानों के ऊपर, गोकुशी करने से रोकने के लिए, दलबल के साथ चढ़ाई करने जा रही थी। अफसरों के रोकने पर भी हिंदू नहीं रुके। वे जोश में थे। लाचार गोलियाँ चलानी पड़ीं। आठ आदमी मरे और बहुतेरे घायल हुए। मुसलमानों की रक्षा इस तरह पर हो सकी, पर ऐसा करना कुछ ही जगहों पर मुमकिन हो सकता था। गया में एक जबर्दस्त दंगा हो गया। भागलपुर में भी रथयात्रा के जुलूस को लेकर कितने दिनों तक दंगा होता रहा। मुजफ्फरपुर, बिहारशरीफ, हजारीबाग, मुंगेर इत्यादि स्थानों में दंगाफसाद हुए। मैं इसे साफ तौर पर कहने की हिम्मत रखता हूँ कि इन जगहों में दंगा होने की कोई खबर पहले से नहीं मिली थी और मिनिस्ट्री की नीति बराबर इस तरह के दंगों को रोकने की ओर रहती आई थी। अफसरों को सख्त ताकीद रहती थी कि ऐसे मामलों में जरा भी सुस्ती न दिखलावें।

सरकार की नीति में कुछ परिवर्तन किया जाना संभव

भी नहीं था। जिस नीति का व्यवहार कितने वर्षों से होता आ रहा था उस पर फिर विचार किया गया और देखा गया कि उसमें कोई अदल बदल करने की गुंजाइश नहीं है। कुछ अफसरों ने इस ख्याल को भीतर ही भीतर बढ़ाने की कोशिश जरूर की। अकसर बातचीत या रिपोर्टों में उसका आभास आ जाता था। ऐसा कहा जाने लगा था कि हिंदुओं को हिंदू मंत्रियों की वजह से यह धारणा होती जा रही है कि अब तो उनका राज्य हो गया। अब उनकी ओर से मुसलमानों पर ज्यादती होगी भी तो उनकी सुनवाई नहीं होने की। मुसलमानों को यह कहा जाता था कि हाल तक अंग्रेजों के पहले तो उनकी ही हुकूमत थी। अब नये शासन विधान से हिंदुओं के हाथ में सारी ताकत आ गई। अब उनको इंसाफ कहाँ से मिलेगा! इस तरह की दोतरफी बातें होने लगी थीं। इसके प्रमाण में सर सुलतान का एडवोकेट जेनरल न रहना तथा एक ही मुसलमान को मंत्रिमंडल में शामिल करना उदाहरण स्वरूप बतलाए जाते थे।

सर सुलतान बिहार प्रांत के एडवोकेट जेनरल नये विधान में नियुक्त हुए थे। जब हमारी मिनिस्ट्री बनी तब उस समय वे गवर्नमेंट ऑफ इंडिया में एक्सिक्यूटिव कौंसिल के अस्थायी मेंबर थे। समझा जाता था कि उनकी जगह पर श्री मनोहर लाल काम करेंगे। उनके लौट आने पर उनके लिए वह जगह सुरक्षित रहेगी, उसका प्रबंध कर लिया गया था। हमलोगों को

एक ऐसे एडवोकेट जेनरल की जरूरत थी जो हमारी विचार-प्रणाली को समझे और उसके साथ सहानुभूति रखे। हमारे दृष्टिकोण से ही कानून बनाने में मदद करे। सर सुलतान की शिक्षा तथा विचार इस तरह के वायुमंडल के अनुकूल न होने से उनसे हमें इन कामों में यथेष्ट सहायता मिलना संभव नहीं था। इतने पर भी हमारी इच्छा यह न थी कि उनको गवर्नमेंट एडवोकेट के पद से हटाया जाय। हमलोग दोनों पदों को कायम रखना चाहते थे। हाइकोर्ट का काम सर सुलतान के जिम्मे पहले जैसा चलता रहे, इसे कबूल कर एडवोकेट जेनरल जो हमें अन्यान्य कामों में सहायता दे, अपने विचारानुकूल बनाना चाहते थे। सर मैरिस ने शायद हमारे विचार को ठीक तौर पर उनके सामने नहीं रखा। उन्होंने अपने पद से इस्तीफा देकर हमारे लिए दूसरा रास्ता छोड़ा ही नहीं। सर सुलतान का एडवोकेट जेनरल के पद से हटना क्या था, मानो मुसलमानों को इस बात का सबूत मिल गया कि अब हिंदू राज्य कायम होने में कोई शक नहीं रहा। हालाकि मौलाना आजाद ने, आगे चल कर सर सुलतान से, जब वे वाइसराय की कौंसिल से वापस आ गए थे, यहाँ तक कह डाला कि यदि उनको कबूल हो तो मौजूदा एडवोकेट जेनरल को हटा कर यह पद पुन. उनको दिया जा सकता है। सर सुलतान ने इसे मंजूर नहीं किया। यह उनका बड़प्पन था। मुस्लिम लीग ने इस घटना को बढ़ा चढ़ा कर अपना मतलब गाँठने में किसी तरह की सुस्ती न होने दी।

मुस्लिम लीग किस तरह छोटी-छोटी बातों को बढ़ा कर उनसे अपना मतलब निकालती थी उसकी पुष्टि एसेंबली की एक घटना से होती है। किसी प्रश्न का उत्तर देते समय पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी श्रीकृष्णवल्लभ सहाय ने, शिमले में मि० नौमान से जो उनकी बातचीत हुई थी उसे उनके ही शब्दों में दुहराया। इसमें संदेह नहीं कि उन शब्दों का व्यवहार नहीं करना ही अच्छा होता, पर कृष्णवल्लभ बाबू का अंतःकरण साफ था। अपनी शुद्धता का परिचय देने के ख्याल से ही उन्होंने नौमान साहब के दिलके उद्गार को एसेंबली के सामने ला रखा। मुसलमान मेंबरों पर उन शब्दों का बुरा असर पड़ा। मैं इसे तुरत समझ गया। उस समय प्राइम मिनिस्टर वहाँ नहीं थे। अतएव मैंने ही उठ कर कृष्णवल्लभ बाबू के उन शब्दों को वापस करते हुए एसेंबली से एक तरह की माफी माँग ली और वहाँ के विपाक्त वातावरण को शांत करना चाहा। पर इतने से ही मुस्लिम लीग के मेंबरों को शांति नहीं मिली। शहर में उन शब्दों को दुहराया गया और मुसलमानों की एक आम सभा में कृष्णवल्लभ बाबू तथा कांग्रेस गवर्नमेंट की खूब ही निंदा की गई। क्रोधावेश का पूरा प्रदर्शन हुआ और एक प्रस्ताव लाया गया कि, मुसलमानों का एक जुलूस एसेंबली तक जाय और उस पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी की बरखास्तगी के लिए वह माँग पेश करे। साथ ही आम जनता के सामने सरकार द्वारा माफी माँगी जाय। मि० जाफर इमाम एम० एल० ए० ने उसका

नेतृत्व अपने ऊपर लिया। नियत दिन और समय पर मुसल-मानों का एक बड़ा जुलूस नारे लगाता हुआ वहाँ पहुँचा। बड़ी सनसनी मची। प्राइम मिनिस्टर तथा दूसरे मिनिस्टरों के साथ मुसलमान नेताओं की बातें हुईं और यह तय हुआ कि सरकार की ओर से उस दिन की घटना के लिए फिर अफसोस जाहिर कर दिया जाय और जुलूस वापस चला जाय। मामला इतने पर ही तय हो गया। मुसलमान जनता को उभाड़ने के लिए इस छोटी सी घटना का इस्तेमाल करना एक ही नतीजा साबित करता है कि मुस्लिम-लीग ने मुसलमानों के बीच कांग्रेस मिनिस्ट्री के प्रति विद्वेष प्रचार करने में कोई उपाय उठा नहीं रखा। अतएव मुसलमानों में कांग्रेस तथा हिंदू मात्र के प्रति वैमनस्य बढ़ता गया तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं समझनी चाहिए।

दूसरी ओर मुसलमानो के साथ जितनी भी मेहरबानियाँ क्यों न दिखलाई जायँ उनके लिए एहसान जाहिर करने के बदले, उसका उलटा अर्थ लगा कर मुस्लिम जनता को भड़काया जाना साधारण बात हो गई थी। एक मिसाल यहाँ पर लिख देना मुनासिब समझता हूँ। मेरे स्वायत्त-शासन विभाग में एक असिस्टेंट सेक्रेटरी मुसलमान थे। उन्हों ने बहुत लोगों से कर्ज ले रखा था। उनके ऊपर बहुतेरी डिग्रियां हो गई थीं और उनके वेतन का बड़ा हिस्सा कोर्ट के आदेश से हर महीने जब्त हो जाया करता था। उसके अतिरिक्त उन्हों ने कुछ और रुपये

रुक्के लिख कर कर्ज ले रखा था, इसका तकाजा भी हो रहा था। नियमानुसार ऐसे अफसर को सरकारी नौकरी से हटा देने के और कोई सजा नहीं मिलनी चाहिए थी। इस पर तुर्रा यह कि उन्हों ने फाइल के ऊपर अपने मुसलमान होने की वजह से तंग किए जाने की बात लिखी और एक मातहद होकर सारी कांग्रेस मिनिस्ट्री की आलोचना कर डाली। सेक्रेटरी ने उस पर उचित कार्रवाई की जाने की सिफारिश की। मैं सख्ती के साथ इस मामले की छानबीन करने लगा। इस पर मुसलमानों में सनसनी पैदा हो गई। खाँ बहादुर सगीरुल हक साहब उस असिस्टेंट सेक्रेटरी को लेकर मेरे निकट अस्पताल पहुँचे और अपने बचाव के लिए बिना किसी तरह के प्रमाण दिए उनको आत्म-समर्पित करा कर क्षमा चाही। मैंने उनकी सलाह कबूल कर ली। उनके माफी माँग लेने की वजह से उनको दफ्तर से हटा कर दूसरी जगह भेजने की सिफारिश कर दी। मुझ से यह भी कहा गया था कि वह शीघ्र ही नौकरी से इस्तीफा देकर निजाम की रियासत में चले जानेवाले हैं, इसलिए भी उनकी जिंदगी बरबाद न की जाय। इसी घटना को मुसलमानों के बीच तोड़ मरोड़ कर अतिरंजित कर के फैलाने की कोशिश की गई। मैंने मि० अजीज, मि० महमूद बार-एट लॉ आदि को सारी फाइल दिखा कर पूछा कि इस अफसर के साथ कौन सी ज्यादती हुई। इतना करने पर फिर खुले तौर पर आंदोलन करने की गुंजाइश न रह गई।

इस तरह के कितने उदाहरण हैं, पर उनको यहाँ लिखने जरूरत नहीं। नतीजा यही हुआ कि मुस्लिम-लीग ने कांग्रेस मिनिस्ट्री के इस्तीफे पर मुक्ति-दिवस। (Day of deliverance) मनाया। चाहे हम निर्दोष क्यों न रहे हों, पर दुनिया की नजर में दोषी साबित करने की शक्ति भर कोशिश की गई। सर हैरीहेग् युक्तप्रांत के भूतपूर्व गवर्नर, ने विलायत में यह वयान करने की हिम्मत दिखलाई कि कांग्रेस मिनिस्ट्री के ऊपर मुसलमानों के प्रति ज्यादती की शिकायतें बिलकुल निर्मूल थीं। बातचीत में कितने जवाबदेह अंग्रेज अफसरों ने भी कहा था कि जितनी मेहरबानी कांग्रेस मिनिस्टरों ने मुसलमानों के प्रति दिखलाई थी उतनी अंग्रेज अफसर अपने तईं कभी नहीं दिखलाते।

११

बंगाली-बिहारी मसले ने भी कांग्रेस मिनिस्ट्री को बदनाम करने में काफी सहायता दी। मैं यह मानता हूँ कि इस सवाल पर कुछ ज्यादा विचार से काम करना चाहिए था और शब्दों के व्यवहार में तीखापन की मात्रा जरा कम रहती तो संभवतः बंगालियों के हृदय में पीड़ा होने पर भी उनके वाक्यों में कटुता का उतना भाव नहीं आता, लेकिन अखबारों में जिस तरह आलोचना होने लगी और बंगाल के पत्रों ने जो भाव-भंगी दिखाई उसकी प्रतिक्रिया सर्वसाधारण पर जैसी हुई वह अनिवार्य थी। राष्ट्रीयता के दृष्टिकोण से ऐसा होना ही नहीं चाहिए

था, पर जब न्यस्त स्वार्थ पर धक्का लगता है तब उसमें घात-प्रतिघात की भावना उत्पन्न हो ही जाती है। राय बहादुर अतुलधन बनर्जी के विषय में वस्तुतः मेरा हृदय बिल्कुल शुद्ध और साफ था। पटने के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की हैसियत से उनके कामों का निरीक्षण करने का मुझे दो-तीन बार अवसर मिले थे। मेरे ऊपर एक ही असर हुआ कि वे जिला अफसर होने की योग्यता नहीं रखते। मैंने इस ख्याल का इजहार बराबर किया। पीछे उनके विरुद्ध बहुतेरे मामले निकल पड़े, उस पर भी मैं यह नहीं चाहता था कि उनको सर्वदा के लिए जिस्टेड-पोस्ट से खारिज कर दिया जाय। हाँ, दूसरे अफसरों को काम करने का मौका देकर देखा जाय कि उनके मुकाबले में उनके काम कैसे हुए। इस विचार को भी बंगाली समाज ने कबूल नहीं किया। मिनिस्ट्री का विरोध कितने ढंगों से किया जाता रहा। पहले तो एसेंबली में प्रश्नों द्वारा, हमारे विरोधियों को आर्थिक तथा नैतिक सहायता देकर हमारी बदनामी कराने की चेष्टा की गई।

श्री जयपाल सिंह एक आदिवासी ईसाई सज्जन बीकानेर रियासत में किसी पद पर काम करते थे। वहाँ से किसी कारण-वश उनको हटना पड़ा। उनकी इच्छा बिहार में ही नौकरी करने की हुई। जब मैं दिल्ली गया हुआ था तब राजेंद्र बाबू के पत्र के साथ वे मुझ से मिलने आए थे। मेरा ख्याल था कि उनको कोई पद अपने प्रांत में दे दिया जाता तो ठीक होता।

डॉक्टर महमूद के ही मातहद उनके योग्य कोई पद मिल सकता था, पर डॉक्टर साहब उनकी ओर आकर्षित नहीं हुए। पीछे उनको बंगाली समाज ने आर्थिक सहायता देकर आदिवासियों का नेता बनने में मदद की और उस नई हैसियत से कांग्रेस मिनिस्ट्री को तरह-तरह से बदनाम कराने में सफल हुए। श्री जयपाल सिंह ने विरोधात्मक भाव से प्रेरित हो आदिवासियों का संगठन किया और उन्हें हिंदुओं से अलग रखने तथा कांग्रेस की मुखालफत करने की शिक्षा देने में व्यस्त रहे। कुछ सरकारी अफसरों ने भी परोक्षरूप से उनको सहायता की और बराबर उनको अपने लक्ष्य पर स्थिर रहने के लिए प्रोत्साहित करते रहे।

बंगालियों के विरोध का एक रूप यह भी रहा कि जब श्री सुभाषचंद्र बोस कांग्रेस से हटाये गए तब उनके पटना आगमन के अवसर पर स्वागत के निमित्त तरह-तरह की सहायता की गई। उनके स्वागत के लिए जो कोष खोला गया था उसमें श्री गुहा ने, जिनको पेंशन लेने के लिए मैंने मजबूर किया था, काफी रकम दी। श्री गुहा के छोटे भाई जो नहर-विभाग में नौकर थे, ६० वर्ष की अवस्था पहुँच कर, पेंशन पा चुके थे; पर श्री गुहा की उम्र पी० डबलू० डी० के दफ्तर में ५७ वर्ष की ही दिखलाई जाती थी। मुझे जब यह बात मालूम हुई तब मैंने उनको अधिक समय देने से इनकार कर पेंशन लेने के लिए मजबूर किया था। अपने विरोध को प्रकट करने के ही लिए श्री गुहा ने सुभाष-स्वागत

फोष में दान देकर अपने मानसिक उद्वेग को संतुष्ट किया। इस तरह के अन्यान्य असंतुष्ट लोगों के अतिरिक्त बंगाली समाज ने कांग्रेस मिनिस्ट्री के प्रति अपना विरोध दिखलाने के लिए भी सुभाष बाबू के स्वागत में जरूरत से ज्यादा जोश दिखलाया।

जैसे-जैसे हमारी मिनिस्ट्री की अवधि नजदीक आती गई असंतुष्ट लोगों के बीच परस्पर ऐक्यभाव की वृद्धि होती गई। कितनी रिपोर्टें इस तरह की पहुँचने लगीं जिनमें मुस्लिम लीग और किसान-सभा दोनों के एक साथ मिलकर सभाएँ करने की बातें थीं। बंगाली भाई बड़े उत्साह के साथ श्री सुभाषचंद्र बोस द्वारा संचालित अग्रगामी दल के सदस्य बनने लगे। किसान-सभा, समाजवादी तथा फारवर्ड ब्लाक वालों में नाममात्र का ही भेद दीख पड़ता था। एक ही मंच से तीनों वर्ग के भावों का प्रकाशन होना एक साधारण बात हो गई थी। कहीं-कहीं असंतुष्ट जमींदारों के साथ भी उनका सहयोग हो जाया करता था। कांग्रेस मिनिस्ट्री के अंतिम काल में इस तरह के प्रदर्शन आम तौर पर हो जाया करते थे। किसानों की दलबंदी के साथ खेत-मजदूर संघ ने भी कुछ हद तक मुकाबला करने की कोशिश अवश्य की थी। सुना जाता था कि कहीं-कहीं पर जमींदारों द्वारा ही उनका संचालन हुआ करता था। वास्तविकता चाहे कुछ भी रही हो, तात्कालिक परिस्थिति की जानकारी प्राप्त करने के लिए उन सारे विषयों पर एक सरसरी दृष्टि रखना आवश्यक था।

१२

१६३६ ई० में दिल्ली, बंबई और पूना जाने के अवसर मिले। सर जगदीश ने कृषि-विभाग के मंत्रियों के साथ-साथ अर्थमंत्रियों को भी दावत दी थी। मैं भी दिल्ली जाने को राजी हो गया और डॉक्टर महमूद के साथ उन बैठकों में शामिल हुआ। लॉर्ड लिनलिथगो ने उसका उद्‌घाटन किया था। बैठक का काम दो दिनों तक होता रहा। मुझे उसमें कोई दिलचस्पी नहीं मिली। दूसरे दिन वाइसराय ने हमलोगों को अलग-अलग मिलने के लिए बुलाया। उन दिनों उड़ीसा में देशी राज्यों के साथ वहाँ की जनता का संघर्ष चल रहा था। महात्मा जी ने आशीर्वाद दे उनके आंदोलन में कांग्रेस की सहानुभूति प्रदर्शित कर दी थी। कई जगहों पर गोलियां भी चलाई गईं और कितने लोगों ने देशी राज्यों को छोड़ कर अंग्रेजी सल्तनत में शरण ली। छोटानागपुर के निकटस्थ कुछ रियासतों में भी खलबली मची हुई थी और वहाँ के लोग राँची जिला मे शरण लेने वाले थे। वाइसराय ने मुलाकात के समय कुछ देर तक मेरी मोटर-दुर्घटना के विषय में बातें कीं और मेरी मौजूदा हालत दरियाफ्त करते हुए अपनी हमदर्दी जाहिर की। फिर राजनैतिक परिस्थिति पर बातें शुरू कीं। अंग्रेजी सरकार की उन रियासतों के साथ संधियों के द्वारा जो संबंध बना हुआ था उसका पालन करना अपना कर्त्तव्य बतलाते हुए उन्हों ने कांग्रेस का बीच में पड़ना नाजायज बताया। मैं उसका क्या जवाब

देता ! चलते-चलते कुछ जोश के साथ ही उन्होंने अपने कर्त्तव्य का ज्ञान मुझे कराया। उस तरह की बातें मुझसे क्यों की गईं, यह मैं समझ नहीं सका। शायद कॉंग्रेसमैन की हैसियत से जो मेरी सहानुभूति रियासत के लोगों से होती उसके प्रति मुझे सोचने के लिए कुछ मसाला देना ही उनका उद्देश्य रहा हो। उनकी बातचीत का ढंग बड़ा आकर्षक तथा व्यक्तिगत स्नेह-ममत्व से भरा हुआ था। दूसरे हृदय को अपनी ओर खींचने की कला उनमें खूब मालूम पड़ी। यही कारण हुआ कि मैं उनकी बातों के सुनने में ही अधिकतर मौनविमुग्ध बना रहा।

उसी साल गर्मी के शुरू में ही राँची जाना हुआ था। इरादा था कि सितंबर में ही पटना लौट आया जाय और एसेंबली की बैठक अक्टूबर महीने में हो। टेनेंसी संबंधी कानूनों ने जमींदारों के बीच काफी कटुता पैदा कर दी थी, उधर किसानों का ख्याल था कि उनकी हालत में कुछ परिवर्तन नहीं हुआ। जमींदारों का लगान मिलना बंद हो जाने से उनके बीच हाहाकार मचा हुआ था। छोटानागपुर के जिलों में, खासकर डालटेनगंज और मानभूम में, लगान में छूट सैकड़े पचास साढ़ के हिसाब से दी जा रही थी। जमींदारों की हालत दर्दनाक हो जाना मुमकिन ही था। रोज कोई-न-कोई घटना ऐसी होती थी जिसकी इत्तला हमें दी जाती थी और उससे हमें काफी तकलीफ पहुँचती रहती थी। जिस-जिस जिले में सफर करने गया वहाँ किसान और जमींदार दोनों की शिकायतें सुननी पड़ती थीं।

धनवाद, पूर्णिया, मुजफ्फरपुर, चंपारन, पलामू, राँची आदि का भ्रमण किया। सभी जगहों में लोगों ने बड़े आदर से स्वागत किया जरूर, पर एक मिनट के लिए भी आराम करने की फुरसत न दी। बड़ी बड़ी सभाएँ हुईं, जिनमें मैंने अपनी सरकार की नीति पर प्रकाश डालने की कोशिश की, पर जिनका लक्ष्य हमें गिराना ही था उनको समझने की इच्छा ही कहाँ थी, और न मैं उनको कुछ समझा ही सकता था। हमलोगों के भाषणों से वातावरण बहुत-कुछ सुधर अवश्य जाया करता था।

मुजफ्फरपुर में कोअपरेटिव फेडरेशन की बैठक प्रो० राधाकुमुद मुखर्जी (लखनऊ विश्वविद्यालय) के सभापतित्व में हुई। उसका उद्‌घाटन करने के लिए मैं आमंत्रित किया गया था रायबहादुर श्यामनंदन सहाय के साथ वहाँ ठहरा और वहाँ से ही चंद घंटों के लिए मोतिहारी चला गया। उस समय डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में नामजदगी की गर्मी बनी हुई थी और उसे लेकर लोगों में काफी तनातनी चल रही थी। मुझे याद है कि मुजफ्फरपुर में चंद घंटों के अंदर ही मुझसे दो तीन डेपुटेशन डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के संबंध में मिले। सारन जिला बोर्ड में चेयरमैन, वाइस-चेयरमैन के चुनाव को लेकर भी कितने लोग मेरे पास आए। दरभंगा तथा मुजफ्फरपुर जिला बोर्डों की नामजदगी के बारे में भी डेपुटेशनों की ओर से अपने-अपने विचार प्रकट किए गए। मुजफ्फरपुर के कुछ काँग्रेसी मुसलमानों की ओर से तकाजा था कि उनके ही दल के लोग नामजद हों। एक साहब जिन्हों ने

साइमन कमीशन के सामने अपना बयान दिया था, इस समय जोरों से कांग्रेस का पक्ष ले रहे थे। मेरे पूछने पर उन्हों ने धड़ल्ले के साथ जवाब दिया कि अब उनके विचार में परिवर्तन हो गया है। उस समय उनका यही ख्याल था। कुछ ही दिनों के बाद वे महाशय मुस्लिम लीग के जबर्दस्त हिमायती हो गए उस समय के भ्रमण में प्रायः यही सिलसिला चलता रहा और जनता नाकोंदम हो जाया करता था।

१३

बजट स्पीच के बाद जो आलोचनाएँ की जाती हैं उनसे सामयिक विचारधारा का पता चलता है। कांग्रेस पार्टी की ओर से उस साल के बजट पर जो बहसें हुईं उनसे यह निष्कर्ष निकाला जाय तो अनुचित नहीं होगा। पार्टी के सदस्यों में किसान आंदोलन के कारण एक प्रकार की आशंका सी पैदा होती जा रही थी। आलोचनात्मक विवादों में उसका प्रदर्शन मिलता था। उस साल की बहस कितने दिनों तक चली। अंत में अतिरिक्त समय लेकर जब रात को एसेंबली बैठी तब मैंने सब सदस्यों के सवालों तथा एतराजों का जवाब दिया। टेनेंसी कानून पर असंतोष बढ़ती हुई मात्रा में प्रकाशित होता जाता था। आबपाशी के लिए कुछ व्यावहारिक कार्य अब तक किया भी न जा सका था। बाढ़ से उत्तर बिहार पहले जैसा ही पीड़ित बना हुआ था। जमींदारों को लगान वसूली में ज्यादा दिक्कत होने लगी। कोआपरेटिव विभाग का पुनरुद्धार नहीं किया जा सका।

इन सब प्रतिवादों के भीतर मिनिस्ट्री की जो सब दिक्कतें थीं उनके साथ बहुत कम सदस्यों की सहानुभूति थी। हम जन-सेवा के नाम पर अधिक-से-अधिक काम करना चाहते थे, पर आर्थिक कठिनाइयों के अतिरिक्त हमारे अधिकारों की भी सीमा थी। इच्छा रखते हुए भी हम बहुत काम नहीं कर पाते थे।

आल इंडिया काँग्रेस कमिटी की बैठक जुलाई या अगस्त में बंबई में बुलाई गई। उस अवसर पर प्रांतीय मंत्रियों को भी वहां इकट्ठा होने की दावत दी गई थी। श्री जगलाल चौधरी, श्री कृष्णवल्लभ सहाय तथा मैं बंबई गए। मंत्रियों से मंत्रणा करने के लिए सरदार पटेल ने श्री भूलाभाई देशाई के मकान पर एक छोटी-सी बैठक बुलाई। मुख्य विषय हिंदू-मुस्लिम वैमनस्य के कारण और उन्हें सुलझाने का उपाय रखा गया। दो दिनों तक बातें हुईं, पर किसी निश्चय पर पहुँचना संभव नहीं हुआ। सलाह हुई कि एक दूसरी बैठक, जिसकी तायदाद बड़ी न हो, पूना में बुलाई जाय। मैं जब बंबई गया था उस समय तक मेरा मन अपने कामों से बहुत ही असंतुष्ट हो चुका था। इसकी चर्चा मैंने श्री कृष्णवल्लभ सहाय के साथ राजा शिवलाल गोविंद-लाल, जिनके यहाँ हमलोग ठहराये गए थे, की थी।

उसके पहले कलकत्ते में आल इंडिया काँग्रेस कमिटी की बैठक हुई थी उसमें मैं शामिल हुआ था, पर वहाँ कुछ ऐसी बातें नहीं हुईं जिनका संबंध कुछ खास तौर पर मुझ से रहा हो। हाँ त्रिपुरी काँग्रेस के निर्णय के अनुसार जब सुभाष बाबू ने

अपनी वर्किंग कमिटी नहीं बनाई तब उन्होंने अपने पद से कलकत्ते की बैठक में ही इस्तीफा दे दिया। इससे एक विषम परिस्थिति पैदा होना अनिवार्य था। मेंबरों में काफी सनसनी थी। उनके स्थान पर कौन राष्ट्रपति बने, यह एक टेढ़ा सवाल आ पड़ा था। जवाहरलाल जी ने इस जवाबदेही को लेने से इनकार किया। उस समय राजेंद्र बाबू ने जिस धैर्य और साहस का परिचय दिया उसका वर्णन करना मेरे लिए कठिन है। रामगढ़ कांग्रेस में राष्ट्रपतित्व से निवृत्त होते समय राजेंद्र बाबू को धन्यवाद देते हुए चुने हुए शब्दों में जवाहरलाल जी ने उनकी जो प्रशंसा की उसे सुनने से मेरे-जैसे निकटस्थ साथियों के हृदय में जो आह्लाद का भाव उठा था वह अनिर्वचनीय है।

बंबई में आल इंडिया कमिटी के सामने स्वामी सहजानंद सरस्वती ने बिहार में मंत्रिमंडल के प्रति किसानों के हकों को कुचलने का दोषारोपण किया था। एक प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस में मंत्रिमंडलको विशेषाधिकार देने की बात चल रही थी उसके विरोध मे कितने लोगों ने आवाजें उठाईं। मद्रास मंत्रिमंडल पर सबसे अधिक बौछारें पड़ीं। बिहार से जो एतराज किए गए थे उनका जवाब देने के लिए किसी सदस्य को बोलना जरूरी हो गया। हमलोगों को बोलना मुनासिब नहीं जँचा। राजेंद्र बाबू सभापति के आसनासीन होने की वजह से किसी पक्ष की ओर से बोल नहीं सकते थे। प्रांतीय कांग्रेस कमिटी के जेनरल सेक्रेटरी होने की हैसियत से श्रीरामचरित्र सिंह

स्वामीजी की दलीलों का उत्तर देने उठे। जवाहरलालजी ने उनका भाषण सुन कर कहा कि तुम्हारे वकील ने तो माकूल बहस नहीं की। किसी तरह प्रस्ताव तो पास हो गया, पर मेरे मन में असंतोष की मात्रा बढ़ती गई।

त्रिपुरी कांग्रेस से ही मुझ में असंतोष की मात्रा बढ़ती जा रही थी। परस्पर बढ़ता हुआ मतभेद उसका मुख्य कारण था। एक दूसरे की शिकायत सुनने या करने की बातें सुनी जाती थीं, पर उनकी सत्यता परसंदेह ही रहता था। कुछ अफसरों को हमलोगों के नजदीक पहुँचने का मौका औरों की अपेक्षा ज्यादा मिलते रहने के कारण उनमें एक दूसरे की निंदा स्तुति करने की आदत लगती जाती थी। उससे भी वैमनस्य बढ़ना संभव दीख पड़ता था। हम में लुकेछिपे तौर पर काम करने की आकांक्षा भी बढ़ती जाती थी। किसी खास विषय में अथवा किसी खास दोस्त या साथी की बातों में विशेष रुचि उत्पन्न हो जाने के कारण भी हमारे कामो की नुकताचीनी बाहर होने लगी। उसकी प्रतिक्रिया हम पर हो जाती थी। अपने अपने विभाग के कामों में निजत्व बढ़ जाने से हम में द्वेषबुद्धि अंकुरित होने लगी। वह उस समय तक पौधों का रूप धारण करने लगा था। विचार-परामर्श पहले जैसा कभी-कभी होता था, पर केवल मुख्य-मुख्य विषयों पर ही। खास-खास जिले में खास-खास जगहों के प्रति हमारा झुकाव विशेष कारणों से होने लगा था। उदाहरण के तौर पर कई जगहों के पब्लिक-प्रॉसी-

क्यूटर और गवर्नमेंट लीडर की बहाली की बात कही जा सकती थी। आनरेरी मैजिस्ट्रेट और टेक्स्ट-बुक-कमिटी तथा कितनी संस्थाओं के मेंबरों को चुनने में परस्पर विचार करना बंद-सा ही कर दिया गया था। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेंबरों की नामज़दगी में भी हमारा यही रूप रहा। उन सब कारणों से वातावरण ऐसा बनता जा रहा था जिसमें खुली साँसें लेना मुश्किल था।

पूना में जब चुने हुए मंत्रियों की बैठक राजेंद्र बाबू, मौलाना आज़ाद तथा सरदार पटेल के तत्त्वावधान में हुई तब यूरोपीय युद्ध की घोषणा हो चुकी थी। हमलोगों ने बहुतेरे विषयों पर विचार किया और कितने आवश्यक निश्चय पर पहुँचे। युद्ध का बादल आगे बढ़ता ही गया और दो महीने के अंदर ही हमारे मंत्रित्व का अंत हो गया। पूना निश्चय को कार्यरूप में परिणत करने का अवसर न मिलने के कारण कठिन समस्याओं के सुलझाने का मौका नहीं मिला और वे जहाँ की तहाँ रह गईं। आखिर फैसला वर्धा की आल इंडिया कांग्रेस कमिटी की बैठक में ही की गई, पर आने वाले दिन का आभास पूना की बैठक के बाद से ही मिलने लगा था। वर्धा में आल इंडिया कांग्रेस कमिटी की बैठक ने भारतीय सरकार के समक्ष अपनी ओर से जो नीति चलानी थी उसे कांग्रेस की मांग के रूप में रखा। साथ ही कांग्रेस मंत्रियों को अपनी-अपनी व्यवस्थापिका सभाओं में एक युद्धविरोधी प्रस्ताव रखने के लिए कहा और कांग्रेस की माँग न स्वीकृत किए जाने पर अपने-अपने

पद से इस्तीफा देने की विज्ञप्ति देने का भी आदेश दिया। बिहार ऐसेंबली के एक उत्तेजक वातावरण में युद्ध-विरोधी प्रस्ताव प्रधान मंत्री के द्वारा उपस्थित किया गया। सरकार अपने निश्चय पर डटी थी। ता० २१ अक्टूबर को मंत्रिमंडल ने बिहार के गवर्नर की सेवा में अपना त्यागपत्र रख दिया।

छठा अध्याय

१

डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का पिछला चुनाव बिहार प्रांत में १९३३ ई० के जनवरी में हुआ था। उस समय बोर्ड के कार्यकाल की अवधि तीन वर्ष की थी। कुछ दिनों के बाद कौंसिल ने बोर्डों की अवधि तीन से बढ़ा कर पाँच वर्ष की कर दी थी। उसके अनुसार भी १९३८ ई० में चुनाव होना चाहिए था, पर हमें वोटरों की संख्या बढ़ाने के लिए कुछ नये नियम बनाने थे। वोटर-लिस्ट बनाने में एक वर्ष की देर अनिवार्य हो गई। बहुत कोशिश करने पर भी मैं इस चुनाव को १९३९ ई० के मार्च-अप्रेल से पहले समाप्त नहीं कर सका। मेरे सामने दो प्रस्ताव आए, सरकार द्वारा सदस्यों की नामज़दगी की प्रथा उठा देना और बालिग मताधिकार को प्रयोग में लाना। दोनों बातें बहुत अंशों में उचित थीं, किंतु दोनों को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए दो-तीन वर्षों तक बोर्डों का चुनाव रोक देना होगा।

मौजूदा कानून में संशोधन किए बिना नामजदगी की प्रथा उठाई नहीं जा सकती थी। कानून में बहुत तरह के परिवर्तन करने थे, अतएव इस प्रश्न को हाथ में लेते ही बोर्डों के प्रबंध में कोई सुधार बहुत दिनों तक करना नामुमकिन हो जाता। बालिग मताधिकार के संबंध में भी मतभेद रहने के कारण उसे भी व्यावहारिक रूप देना मुश्किल था। अतएव उन प्रस्तावों को हाथ में लेने के केवल मौजूदा कानून के ही अनुसार चुनाव करना निश्चित हुआ।

चुनाव में मुजफ्फरपुर जिला के अलावा और दूसरी जगहों से बहुत कम शिकायतें आईं। मुजफ्फरपुर के बारे में अफसरों के विरुद्ध में इस आशय के तार मिलते गए कि उनकी हमदर्दी खास दल के साथ होने की वजह से चुनाव में कई तरह की धांधली की जा रही है। मैंने सब शिकायतों को जिला मैजिस्ट्रेट मि० अमीर के पास भेज दिया और उन पर मुनासिब कार्रवाई करने के लिए उन्हें ताकीद कर दी। सभी जिलों में काँग्रेस पार्टी की ओर से उमीदवार खड़े किए गए थे। प्रायः सभी जिलों के चुनाव में काँग्रेस के ही सदस्यों का बहुमत हुआ। मुजफ्फरपुर में ३० में १६ तथा रांची और सिंहभूम के जिलों में आधे से भी कम संख्या में काँग्रेसी उम्मीदवार चुने गए। गया में जहानाबाद के एक चुनाव-क्षेत्र में भीषण दंगा हो गया। काँग्रेस उम्मीदवार के विरोध में एक किसान समाजवादी उम्मीदवार खड़ा होकर वहाँ के वायुमंडल को दूषित बनाने में बड़ा

प्रयत्न किया। उस जिले मे किसान सभावादियों तथा समाजवादियों का बहुमत रहने के कारण, जयप्रकाशजी ने, जो उन दिनों वहाँ के सभापति थे, बोर्ड के चुनाव में समझौते से काम लेने का प्रस्ताव पेश किया। उनका कहना था कि गया जिला में उनके ख्याल के लोगों का आधिक्य होने की वजह से वहाँ उनके विचारानुकूल ही बोर्ड का संगठन होना चाहिए। मैंने उनकी राय पसंद की और उचित सलाह और मदद देने का वादा किया। काँग्रेस कमिटी से भी उनको उसी बुनियाद पर सुलह हो गई कि २१ उम्मीदवार वामपक्ष के और ९ दक्षिण पक्ष के चुने जायँ। इस तरह वहाँ जो चुनाव हुआ उसमें पारस्परिक विरोध की कोई बात रही ही नहीं, पर वामपक्ष वाले आपस में जब उम्मीदवार चुनने लगे तब मतभेद होने के कारण जहानाबाद क्षेत्र मे किसान दल के ही दो उम्मीदवारो में तुमुल संघर्ष हुआ। कितने लोग पीटे गए,—चीजें जलाई गई, मुकदमें चले। आगे चल कर ऊँच और नीच जाति के बिना पर लड़ाई ने दूसरा रुख अख्तियार कर लिया। चुनाव किसी तरह खतम हुआ, पर मुकदमें का अंत तो शायद अब तक भी नहीं हो पाया है।

चुनाव खतम होने के बाद नामजदगी का ख्याल उठ खड़ा हुआ। मुझे जीवन का सबसे कटु अनुभव इसी सिलसिले में हुआ। मैंने अपने मनमें निश्चय कर लिया कि किसी जिला बोर्ड के संगठन मे कोई दिलचस्पी न लूँगा। बहुत अंशों तक तो मैं अपने को इससे बचा सका, पर दो-तीन बोर्डोंमें मुझे अपनी

निर्धारित सीमा से बाहर जाने की मजबूरी हो गई। प्रांतीय कांग्रेस कमिटी ने तै किया था कि उसकी ओर से जो कांग्रेसी उमीदवार चुने जायँ उनमें भर सक एम० एल० ए० न रहें। जब चुनाव का काम शुरू हुआ तब मुंगेर जिले में ही पहले दो एम० एल० ए० को उमीद्वार चुन उस सिद्धांत का संकुचित अर्थ लगाया गया। फिर जब मुजफ्फरपुर के लिए नाम चुने जाने लगे तब चार एम० एल०ए० के नाम उमीदवारों में रखे गए। इस तरह एम० एल० ए० न चुनने के सिद्धांत का अर्थ प्रांतीय वर्किंग कमिटी ने स्वयं अपनी हरकत से बता दिया। इस तरह पर उसने अन्यान्य जिलों के एम० एल० ए० लोगों में से उमीद-वार न चुन कर उनके मन में क्षोभ तथा द्वेष पैदा कर दिया

जब चुनाव खतम हो गया तब वर्किंग कमिटी की एक बैठक में मुझे भी शरीक होने का मौका मिला। उसमें मंत्रिमंडल के कामों की आलोचना की जा रही थी। खास कर ग्राम-सुधार-विभाग की कतिपय नियुक्तियों के बारे में नुक्ताचीनी की गई। जहाँ तक मुझे मालूम था मैंने सब के उत्तर देने की कोशिश की, पर जिनकी धारणा पहले से एक तरह की हो चुकी थी उसमें उलट फेर करना संभव नहीं दीख पड़ा। उसी बैठक में प्रधान मंत्री श्री रामचरित्र सिंह ने एक अजीब प्रस्ताव पेश किया। उनका कहना था कि सरकार को किसी भी एम० एल० ए० को नामजद करने का हक कांग्रेस वर्किंग कमिटी की तजवीज के अनुसार नहीं है। मैंने कहा कि वर्किंग कमिटी ने तो स्वयं ही

कितने एम० एल० ए० को चुन कर अपनी तजवीज का अर्थ जनता को बता दिया है फिर उसे अब दूसरा अर्थ लगाने का अधिकार क्या है ! साथ ही वह तजवीज गवर्नमेंट के ऊपर कैसे लागू की जा सकती जब कि नियम बनानेवाले ने ही अपने अर्थ को अपने कामों से साफ कर दिया है। तदंतर श्री रामचरित्र सिंह की टीका और भी आश्चर्य पैदा करने वाली हुई। उन्होंने बताया कि एम० एल० ए० को उमीदवार चुनने का काम जो कुछ उस प्रस्ताव के अनुसार था वह तो वर्किंग कमिटी ने कर ही दिया, पर काँग्रेस सरकार के लिए किसी एम० एल० ए० को नामजद करने की अब गुंजाइश नहीं रह गई। उस लचर दलील में मुझे कोई तथ्य नहीं मालूम पड़ा, प्रत्युत उससे मैं आशंकित हो गया और उस अर्थ का मैंने घोर विरोध किया। सौभाग्य से राजेंद्र बाबू ने मेरे विचार की पुष्टि की। यदि उस दिन वे वहाँ न रहते तो, संभव था कि, उस समय की वर्किंग कमिटी रामचरित्र बाबू की ही तजवीज को पास कर लेती और तब परिणाम-स्वरूप मुझे बाध्य होकर या तो उसके विरुद्ध जाना पड़ता या अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ता।

प्रांतीय कांग्रेस कमिटी की एक दूसरी बैठक में इस आशय का एक प्रस्ताव पेश हुआ, शायद रामचरित्र बाबू ने ही उसे पेश किया था, मुझे ठीक याद नहीं, कि नामजद सदस्यों को डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के पदाधिकार नहीं दिया जाय। उससे मेरा कोई संबंध नहीं था, पर वर्किंग कमिटी के मेंबरों में से एक नामजद हो

जाने के बाद पदाधिकारी होने के उमीदवार हो सकते थे, इस कारण से ही या किसी दूसरे कारण से उस प्रस्ताव की समर्थन ही नहीं हुआ। भीतर चाहे लक्ष्य उसका कुछ भी रहा हो, यदि प्रस्ताव को स्वीकृत कर लिया जाता तो संभवत: बोर्ड में जो आज चलकर गड़बड़ी हुई वह उस हद्‌तक न होने पाती।

कानून के मुताबिक तीन ही तरह के लोग नामजद किए जा सकते थे—१ विशेषज्ञ २ अल्पसंख्यक और ३ जिन के हकों का चुनाव में उचित प्रतिनिधित्व नहीं हुआ हो। मैंने इन नियमों के अनुकूल ही उनको नामजद करना मुनासिब समझा जिनकी गणना इन तीनों में से किसी एक में की जा सके। मुसलमान तथा हरिजनों को अल्पसंख्यक में समझ कर उनकी संख्या एक निश्चित अनुपात में मैंने ठीक कर ली। मुसलमानों के लिए उनकी आबादी के मुताबिक बोर्ड के सदस्यों की संख्या के अनुपात से जितनी तादाद होती उससे ड्योढ़ा संख्या पहुँचने में जितनी कमी थी उसे नामजदगी से पूरा करना तै किया। विशेषज्ञों में सरकारी अफसरों के अलावा ऐसे लोगों को चुनना मुनासिब समझा जो बोर्ड में अपने अनुभव के साथ ही बहुमत की पुष्टि भी कर सकते थे। विशेष हकों में जमींदारों की तादाद चुने हुए सदस्यों में नहीं के बराबर होने की वजह से नामजदगी द्वारा उसकी कमी को पूरा करना उचित समझा। कांग्रेसवालों की तादाद चुनाव से यथेष्ट आही चुकी थी, अतएव कांग्रेसमैन को नामजद करने की ज्यादा जरूरत नहीं थी। इन्हीं नियमों

पर ध्यान रखते हुए मैंने पहले-पहल मानभूम जिला बोर्ड की नामजदगी की। श्री अतुलचंद्र घोष ने अपने जिले की ओर से खास-खास लोगों को नामजद करने का आग्रह किया था। मैं उनसे सहमत नहीं हुआ और उपर्युक्त सिद्धांत के अनुसार जिन नामों को मैंने चुनना चाहा उन्हें फाइल पर अपने विचार के साथ लिख कर गवर्नर के पास भेज दिया। क्योंकि कानून के मुताबिक छोटानागपुर के जिले की नामजदगी गवर्नर की मंजूरी से ही हो सकती थी। मैंने अपनी राय देकर उनकी राय मांगी थी। सर मॅरिस हैलेट ने मेरे विचार को उचित समझ कर उसका समर्थन किया और लिखा कि वे हमारी नामजदगी के सिद्धांत तथा नामजद व्यक्तियों के नामों मे कुछ भी उलटफेर करने को आवश्यकता नहीं समझते। इस पर जब श्री अतुलचंद्र घोष-जैसे साधु-प्रकृति के गांधीवादी की आपत्ति मुझे मालूम हुई तब मैंने अपने सारे सिद्धांत तथा मानभूम जिला बोर्ड के नामजद व्यक्तियों की तालिका राजेंद्र बाबू के पास भेज कर उनकी सम्मति जानने की इच्छा प्रकट की। उनका पत्र आया कि यद्यपि वे नोमिनेशन के बारे में कुछ कहना नहीं चाहते तथापि मेरे सिद्धांतों और मानभूम की नामजदगी मे उनको कोई एतराज नजर नहीं आता। उनका विचार जान लेने पर मैंने बोर्ड के नामजद व्यक्तियों को सूची प्रकाशित करा देने की आज्ञा दे दी। इस पर मानभूम जिला कांग्रेस कमिटी के मेंबरों में बहुत खलबली पैदा हो गई। सब ने बोर्ड से इस्तीफा देने की धमकी

दी और अतुल बाबू को प्रांतीय वर्किंग कमिटी की मेंबरी से इस्तीफा देने के लिए मजबूर किया। अपने कार्य में किसी तरह की कमजोरी न देख कर उस विरोध-प्रदर्शन के ऊपर मैंने विशेष ध्यान देना ही उचित न समझा।

अन्यान्य जिलों की भी नामजदगी होने लगी। इसी समय मौलाना अबुलकलाम आजाद का एक पत्र प्राइम मिनिस्टर के नाम से और एक पत्र मेरे पास इस आशय के आए कि नामजदगी में मुसलमानों की संख्या एक चौथाई होनी चाहिए और पटने जिले में दस मेंबर नामजद किए जायँ। मैंने अपना विचार शीघ्र उनके पास लिख भेजा। उस समय तक मैं पटना, गया, पूर्णियाँ जिला बोर्डों की नामजदगी कर चुका था। उनका हवाला देते हुए उनकी राय जानने की इंतजारी की। बहुत दिनों तक जब उनके यहाँ से कोई उत्तर न आया तब मैं अपने विचार के अनुसार ही शेष जिला बोर्डों की नामजदगी करने के लिए अग्रसर हुआ। सारन जिला बोर्ड के लिए एक व्यक्ति का नाम उन्हों ने अपने पत्र में लिख भेजा था उसे मैंने नामजद अवश्य कर दिया।

गया जिला बोर्ड की नामजदगी में किसी को एतराज करने की गुँजाइश थी ही नहीं, क्योंकि दोनों दलों में पहले ही समझौता हो चुका था और नामजदगी भी उसी के अनुसार होती। सारन जिले के लिए बातों ही बातों में राजेंद्र बाबू ने यह इच्छा प्रकट की थी कि वहाँ मौ० सज्जाद साहब को चेयरमैन

होना चाहिए। मैंने भी उनकी राय पसंद की। साथ ही यह भी मुनासिब समझा कि श्री महामायाप्रसाद सिंह तथा श्री प्रभुनाथ सिंह दोनों दो दल के नेता समझे जाते थे, उन्हें भी नामजद करूँ। पदाधिकारियों के चुनाव को लेकर उस जिले में काफी झंझट और मनोमालिन्य का प्रदर्शन हुआ। जब पहलेपहल श्री लक्ष्मीनारायण सिंह ने मुझ से पदाधिकारियों के चुनाव के संबंध में राय मांगी तब मैंने राजेंद्र बाबू की इच्छा बताते हुए उसके साथ सहमत होने की बात कही। वाइसचेयरमैन चाहे जो हो जाय, आपस की सलाह से यह तै कर लेने की बात थी। पद-लोलुपता मनुष्य के विचार को किस हद तक भ्रष्ट कर देती है, इसका साक्षात उदाहरण सारन जिला बोर्ड के चुनाव में ही देखने को मिला। जीवन भर की मैत्री एक क्षण में समाप्त हो गई। सैकड़ों मोर्चों पर साथ चलनेवाले इस मौके पर एक दूसरे के प्रतिद्वंदी हो गए। इस मिसाल से मैंने सबक ली।

सारन से ज्यादा विकट समस्या शाहाबाद बोर्ड में खड़ी हो गई। मेरे पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी श्रीविनोदानंद झा ने सलाह दी कि इस बोर्ड में सरदार हरिहरप्रसाद सिंह और श्री हरगोविंद मिश्र दोनों को ही नामजद कर देना ठीक होगा क्योंकि कांग्रेस पार्टी में दो दल हैं और ये दोनों वहाँ के नेता हैं। मैंने उनकी सलाह मान ली और उसी के अनुसार वहाँ की नामजदगी खतम कर प्राइम मिनिस्टर के पास मंजूरी के लिए भेज दी। दो-तीन दिनों के बाद फाइल वापस आ गई, पर उस पर उनका

हस्ताक्षर नहीं था। मैंने समझा कि कोई खास राय न रखने की वजह से ही ऐसा हुआ होगा। सरदार हरिहरप्रसाद सिंह उन दिनों उनके साथ ही पटने में ठहरे हुए थे और नामजदगी की सूचना उन्हें मिल चुकी थी। उसके बाद जब मैं बंबई चला गया और वह फाइल कमिश्नर के पास भेजी जा चुकी थी तब किसी-न-किसी कारण प्राइम मिनिस्टर की आज्ञा से वह फाइल वापस मँगा ली गई। जब मैं लौट कर पटने आया तब उनका नोट और एक पत्र मुझे मिले। नोट में उन्हों ने चौधरी करामत हुसैन का नाम देने के लिए सुझाया था, पर साथ ही पत्र में यह भी लिख दिया था कि यदि मुझे पसंद न पड़े तो पहले वाला नाम ही रहे। मैंने उस अवसर पर किसी तरह का हेर फेर करना मुनासिब नहीं समझा और जैसी नामजदगी मैंने की थी वैसी ही उसे रहने दिया। मुझे इस बात का जरा भी आभास नहीं मिला था कि इस बोर्ड के चुनाव में आगे चल कर विकट परिस्थिति उत्पन्न हो जायगी। मैं समझता था कि सरदार हरिहर प्रसाद सिंह और श्री हरगोविंद मिश्र दोनों आपस में तै कर सर्व-सम्मति से पदाधिकारी का चुनाव कर लेंगे। पर इसमें भी मेरा अनुभव अत्यंत कटु रहा। मेरी कोशिश बेकार गई और पदाधिकारी के चुनाव में हिंसा, प्रतिद्वंद्विता तथा द्वेष-बुद्धि का प्रदर्शन इस हद तक किया गया कि उसे याद कर लज्जित हो जाना पड़ता है।

पटना जिला बोर्ड के चुनाव ने भी मेरी आँखें खोल दीं।

जिस दृश्य का अवलोकन करना पड़ा वह मेरी धारणा के सर्वथा प्रतिकूल था। यहाँ की नामजदगी में एक खास बात देखने को मिली। दूसरे दूसरे जिलों में पैरवी करने वाले अपने या अपने मित्रों के नामजद किए जाने के प्रार्थी होते थे. पर इस जिले की काँग्रेस कमिटी तथा बोर्ड में चुने गए सदस्यों ने ही एक बात पर जोर देना उचित समझा और वह थी किसी खास व्यक्ति को नामजद न करने के बारे में। कितने तबके के काँग्रेसवादी, समाजवादी, किसान सभावादी अथवा अग्रगामी दलवादी ने श्री ब्रजनंदन प्रसाद को चेयरमैन बनाने का प्रस्ताव रखा, बशर्ते कि श्री श्यामनारायण सिंह की नामजदगी रुक जाय। ब्रज-नंदन बाबू की प्रशंसा तथा श्यामनारायण बाबू की शिकायत उस जमात की ओर से होन लगी। पीछे असलीयत का पता ब्रजनंदन बाबू को भी लग गया। अपनी प्रशंसा से किसे खुशी नहीं होती और वह भी जब अपने चित्तानुकूल उपार्जित होती हो। इस प्रशंसा की तह मे जब श्यामनारायण बाबू को नाम-जद होने से रोकने की इच्छा छिपी हुई दीख पड़ने लगी और उनको कमजोर बना चेयरमैन होने से रोक देना इस जमात का लक्ष्य साफ होने लगा तब ब्रजनंदन बाबू की आँखें खुलीं। मैं उन बातों को सुनी-सुनाई तौर पर ही जानता था। असलीयत जानने का मुझे मौका ही कहाँ था; पर तत्कालीन वस्तुस्थिति को देखने से उसकी पुष्टि जरूर होती थी। मैंने अपने विचार के अनुसार ही नामजदगी की। प्राइम मिनिस्टर

-ने जिसे नामजद करने कहा उसे नामजद कर देना ही था। इस तौर पर जब नामजदगी हो चुकी और पदाधिकारियों के चुनाव का समय आया तब जिला बोर्ड की कांग्रेस पार्टी ने श्रीव्रजनंदन प्रसाद और श्रीश्यामनारायण सिंह को चेयरमैन और वाइस चेयरमैन के लिए उमीदवार बनाया। बहुमत से हुए इस चुनाव को वर्किंग कमिटी ने नामँजूर कर अपनी ओर से मौ० जहीर कासिम तथा श्रीजगदीश नारायण को उन पदों पर चुने जाने की सिफारिश प्रांतीय कमिटी के मंत्री के पास भेजी। श्रीरामचरित्र सिंह ने बोर्ड की पार्टी के नामजद उमीदवारों का समर्थन न कर उन्हीं दोनों के नाम पार्टी के पास अपनी सिफारिश के साथ भेजे। लोगों की दृष्टि में यह कार्रवाई अनोखी जँची। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को कांग्रेस पार्टी ने इस सिफारिश को अनुचित करार दिया और अपनी पहली सिफारिश को ही जायज समझ कर उसके अनुसार चुनाव किया। प्रांतीय कमिटी के सभापति के पास अपील की गई कि इस नाजायज सिफारिश को रद्द कर दें और पार्टी की कार्रवाइयों को जायज समझा जाय। उनकी ओर से अपनी सिफारिश के मुताबिक चुनाव करने के पक्ष में यह दलील भी दी गई कि नियमानुसार तीस दिनों के अंदर चुनाव नहीं हो जाने से बोर्ड को पदाधिकारी के चुनाव का हक नहीं रहता। इसी कारण समयाभाव से अपनी अपील के फैसले का इंतजार न कर अपने निश्चय के अनुसार चलने पर मजबूर होने के लिए माफी भी चाही। उसके बाद तो वर्किंग

कमिटी का एक दल जो मेरा विरोधी हो चुका था, पटना जिला बोर्ड में मेरे मित्र श्री ब्रजनंदन प्रसाद को नीचा दिखाने के लिए कमर कस कर तैयार हो गया। श्रीराजेंद्र प्रसाद की राय लेने के लिए भी इंतजार करना मुनासिब नहीं समझा गया। राजेंद्र बाबू उन दिनों पटने में कम रहा करते थे और उनके लौटने में विलंब होना संभव था। मेंबरों के इस रवैया से मुझे तकलीफ पहुँची और मैंने प्राइम मिनिस्टर से दो तीन मेंबरों को उचित पथ पर चलने के लिए सिफारिश कराई। सूबे में जितने चेयरमैन चुने गए थे उनमें किसी से कम योग्य तथा अनुभवी नहीं होते हुए भी श्रीब्रजनंदन प्रसाद वर्किंग कमिटी के बहुमत का कोप भाजन इसलिए बनाए गए कि जिस खास व्यक्ति को प्रधान मंत्री चेयरमैन देखना चाहते थे उनके रास्ते में उनकी वजह से अड़चन पड़ गई थी। खैर, इस जिले का मामला तूल पकड़ता गया और राजेंद्रबाबू को एक अवसर पर कड़ी भाषा में मेंबरों की हरकतों की आलोचना करनी पड़ी। पर उन दिनों वर्किंग कमिटी में एक गुटबंदी-जैसी हो गई थी और न्याय-अन्याय की परवाह किए बिना ही अपने पक्ष के समर्थन की ओर विशेष रूप से उत्सुकता दिखाई जाती थी। मुझे इन हरकतों से इतना दुःख हुआ था कि मैंने काँग्रेस का चार आना मेंबर होने से भी अपने को अलग रखा और मिनिस्ट्री के इस्तीफा के बाद एक प्रकार से मैं बिहार प्रांत की राजनीति से अलग रहकर ही काँग्रेस की सेवा करने का संकल्प करने पर बाध्य हुआ। इस भाव का

उद्गार मैंने, जब मैं इस्तीफे के बाद अस्पताल में पड़ा हुआ था तब, राजेंद्र बाबू से आंतरिक दुःख से प्रेरित होकर प्रकट किया था।

मुजफ्फरपुर, दरभंगा, मुंगेर, भागलपुर, मोतिहारी, हजारीबाग, रांची, सिंहभूम और पलामू के जिला बोर्डों के लिए सदस्यों को प्राइम मिनिस्टर की राय से नामजद करने के लिए श्री विनोदानंदजी को कह कर बोर्ड की नामजदगी से भरसक अपने को अलग करने की मैंने कोशिश की। पलामू जिला की नामजदगी में मुझे कुछ हेरफेर करना पड़ा। श्री राजकिशोर सिंह और श्री यदुवंश सहाय ने एक पत्र द्वारा आपस में मिलकर काम करने का वादा किया। यदु बाबू को नामजद करने के लिए प्राइम मिनिस्टर ने भी मुझ से कहा। अतएव श्रीरामचरित्र सिंह की इच्छा के विरुद्ध, जिले में शांति स्थापन करने के उद्देश्य से, दोनों प्रतिद्वंदियों से मिल कर काम करने की प्रतिज्ञा करा, दोनों को नामजद किया। शेष जिलों की नामजदगी प्रायः जिस तरह विनोदाजी ने की थी उसपर मैंने अपनी मंजूरी दे दी। रांची जिला बोर्ड की नामजदगी को गवर्नर ने हमारे इस्तीफे के बाद रद्द-बदल कर दिया और इस प्रकार आदिवासी चेयरमैन बनाने की मेरी इच्छा अपूर्ण ही रह गई।

इस तरह पर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का चुनाव-कांड समाप्त हुआ। प्रांत के कांग्रेस कार्यक्रम को इस चुनाव की वजह से जितना धक्का पहुँचा उतना और किसी काम से नहीं। प्रायः

सभी जिलों में दो प्रतिद्वंदी दल कायम हो गए। पहले तो कांग्रेस द्वारा उमीदवार चुने जाने वालों का एक दल बना। फिर बोर्ड के पदाधिकारी न चुने जाने के कारण जिनकी आशाएँ पूरी न हुईं उनकी एक जमात अलग खड़ी हो गई। जो बोर्डों में निर्वाचित हुए और फिर पदाधिकारी भी बने ऐसे लोगों और उनके सहायकों का भी एक जबर्दस्त दल बना रहा। सब में परस्पर द्वंद्व होने लगा और वह चलता रहा। व्यक्तिगत द्वेष की पराकाष्ठा पहुँच गई। एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए कोई बात उठा न रखी गई। कांग्रेस विरोधियों से भी मदद लेना अपने इस घृणित उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक मामूली-सी बात हो गई। कांग्रेस की मान-प्रतिष्ठा धूल में मिल जाय, पर अपने वैर भाव के प्रतिशोध के लिए इस हद तक भी जाने में कांग्रेस वालों ने हिचकिचाहट न दिखाई। कांग्रेस मंत्रिमंडल के अंतिम दिन इसी तरह पर बीत रहे थे। इस्तीफे ने अशांति की लहर को रोकने में आग में पानी का काम किया। यह द्वेष-बुद्धि उसके बाद भी महीनों तक काम करती रही और सूबे में दो दलों में विभक्त हो गई। जिले के सभी कामों में उनका असर पड़ने लगा। मैंने कोशिश की कि प्रांतीय वर्किंग कमिटी का नया चुनाव सम्मिलित राय से हो जिससे पारस्परिक द्वंद्व की धधकती अग्निज्वाला से प्रांत जल-भुन कर भस्म न हो जाय, पर मेरे सारे प्रयत्न विफल ही साबित हुए।

३

कुमार वीरेंद्रबहादुर सिंह (बधा बाबू) बहुत दिनों से इस बात की कोशिश में लगे हुए थे कि कांग्रेस मिनिस्ट्री के प्रति लोगों में जो भाव पैदा हो रहे थे उनके कारणों की तह में जाया जाय और उन्हें मिटाने का प्रयत्न किया जाय। इस उद्देश्य से उन्होंने एसेंबली की एक पार्टी मिटिंग बुलाने का आग्रह किया था। उधर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चुनाव से कुछ लोग असंतुष्ट थे ही, उनकी भी इच्छा पार्टी मिटिंग बुलाने की हुई। अतएव कांग्रेस एसेंबली पार्टी की एक विशेष बैठक बुलाई गई।

कुमार वीरेंद्रबहादुर का उद्देश्य उच्च कोटि का होने पर भी मुझे उससे कोई विशेष लाभ नहीं मालूम पड़ता था, पर वे अपने पथ पर अड़े रहे। जब पार्टी की बैठक शुरू हुई तब एक बहुत ही विनीत तथा—विचारशील भाषण में उन्होंने अपने उद्देश्य को प्रकट किया। उनके भाषण का सारांश यह था कि अर्द्ध कांग्रेस तथा गैर कांग्रेस जमात का प्रभाव कांग्रेस मिनिस्ट्री पर अधिकाधिक मात्रा में पड़ रहा है जिसका प्रतिफल कांग्रेस दल में बढ़ता हुआ असंतोष है। इस तरह की कार्रवाई का अंत करना जरूरी समझ कर ही उन्होंने उस बैठक को बुलवाने का अनुरोध किया था। उनकी भाषा संयत, भावशिष्ट तथा उद्देश्य महत् होने में किसी को संदेह नहीं था, पर उनके बाद जो भाषण हुए उनमें कटुता, द्वेष तथा छिद्रान्वेषण की मात्रा ही अधिक थी। श्री यमुनाप्रसाद सिंह ने तीन-चार नौकरियों

का जिक्र करते हुए एक खास जमात के द्वारा ऐसा होना बताया। श्री रामचरित्र सिंह ने उसका समर्थन किया। ठाकुर रामनंदन सिंह ने निंदात्मक बातें कह कर कांग्रेस मंत्रिमंडल की तुलना सर गयोशदत्त की मिनिस्ट्री से की और उसकी अपेक्षा भी इसे बुरा बताया। सर्व श्री मेथाजाल झा, गुप्तेश्वर पांडेय, शाह उम्मैर आदि बहुतेरे मेंबरों ने अपने-अपने दृष्टिकोण के अनुसार किसी-न-किसी कार्य की आलोचना की। मंत्रिमंडल की ओर से सर्व श्री कृष्णवल्लभ सहाय, विनोदानंद झा, श्री कृष्ण सिंह तथा मैंने उत्तर दिए। मेरा ख्याल है कि लोगों के दिलों में जो बहुतेरी गलतफहमियां बैठ गई थी, बहुत हद तक वे दूर हो गईं, लेकिन कुछ लोगों को दलील और तर्क से कोई मतलब नहीं था। उन की धारणा बनी हुई थी और उसे वे बदलने में असमर्थ थे और अनिच्छुक भी थे। यमुना बाबू ने दूसरे दिन ही पत्र लिख कर बताया कि श्रीकृष्णवल्लभ सहाय तथा मेरी वक्तृता के बाद उनके मन की शंकाएँ दूर हो गईं। अपने भाषण के लिए उन्होंने क्षमा भी माँगी। कुछ दिनों के पश्चात् जब हम लोग जेल में एकत्र हुए तब यमुना बाबू से मैंने एक दिन उनके उस भाषण की चर्चा की। इस पर वे कुछ लज्जित हुए और अपनी मनःस्थिति का जिक्र करते हुए साफ शब्दों में स्वीकार किया कि उन दिनों जिस समाज के साथ वे पटने में रहते थे वहाँ इसी तरह की बातें होती रहती थीं और उन्हीं बातों से प्रभावित हो कर उन्हों ने वैसा भाषण दिया था।

४

३१ अक्टूबर १९३९ ई० को मंत्रिमंडल के त्याग-पत्र दे देने का जिक्र ऊपर आ गया है। मैं उन दिनों बीमार था। पूना से लौटते रास्ते मे कहीं ठंढ लग जाने से खाँसी हो गई थी। वह लगातार दौड़ धूप के कारण बढ़ती ही गई। वर्धा जाने के समय जबलपुर से जैसे ही आगे बढ़ा, मेरी खाँसी खतम हो गई। वहाँ से लौटने पर जबलपुर से पटने की ओर बढ़ते ही खाँसी फिर से शुरू हो गई। जब पटने पहुँचा तब बुखार भी हो आया। डा० बनर्जी की सलाह से मैं कॉटेज अस्पताल में भर्त्ती हो गया। उसी समय इस्तीफा दिया और ३ नवंबर तक अस्पताल में ही रहा। डाक्टरों ने मेरे दाँतों को निकाल देने की तजवीज की और उनके इच्छानुसार ही अपने दाँतों से सर्वदा के लिए विदाई लेनी पड़ी। कुछ लोगों को उमीद बनी हुई थी कि काँग्रेस के साथ सरकार को फिर सुलह हो जायगी, पर मुझे उसमे तनिक भी विश्वास न था और न इन पंक्तियों के लिखते समय तक है।

सेक्रेटरियट से विदाई में हमलोगों को भिन्न-भिन्न विभागो से दावतें दी गई तथा फोटो लिए गए। बहुतों को खुशी हुई और बहुत दुखी भी हुए। भिन्न-भिन्न जमात के ऊपर इसका अलग-अलग असर पड़ना स्वभाविक ही था। जब राजेंद्र बाबू ने इसका जिक्र मुझ से अस्पताल में किया तब मैंने इसका कारण यही बताया कि जितने न्यस्त स्वार्थवाले थे उनको हमारी मिनिस्ट्री से किसी-न-किसी प्रकार की क्षति सहनी पड़ी थी और बहुतों की

आशाएँ फलवती न होने पाई थीं, अतएव उन जमातों की प्रसन्नता स्वभाविक थी। जिन लोगों को हमसे लाभ पहुँचा था उनमें ज्यादा तो वैसे ही लोग थे जिन्हें अपने भाव को प्रकाशित करने की योग्यता ही नहीं थी और न अपनी भलाई-बुराई स्वयं समझ भी सकते थे। कुछ लोग जिन्हें हमसे लाभ पहुँचा था, हमारी गैर हाजिरी में डर से बोल भी नहीं सकते थे।

हमें अपने कामों पर एकबार आलोचनात्मक दृष्टि डालने का मौका मिला। इसमें संदेह नहीं कि मुझे खुद अपने से ही असंतोष था, पर पारस्परिक मतभेद बढ़ जाने की वजह से हमारी दृष्टि छिद्रान्वेषिणी हो गई थी। गांधी जी के रास्ते से हमलोग हटते जाते थे। देश-सेवा की भावना के स्थान पर अपने-अपने आग्रह तथा मनचाही पर चलने की आदत आती जाती थी। इस्तीफे ने हमें इस ओर बढ़ने से रोकने में सहायता पहुँचाई। अतएव मैं इसे मुक्तकंठ से स्वीकार करता हूँ कि यद्यपि राजनीतिक कारण से ही त्याग-पत्र देना पड़ा, किंतु पारस्परिक वैमनस्य तथा मनोमालिन्य से छुटकारा पाने का उससे अच्छा अवसर दूसरा शायद ही हमें मिलता।

यह मैं मानने को तैयार नहीं हूँ कि कांग्रेस मिनिस्ट्री से जनता की सेवा नहीं हुई। बहुत अंशों में हमने अपने कर्त्तव्य पालन में ही अपनी शक्तियाँ लगाईं। यदि हमें अपने साथियों तथा सहयोगियों का यथेष्ट सहयोग मिलता, यदि हमारे कामों में अड़चनें न डाली जातीं, यदि कांग्रेस कमिटियां जीवित संस्थाएँ

बनी रह कर कांग्रेस की नीति को सफलीभूत बनाने में प्रयत्न शील रहतीं तो उन २७ महीने में कितने साल के कामों का संपादन हो गया होता। वस्तुत: हमें ऐसे उपकरणों से काम लेना पड़ा जिन्होंने हमारे विचारों को सहानुभूति-सूचक दृष्टि से देखा नहीं। उन लोगों का हृदय-परिवर्तन करना कुछ आसान काम नहीं था। उन्हों ने हमारे विचारों के विरोध करने की ही शिक्षा पाई थी। उनकी तालीम अंग्रेजी सरकार को कायम रखने के निमित्त ही हुई थी। अपने देश की सेवा करने का विचार भी व्यक्तिगत रूप में घातक समझते थे। यह सही है कि कुछ लोग हमारे साथ दिल से चलने को तैयार थे, पर उन को डर इस बात का था कि हमारी हस्ती कितने दिनों की है, कब और कैसे इस्तीफा देकर हम चले न जायँ। दिल खोल कर हमारे साथ चलने वालों का पथ कंटकाकीर्ण था। इसे वे अच्छी तरह समझते थे और इसी वजह से हिचकते भी थे। ऐसी परिस्थिति में जो कुछ सफलता हमें मिली वह गांधी जी का पुण्य-प्रताप ही है। इसमें मुझे जरा भी संदेह नहीं कि आज जो मेरा विचार है यह यदि उस समय भी रहता जब कि हम मंत्रिमंडल बनाए हुए थे, तो हमारे कार्यों का रूप कुछ दूसरा ही होता।

इस्तीफे के बहुत दिनों के बाद एक ऐसा अवसर मिला था जब एक जिले के चार बड़े अफसरों के साथ मेरी बातें हो रही थीं। चारो हिंदुस्तानी थे। चारो ने अंगरेजी ठाठ-बाट

की तालीम पाई थी और उसी रास्ते पर चलते रहे थे। उन लोगों ने इस बात को स्वीकार किया कि कितना पैसा उनकी तथा बाहरी दिखावट में खर्च हो जाता है वह बिलकुल अनावश्यक होते हुए भी अनिवार्य हो जाता था क्योंकि उनसे बड़े अफसरों को वे ही चीजें भाती थीं। कांग्रेस-मिनिस्ट्री के साथ कुछ दिन काम करने के बाद इन अनावश्यक वस्तुओं की ओर उनका ध्यान गया था और वे अपने विचारों को बदल रहे थे। धीरे-धीरे उनका ख्याल अपने देशवासियों की तरफ भी जाने लगा था। उनकी वेश-भूषा तथा विचार बदल रहे थे कि कांग्रेस मंत्रिमंडल के इस्तीफे ने उन पर जोर का आघात लगाया। उनको फिर उन्हीं अफसरों का मुँह देखना पड़ेगा जिनके तत्त्वावधान में आज तक उनकी तालीम हुई थी। इस तरह के उद्गार से मुझे जो नसीहत मिलनी थी मैंने लेली। अपनी असमर्थता और अपने देश की पतित अवस्था का ज्ञान इससे अधिक दूसरी मिसालों से नहीं मिल सकता था।

५

बिहार प्रांत में सबसे जरूरी प्रश्न किसानों की दशा का सुधार है। 'जमींदारी प्रथा नाश हो' के नारे से परस्पर घृणा तथा द्वेष का भाव भले ही बढ़ जाय, किसानों की अवस्था में इससे कोई परिवर्त्तन नहीं होने का। बकाश्त के मामले को सुलझाने में किसानों की भीतरी ताकत से मदद पहुँच सकती है, पर उनमें वह ताकत अबतक पैदा नहीं हुई। (१) लगान में

कानून से हो पाई वहाँ भी संभवतः उसे उत्साह से चलाने का रस नहीं नजर आता।

अस्पताल, दवाखाना, आयुर्वेदीय औषधालय तथा होमियोपैथिक दवाइयों का प्रबंध करके रोगियों की सेवा करने तथा उनके कष्ट को दूर करने की ओर भी हमारा ध्यान रहा तथा सभी संस्थाओं में कुछ-न-कुछ सुधार किए गए। यह कोई नई बात थी नहीं, पर हमने एक प्रकार से नवीनता लाने की कोशिश की। मेरा ख्याल रहा है कि सरकार या डिस्ट्रिक्ट बोर्ड सारे सूबे में दवा का उपयुक्त प्रबंध अपने खर्च से कर ही नहीं सकते। कुछ उपाय इसके लिए निकालना आवश्यक था। मैंने सोचा कि जैसे-जैसे डाक्टर, वैद्य, हकीम की तादाद बढ़ती जाय वैसे-वैसे उन्हें मुख्य-मुख्य ग्रामों में बसने को उत्साहित किया जाय। इस उद्देश्य से पहले तीन साल तक उनको पुरस्कार के तौर पर मदद मिले। फीस लेने का उनका हक बना रहे। तीन साल के अंदर यदि वे चतुर होंगे तो आसपास के दिहात में उनका प्रभाव कायम हो जायगा और बाद अपने पैरों पर खड़े होने की ताकत उन्हें हासिल हो जायगी। इस तरह पर जिले के सभी मुख्य स्थानों में किसी-न-किसी तरह की दवा का प्रबंध धीरे-धीरे हो जायगा और जितना रुपया इस मद में खर्च किया जाता था उससे अधिक परिमाण में इस स्कीम के ऊपर खर्च करने के लिए उत्साहित किए जाने के गरज से डिस्ट्रिक्ट बोर्डों को इस रकम का आधा सरकार से देने का निश्चय हुआ। यदि यह स्कीम

ठीक से चलती रही तो आगे चल कर सारे सूबे में वैद्य, हकीम, डाक्टर को बस जाने में सुविधा हो जायगी और दवा के अभाव में किसी को अनावश्यक कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा, यह संभावना की जा सकती है।

जनता के स्वास्थ्य तथा सफाई का मौजूदा तरीका मुझे नापसंद था। जिले में एक हेल्थ-आफिसर और उसके चंद सहायकों द्वारा किसी तरह का नाम लेने लायक भी काम नहीं लिया जा सकता है। हाँ, जहाँ-कहीं संक्रामक रोग हो जाता है वहाँ कुछ हद तक लोगों को मदद पहुँचाने की कोशिश उनके जरिए हो सकती है, पर उनका उद्देश्य तो बीमार होने के सभी कारणों को दूर करना है। जनता को इस बात की तालीम देनी है कि जिन-जिन वजहों से बीमारी फैलती है उनको जान जायँ और उनसे स्वयं बचने के उपाय सोच कर उन्हें काम में लावें। अतएव ८-१० आदमियों से एक जिले के अंदर ४००० से ८००० गाँवों में किसी तरह का उपयोगी काम लेना असंभव है। यह विभाग मेरे जिम्में नहीं था, पर पैसे के लिए इसे भी मेरे पास आना पड़ता था। डिरेक्टर ऑफ पब्लिक हेल्थ से इस विषय पर मेरी बातें हुईं और श्री जगलाल चौधरी ने भी मेरे विचारों का समर्थन किया। मैंने डिरेक्टर को एक स्कीम इसी लाइन पर बनाने को कहा। पैसे की कमी से जितने स्टाफ की जरूरत होती उतना तो रखा जा नहीं सकता, पर जिस कदर पैसे इस विभाग में खर्च किए जाते थे उसे ही मौजूदा हालत में

विशेष रूप से सुधारने में व्यय किया जाना संभव था। जिले के अंदर जितने काम करने वाले हैं भिन्न भिन्न सबडिविजनों में बँटे रहने के कारण कहीं भी ठीक से काम नहीं कर पाते। उन को एक थाना चुन कर उसे ही सर्वांग पूर्ण बनाने के काम में लाया जाय और एक-एक के बाद दूसरे थाने में काम का सिलसिला इसी प्रकार बढ़ाया जाय तो जहाँ भी काम होगा वहाँ उनका टिकाऊ असर पड़ सकता है। इस विचार के अनुसार काम करने की उपयोगिता को डिरेक्टर और मिनिस्टर चौधरी, दोनों ने स्वीकार किया। पर हमारी आदत 'लकीर के फकीर' वाली ऐसी अड़चन पैदा कर देती है कि किसी काम को प्रारंभ करना दुस्तर होता है। यह स्कीम कागज के ऊपर ही रह गई और तब तक हमारा इस्तीफा हो गया।

ग्राम सुधार के विषय में भी मेरा सुझाव उपर्युक्त प्रकार का ही था। जिले के कई भागों में कामों को न फैला कर एक ही स्थान में केंद्रीभूत कर उसे आदर्श बना दूसरे स्थान को हाथ में लेने की सलाह कबूल की गई। पर काम करनेवालों को जिस केंद्र से जोश और उत्साह मिलता हमारे इस्तीफे ने उसे अंत कर

होने की बात कही। वही जिला अफसर यदि काँग्रेस मिनिस्ट्री कायम रहती तो इसकी प्रशंसा का पुल बाँध देते और इसे सर्वांग पूर्ण बताते। इस तरह की घटनाएँ सांसारिक जीवन में होती ही रहती हैं।

ग्राम-सुधार की कोई भी स्कीम तब तक पूरी नहीं हो सकती, जब तक एक ऐसी योजना न बनाई जाय जिससे ग्राम का सारा जीवन संगठित हो नया रुख धारण कर आगे बढ़े। इस काम को *हाथ में—लिया गया।* एक अनुभवी पेंशन याफ्ता अफसर को इस काम पर नियुक्त किया गया। स्वायत शासन-संबंधी सभी साहित्यों को छानबीन कर एक नवीन योजना बनाने की बात सोची जा रही थी। ग्राम को ही केंद्र मान कर ग्रामवासियों के सारे जीवन का संगठन तथा हेरफेर करने का अधिकार धीरे-धीरे ग्रामवासियों के ही हाथों चला आवे, इसी लक्ष्य को पूरा करने के उद्देश्य से इस नवीन योजना को तैयार करना था। इस समय कितने गाँवों का एक सर्कल एक चौकीदारी पंचायत के मातहद रहता है। उसके अंदर एक गाँव में या दो-तीन छोटे गाँवों को साथ कर एक या एक से अधिक चौकीदार रहते हैं। इनका काम पुलिस अफसर तक गाँव के जीवन की रिपोर्ट पहुँचाना है। यों तो चोर डाकुओं से गाँवों की रक्षा करना भी इनके कामों में हैं, पर वह नाममात्र का रह गया है। एक सर्कल के चौकीदारों के ऊपर एक दफादार रहता है। चौकीदारी टैक्स के जरिए पैसा इकट्ठा कर इनके वेतन दिए

जाते हैं। इनका नियंत्रण थानेदार के जरिए होने से गाँव के लोगों से न उनकी सहानुभूति रहती है और न उनके कामों में कोई दिलचस्पी। ये तो थानेदार-सबडिविजनल अफसर-डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट-कमिश्नर-सेक्रेटरी-तथा गवर्नर के साथ एक दूसरे के द्वारा संबंधित रहते हैं। केंद्र से जो आज्ञा निकलती है और बीचवाले हाकिमों के जरिए से गाँवों तक पहुँचती है उसे ही पालन करने के लिए अपने को जिम्मेदार समझते हैं। ग्राम जीवन की सारी बातें उपर्युक्त सिलसिले से ही केंद्र में पहुँचती हैं और उसे ही स्थानीय सरकार की विज्ञप्ति अथवा रिपोर्ट की शक्ल मिल जाती है। इस तरह पर यह काम बंधे हुए रास्ते पर चलता रहता है। इसके स्वरूप में कोई परिवर्त्तन होने की गुंजाइश नहीं होती और न इसकी जरूरत समझी जाती है। गाँव की जिंदगी केंद्र से संचालित होने की वजह से अपने प्राचीन स्वतंत्रता को खोती हुई इस अधोगति पर पहुँच गई है कि लोगों में न नैतिक, न शारीरिक बल का कोई चिन्ह बाकी रह गया है। इस दशा को सुधारना कोई आसान काम नहीं कहा जा सकता। इस गति को उलट कर ही इस में संतोषप्रद परिवर्त्तन लाया जा सकता है। केंद्र की दृष्टि न रख कर

चोरी के बोझ के साथ ही थानेदार का बोझ भी गाँववालों को ही सहन करना पड़ता है। चोरी से छुटकारा पाने के बजाय उस पर एक और असह्य बोझ आ गिरता है। इससे उनकी रक्षा किस प्रकार की जाय। यह तो एक छोटा-सा उदाहरण हुआ। इसी ढँग पर सभी कामों को ले लें। जरा-सी मारपीट हो गई। मुकदमें हुए। गवाह, मुदई, मुदालेह सब गाँव से खिंचकर शहर में पहुँचने लगे। उनका ग्राम्य जीवन नष्ट हो गया। गलत बात कहने की तालीम पाई। पसीने की गाढ़ी कमाई एक दिन में दूसरों के घर पहुँचा आए। आत्म-सम्मान खोया। इसी ढँग पर ग्राम्य जीवन नष्ट होता रहा है और आज तो श्मशान से उसकी तुलना की जावे तो अत्युक्ति, न होगी। इसे उठाने का कार्य कितना मुश्किल है! इसे ही हाथों में लेना था। इसका पिंजर तो विचारों में था पर इसे शब्दों से तथा पुनः कार्य-रूप में चित्रित तथा संपादित करने की कठिनाई सुलझाने में काफी समय लग गया। सुलझ न पाया। विचार का प्रकाशन हुआ अवश्य, लोगों ने उसे पसंद भी किया, पर कानून का रूप देने में इतनी दिक्कतों का सामना करना पड़ा कि लाचार हो धीमे-धीमे चलने को हम बाध्य हुए।

६

मेरा ख्याल था कि कई ग्राम-समूहों का एक मंडल बनाया जाय। सभी बालिग पुरुषों को वोट देने का अधिकार हो। उनके वोट से एक पंचायत बने। दीवानी, फौजदारी सभी

प्रकार के मुकदमें जो डिपुटी मैजिस्ट्रेट या मुंसिफ के पास जात है उन्हें सुनने का अधिकार उनको रहे। पहले पाँच वर्षों तक उनके फैसले को रद्द कर देने का अख्तियार दीवानी के मुकदमों का मुंसिफ को और फौजदारी के मुकदमों का सब डिविजनल अफसर को रहे। दूसरे पाँच वर्ष में उनका अधिकार फैसले को रद्द करने का सीमित रहे और तीसरे पाँच वर्ष में खास परिस्थिति में ही ऐसे फैसलों की अपील करने का अधिकार दिया जाय। सब डिविजनल अफसर और मुंसिफ टूरिंग अफसर रहे। अपने अधिकार से पंचायतों के कामों की निगरानी करें और जरूरत के मुवाफिक स्थान पर ही जरूरी सुधार करने का भी अधिकार उनको रहे। खास-खास मुकदमें की सुनवाई करने का हक उनको शुरू में नहीं रहे, पर वैसे मुकदमें जिला कोर्ट के सामने ही पेश हों। वकील मुख्तार को पंचायत के सामने बहस करने का हक न रहे। हरएक पंचायत के साथ एक मुशाहरा पाने वाला वकील या मुख्तार सलाह देने के लिए रहे। पंचायत के अलावा एक जमात ऐसे लोगों की रहे जिसे उन मुकदमों को सुनने का हक रहे, जिसे वादी या प्रतिवादी पंचायत के सामने पेश होने में उज्र करें। इस जमात में एक तिहाई ग्राम के चुने हुए लोग, एक तिहाई खास खास पेशेवालों के प्रतिनिधि खास तौर पर चुने हुए और एक तिहाई सरकार द्वारा नामजद ऐसे लोग रहें जो विशेषज्ञ समझे जायँ, मसलन पेंशनयाफ्ता जुडिशल अफसर। इस जमात में वादी को एक और

प्रतिवादी को दूसरा पंच चुन लेने का हक रहे और तीसरे पंच को चुने हुए पंच आपस में सलाह कर चुन लें। यदि वे ऐसा करने से अशक्य हों तो सबडिविजनल अफसर फौजदारी के मुकदमे का और मुंसिफ दीवानी के मुकदमें का तीसरा पंच इस जमात से चुन दें। इनलोगों के फैसले की अपील बहुत खास वजह में ही होवे। इस प्रकार ग्राम के लोगों का मुकदमें की वजह से शहर में खिंचते रहना रुक जायगा और सबडिविजन में वकील मुखतार रहने की जरूरत भी नहीं के बराबर हो जायगी। मौजूदा वकीलों को सरकारी नौकरी मिल जायगी। और आइंदे उनकी तादाद सिमित रहेगी ही।

ग्राम पंचायत को मुकदमों के अलावे और ग्रामजीवन से संबंध रखने वाली सभी चीजों से ताल्लुक रहा करेगा। मसलन डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के स्कूल, अस्पताल इनके ही मातहद रहेगा। लोकल बोर्ड तोड़ दिया जायगा। लोकल बोर्ड की स्थानीय सड़कों की मरम्मत अपने अपने हल्के का इनके ही मातहद रहेगा। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के ओवरसियर या इंजिनियर इस काम में इनको मदद पहुँचायेंगे। चेयरमैन को डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के कामों को निरीक्षण का अधिकार रहेगा। कृषि विभाग, ग्रामसुधार-विभाग, पशु चिकित्सा, जनता के स्वास्थ्य, कोओपरेटिव, प्रारंभिक शिक्षा-विभाग आदि गाँवों से संबंध रखनेवाले सभी विभागों को इनसे ही संबंध रहेगा और इन कामों में मदद देने के लिए एक वेतन-भोगी अफसर हर पंचायत के साथ रहेगा। आबपाशी का

प्रबंध भी इस पंचायत की ग्राम-शाखा के द्वारा हुआ करेगा। गरज जितनी चीजें गाँवों से संबंध रखती हैं सभी का केंद्र ग्राम के अंदर ही पंचायत तथा उसके सहायकों के जरिए चलेगा। चौकीदारों की तादाद घटा दी जायगी। दफादार नहीं रहेगा। पुलिस अफसर को पंचायत के वेतनभोगी सहायक से ही संबंध रहेगा। ग्राम रक्षा के निमित्त एक स्वयंसेवक दल गाँव में रहेगा। नियम से रात को पहरा देने का काम उनसे लिया जायगा। पंचायत से उनको पोशाक मात्र मिलेगी। हरएक नवयुवक को जिसकी उम्र १८ वर्ष से ज्यादा और ४० से कम होगी, इस स्वयं-सेवक-दल में काम करना अनिवार्य होगा। समय समय पर जिले भर के पंचों का एक सम्मेलन हुआ करेगा और अपने-अपने अनुभव को मद्देनजर रखते भावी कार्यक्रम पर तजवीज करने का हक उन्हें रहेगा। इस प्रकार गाँव के सारे जीवन की गति बदल देने का काम इस स्कीम से लिया जायगा। मैं नहीं जानता कि इस चित्र को कितनी दूर तक लोग पसंद करते, पर मुझे उमीद थी कि कुछ रद्दोबदल के साथ यह सर्वमान्य हो सकता था।

७

जमींदारों की ओर से इस बात की शिकायत पहुँचने लगी कि उनको लगान वसूलने में कठिनाई हो रही है और सरकार की ओर से उनकी सहायता नहीं की जाती।

देने की कार्रवाई चलती रहने के कारण भी वसूली में दिक्कत पैदा हो गई थी। कितने जिलों में, खास कर पलामू तथा मानभूम में, लगान की दर हल्की होते भी छूट सैकड़े ५० से ६० तक कानूनन दी जा रही थी, इससे जमींदारों में असंतोष होना स्वाभाविक था। इन सब बातों पर विचार कर 'कोर्ट ऑफ वार्डस ऐक्ट' में सुधार करने का निश्चय किया गया। इसका एकमात्र उद्देश्य यह था कि जहाँ कहीं जमींदारों को उपर्युक्त कठिनाइयों का सामना करना पड़े अथवा जमींदारों के बीच घराऊ झगड़े की वजह से या किसी खानदान की नाजायज हरकतों से जमींदारी में नुकसान होती दिखाई पड़े उस स्थिति में इस तरह की जमींदारी 'कोर्ट ऑफ वार्डस' के मातहद ले ली जाय। किसानों को भी इससे सुविधा प्राप्त हो जाती और जमींदारों की शिकायतें भी बहुत अंश तक दूर हो जातीं। हथुआ महाराज की हरकतों से भी इस तरह के कानून में संशोधन की आवश्यकता स्पष्ट हो गई थी। अतएव जरूरी तरमीमों के साथ कानून तो बन गया, पर उसे काम में लाने के पहले ही हमारा इस्तीफा हो जाने से अपने लक्ष्य को पूरा करने में काँग्रेस मिनिस्ट्री कामयाब न हुई।

उपर्युक्त पंक्तियों में यह बताने की कोशिश कर चुका हूँ कि काँग्रेस मिनिस्ट्री अपनी २७ महीने की जिंदगी में प्रांत के सभी तरह के कामों को हाथ में लेने तथा उनमें समुचित परिवर्त्तन करने के लिए प्रयत्नशील रही। शिक्षा के विषय में

एक कमिटी की स्थापना हो चुकी थी और उसमें आवश्यक सुधार के लिए उसकी रिपोर्ट का इंतजार किया जा रहा था। रिपोर्ट अब छपी है। घटाने और आय बढ़ाने की तदबीर सतत की जाती रही। इन सब कार्यों की पूर्ति न हो सकने से ऐसा कहना पड़ता है कि सारा काम अधूरा ही रह गया, पर प्रारंभिक अवस्था समाप्त कर पग आगे बढ़ाया जा रहा था, इसमें संदेह नहीं।

८

कांग्रेस मिनिस्ट्री ने जब इस्तीफा दिया तब मैं, उन दिनों, अस्पताल में ही था और इस्तीफा के बाद भी सारा नवंबर अस्पताल में ही रहा। दांतों के तोड़वा देने के कारण बाहर कहीं जाना भी संभव नहीं था। मन में कुछ ऐसी अशांति का बोध करता था कि कहीं जाने की इच्छा भी न थी। मनोमालिन्य इस हद तक प्रवेश कर चुका था कि उसे निकाल फेंकना भी आसान नहीं रहा। उस समय हमारी खातिरदारी कम होने लगी थी, पर जनता के मन में या अफसरों की नजर में हम भावी मिनिस्टर के रूप में अभी भी देखे जाते थे। कितने दर्शकों का आना-जाना इस वजह से भी जारी रहा। ज्यादातर तो हमें अपनी शिकायतों को ही सुनना पड़ता था। किसी न किसी रूप में वे हमारे सामने आही जाती थीं। बड़े-छोटे सब तबके में हमारे कारनामों के ऊपर स्वतंत्र विचार रखनेवालों की कमी रहते हुए भी अपने अपने नजर-अंदाज के मुवाफिक अपनी

धारणा कायम करने वाले काफी संख्या में मौजूद थे और अपने भावों प्रदर्शित करते थे।

इसी समय से रामगढ़ काँग्रेस की ओर हमारा ध्यान जाने लगा। सरकार ने लड़ाई छिड़ जाने के कारण भी कोई ऐसा रुख नहीं बदला जिससे काँग्रेस होने में किसी तरह की रुकावट की संभावना की जा सके। राजेंद्र बाबू को इसे सफल बनाने की फिक्र थी और वे इसके लिए चिंतित रहा करते थे। जाड़े के मौसम में उन्हें खाँसी हो जाती थी। उनका प्रारंभ भी होने लगा था। राष्ट्रपति होने के नाते उन्हें वर्धा से संसर्ग विशेष रूप में पड़ता था। श्री अंबिकाकांत सिंह के हाथों रामगढ़ का कार्य सुपुर्द हो गया था और वे अपनी शक्ति के अनुसार उसे चला भी रहे थे, किंतु जबतक सारे प्रांत के कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओं का सहयोग उन्हें नहीं उपलब्ध होता तबतक कार्य में सहूलियत मिल सकना संभव नहीं था। राजेंद्र बाबू की इच्छा थी कि सरकार के कामों से फुरसत पाए हुए लोग इस कार्य में दिलचस्पी लें और इसे उन्होंने कई बार कहा भी था। इस स्थिति में भी हमलोगों का दिल उस ओर नहीं जा सका। मेरा मन तो दुखी था ही। मैं चाहता था कि इन कार्यों में अपनी इच्छा से मैं कुछ भी न करूँ। राजेंद्र बाबू ने मेरे प्रति कोई खास आज्ञा नहीं निकाली थी। अतः मैं भी इस ओर विशेष रूप से कुछ करने को जवाबदेही महसूस नहीं करता था। विशेषतः वर्किंग कमिटी के कुछ सदस्यों के रुख से मुझे इतनी

अश्रद्धा हो गई थी कि किसी भी कार्य में उनके साथ होना मेरे लिए असंभव-सा दीखता था। हाँ, धीरे-धीरे मेरे ये भाव कमजोर होते गए। मैंने सोचा कि नए दाँतों के बनने के बाद ही मैं पटने से बाहर जाने लायक हो सकूँगा, इसलिए मैं ऐसी स्थिति की प्रतीक्षा में भी था। १५ दिसंबर १६३६ के बाद मुझे बाहर जाने के योग्य ताकत मालूम होने लगी। इस बीच में राजेंद्र बाबू बीमार होकर वर्धा में ही रुक गए। उनकी चिट्ठी आई कि मैं रामगढ़ के कार्यों में हाथ बटाऊँ। वहाँ काम करने वालों की एक विशेष बैठक बुलाई गई और लोगों ने मेरे जिम्मे वहाँ के कार्यों के निरीक्षण करने का भार दिया। किंतु, इससे कोई खास जवाबदेही मेरे ऊपर नहीं आई। रामगढ़ के सहयोगियों का भी यही ख्याल था कि मेरा काम केवल उन्हें सलाह मशविरा भर ही देना था। रुपए की जब कभी कमी होती, अंबिका बाबू राजेंद्र बाबू को लिखा करते थे। इस ढंग से इसका असर उन पर होता था और इससे उनकी घबराहट बढ़ जाती थी। उनकी एक चिट्ठी मेरे पास इस आशय की आई कि बीमार रहते भी वे सतत रामगढ़ के लिए चिंतित रहते हैं। मेरा स्वास्थ्य अच्छा नहीं था, यह भी उन्हें विदित था। केवल प्रश्न इसी बात का था कि या तो वे स्वयं रामगढ़ चले आवें या मैं वहाँ जाऊँ! अगर मैं वहाँ न जा सका तो बीमारी की हालत में भी उनको वहाँ जाना ही पड़ेगा। इस चिट्ठी के मिलने पर मेरे लिए कोई दूसरा रास्ता नहीं रह गया। मैंने उन्हें चिट्ठी

लिख दी कि मैं वहाँ जा रहा हूँ, उन्हें कष्ट करने की जरूरत नहीं।

मेरा अपना विचार था कि प्रांत में कांग्रेस के कामों में सहूलियत पैदा करने के लिए प्रांतीय कांग्रेस कमिटी का नया चुनाव आपसी सलाह तथा मेल-मिलाप के साथ हो। मैंने इसके लिए प्रयत्न भी किया। चुनाव के एक दिन पहले श्रीबाबू से मिल कर मैंने तय किया था कि इस वर्ष के चुनाव में दलबंदी के स्थान पर परस्पर सद्भाव का ही प्रदर्शन हो, इस नजर से कुछ मुख्य लोग आपस में मिलकर प्रांतीय कांग्रेस वर्किंग कमिटी के सदस्यों के नाम पहले से ठीक कर लेवें और उसी के अनुसार चुनाव कराने में प्रयत्नशील हों। एक सूची सर्वसम्मति से बनाई गई। उसी सूची को कमिटी में स्वीकार कराने की बात भी तय पाई।

समय बहुत कम बच गया था। एक घंटे के बाद ही प्रांतीय कमिटी की बैठक होनेवाली थी। मालूम नहीं, किसने कितना प्रयत्न किया! पर जब बैठक हुई तब ऐसा मालूम पड़ा कि दलबंदी का जोर पहले जैसा ही हो रहा है। मुजफ्फरपुर, मुंगेर, सारन, चंपारन का एक भाग, पूर्णियाँ और भागलपुर का एक अंश समझौते के विरुद्ध वोट दे रहा था। मथुरा बाबू का नाम सहायक मंत्री में था। उनके स्थान पर देवव्रतजी चुने गए। कृष्णवल्लभ बाबू के स्थान पर मौ० अजादी तथा एक दूसरे सज्जन चुन लिए गए। इस तौर पर समझौते का सारा

प्रयत्न विफल हुआ। इस प्रदर्शन के आंतरिक भावों पर विचार किया जाय तो पता चलेगा कि डिस्ट्रिक्टयों के ही कारण सदस्यों का यह रुख रहा था। संभवतः मिनिस्ट्री फिर लौटे, इस ख्याल से भी कुछ लोग प्रेरित हुए हों तो आश्चर्य नहीं। चुनाव की समाप्ति के बाद ही मैं रामगढ़ काँग्रेस में लग गया और इस असफलता को एकदम भूल जाने की कोशिश की।

मेरा जहाँ तक ख्याल है, दिसंबर समाप्त होने के पहले ही मैंने वहाँ के कार्य में दिल-जान से लग गया था। बिना रुपए के नगर-निर्माण का कार्य तीव्रगति से चलना संभव नहीं था। जिले के नेताओं के नाम गश्ती पत्र लिखे जिनमें प्रार्थना की कि वे अपने वादा के मुताबिक रकम जमा कर दें। श्रीबाबू और मैं जिला जिला भ्रमण कर रुपया चंदा करने के प्रयत्न में लगे। अभी हाल में ही मंत्रीपद पर रहने के कारण हमारे साथ पुराने प्रभाव के कुछ संस्मरण थे, इस वजह से भी हमारी तलबी जिले-जिले से होने लगी। मेरे लिए राँची, धनबाद, गया का एक भाग, पटना, छपरा, मोतीहारी, दरभंगा आदि जिलों में जाना निश्चय किया गया था। साथ ही रामगढ़ में रहकर वहाँ के कार्यों का निरीक्षण तथा संचालन करने की जवाबदेही धीरे-धीरे मेरे हाथों में ज्यादा आने लगी। स्वागत-समिति का अभी तक बाजाप्ता चुनाव नहीं हुआ था। सदस्यों की संख्या काफी बढ़ जाने पर ही चुनाव करने की बात निश्चित की गई थी। हमलोगों के मंत्रित्वकाल में ही राजेंद्रबाबू के साथ श्रीरामनारायण सिंह

और श्री मथुरा प्रसाद ने कई जिलों का दौरा कर कांग्रेस के लिए दान की रकम ठीक कर ली थी, किंतु उसकी वसूली कुछ ही मात्रा में हो सकी थी। इस कार्य को पूरा करना रखा हुआ था। काम सुचारु रूप से चलने लगा। श्रीजगलाल चौधरी को मैंने बुला कर हिसाब-किताब उनके जिम्में लगाया। बिहार-भूकंप के बाद भी उनसे हिसाब विभाग में काम लिया गया था और मुझे पूरा भरोसा था कि उनकी देख-रेख में यह काम होगा तो मुझे पूरा इतमीनान रहेगा। श्रीरामजी वर्मा हाल में ही इंजिनियर होकर विलायत से लौटे थे। कांग्रेस-प्रेमी होने के नाते और कांग्रेस-इंजिनियर गुलाटीजी की अनुपस्थिति में नगर-निर्माण-कार्य उनके हाथ ही सुपुर्द हुआ। नवयुवक के अलावे उनमें ऐसे कार्यों के निमित्त उत्साह की कमी थी ही नहीं। श्रीरामेश्वरनारायण अग्रवाल गया कांग्रेस में महेंद्रबाबू के सहायक की हैसियत से काम कर चुके थे। भोजन-विभाग का कार्य उनके जिम्में था ही, उसे ही पूर्ण दायित्व के साथ संपादन के लिए उन्हें विशेष उत्साहित किया गया। खादी प्रदर्शनी लक्ष्मीबाबू के जिम्में रहना ही था, क्योंकि कांग्रेस का एक अंग रहते हुए भी इसका प्रबंध स्वतंत्र-रूप से चर्खा-संघ के द्वारा होना चला आता था। कांग्रेस में एक नवयुवक के नाते श्रीश्यामा प्रसाद सिंह को स्वयंसेवक के बीच काम करना पड़ा था। इस काल तक वे काफी अनुभवी भी हो चुके थे अतः स्वयंसेवकों की निगरानी का भार उन्हीं के हाथ रहा। इस ढंग पर रामगढ़

कांग्रेस का कार्य चल रहा था मेरे हाथों इसका भार आया। अंबिका बाबू पहले के ही समान सभी कार्यों की देख-रेख करते रहे। मैं जिले-जिले में घूम कर पैसा उठाता और बीच बीच में रामगढ़ आकर सलाह देता रहा।

स्वागत-समिति के संगठन की चर्चा अभीतक नहीं हो सकी। वह आघात पहुँचनेवाली ही पीछे चलकर सिद्ध हुई। कितने लोगों को संदेह था कि स्वागताध्यक्ष के लिए मैं उमीदवार होऊँ। अखबार में इस संबंध में बातें भी आई थीं। मेरे कथन पर जब इस ढंग की बातें नहीं चलीं तब श्रीबाबू या रामनारायण बाबू स्वागताध्यक्ष चुने जायँ, यही चर्चा होने लगी। कांग्रेस में दलबंदी की वजह से मैं उसके अंदर किसी पद को लेना नहीं चाहता था, पर जब स्वागत-समिति के कार्यों की देखभाल का दायित्व आया तब भी स्वागताध्यक्ष के पद के लिए अपने को मैं योग्य नहीं समझ सका। स्वागत-समिति की बैठक मैंने स्वागताध्यक्ष के लिए श्रीबाबू का नाम प्रस्तावित किया। बहुत मेंबरों की राय भी मैंने अनुकूल देखी, पर श्रीबाबू ने यह कह कर कि रामनारायण बाबू को इससे बदगुमानी होगी, इस पद को ग्रहण करने से इनकार किया और राजेंद्रबाबू ही उक्त पद को ग्रहण करें, ऐसा हो बताया। राजेंद्रबाबू ऐसा चाहते नहीं थे, पर उन्हें सब के आग्रह को टाल सकने की हिम्मत नहीं हो सकी। प्रधान मंत्री के लिए केवल मेरा ही नाम आया और जब सभी कार्यों को मुझे संभालना ही था तब उसे अनिवार्य

रूप में ग्रहण करने पर राजी हुआ। स्वागत-समिति के कार्य आठ विभागों में बाँटे गए और प्रत्येक विभाग के लिए एक एक मंत्री चुन दिए गए। इस ढंग से चुनाव का कार्य संपन्न हुआ ऐसे ही काल में श्रीबाबू ने सद्भाव से प्रेरित हो मुझ से कहा कि कांग्रेस-अधिवेशन के बाद हम दोनों आदमी सूबे भर का दौरा करें। वाम-पंथियों का जो रुख होता जाता है उसका उचित विरोध करना जरूरी है। मेरा सहयोग उनको इसलिए भी पसंद था कि मेरे साथ रहने से उनको इतमीनान रहेगा। यों तो उनके सवालों का जवाब देने के लिए श्रीबाबू काफी थे ही, पर इन बातों को सुनकर मेरा चित्त अत्यंत गद्गद् हो गया था और मैं आनंद से उस दिन का इंतजार कर रहा था जब हम दोनों एक साथ सूबे भर का परिभ्रमण करते। दुर्भाग्यवश वह दिन आया ही नहीं। विविध कार्यों में उलझ जाने के कारण सूबे का दौरा करने का प्रस्ताव कार्य रूप में परिणत नहीं हो सका।

चुनाव तो आनंदपूर्वक समाप्त हो गया, पर दूसरे ही दिन एक आश्चर्यजनक कांड उपस्थित हुआ। रात में श्रीरामनारायण सिंह हजारीबाग वापस चले गए थे। राह में लोगों ने उन्हें बहुत तरह की बातें कहीं। उनके दिल में क्षोभ उठाने का प्रयत्न किया गया! उनसे कहा गया कि छोटानागपुर में कांग्रेस होने की वजह से यहीं के लोगों में किसी को स्वागताध्यक्ष होना चाहिए था। राजेंद्र बाबू का नाम पेश कर उनको उक्त पद से हटा देने का अनुचित प्रयत्न हुआ। दूसरे दिन

रामनारायण बाबू रामगढ़ लौटे। उन्हों ने यहाँ अपने क्षोभ को प्रकट किया। राजेंद्र बाबू को इस बात से अत्यंत ही कष्ट पहुँचा। मैंने रामनारायण बाबू के प्रति सहानुभूति दिखला कर उनके क्षोभ को शांत करने का प्रयत्न किया, पर उन्हें जब प्रभावित नहीं कर सका तब उनके प्रति मेरे हृदय में अश्रद्धा उत्पन्न हो उठी। इस स्थिति में भी उनकी दुर्भावना को निकालने का मैंने प्रयत्न जारी रखा और कुछ ही समय बीतने पर उसमें सफलता भी मिली। उनके मन में शांति आई और फिर तो जोश एवं उत्साह के साथ वे कार्य में लग गए।

उपर्युक्त ढँग पर रामगढ़ का कार्य चलने लगा। मैं फिर एकबार इसमें लीन हो गया। दुनियाँ को भूल गया। किस तरह रामगढ़ का कार्य सफल हो, केवल इसी उधेड़बुन में लगा रहता था। जनवरी, फरवरी और मार्च के तीसरे सप्ताह तक यह काम खूब जोरों से चलता रहा। कॉंग्रेस-अधिवेशन १८ मार्च को होने वाला था। महात्मा जी दो-चार दिन पहले ही आने वाले थे। अतः स्वयंसेवकों का प्रबंध उस समय के पहले ही पूर्ण रूप से हो जाना चाहिए था। स्वयंसेवकों को बुलाने का कार्य मार्च के शुरू से ही आरंभ हो गया। कॉंग्रेस अधिवेशन होने के पहले एक रात बहुत जोर से वर्षा हुई। राजेंद्र बाबू वहीं थे। उनकी तबियत बिल्कुल अच्छी नहीं थी। १२ बजे से २ बजे रात तक पानी बरसता रहा। वे चुपचाप बैठ कर दुखी हो रहे थे। हमलोग एक पक्के के मकान में रहा

६

पाँच बजे शाम से कांग्रेस का अधिवेशन होनेवाला था। हवाई जहाज पंडाल के ऊपर मँड़रा कर निकल चुका था। अपार जनता की भीड़ एकत्र हो रही थी। पंडाल आदमियों से भर चुका था। बड़े-बड़े नेता-लोगों की आमद जारी थी। महात्मा जी तथा राष्ट्रपति मौलाना आजाद जाने की तैयारी कर ही रहे थे। मैंने 'पास' देने का निषेध कर दिया था। हाँ, किसानों के लिए आधे मूल्य पर, ।।) का टिकट देने का प्रबंध कर दिया गया था। आदिवासियों के साथ खास रियायत करने के ख्याल से उन सबों को पाँच बजे बुलाया था, केवल इसी ख्याल से कि उन्हें अपने साथ ले जाकर विना टिकट अंदर प्रवेश करा दूँगा। मैं इसी उद्देश्य से गेट की ओर जा रहा था, उन्हें साथ चलने को कहा भी था। गेट पर पहुँचा नहीं कि जोर से वृष्टि प्रारंभ हुई। मेरे लिए आगे बढ़ना असंभव-सा हो गया। मैं पीछे लौटा। किसी ने मुझे सहारा देकर आफिस तक पहुँचा दिया। पानी बरसना बंद न हुआ। मुझे इस बात की फिक्र होने लगी कि मैं तो आफिस में बैठा रहूँ और सारी जनता पानी में भींजती रहे, बच्चे सब कष्ट उठाते रहें, पर मेरे पैर कमजोर थे। पानी में चलना मेरे लिए मुश्किल था, मैं बैठा नहीं रह सका। एक छाता या कंबल लेकर मैं भी पंडाल पहुँचा। वहाँ का दृश्य बड़ा ही करुणा-पूर्ण था। बच्चों और औरतों की बड़ी ही बुरी हालत हो रही थी। लोग बैठने की

चटाई माथे पर रख कर पानी से बचने की कोशिश कर रहे थे। धीरे-धीरे पंडाल के पार्श्ववर्ती स्थानों में पानी इकट्ठा होने लगा। चड़ी नाली बंद कर दी गई। लोगों से वहाँ से धीरे-धीरे बाहर चलेजाने के लिए अनुरोध किया गया। कुछ देर में पानी का जोर कुछ कम हुआ। राजेंद्र बाबू ने स्वागत-समिति की ओर से अभिवादन किया। श्री जवाहरलालजी ने सभापति का नाम पेश करते हुए लोगों को अपने स्थान पर डटे रहने के लिए उत्साहित किया। मौलाना ने बैठक को स्थगित करते हुए दूसरा समय अधिवेशन के लिए घोषित किया।

हमलोगों का सारा परिश्रम विफल मनोरथ जैसा हो रहा था। प्रकृति के ऊपर किसी का आदेश कुछ काम नहीं आता। झोपड़ियों की बुरी हालत थी। घर के नीचे बाहर का पानी जमा था। बैठने योग्य भी स्थान नहीं रहा। चारपाई पर सामान रख बैठे-बैठे लोगों ने अपना समय काटा। कितने घंटों तक भगदड़ बनी रही। जिनके पास सवारियाँ थीं वे तो रांची, हजारीबाग या दूसरे स्थानों के लिए रवाने हो गए। रेलवेवालों की ओर से भी व्यवस्था की गई। बहुत से स्पेशल ट्रेनों का प्रबंध हुआ और २४ घंटों के अंदर ही रामगढ़ की सारी भीड़ एक प्रकार से समाप्त हो गई। दूसरे दिन कांग्रेस का अधिवेशन विसर्जन कर दिया गया। दो दिनों के अभ्यंतर ही सारे कैंप करीब-करीब खाली हो गए। जिस साहस और कष्ट सहिष्णुता के साथ लोगों ने दैवी आघात का मुकाबला किया उसकी प्रशंसा

कर वहाँ का कार्य खतम किया गया।

• रामगढ़ कांग्रेस के स्थान पर इटालियन कैदियों के रखने का प्रस्ताव सुना था। पहले यह बात गुप्त रही। अभी उसी स्थान पर एक बड़ा फौजी कैंप खड़ा है। हजारों की तादाद में सिपाहियों के कैंप के साथ ही एक छोटा नगर बन गया है।

१०

अप्रेल महीने के अंतिम सप्ताह में सोनपुर में सत्याग्रह-शिविर खुला। मैं उस ओर जाने के लिए उत्साहित नहीं होता था, पर अंत में वहाँ जाना ही निश्चित किया। एक सप्ताह तक सत्याग्रह के सभी नियमों का पालन किया। ड्रील तक करना चाहा, पर एक-दो दिनों के बाद ही मेरे पैर कमजोर होने की वजह से दुखने लगे, पर और सब कामों में किसी तरह की अड़चन उसकी वजह से नहीं पड़ी।

एक सत्याग्रही ने मुझसे एक दिन कहा कि मैं एक नवीन दल कायम करूँ और खास व्यक्तियों के नाजायज प्रभुत्व को रोकने की चेष्टा करूँ। मैंने सोचने के लिए समय माँगा। दूसरे दिन मैंने कहा कि ऐसा करना अनुचित होगा। सत्याग्रह सप्ताह में ही यह बात साफ झलकने लगी कि, हममें से बहुतेरे सत्याग्रह-शिविर में इस लिए शामिल हुए कि वैसा नहीं करने से कांग्रेस कमिटियों में उनका स्थान दूसरों की अपेक्षा (सत्याग्रहप्लेज पर दस्तखत करने वालों से) निम्नतर हो जाने का भय था। परस्पर इसकी आलोचना भी होने लगी। अमुक व्यक्ति को

जितनी भी की जाय थोड़ी ही होगी।

रामगढ़ कांग्रेस को सफल बनाने में मुझे कठिन परिश्रम करना पड़ा था। चार-पाँच दिनों तक में एक ही बार खाता करता था। सुबह आफिस में आ जाता तो रात को १२ बजे के पहले काम से छुट्टी नहीं मिलती थी। मेजर भार्गव और कैप्टेन नाथ कांग्रेस अधिवेशन के समय रामगढ़ आए थे और मुझे इस तरह बिना भोजन किए काम में व्यस्त देख कर नारंगी या अनार का रस पिलाने के लिए मेरे सहयोगियों को ताकीद कर दिया था। इतना होने पर भी मेरा स्वास्थ्य, जबतक कांग्रेस के कार्य से रामगढ़ में रहा, अच्छा ही रहा।

रामगढ़ कांग्रेस का काम समाप्त हो गया। नगर-निर्माण में कितने महीने लगे और अब उसे तोड़ने का कार्य प्रारंभ हुआ। यह भी कठिन ही काम था। बनाने के वक्त लोगों का सहयोग मिलता है, तोड़ने में मिलता ही नहीं। मैंने चाहा कि अपने सामने ही सभी काम समाप्त करा दूँ, पर एक सप्ताह तक वहाँ रहने पर भी अंत नजर आता नहीं दीख पड़ा। मैं कुछ ही दिनों के लिए पटना गया। वहाँ से शीघ्रही लौट आने की बात थी, पर वहाँ जाने पर बीमार हो जाने के कारण ऐसी कमजोरी हो आई कि फिर लौटने की हिम्मत नहीं हो सकी। वहाँ का का शेष कार्य रामजी और प्रयाग बाबू पर छोड़ देना पड़ा। केवल चिट्ठी-पत्री से सलाह देता रहा। बीच में एक-दो दिनों के लिए वहाँ गया भी। किसी तरह बची-खुची वस्तुएँ बिक्री

कर वहाँ का कार्य खतम किया गया।

रामगढ़ कांग्रेस के स्थान पर इटालियन कैदियों के रखने का प्रस्ताव सुना था। पहले यह बात गुप्त रही। अभी उसी स्थान पर एक बड़ा फौजी कैंप खड़ा है। हजारों की तादाद में सिपाहियों के कैंप के साथ ही एक छोटा नगर बन गया है।

१०

अप्रेल महीने के अंतिम सप्ताह में सोनपुर में सत्याग्रह-शिविर खुला। मैं उस ओर जाने के लिए उत्साहित नहीं होता था, पर अंत में वहाँ जाना ही निश्चित किया। एक सप्ताह तक सत्याग्रह के सभी नियमों का पालन किया। ड्रील तक करना चाहा, पर एक-दो दिनों के बाद ही मेरे पैर कमजोर होने की वजह से दुखने लगे, पर और सब कामों में किसी तरह की अड़चन उसकी वजह से नहीं पड़ी।

एक सत्याग्रही ने मुझसे एक दिन कहा कि मैं एक नवीन दल कायम करूँ और खास व्यक्तियों के नाजायज प्रभुत्व को रोकने की चेष्टा करूँ। मैंने सोचने के लिए समय माँगा। दूसरे दिन मैंने कहा कि ऐसा करना अनुचित होगा। सत्याग्रह सप्ताह में ही यह बात साफ झलकने लगी कि, हममें से बहुतेरे सत्याग्रह-शिविर में इस लिए शामिल हुए कि वैसा नहीं करने से कांग्रेस कमिटियों में उनका स्थान दूसरों की अपेक्षा (सत्याग्रहप्लेज पर दस्तखत करने वालों से) निम्नतर हो जाने का भय था। परस्पर इसकी आलोचना भी होने लगी। अमुक व्यक्ति को

सत्याग्रह में विश्वास नहीं है। तौभी इसमें वह शामिल हो रहा है ताकि वह पीछे न पड़ जाय। ऐसा जान पड़ता था कि कांग्रेसियों का दिमाग इतना दूषित हो गया था कि उन्हें किसी-न-किसी स्थान को प्राप्त करने अथवा प्राप्त स्थान की रक्षा करने के सिवा देश-सेवा, स्वराज्य, पूर्ण-स्वतंत्रता आदि ध्येय उनके लिए गौण पदार्थ हो गए हों। सत्याग्रह इस वातावरण को, इस मिथ्याचार को उत्तेजित करने में सहायक ही हुआ इसे दूर करने में यह सर्वथा असमर्थ रहा।

आरंभ में मैं सत्याग्रह-शिविर के जीवन क्रम को देख कर बहुत प्रभावित हुआ था। समझा था कि एक नवीन युग का अवतरण हो रहा है, पर कुछ ही दिनों के बाद मेरी आँखें खुलने लगीं और जैसे-जैसे सत्याग्रह-शिविर जिले-जिले में खुलने लगे दलबंदी की बू उनसे निकलने लगी। मुझे कितने स्थानों में चलने का निमंत्रण मिला। कुछ जगहों में मैं गया भी, पर सभी निमंत्रणों का पालन करने में अपने को असमर्थ पाया। कुछ आंतरिक कमजोरी, कुछ साथियों का बुद्धि-भेद, कुछ सत्याग्रह के असली तत्त्वों से अनभिज्ञता आदि कितने कारण-वश उन दिनों में एक तरह से उदासीनता का जीवन व्यतीत कर रहा था। फिर भी मुझे सफर कम नहीं करना पड़ा। शायद ही किसी हफ्ते में पटने में स्थिर बैठा रहा होऊँ।

११

यूरोपीय युद्ध के प्रति वर्किंग कमिटी का रुख दिन-प्रति

दिन कड़ा होता जाता था। दिल्ली में जो बैठक हुई उसमें राष्ट्रीय सरकार बनाने के पक्ष में प्रस्ताव स्वीकार किया गया। महात्माजी को बराबर इस बात का संदेह बना रहता था-कि कांग्रेस में अहिंसा के प्रति सिर्फ बाहरी प्रेम रखनेवाले हैं। उसकी सचाई को मान्ननेवालों की संख्या थोड़ी ही है। उनका बराबर जोर इस बातें पर रहा कि इसके बारे में साफ साफ बातें तँय हो जायँ। लड़ाई में सरकार की मदद किसी तरीके से हम करना चाहते हैं उसे साफ शब्दों में कह दें। उनका ख्याल बराबर यही रहा है कि काँग्रेस सिवा नैतिक सहायता के और कुछ नहीं दे सकती। लड़ाई में आदमी से अथवा सामान से मदद देने के लिए अपनी अहिंसा का ध्येय रखते हुए हम तैयार नहीं हैं। महात्माजी ने इस दृष्टिकोण पर वर्किंग कमिटी की राय जानने के लिए मजबूर किया। लाचार बाहरी दुश्मनों से हिंसा द्वारा भी मुकाबला करने के लिए अपनी राय वर्किंग कमिटी की बहुमत ने बताई। वर्किंग कमिटी के इस प्रस्ताव को पूना में अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी ने कबूल भी कर लिया। मैं अखिल भारतीय काँग्रेस कमिटी, तथा प्रांतीय काँग्रेस कमिटी से हट गया था, इसलिए उसमें शरीक होने की मेरे लिए कोई बात थी नहीं।

मैं ६ बजे संध्या को रेडियो सुन रहा था। उसी समय यह खबर आई कि राष्ट्रीय सरकार बनाने का प्रस्ताव कबूल हुआ और महात्माजी काँग्रेस से अलग हो गए हैं। मेरे साथ ही

एक उच्च पदाधिकारी सरकारी अफसर बैठे हुए थे। महात्माजी का कांग्रेस से हटने की बात सुन कर मुझ पर तथा उन पर एक ही तरह की प्रतिक्रिया हुई। कुछ क्षण के लिए हमलोग स्तब्ध से हो गए। पीछे धीरे-धीरे अपने को राजी कर लिया। जब राजेंद्र बाबू से इस विषय पर चंद दिनों के बाद बातें हुईं तब मैंने कहा कि यदि सरकार इस प्रस्ताव को स्वीकार कर ले तो जो सरकार बनेगी वह गांधीवादियों को अहिंसा का प्रचार करने की इजाजत दे देगी और जबतक अहिंसक फौज न तैयार हो जाय तबतक मौजूदा से काम लिया जाता रहेगा। जैसे ही नई शक्ति बढ़ती जायगी अथवा जिस हद तक उसका संगठन हो जायगा उस हद तक हिंसा वाली शक्ति हटती चली जायगी। इस पर उन्हों ने कुछ कहा नहीं, पर मैंने समझा कि शायद वे इस पर सोचना चाहते हों या इसे व्यावहारिक नहीं समझते हों।

पूना प्रस्ताव पर जब सरकार ने अमल नहीं किया तब वर्किंग कमिटी और अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी ने बंबई में सत्याग्रह छेड़ने का प्रस्ताव किया और महात्मा गांधी से नेतृत्व ग्रहण करने के लिए पुनः आग्रह किया। महात्मा जी ने इसे कबूल कर अपना सत्याग्रह प्रोग्राम मुल्क के सामने पेश किया। महात्मा जी बराबर ही इस पर जोर देते आ रहे थे कि इस युद्ध में अंग्रेजी सरकार को किसी तरह से परेशान करने की नीति उनकी नहीं है। अतः वे कोई काम ऐसा नहीं करना

चाहते जिससे इस नीति का खंडन हो। साथ ही कांग्रेस को अपनी आत्मरक्षा के लिऐ भी यह आवश्यक हो गया था कि वह अपने सिद्धांत पर अटल रहे और उसको संसार के सामने प्रकाशित करने में ज़रा भी कदम पीछे नहीं दे। अतएव इस नीति की घोषणा करना सब कांग्रेस-कार्य-कर्त्ताओं का कर्त्तव्य समझा जाना चाहिए कि हम अहिंसावादी हैं—इसलिए इस हिंसा-पूर्णलड़ाई में कोई हिस्सा नहीं ले सकते। इस बात को कहने की आजादी हमें रहनी ,चाहिए। हमारा विश्वास है कि लड़ाई से लड़ाई का अंत नहीं हो सकता। इसका अंत अहिंसा से ही संभव है। इस विश्वास को प्रकट करने की स्वतंत्रता पर यदि सरकार की ओर से रुकावट हो तो हमें उसका विरोध कर सभी तरहके कष्टों को सहन के लिए तत्पर हो जाना चाहिए। यह था महात्मा जी का विचार, पर हमलोगों में से बहुतेरे ऐसा सोचते थे कि इस मौके पर अंग्रेजी सरकार को मदद न देकर हम उसे इतना मजबूर कर दें कि उसे हमारी मांग को मंजूर करने के लिए मजबूर होना पड़े। जिस नारे का उच्चारण कर हम जेल जायँ उसके एक अंश में तो हमारी अहिंसा का लक्ष्य और दूसरे में साम्राज्यवादी सरकार को किसी तरह की मदद लड़ाई में न दिए जाने की बात कही जाय।

१२

अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी का यह आदेश निकला कि सभी कांग्रेसी सूबों में असेंबली-कौंसिल के मेंबरों की बैठकें

स्पीकर (अध्यक्ष) बुलावें और उनमें सरकारी नीति की आलोचनाएँ की जायँ। बिहार असेंबली के स्पीकर श्री रामदयालु सिंह ने अपनी जवाबदेही पर बैठक बुलाने के पहले मेंबरों की राय जानने के पक्ष में ही अपना मत बताया। अतएव परिपत्र के द्वारा सभी मेंबरों की राय दरियाफ्त करना मुनासिब समझ अपनी ओर से बैठक बुलाने के लिए राजी नहीं दीख पड़े। मैं ने उनका समर्थन किया और केवल काँग्रेसी मेंबरों की ही बैठक बुलाने के पक्ष में अपनी राय दी। कबल इसके कि पार्टी नेता की ओर से सूचना दी जाय, समय बचाने के ख्याल से पार्टी के मंत्री की हैसियत से मैंने मेंबरों को तैयार रहने की सूचना दे दी और पीछे पार्टी लीडर श्री बाबू के नाम से सबको निमंत्रण भिजवाया। पटना डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के हॉल में ही बैठक हुई और उस में तीन-चार प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

प्रांत की अवस्था शोचनीय थी। डिस्ट्रिक्ट बोर्डों को लेकर हमारी शक्ति बिखरी जा रही थी। दलबंदियां बढ़ती जाती थीं। सवाल बराबर ही उठता था कि ऐसी अवस्था में काँग्रेस को क्या करना उचित है। कितने लोगों की सलाह होती थी कि डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से काँग्रेस पार्टी हटा ली जाय, पर बहुमत इसके प्रतिकूल था। स्वयं मैं सोचता था कि जब डिस्ट्रिक्ट बोर्ड हमें चलाना है तब उसे छोड़ कर भाग जाने से हमारा लक्ष्य कैसे पूरा होगा! उसे शुद्ध बनाने की कोशिश करना ही हमारा तात्कालिक धर्म होना चाहिए, पर उसमें हमें

सफलता नहीं मिलती नजर आती थी। कितनी जिला कांग्रेस कमिटियों पर एक दल का कब्जा था तो वहाँ के जिला बोर्ड पर दूसरे दल का। दोनों में प्रतिद्वंद्विता चल रही थी। एक की कार्यवाही को दूसरा खंडन करता था। इस समय यदि प्रांतीय कांग्रेस कमिटी निष्पक्ष और जबरदस्त रुख लेती तो इस कमजोरी को दबा कर वह विशुद्ध वायुमंडल कायम कर सकती थी। पर दुख के साथ लिखना पड़ता है कि प्रांत ने न निष्पक्ष रुख रखा, न सख्ती से काम ही लिया। इसमें संदेह नहीं कि निष्पक्ष हुए बिना सख्ती से काम लेना असंभव था। प्रांतीय पदाधिकारियों को हमारे-जैसे व्यक्तियों की क्या इच्छा होगी, इसे समझ कर ही चलने की ताकत थी। न्याय-विशुद्ध न्याय-से काम करने में उनको अपना पद खो देने का डर रहता था। फल यह हुआ कि स्थानीय संस्थाएँ (लोकल-बडीज) का संचालन-कार्य दिनोंदिन गिरता गया। दलबंदी, स्वार्थ, पक्षपात ने अपना घर बनाना शुरू किया और अच्छे-अच्छे चेयरमैन और वाइस चेयरमैन को काम करने में असुविधा होने लगी।

सत्याग्रह शुरू करने के दिन ज्यों-ज्यों निकट आने लगे गैर सत्याग्रहियों को कांग्रेस की कार्य-समितियों से हटने की आज्ञा आने लगी। फल यह हुआ कि जो लोग कार्य-समिति में अपना स्थान कायम रखना चाहते थे सत्याग्रह-प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर बनाने लगे। साथ ही बोर्डों के सदस्यों में ऐसे लोगों की संख्या बढ़ने लगी जिनको अपना स्थान सुरक्षित रखने के

लिए ही सत्याग्रह-प्लेज पर दस्तखत करने की आवश्यकता ज्ञात होने लगी। पहले लोगों की यह इच्छा रही थी हो कि यदि जेल जाना पड़े तो चले जायँ, पर जब सत्याग्रह छिड़ गया और प्रांत के अधिकारियों ने सत्याग्रह प्लेज का अर्थ अपने और अपने मित्रों के सुविधानुकूल लगाना शुरू कर दिया तब उसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप अविश्वास रखनेवाले तथा अर्द्ध-सत्याग्रहियों को जेल जाने में कोई लाभ नहीं दीखने लगा। अतः वे कोई-न-कोई बहाना लगा कर जेल-यात्रा करने मे हिचकिचाहट दिखलाने लगे।

जिस दिन प्रांतीय कमिटी की कार्य-समिति ने सत्याग्रहियों की सूची बनाई, मुझे भी उस बैठक में शामिल होने के लिए बुलावा आया था। श्रीबाबू और मैंने आमंत्रित होकर उसदिन की कार्यवाही में भाग लिया। हमलोगों के नाम सत्याग्रहियों में सोनपुर-शिविर से ही शामिल थे। अतः हमलोग चुन लिए गए। सत्याग्रह के सिद्धांत में जिन सत्याग्रहियों का विश्वास नहीं था उनको प्रथम सत्याग्रहियों में चुनना नहीं था। इस पर एक-एक नाम ले लेकर सवाल पूछे जाने लगे। श्री रामचरित्र सिंह ने अपनी प्राकृतिक सत्यता का परिचय देते हुए कहा कि उनको सत्याग्रह में विश्वास नहीं है। अतएव उस बैठक में उनका नाम नहीं चुना गया। श्री प्रजापति मिश्र ने सुझाया कि सत्याग्रह की शर्त्तों का जिन्होंने ठीक से पालन नहीं किया है उनके नाम प्रथम सत्याग्रहियों में नहीं चुने जाने चाहिएं। इस

पर जितने नाम पेश होते गए उनमें से कितनों के विषय में कहा गया कि उनसे पूछे बगैर उनके नाम सत्याग्रह करने वालों में देना ठीक नहीं होगा। कुछ नाम उस समय स्वीकृत सूची में रखे गए और कुछ बाद में उनसे पूछ कर सूची में लिए जाने की बात तय हुई।

राजेंद्र बाबू बीमार होकर अपने मकान जीरादेई चले गए। उनका एक पत्र मुझे मिला कि श्री बाबू और मैं दोनों उनके द्वारा प्रथम सत्याग्रह करने वालों में चुने गए थे, अतएव समय और स्थान हमें अपना-अपना तय कर लेना था। कुछ मुख्य कांग्रेसियों को उन्हों ने अपने घर पर सलाह करने के लिए बुलाया भी। मुझे उसी दिन रायबरेली अपने भाई और परिवार से मिलने के लिए जाना था, अतः मैं जीरादेई न जा सका। श्री बाबू मुझ से मिलने आए और अपने साथ राजेंद्र बाबू के घर तक चलने के लिए कहा, पर मैंने उनसे अपने और उनके सत्याग्रह करने के बारे में अपनी राय दे, समय न रहने के कारण, जीरादेई न जाने की लाचारी प्रकट की। मेरा ख्याल था कि २७ नवंबर को बाँकीपुर और पटना शहर में श्री बाबू को और मुझे सत्याग्रह करना चाहिए। महात्मा जी की भी मंजूरी आ गई थी। उनका हुक्म था कि उस दिन कोई व्याख्यान न हो, सिर्फ नारे लगा कर ही सत्याग्रह किया जाय। राजेंद्र बाबू ने मेरे लिए २७ के बदले २८ नवंबर तिथि निश्चित की। मेरे पास चिट्ठी नहीं आई। मुझे कुछ क्षोभ भी हुआ और उसका जिक्र

मैंने मथुरा बाबू से किया।

२७ नवंबर को सदाकत आश्रम में श्रीबाबू को विदाई दी गई। हमलोग सब वहाँ इकट्ठे हुए। उसी दिन मैंने 'सर्चलाइट' से भी अंतिम विदाई ली। मेरे स्थान पर श्रीपारसनाथ सिंह—बिड़लाजी के प्रतिनिधि स्वरूप—मैनेजिंग डाइरेक्टर हुए। मेरा संबंध उस पत्र के साथ १९२२-२३ से शुरू होकर उस दिन तक चला आया था। उसके दुख-सुख में, उत्थान-पतन में मेरा हिस्सा रहा था। बावजूद इसके कि उसके मुख्य संचालक श्रीमुरलीमनोहर प्रसाद ही बराबर बने रहे, मेरा नाम मैनेजिंग डाइरेक्टर में बराबर रहा। जब मैं गवर्नमेंट का एक मेंबर था उस समय भी मेरे नाम का संबंध जैसे-के-तैसे रखना लोगों ने मुनासिब समझा था। प्रेस में काम करनेवालों से अपनापन का भाव उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक ही था। उस समय 'सर्चलाइट' को भीषण आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। कुछ दिनों से बिड़ला बंधुओं से बातें चल रही थीं। मैं स्वयं कलकत्ते जाकर उनसे मिला और उन्हें 'सर्चलाइट' को अपने प्रबंध में लेने के लिए जोर दिया। राजी तो वे पहले ही हो चुके थे, कुछ शर्तों को स्वीकार करना-कराना शेष रह गया था। मैंने उनकी सभी शर्तों को कबूल कर लिया। इसमें संदेह नहीं कि बिड़ला-बंधु के संचालन से उस पत्र का पूर्व रूप नहीं रहता और इसे हम महसूस भी कर रहे थे, पर सवाल यही था कि 'सर्चलाइट' जीवित रहे अथवा बंद कर दिया जाय।

'हिंदुस्तान टाइम्स' बिड़ला-बंधु के हाथ में रह कर भी अपनी नीति राष्ट्रीय रख सका था। हमें विश्वास था कि 'सर्चलाइट' भी अपनी नीति पर कायम रह सकेगा। अतः दोस्तों के मन में संदेह रहते हुए भी मैंने 'सर्चलाइट' को उनके हाथ में देने में किसी तरह के संकोच का अनुभव नहीं किया। २७ नवंबर को इससे मेरा संबंध-विच्छेद हो गया। भविष्य में देखना है कि मेरा विचार सही था या मित्रों के मन में जो डर था वह ठीक था।

श्रीबाबू ने सत्याग्रह किया। छात्रों की एक बड़ी तादाद बाँकीपुर मैदान में इकट्ठी थी। मैंने उन्हें एक स्थान पर बैठने या पंक्ति में खड़ा कराने की कोशिश की, पर श्रीबाबू पीछे की तरफ ही उतार लिए गए थे, इस से पंक्ति टूट गई और लोग एक-दूसरे पर टूट पड़े। कुचलते-कुचलते हम बच सके। वही हालत श्रीबाबू की भी हुई। वे तुरत जेल पहुँचाए गए। मैं भी अपने घर वापस गया। वहाँ पर खबर मिली कि जेल के फाटक पर बड़ी भीड़ लगी हुई है। मैं फौरन वहाँ पहुँचा। समझा-बुझा कर भीड़ हटाना चाहा, पर बहुत कामयाबी न मिली। पुलिस सुपरिंटेंडेंट श्रीमिथिलेशकुमार सिन्हा और डि० मैजिस्ट्रेट मि० अमीर दलमल के साथ आए। कुछ देर तक भीड़ बनी रही। फिर धीरे-धीरे खिसक गई। मैं बीच में ही वहाँ से वापस आया।

हिंसा के इस प्रदर्शन से मेरा मन चंचल हो उठा। मैं चाहता था कि सत्याग्रह कुछ दिनों के लिए पटने में न हो।

राजेंद्र बाबू को 'फोन' किया। उनकी भी स्वतंत्र रूप से यही राय थी। उन्हों ने एक वक्तव्य देते हुए मुझे २८ नवंबर को सत्याग्रह करने से मना किया। मैंने डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को अपने नोटिस को वापस कर लेने का इरादा बताते हुए फोन से कहा कि जब मैं सत्याग्रह करूँगा तब उसकी खबर दूसरी बार दे दूँगा। उनको उससे कुछ शांति-जैसी मालूम पड़ी, क्योंकि आज की घटना से पुलिस और मैजिस्ट्रेट दोनों बड़े स्शंक हो रहे थे।

३ दिसंबर को सत्याग्रह करने का नोटिस मैंने डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को दे दिया। २ ता० को एक सार्वजनिक सभा पटना शहर में हुई। उसमें मैंने लोगों को सत्याग्रह का महत्त्व समझाया तथा उनके अहिंसक होने की परमावश्यकता बताई। लोगों की उपस्थिति यथेष्ट थी। पुलिस रिपोर्टर दलबल के साथ मौजूद थे।

दूसरे दिन ता० ३ दिसंबर को मैं सत्याग्रह करने के लिए तैयार हो गया। अपने मित्रों से भी विदाई ले ली थी। सदाकत आश्रम मे राजेंद्र बाबू के चरण छू आशीर्वाद ग्रहण कर लौटा ही था कि मुझे खबर मिली कि मेरी गिरफ्तारी २ बजे ही हो जायगी क्योंकि अफसरों ने यह तय किया है कि मैं शहर में न जाने पाऊँ। मैं जल्द-जल्द भोजन करने बैठा। पौने दो बजे ही मि० ट्रेजर आ पहुँचे और मेरे पास बाहर आने का संदेशा भिजवाया। उन्हों ने मुझे पाँच मिनट का समय दिया

और फिर बुलावा पठाया। उनकी इस हरकत से मुझ से मिलनेवाले जो मित्र वहाँ उपस्थित थे सबको तकलीफ पहुँची। मुरली बाबू भी वहाँ थे। मैं घर से तुरत बाहर निकल आया। मि० ट्रेजर ने अपनी मोटर पर बिठा कर मुझे तुरत जेल पहुँचा दिया।

सरकार की ओर से यह कोशिश रही कि मेरे भाषणों के आधार पर ही मुझे सजा दिला सके, पर जब कोई ऐसी बात, कम से कम पटना शहर वाले भाषण में, न मिल सकी जिससे मुझ पर मुकदमा चलाया जा सके तब लाचार मुझे १२९ दफा में कुछ दिनों तक रखा और फिर दफा २६ भारतरक्षा विधान के अनुसार नजरबंद करने का हुक्म दे दिया। ३ दिसंबर से २१ दिसंबर तक मुझे पटना जेल में रखा गया। फिर ता० २२ दिसंबर को डि० एस० पी० मौ० वशिरुद्दीन ने मुझे अपनी मोटर पर हजारीबाग जेल पहुँचा दिया। सरकार की ओर से यह हुक्म जारी हुआ कि मैं सजा पाए हुए राजबंदी जैसा रहूँ। अतएव मैं नजरबंद राजबंदियों के साथ न रखा जाकर सत्याग्रहियों के साथ ही रखा गया और वहीं अपने अन्य सत्याग्रही सहयोगियों के साथ दिन बिताने लगा।

जेल जीवन

दिसम्बर महीने के मध्य में जब मैं हजारीबाग पहुँचा तो उन दिनों डाक्टर टी० पी० वर्मा जेल के सुपरिंटेंडेंट थे। कर्नल अंगर जेल विभाग के बड़े अफसर थे (I. G. of Prisions)। इनका मन हमसे कुछ खिंचा हुआ था। अंग्रेजी की हैसियत से मुझे इनके कामों की आलोचना करने का अवसर हुआ था। उसी समय से इनको मुझ से कुछ बदगुमानी हो गई थी। जेल में मुझे नजरबंदों के साथ रखे जाने के लिए उनका हुक्म था। पर लोकल गवर्नमेंट की इच्छा थी कि मैं अन्य राजबंदियों के साथ ही रखा जाऊँ और उन के ही जैसा व्यवहार मेरे साथ किया जाय। वर्मा साहब को इस तरह के परस्पर विरोधी सरकारी आज्ञा को पालन करने में कठिनाई हो रही थी। उसी समय चीफ सेक्रेटरी का पत्र पहुँच जाने से मुझे और राजनीतिक कैदियों के साथ रहने का हुकुम मिल गया। मेरे लिए पहले से ही एक कमरा नं० १ वार्ड में सुरक्षित था। मैं वहाँ ही ले जाया गया। मेरा जेल जीवन १९३३ के बाद से पुनः उसी स्थान पर शुरू हुआ।

कुछ दिनों के बाद वर्मा साहब की बदली हजारीबाग से गया जेल हो गई। इनके स्थान पर मेजर नाथ सुपरिंटेंडेंट होकर आये। महायुद्ध की प्रगति बढ़ती जाती थी। I. M. S. लोगों की बुलाहट लड़ाई के काम के लिए होनी शुरू रही थी। स्थानीय सरकार ने मेजर साहब के जिम्मे राजनीतिक बंदियों के

देख भाल का काम सुपुर्द कर इनको लड़ाई में जाने से रोक लिया था।. धीरे धीरे हमारी संख्या दो सौ से ज्यादा हो गई। जेल अफसर के लिए इतने प्रमुख व्यक्तियों की हिफाजत करना, उनके भिन्न भिन्न मनोवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए जेल नियम का उन से पालन कराना तथा दिन प्रतिदिन की शिकायतों की सुनवाई और उसे दूर करने का प्रयत्न करना-यह एक कठिन कार्य था। पर मेजर नाथ अपनी शांत प्रकृति तथा सहनशीलता और बुद्धिमानी से इस कठिन परिस्थिति को संभालने को खूबी दिखलाई। यदि जेल जीवन का सच्चा इतिहास कभी लिखा जाय तो उससे मनोविज्ञान के अध्ययन करने वालों को इतनी सामग्री मिले कि जिससे वर्तमान समाज के विषय में पहले की अपेक्षा विशेष जानकारी प्राप्त हो सके।

अनिश्चित काल तक जेल प्रवास में रहने की संभावना होने के कारण मैंने अपने दैनिक जीवन को ऐसा बना लेना चाहा कि जिसमें मुझे बाहरी दुनिया की सभी बातें भूल सी जायें। गीता अध्ययन के साथ ही समाजवाद को पुस्तकों का पढ़ने का अच्छा सुअवसर मिला। रूस को क्रांति के संबंध में जेल के अंदर बहुतेरी पुस्तकें आ गई थो। उनको पढ़ने में बहुत समय बीत जाता था। महात्मा जी के अहिंसा सिद्धांत पर मनन करने का भी इस बार की जेल यात्रा में विशेष सुविधा प्राप्त थी। अतएव परस्पर विचार विनिमय द्वारा अहिंसा के भिन्न भिन्न अंगों का समझने तथा उने हृदयंगम करने का इस सुअवसर को अच्छी

तरह से काम में लाने का संकल्प भी साथ साथ पालन होता चला। श्री सुधांशु जी का आग्रह किसी विषय पर पुस्तक लिखने का होता था। उसकी पूर्ति भी साथ ही साथ होने लगी। इसी तरह मेरा जेल जीवन व्यतीत होने लगा। समाजवाद का प्रचार बहुत जोरों में चल रहा था। समाजवादियों का दो दल जेल के अंदर हो गया था। रूस की क्रांति से जो नवीन युग की सृष्टि हुई थी इससे प्रभावित नवयुवकों की एक बड़ी जमात जेल के अंदर मौजूद थी। इनके बीच विचारों के भेद के साथ मनोमालिन्य की मात्रा भी बढ़ती आ रही थी। दो नेताओं के व्यक्तिगत मतभेद के कारण उनके अनुयायियों में दो परस्पर विरोधी दल बन गए थे। जेल के जीवन में इनके पारस्परिक झगड़ों का असर पड़ता रहता था। सत्याग्रहियों का दल इनसे भिन्न होते हुए भी साथ रहने के कारण एक अथवा दूसरे दल के साथ संबंधित हो गया था। इस तरह के वायुमंडल में रहते रहते मानसिक क्लेश के ऊपर विजय प्राप्त करने का अवसर मिलता जाता था और इससे कुछ लाभ भी हो जाता था।

इस बीच में रूस-जर्मन की लड़ाई छिड़ जाने की खबर जेल में पहुँची। लोगों में इस विषय पर बहुत ही जबरदस्त मतभेद हो गया। दो दलों में बंटे हुए राजबंदियों में एक टक्कर

से देखनेवालों मे संध्या के समय आलोचना प्रत्यालोचना होने लगी। रूस के विजय होने की संभावना पर वादविवाद कटुता का रूप ले लेता था। हाँ समय जैसे जैसे बीतता जाता था और रूस-जर्मन युद्ध का चित्र जितनी तेजी से बदलता जा रहा था उसका एक असर यह अवश्य हुआ कि बढता हुआ मतभेद एक स्थान पर ठहर गया और इसकी विशेष वृद्धि नहीं हुई।

सत्याग्रहियों की एक कमजोरी सब किसी को अखरता था। देश को स्वतंत्र करने के निमित्त जितना उत्साह, साहस और निःस्वार्थता की आवश्यकता होनी चाहिये थी उसकी एक छोटी मात्रा सी ही हमारे बीच मौजूद पाई जाती थी। बहुतों के मन में यह धारना बैठ गई कि सत्याग्रह समाप्त होते ही सरकार से सुलह हो जायगा और पुन. काँग्रेस सरकार की स्थापना सभी प्रांतों में शीघ्र ही होनेवाली है। इस भाव ने हमारे मन को दूषित बनाने के साथ ही लोगों में अपने अपने स्थान को सुरक्षित रखने का खयाल भी पैदा कर दिया और इसके चलते एक नई दलबंदी जिसकी बीज पहले लग चुकी थी—धीरे धीरे अपने को मजबूत बनाती जा रही थी और जेल जीवन तथा प्रांत के राजनीति पर उसका असर पड़ता जा रहा था इसे अंत करने के लिये जेल के अंदर प्रयत्न किया गया! कहने के लिये तो समाजवादी 'पद ग्रहन' की नीति से अपने को अलग रखना चाहते थे पर इस दलबंदी में उनका उदाहरण और उनका सहयोग भी इसे

कायम रखने तथा मजबूत बनाने में काफी मदद पहुँचाती थी। लोगों का विश्वास था कि प्रांतीय असेम्बली का चुनाव शीघ्र ही होने वाला है। पाँच वर्ष की अवधि समाप्त होते ही इस का निर्वाचन होगा और बहुतों का ध्यान उसी चुनाव की ओर था और किस तरह उसमें सफलता मिले इसका प्रयत्न आगे से ही करने की फिक्र हो गई थी।

चर्खे का प्रचार जितना होना चाहिये उतना न होने पर भी, बड़े पैमाने पर होता रहा। बीच-बीच मे किसी न किसी अवसर पर अखंड-चर्खा चलता था और बहुतों ने इस में सहयोग देना अपना कर्तव्य समझा था। कितने सत्याग्रही ऐसे भी थे जो चर्खे से घृणा करते थे और इस से अपने को अलग रखने में ही अपने सिद्धांत की पूर्ति समझते थे। पर कितने ऐसे भी थे जो दिन रात चर्खे में ही संलग्न रहते थे और जितने समय तक जगे रहते थे चर्खे ही चलाते रहते थे। इसमें संदेह नहीं कि इसबार जेल जीवन मे अध्ययन, विचारविनिमय, चर्खा प्रचार इत्यादि में समय व्यतीत करनेवालों की बहुतायत थी और इनका असर जेल की वायु मंडल पर पड़ता रहा। बहुतों ने समय का पूरा सदुपयोग किया और अपने को जेल के अंदर रह कर ऊँचा बनाने में ही अपनी शक्ति लगाई।

जुलाई महीने मे उड़ती पुड़ती खबर मिली कि मेरी रिहाई भी सत्याग्रहियों के प्रथम बैच (batch) के साथ ही हो जायगी। अनिश्चितता की संभावना का इस प्रकार अंत होने से मेरे मन पर

इसका काफी असर पड़ा और मेरे कामों की प्रगति भी कुछ बढ़ गई।• अगस्त खतम होने के दो तीन दिन पहले हीं हमलोग छोड़ दिये गये। श्रीबाबू और मैं साथ ही साथ पटने पहुँचा और स्टेशन से सदाकत आश्रम सीधे गया और राजेंद्र बाबू का दर्शन किया। उनकी तबियत उस ,समय खराब थी। प्रांत की राजनीति कुछ ढीली पड़ती जाती थी। सत्यग्रहियों को तुरत जेल वापस जाने की हिदायत थी। इसी वातावरण में पुनः जेल के बाहर आ भविष्य में क्या किया जाय इसे सोचने की जरूरत हो गई।